Maktab_e_Ashraf
मुकम्मल
तारीख़-ए-इस्लाम
आख़िरी पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम से
लेकर उस्मानी ख़लीफ़ा सुलतान सलीम तक के मुकम्मल हालात
तस्नीफ़
अक्बर शाह नजीबाबादी
तल्ख़ीस
कौसर यज़्दानी नदवी
एम.ए

आख़िरी पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम से लेकर उस्मानी ख़लीफ़ा सुलतान सलीम तक के मुकम्मल हालात

तस्नीफ़
अक्बर शाह नजीबाबादी

तलख़ीस
कौसर यज़दानी नदवी
एम.ए.

فرید بُک ڈپو (پرائیویٹ) لمٹیڈ
FARID BOOK DEPOT (Pvt.) Ltd.
NEW DELHI-110002

अपनी बात

इस्लाम की चौदह सौ साल की तारीख पर कुछ लिखना-लिखाना आसान काम नहीं है। दर्जनों मुल्कों और हुकूमतों की यह तारीख हज़ारों पेचीदगियों का घर है और इन सब को समेट कर थोड़े से पन्नों में समा देना तो बहुत ही मुश्किल काम है।

बहरहाल इस्लाम की तारीख पर एक मुख्तसर मगर जामेअ किताब तैयार करने की ख्वाहिश थी, ताकि हिंदी जानने वाले इससे वाक़िफ़ हो सकें, इस के लिए मैटर की खोज शुरू हुई।

यू तो हिंदी में तारीखे इस्लाम पर अब तक कुछ नहीं आया है, लेकिन जब उर्दू में तलाश शुरू हुई तो लगा वहां भी अकाल पड़ा हुआ है। मुस्तनद तारीखों में सिर्फ़ मौलाना अक्बर शाह खां नजीबाबादी की लिखी हुई **'तारीखे इस्लाम'** ही एक ऐसी किताब है, जिस में तफ्सील के साथ और तारीख के फ़न का ख्याल रखते हुए इस्लाम की तारीख तैयार की गयी है।

हमारी यह मुकम्मल **'तारीखे इस्लाम'** मैटर के लिहाज से उसी 'तारीखे इस्लाम' की नक़ल है। मैटर का बड़ा हिस्सा वहीं से लिया गया है, अल-बत्ता लफ्ज़ अपने हैं. क़लम अपना है। यह 'मुख्तसर तारीखे इस्लाम' उम्मीद है वक़्त की ज़रूरत पूरा करेगी और इस्लाम की तारीख समझने वालों की प्यास बुझाएगी। फिर भी अभी ज़रूरत है कि तारीख तफ्सील से पेश की जाए। मौक़ा मिला तो इन्शाअल्लाह यह ज़रूरत भी पूरी की जाएगी, दुआओं की ज़रूरत है।

—मुरत्तिब

विषय-सूची

क्या ? कहां ?

हज़रत मुहम्मद सल्ल० ६—१०१

क्या ? कहाँ ?

ख़िलाफ़ते राशिदा १०२—१८८

क्या ?	कहां ?

ख़िलाफ़ते बनू उमैया १४९—२१८

क्या ? **कहां ?**

खिलाफ़ते अब्बासिया २१९–३७२

क्या ? कहां ?

खलफ़ा-ए-उन्दुलुस ३३७—४४२

उस्मानी खिलाफ़त ४४४—४७४

बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम

तारीखे इस्लाम

इस्लाम से पहले का अरब

अरब के लोग आमतौर से क़बीलों की आज़ाद ज़िंदगी गुज़ारते थे, उन में जिहालत आम थी। बुतपरस्ती इसी जिहालत का नाम था। बुत-परस्ती ने उन के दिल व दिमाग़ पर क़ब्ज़ा कर के उन्हें वह्मपरस्त बना दिया था। दुनिया की हर चीज़ को, चाहे वह फ़ायदा देने वाली हो या नुक़सान पहुंचाने वाली, उन के लिए माबूद बन गयी थी। इस तरह पत्थर पेड़, चांद, सूरज, पहाड़, दरिया सभी की पूजा आम हो गयी थी। अरबों ने फ़रिश्तों, रूहों और ग़ैर-महसूस ताक़तों के बुत बनाने के अलावा अपने बुज़ुर्गों के बुत भी गढ़ रखे थे, जिन की वे पूजा करते थे।

अपनी इस बुतपरस्ती के बावजूद अरब बहरहाल इन बुतों को ही असल माबूद न मानते थे, बल्कि उन का एतक़ाद यह था कि उन बुज़ुर्गों की रूहानी ताक़तों को, जिन के ये बुत, यादगार के तौर पर बनाए गए हैं, दुनिया में कुछ इस तरह के अख़्तियार हासिल हैं कि वे हमारी हर ज़रूरत, मुराद और दख़्वास्त की सिफ़ारिश ख़ुदा के यहां कर सकते हैं और मरने के बादकी ज़िंदगी के बारे में इन का ख़्याल यह था कि उनकी रूहानी ताक़तें ख़ुदा से उन के गुनाहों को माफ़ कराएंगी।

मज़हब के बिगाड़ और अक़ीदों की ख़राबी के साथ-साथ आपस की लड़ाई उन के यहां आम बात थी। मामूली-मामूली बातों पर लड़ाई ठन जाती और फिर उस का सिलसिला पीढ़ियों तक चलता रहता। जुआ खेलना, शराब पीना इतना आम था कि शायद ही कोई क़ौम इस मामले में उन का मुक़ाबला कर सकती। शराब की तारीफ़ और उस के ताल्लुक़

से होने वाली बद-कारियों के ज़िक्र से उनकी शायरी भरी पड़ी थी। इसके अलावा सूद का चलन आम था। लूट-मार, चोरी, बे-मुरव्वती, ख़ून-ख़राबा ज़िना और दूसरे गन्दे कामों ने उन को गोया इन्सानी शक्ल में जानवर बना दिया था। वे अपनी लड़कियों को ज़िंदा ही क़ब्रों में गाड़ दिया करते थे। बेशर्मी और बे-हयाई का यह हाल था कि मर्द और औरतें नंगे हो कर ख़ाना-काबा का तवाफ़ करते थे और उसे एक मज़हबी काम समझते थे, ग़रज़ मज़हब, अक़ीदा, अख़्लाक़, रहन-सहन, समाज वग़ैरह हर एतबार से अरब पस्ती की इन्तिहा को पहुंच चुके थे।

दुनिया की हालत

इस्लाम से पहले अरब ही क्यों पूरी दुनिया उन बुराइयों का शिकार थी, जिन के शिकार अरब ख़ुद थे।

ईरान और रूम उस वक़्त की सब से बड़ी ताक़तें थीं। रूम में ईसाई धर्म के मानने वाले ज़्यादा थे, लेकिन अक़ीदे के लिहाज़ से वे अपने असल मज़हब से बहुत दूर जा चुके थे। अख़्लाक़ी एतबार से भी उन में पस्ती और गिरावट आ चुकी थी।

ईरान में तो सितारों की पूजा आम थी। इस के अलावा वहां के बादशाह, दरबारी सरदार अपने दर्जों के लिहाज़ से जनता के लिए ख़ुदा ही समझे जाते थे। अख़्लाक़ी पस्ती वहां भी आम थी।

ख़ुद अपने देश भारत में देवताओं की तायदाद बढ़ते-बढ़ते ३३ करोड़ तक पहुंच चुकी थी। बद-अख़्लाक़ी आम बात थी। छूत-छात और भेद-भाव की वजह से इन्सान इन्सानों का ख़ुदा बना बैठा था। पूरा समाज गिरावट का शिकार था। शराब, जुआ को मज़हबी रंग दे दिया गया था।

ग़रज़ पूरी दुनिया इसी तरह बिगाड़ का शिकार थी।

जब हालात ऐसे हों, तो पूरी दुनिया में सुधार लाने के लिए एक ऐसे पैग़म्बर को भेजा जाना ज़रूरी था, जो रहती दुनिया तक के लिए पूरी दुनिया को हिदायत का रास्ता बताता।

दुनिया के नक़्शे पर नज़र डालिए तो अरब ऐसी जगह वाक़ेअ है, जिसे एशिया, यूरोप और अफ़्रीक़ा का संगम कहा जा सकता है। गोया अरब पूरी दुनिया को ख़ुश्की और तरी दोनों रास्तों से अपने दाएं और

बाएं हाथ से मिला कर एक कर रहा है, इस लिए अगर तमाम दुनिया की हिदायत के लिए एक मर्कज़ क़ायम करना हो और उस के लिए हम जगह चुनना चाहें, तो अरब ही का चुनाव सब से ज़्यादा मुनासिब होगा।

अल्लाह ने इसी लिए पैग़म्बरे इस्लाम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को अरब में पैदा किया और उन को अरबों के साथ-साथ पूरी दुनिया की हिदायत का काम सुपुर्द किया।

हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम नबियों के सिलसिले की आख़िरी कड़ी हैं।

पैदाइश और बचपन

हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के वालिद का नाम अब्दुल्लाह था, दादा का नाम अब्दुल मुत्तलिब था, जो हाशिम बिन अब्दे मुनाफ़ बिन क़ुसई के बेटे थे।

वालिद अब्दुल्लाह की शादी क़बीला ज़ोहरा में वह्ब बिन अब्दे मुनाफ़ की लड़की से हुई, जिन का नाम आमना था।

आप के खानदान का नाम क़ुरैश था जो अरब के तमाम खानदानों से कितनी ही पीढ़ियों से इज़्ज़त और शोहरत वाला माना जाता था। हरमे काबा के मुतवल्ली होने की वजह से क़ुरैश को तमाम अरब में बड़ी इज़्ज़त और अहमियत हासिल हो गयी थी।

हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम दोशंबा (सोमवार) के दिन ९ रबीउल-अव्वल, मुताबिक़ २३ अप्रैल ५७१ को मक्का मुअज्ज़मा में, सूरज निकलने से पहले सुबहे सादिक़ में पैदा हुए। वालिद का इन्तिक़ाल आप के जन्म से पहले ही हो चुका था। दादा अब्दुल मुत्तलिब की देख-रेख में आप की परवरिश शुरू हुई।

सब से पहले आप की वालिदा हज़रत आमिना ने दूध पिलाया, इस के बाद अबूलहब की लौंडी सुवैबा ने भी दूध पिलाया।

उस ज़माने में यह आम रिवाज था कि शहर के बड़े लोग अपने बच्चों को दूध पिलवाने और बढ़ने-पलने के लिए देहात और क़स्बों में भेज देते थे, ताकि वहां की खुली हवा में रह कर उन की सेहत अच्छी हो जाए और वे बहुत अच्छी ज़ुबान भी सीख जाएं। अरब में शहरों के मुक़ाबले

में देहातों और क़स्बों की ज़बान प्यारी और अच्छी मानी जाती थी। इस रिवाज के मुताबिक़ देहात की औरतें शहर में आया करती थीं और बच्चों को परवरिश के लिए अपने साथ ले जाती थीं। चुनांचे हज़रत मुहम्मद सल्ल० की पैदाइश के कुछ दिनों बाद ही क़बीला हवाज़िन की कुछ औरतें बच्चों को खोज में मक्के आयीं। उन में हलीमा सादिया भी थीं। यही वह ख़ुशनसीब औरत हैं, जिन को जब कोई दूसरा बच्चा न मिला, तो मजबूर होकर उन्हों ने आमिना के यतीम बच्चे को ले लेना ही मंज़ूर कर लिया।

आप की उम्र चार साल की हुई तो आप की वालिदा ने आप को अपने पास रख लिया। आप छः साल के हुए तो आपकी मां बीबी आमना का इन्तिक़ाल हो गया।

जब हज़रत मुहम्मद सल्ल० की उम्र आठ साल की हुई, तो दादा अब्दुल मुत्तलिब ने भी इन्तिक़ाल फ़रमाया। मरते वक़्त उन्होंने आप की परवरिश की ज़िम्मेदारी अपने लड़के अबूतालिब को सुपुर्द के, जिन्हों ने अपनी इस ज़िम्मेदारी को बहुत अच्छी तरह निभाया। अबू तालिब हज़रत मुहम्मद सल्ल० के सगे चचा थे।

बहीरा राहिब की मुलाक़ात

अक्सर किताबों में बयान किया गया है कि आंहज़रत सल्ल० जब बारह साल के हुए तो अपने चचा अबू तालिब के साथ, जब कि शाम को तिजारत की ग़रज़ से जा रहे थे, सफ़र में गए। बसरा में बहीरा राहिब ने आप को पहचान लिया कि जिन नबी की पेशीनगोइयां किताबों में मिलती हैं, वह नबी यही हैं। इससे ज़ाहिर होता है कि वह नबी के आने के इन्तिज़ार में थे।

हज़रत ख़दीजा रज़ि० से निकाह

जब नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम जवान हुए, तो आप का ख्याल पहले तिजारत की तरफ़ हुआ, मगर घर का रुपया पास न था। मक्का में निहायत शरीफ़ ख़ानदान की एक बेवा औरत ख़दीजा थीं। वह

बहुत मालदार थीं। अपना रुपया तिजारत में लगाए रखती थीं। उन्हों ने आंहज़रत सल्ल० की ख़ूबियां और आप की सच्चाई, दयानतदारी का हाल मालूम करके ख़ुद दख़्वास्त कर दी कि उस के रुपए से तिजारत करें। आंहज़रत सल्ल० उन का माल ले कर तिजारत को गए। इस तिजारत में बहुत नफ़ा हुआ और आप की बहुत-सी ख़ूबियां भी ज़ाहिर हुयीं।

इन ख़ूबियों को मालूम कर के हज़रत ख़दीजा ने आप से निकाह की दख़्वास्त की, हालांकि हज़रत ख़दीजा रज़ि० इस से पहले बड़े-बड़े सरदारों के निकाह की दख़्वास्त को रद्द कर चुकी थीं। दख़्वास्त आप ने मंज़ूर कर ली, तारीख़ तै हो गयी। अबू तालिब ने निकाह का ख़ुत्बा पढ़ा और पांच सौ तलाई दिरहम पर निकाह हो गया। शादी के वक़्त हज़रत ख़दीजा की उम्र चालीस साल थी और आप सिर्फ़ पच्चीस साल के नव-जवान थे।

अनोखा समझौता

इस्लाम से पहले अरबों में लड़ाइयों का एक न ख़त्म होने वाला सिलसिला जारी था। इन्हीं लड़ाइयों में से एक निहायत ख़तरनाक और मशहूर लड़ाई फ़िजार की लड़ाई है। फ़िजार की लड़ाई से अम्न पसन्द लोगों का तंग आ जाना बिल्कुल फ़ित्री बात थी। आप को भी इन लड़ाइयों से बड़ी तक्लीफ़ होती थी। चुनांचे आप सल्ल० ने अक्सर क़बीलों के सरदारों और समझदार लोगों को मुल्क की बे-अम्नी, रास्तों का ख़तरनाक होना, मुसाफ़िरों का लुटना, ग़रीबों पर ज़बरदस्तों के ज़ुल्म का हवाला देकर इन सब बातों में सुधार लाने पर तवज्जोह दिलायी। आख़िर एक अंजुमन क़ायम हो गई, जिसमें बनू हाशिम व अब्दुल मुत्तलिब बनू असद, बनू ज़ोहरा, बनू तमीम शामिल थे। इस अंजुमन के मेम्बरों ने नीचे लिखे अह्द किए थे—

१. हम मुल्क से बे-अम्नी दूर करेंगे,
२. हम मुसाफ़िरों की हिफ़ाज़त करेंगे,
३. हम ग़रीबों की इमदाद करेंगे,
४. हम ज़बरदस्त को कमज़ोरों पर ज़ुल्म करने से रोका करेंगे,
५. किसी ज़ालिम को मक्का में न रहने देंगे,

आप नबी होने के बाद इस की याद ताज़ा करते हुए फ़रमाया करते थे कि—

'इस समझौते के मुक़ाबले में अगर मुझ को सुर्ख़ रंग के ऊंट भी दिए जाते, तो मैं उस से न फिरता और आज भी ऐसे समझौते के लिए कोई बुलाए, तो मैं हाज़िर हूं।'

इस समझौते का असर यह हुआ कि इन्सानों की जान व माल की बड़ी हद तक हिफ़ाज़त हो गई।

ऐसे ही नेक कामों की वजह से उन दिनों में लोगों के दिलों पर आप सल्ल० की नेकी और बुज़ुर्गी का इतना असर था कि ये मोहम्मद सल्ल० को नाम लेकर नहीं बुलाते थे, बल्कि 'अस्सादिक़' (बेहद सच्चा) या 'अल-अमीन' (बे-हद अमानतदार) कह कर पुकारा करते थे।

काबे की तामीर का काम

काबे की दीवारों को सब से पहले हज़रत इब्राहीम अले० ने हज़रत इस्माईल अलै० के साथ मिल कर तैयार किया था, फिर बनी जरहुम, बनू अमालक़ा, क़ुसई और क़ुरैश ने उस की मरम्मत की। इस बार फिर बारिश की ज़्यादती की वजह से काबे की दीवारें फट गई थीं। उस वक़्त हज़रत मुहम्मद सल्ल० की उम्र ३५ साल की थी, जब क़ुरैश ने काबे की इमारत को जिस की दीवारें काफ़ी फट गई थीं, फिर से तैयार करने का प्रोग्राम बनाया। क़ुरैश के तमाम क़बीलों ने मिल कर काम शुरू कर दिया। इमारत के बनाने में तो सभी शामिल थे, मगर जब हजरे असवद (काला पत्थर) के दीवार में चिनने का मौक़ा आया, तो बड़ा झगड़ा उठ खड़ा हुआ, इस लिए हर एक यही चाहता था कि यह ख़िदमत हमीं अंजाम दें।

हजरे असवद एक पत्थर है जो काबे की दीवार में एक कोने में लगा हुआ है। इसी पत्थर से तवाफ़ शुरू और ख़त्म होता है। यह सिर्फ़ एक पत्थर है, जिस के बारे में एक बार हज़रत उमर रज़ि० ने उसे ख़िताब कर के कहा था कि, 'तू एक पत्थर है, न किसी को नफ़ा दे सकता है, न नुक़सान पहुंचा सकता है।'

क़ुरैश का यह झगड़ा चार दिन तक बराबर चलता रहा, नौबत

यहां तक पहुंचती कि तलवारें निकल-निकल आतीं और खून-खराबे का खतरा पैदा हो जाता। आखिर में पांचवें दिन अबू उमय्या बिन मुग़ीरा ने, जो क़ुरैश में सब से बड़ी उम्र का था, यह राय दी कि किसी को 'हकम' बना कर उसके फ़ैसले पर अमल करें, इस राय को मान लिया गया और तै किया गया कि जो कोई सुबह सवेरे सब से पहले हरम में आएगा, वही सब का हकम (फ़ैसला करने वाला) समझा जाएगा।

अल्लाह की क़ुदरत कि दूसरे दिन सुबह-सवेरे ही सब से पहले जिस शख्स पर नज़र पड़ी, वह हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ही थे। आप को देखना था कि 'हाज़ल अमीन रज़ीनाहु' के नारे लग गये। आपने अपनी सूझ-बूझ से ऐसा फ़ैसला किया कि सब खुश हो गये। आं-हज़रत सल्ल० ने एक चादर बिछायी, उस पर पत्थर अपने हाथ से रख दिया। फिर हर क़बीले के सरदार को कहा कि चादर को पकड़ कर उठाएं। इस तरह इस पत्थर को वहाँ तक लाये, जहां क़ायम करना था। आंहज़रत सल्ल० ने फिर उसे उठा कर कोने पर और तवाफ़ के सिरे पर लगा दिया।

आप की इस खूबसूरत तद्बीर से एक भयानक लड़ाई का सिल-सिला शुरू होते-होते रुक गया, वरना उस वक़्त के अरबों में रेवड़ के पानी पिलाने, घोड़ों के दौड़ाने, शेर-शायरी में एक क़ौम से दूसरी क़ौम को अच्छा बताने जैसी छोटी-छोटी बातों पर ऐसी भयानक लड़ाइयां छिड़ती थीं कि बीसियों वर्ष तक खत्म होने का नाम न लेती थीं।

नुबूवत मिली

पैग़म्बरे इस्लाम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ज़िंदगी में अब एक नयी तब्दीली पैदा हो चली थी। अब आप की तवज्जोह तंहाई में बैठ कर अल्लाह की इबादत करने और अपने माहौल की अख्लाक़ी और मज़-हबी गिरावट पर ग़ौर करने की तरफ़ बढ़ने लगी थी। आप बराबर सोचा करते, मेरी क़ौम के लोग बुतों को क्यों पूजते हैं, उन की यह बुराई कैसे दूर हो? उन्हें कैसे बताया जाए कि सच्ची खुदापरस्ती की राह क्या है?

ये और इसी क़िस्म के सवाल आप के दिल व दिमाग़ को परेशान किए रहते। इस ग़ौर व फ़िक्र का नतीजा यह निकला कि आप तंहाई पसंद

होते चले गये।

मक्का मुअज़्ज़मा से तीन मील की दूरी पर एक ग़ार था, जिसे हिरा कहते हैं। आप अक्सर वहां जाकर अकेले बैठने लगे। पानी और सत्तू लेकर जाते, इबादत करते, ज़िक्र में मश्गूल रहते, ग़ौर व फ़िक्र करते और जब तक पानी और सत्तू ख़त्म न हो जाते, शहर में न आते।

एक दिन आप हिरा के ग़ार में इबादत में लगे हुए थे, आप चालीस साल के हो चुके थे, ९ रबीउल अव्वल तारीख़ थी (मुताबिक़ १२ फ़रवरी सन् ६१ ई०) कि आप के सामने अल्लाह का भेजा हुआ फ़रिश्ता ज़ाहिर हुआ। यह हज़रत जिब्रील अलै० थे। रूहुल अमीन ने कहा, मुहम्मद! ख़ुशख़बरी क़ुबूल फ़रमाइए, आप अल्लाह के रसूल हैं और मैं जिब्रील हूं।

हज़रत जिब्रील अलै० ने आंहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से कहा, 'पढ़'। आपने फ़रमाया, 'मैं पढ़ा हुआ नहीं हूं।' यह सुन कर हज़रत जिब्रील अलै० ने आंहज़रत सल्ल० को पकड़ कर इतना भींचा कि आप थक गये। फिर आंहज़रत सल्ल० को छोड़ दिया और कहा, 'पढ़' आपने फिर वही जवाब दिया और उन्होंने फिर आंहज़रत सल्ल० को पकड़ कर भींचा और छोड़ कर कहा, 'पढ'। आपने फिर फ़रमाया, मैं पढ़ा हुआ नहीं हूं' अब हज़रत जिब्रील ने तीसरी बार वही किया और छोड़ कर कहा—

'इक़्रअ् बिस्मि रब्बिकल्लज़ी ख़-लक़० ख़-ल-क़ल इंसा-न मिन अ-लक़० इक़्रअ व रब्बुकल अक्रमुल्लज़ी अल्ल-म बिल क़-लम अल्लमल इन्सा-न मा लम यअ्लम०'

तर्जुमा—'अपने रब के नाम से पढ़, जिस ने इंसान को जमे हुए ख़ून से पैदा किया। पढ़ और तेरा रब बड़ा बुज़ुर्ग है, जिसने क़लम के ज़रिए सिखाया और इंसान को वह कुछ सिखाया, जो वह नहीं जानता था।' यही सबसे पहली वह्य थी।

हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम इस वाक़िए के बाद घर तश्रीफ़ लाए। उस वक़्त आपके दिल की धड़कनें बहुत तेज़ थीं। आप ने हज़रत ख़दीजा से फ़रमाया, मुझे कम्बल उढ़ाओ, मुझे कम्बल उढ़ाओ। आप को कम्बल उढ़ा दिया गया। जब आपको कुछ सुकून हुआ, तो आपने हज़रत ख़दीजा से पूरा क़िस्सा सुनाया और फ़रमाया, 'मुझे अपनी जान का ख़तरा है।'

हज़रत ख़दीजा रज़ि० ने फ़रमाया, 'नहीं, हरगिज़ नहीं। आप को

जान को खतरा नहीं। खुदा आप को रुसवा न करेगा। आप रिश्तेदारों का हक़ अदा करते हैं। लोगों के बोझ को आप खुद उठाते हैं। फ़क़ीरों और मस्कीनों की आप मदद करते हैं, मुसाफ़िरों की मेहमानी करते हैं, इंसाफ़ के लिए आप लोगों की मुसीबतों में काम आते हैं।'

अब हज़रत खदीजा को अपने दिल के इत्मीनान की ज़रूरत हुई इस लिए वह नबी सल्ल० को साथ लेकर अपने रिश्ते के चचेरे भाई वर्क़ा बिन नोफ़ुल के पास गयीं।

वर्क़ा बिन नोफ़ुल बूढ़े दीनदार ईसाई थे, जो अपने दीन की जाहिली बातों को छोड़ कर किसी नए नबी के आने का इन्तिज़ार कर रहे थे। तौरात पर उन की गहरी नज़र थी।

हज़रत खदीजा की दरख़्वास्त पर नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने वर्क़ा बिन नोफ़ुल के सामने जिब्रील के आने और वह्य लाने का पूरा क़िस्सा सुनाया। वर्क़ा झट बोल उठे—'यही है वह नामूस (छिपे भेदों का जानने वाला फ़रिश्ता), जो मूसा अलैहिस्सलाम पर उतरा था। ऐ काश! मैं जवान होता, ऐ काश! मैं उस वक़्त तक ज़िंदा रहता, जब क़ौम आप को निकाल देगी।'

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने पूछा, 'क्या क़ौम मुझे निकाल देगी?'

वर्क़ा बोले, 'हां इस दुनिया में जिस किसी ने ऐसी तालीम पेश की, उस से (शुरू में) लोगों ने दुश्मनी ही की। काश! मैं हिजरत तक ज़िंदा रहूं और हुज़ूर सल्ल० की खुली मदद करूं।'

उस वक़्त वर्क़ा बहुत ही बूढ़े हो चुके थे, आंखों की रोशनी भी खत्म हो चुकी थी। इस वाक़िए के कुछ ही दिनों बाद उनका इन्तिक़ाल हो गाय।

इस के बाद हज़रत जिब्रील का आना लगभग छः महीने तक रुका रहा। वह्य का इन्तिज़ार आपको रहने लगा, यहां तक कि हज़रत जिब्रील आए और फिर आते रहे और आप को इत्मीनान दिलाते रहे कि आप का चुनाव रसूल की हैसियत से कर लिया गया है।

———

इस्लाम की तब्लीग़

हिरा के ग़ार में पहली वह्य के नाज़िल होने के बाद कुछ दिनों तक कोई वह्य नहीं आयी। इस के बाद सूरः मुद्दस्सिर की शुरू की कुछ आयतें नाज़िल हुई —

'या ऐ युहल मुद्दस्सिर० क़ुम फ़ अन्ज़िर० व रब्ब-क फ़कब्बिर० व सिया-ब-क फ़ तह्हिर० वर्रुज-ज़ फ़ह्जुर० व ला तम्नुन तस्तक्सिर० व लिरब्बि-क फ़स्बिर०' —मुद्दस्सिर

तर्जुमा—'ऐ कमली ओढ़ने वाले! उठ (और लोगों को गुमराही के अंजाम से) डरा और अपने रब की बुज़ुर्गी और बड़ाई बयान कर, और लिबास को पाक कर और बुतों से अलग रह और ज़्यादा हासिल करने की नीयत से किसी के साथ एहसान मत कर और अपने रब के मामले में (तक्लीफ़ और मुसीबत पर) सब्र अख़्तियार कर।'

नुबूवत के काम पर लगाये जाने की यह शुरूआत थी। अब बाक़ायदा हुक्म मिल गया कि उठो और भटकी हुई इन्सानियत को उस की कामियाबी और निजात का रास्ता दिखाओ और लोगों को ख़बरदार कर दो कि कामियाबी की राह सिर्फ़ एक ही है यानी एक अल्लाह की बंदगी। जो कोई इस राह को अपनाएगा, वही कामियाब होगा और जो कोई इस के अलावा कोई और राह अपनाए, उसे आख़िरत के बुरे अंजाम से डराओ।

यहां से हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की तब्लीग़ी ज़िंदगी की शुरूआत होती है।

नुबूवत के काम पर लगा दिए जाने के बाद सबसे पहला मरहला यह था कि सिर्फ़ एक ख़ुदा की बंदगी करने और बाक़ी सैकड़ों ख़ुदाओं का इंकार कर देने की यानी इस्लाम की दावत दी जाए। चुनांचे हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने सब से पहले उन लोगों को दावत व तब्लीग़ के लिए चुना, जो आप से अब तक बहुत क़रीब रहे थे और जो आप के अख़्लाक़, आपकी सच्चाई और आप की ईमानदारी को ख़ूब अच्छी तरह जानते-समझते थे। इन लोगों को आप की ज़ात पर इतना यक़ीन था कि आपकी फ़रमायी हुई बात का आसानी से इंकार कर

हेला उन के लिए मुम्किन न था।

इन लोगों में सब से ज़्यादा आप के अच्छे-बुरे हर वक़्त की साथी हज़रत ख़दीजा थीं। फिर इस के बाद हज़रत अली, हज़रत ज़ैद और हज़रत अबूबक्र रज़ि० थे। हज़रत अली रज़ि० साए की तरह साथ रहने वाले आप के चचेरे भाई थे, हज़रत ज़ैद आप के चहेते ग़ुलाम थे, हज़रत अबूबक्र रज़ि० आप के साथ के हर वक़्त के उठने-बैठने वाले दोस्त थे।

आपने जब इन लोगों तक अपना पैग़ाम पहुंचाया तो इन लोगों ने इस तरह मान लिया, जैसे इन्तिज़ार में हों कि आप कहें और वे ईमान लाएं।

हज़रत बिलाल रज़ि०, अम्र बिन अबसा, ख़ालिद बिन साद बिन आस रज़ियल्लाहु अन्हुम भी कुछ दिनों के बाद ही मुसलमान हो गये।

हज़रत अबूबक्र रज़ि० काफ़ी मालदार थे, तिजारत करते थे, मक्का में उन की बज़ाज़ी की दुकान भी थी। लोगों से उन का मेल-मिलाप था, उन का असर भी बहुत था, उन की तब्लीग़ से हज़रत उस्मान रज़ि०, ज़ुबैर, अब्दुर्रहमान बिन औफ़, तलहा, साद बिन अबी वक़्क़ास रज़ियल्लाहु अन्हुम मुसलमान हुए। फिर हज़रत अबू उबैदा, आमिर बिन अब्दुल्लाह बिन जर्राह हैं (जिन का लक़ब बाद में 'अमीनुल उम्मत' हुआ) अब्दुल असद बिन हिलाल, उस्मान बिन मज़ऊन, आमिर बिन फ़ुहैरा अस्दी, अबू हुज़ैफ़ा बिन उत्बा, साइब बिन उस्मान और अर्क़म मुसलमान हो गये।

औरतों में ख़दीजा रज़ि० उम्मुल मोमिनीन के बाद नबी सल्ल० के चचा अब्बास की बीवी उम्मुल फ़ज़्ल रज़ि०, अस्मा बिन्त अबूबक्र और उमर फ़ारूक़ की बहन फ़ातमा रज़ि० ने इस्लाम क़ुबूल किया।

ख़ुफ़िया दावत

यह सब कुछ अभी छिप-छिप कर हो रहा था। पूरी सावधानी बरती जाती कि भरोसे के लोगों के अलावा बात कहीं बाहर न जाए। फिर खुल कर प्रचार करने का हुक्म आ गया।

चुनांचे नबी सल्ल० ने अल्लाह के हुक्म के मुताबिक़ आम तब्लीग़ का काम शुरू फ़रमा दिया।

आपने एक दिन सब को खाने पर जमा किया। जब सब लोग खाना खा चुके, तब नबी सल्ल० ने फ़रमाया—

'ऐ लोगो ! मैं तुम सब के लिए दुनिया और आखिरत की भलाई लेकर आया हूं और मैं नहीं जानता कि अरब भर में कोई शख्स भी अपनी क़ौम के लिए इस से बेहतर और बड़ी कोई चीज़ लाया हो। मुझे अल्लाह तआला ने हुक्म दिया है कि मैं आप लोगों को उसकी ओर बुलाऊं। बताओ तुम में से कौन मेरा साथ देगा ?'

यह सुन कर सब के सब चुप रहे। हज़रत अली रज़ि० ने उठ कर कहा, 'ऐ अल्लाह के रसूल ! अगरचे मेरी आंखें आयी हुई हैं (उस वक़्त आप की आंखें दुख रही थीं), गो मेरी टांगें पतली हैं और मैं सब से कम-उम्र भी हूं, फिर भी मैं आप का साथ दूंगा।' क़ुरैश के लिए यह मंज़र भी अजीब था कि एक तेरह साल का नव-उम्र, बिला कुछ सोचे-समझे कितना बड़ा फ़ैसला कर रहा है।

अब नबी सल्ल० का सब को समझाना मुस्तक़िल काम था। इस के लिए हर मेले में जाते, हर एक गली-कूचे में जा-जा कर लोगों को तौहीद की खूबी बताते, बुतों-पत्थरों, पेड़ों की पूजा से रोकते। बेटियों को मार डालने से हटाते, ज़िना से मना करते, जुआ खेलने से लोगों को रोकते थे।

आप फ़रमाया करते थे कि अपने जिस्म को गन्दगी से, कपड़ों को मैल-कुचैल से, ज़ुबान को गन्दी बातों से, दिल को झूठे अक़ीदों से पाक व साफ़ रखें, वायदे और इक़रार की सख्त पाबंदी करें, लेन-देन में किसी से धोखादेही न करें, खुदा की ज़ात को किसी कमी से, खराबी से, ऐब से पाक समझें। इस बात का पक्का यक़ीन रखें कि ज़मीन, आसमान, चांद, सूरज, छोटे-बड़े सब खुदा के पैदा किए हुए हैं, सब उसी के मुहताज हैं, दुआ का क़ुबूल करना, बीमार को सेहत व तन्दुरुस्ती देना, मुरादें पूरी करना अल्लाह के अख्तियार में है। अल्लाह की मर्ज़ी और हुक्म के बग़ैर कोई भी कुछ नहीं कर सकता। फ़रिश्ते और नबी भी उस के हुक्म के खिलाफ़ कुछ नहीं करते।

अरब में उकाज़ और बुऐना और ज़िलमजाज़ के मेले बहुत मशहूर थे। दूर-दूर से लोग वहां आया करते थे। नबी सल्ल० उन जगहों पर जाते और मेले में आए हुए लोगों को इस्लाम और तौहीद की दावत दिया करते थे।

क़ुरैश की मुख़ालफ़त

आप का खुल कर इस्लाम की तब्लीग़ करना कोई मामूली बात न थी। इसने क़ुरैश और दूसरे लोगों में एक आग लगा दी और हर तरफ़ इस दावत के बारे में एतराज होने लगे।

एक बार आंहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने हरमे काबा में जाकर तौहीद का एलान फ़रमाया। मुश्रिकों के नज़दीक यह हरमे काबा की सब से बड़ी तौहीन थी। इस एलान के करते ही एक हंगामा उठ खड़ा हुआ। हर तरफ़ से लोग आप पर टूट पड़े। हज़रत हारिस बिन अबी हाला आप की मदद के लिए दौड़े, लेकिन उन पर चारों तरफ़ से इतनी तलवारें पड़ीं कि वे शहीद हो गये। इस्लाम की राह में यह पहली शहादत थी। अल्लाह के फ़ज़्ल से हज़रत मुहम्मद सल्ल० हिफ़ाज़त से रहे और किसी न किसी तरह हंगामा खत्म हुआ।

इसी तरह ज़ुल्म व सितम की चक्की चलानी उस वक़्त और तेज़ कर दी गयी, जब लोग इस्लाम की तरफ़ लपकने लगे। इस्लाम और मुसलमानों को दबाने और कुचलने की पहली तद्बीर उन्होंने यह अख्तियार की कि इस्लाम लाने वालों को ज़्यादा से ज़्यादा तक्लीफ़ दी जाए, उन्हें डराया-धमकाया जाए, ताकि जो मुसलमान हो चुके हैं, वे वापस आ जाएं और दूसरे लोग इस तक्लीफ़ और परेशानी को देख कर इस ओर बढ़ने न पाएं। जैसे, हज़रत बिलाल रज़ियल्लाहु अन्हु हब्शी थे, उमय्या बिन खल्फ़ के ग़ुलाम थे। जब उमय्या ने सुना कि बिलाल रज़ि० मुसलमान हो गये, तो उन्हें तक्लीफ़ पहुंचाने के उसने नये-नये तरीक़े ईजाद किये —

☐ गरदन में रस्सी डाल कर लड़कों के हाथ में दी जाती और वे मक्के की पहाड़ियों में उन्हें लिए फिरते, यहां तक कि रस्सी का निशान पड़ जाता।

☐ मक्का की घाटी की गर्म रेत में उन्हें लिटा दिया जाता और गर्म-गर्म पत्थर उन की छाती पर रख दिया जाता।

☐ मश्कें बांध कर लकड़ियों से पीटा जाता।

☐ धूप में बिठाया जाता।

☐ भूखा रखा जाता।

हज़रत बिलाल रज़ि० इन सब हालतों में, तक्लीफ़ और बेचैनी की इंतिहा के बावजूद 'अहद-अहद' (अल्लाह एक है, अल्लाह एक है) के नारे लगाते रहते। हज़रत अबूबक्र सिद्दीक़ रज़ि० से हज़रत बिलाल रज़ि० की यह सूरत देखी न गयी, यहां तक कि उन्हें ख़रीद लिया और अल्लाह के नाम पर आज़ाद कर दिया।

हज़रत अम्मार रज़ि० और उन के वालिद हज़रत यासिर रज़ि०, उन की वालिदा हज़रत सुमय्या रज़ि० मुसलमान हो गये थे। अबूजह्ल ने उन्हें तरह-तरह की तक्लीफ़ें पहुंचायीं। वह उन्हें जलती हुई रेत पर लिटा कर इतना मारता कि ये बे-होश हो जाते।

एक दिन नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इन्हें तक्लीफ़ उठाते देख लिया, फ़रमाया—

'इस्बिरू या आ-ल यासिर फ़ इन-नल्ला-ह यूअि-द-कुमुल जन्न

'यासिर वालो, सब्र करो, तुम्हारी जगह जन्नत है।)

कमबख़्त अबूजह्ल ने बीबी सुमय्या की शर्मगाह में इस बेदर्दी से नेज़ा मारा कि वह इसी में शहीद हो गयीं।

हुज़ूर सल्ल० के साथियों पर ज़ुल्म व सितम के तो पहाड़ तोड़े ही जा रहे थे, ख़ुद पैग़म्बरे इस्लाम सल्ल० भी इस से बचे न थे—

नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के रास्ते में कांटे बिछाए जाते, ताकि रात के अंधेरे में आप के पांव ज़ख़्मी हों।

घर के दरवाज़े पर गन्दगी फेंक दी जाती, ताकि सेहत ख़राब हो और सुकून भी ख़त्म हो। इन बातों पर पैग़म्बरे इस्लाम सल्ल० सिर्फ़ इतना फ़रमा दिया करते कि ऐ अब्दे मुनाफ़ की औलाद! पड़ोस का हक़ ख़ूब अदा करते हो।

इब्ने अब्बास रज़ि० का आंखों देखा बयान है कि एक दिन नबी सल्ल० ख़ाना-काबा में नमाज़ पढ़ रहे थे। उक़्बा बिन अबी मुईत आया। उसने अपनी चादर को ऐंठ कर रस्सी जैसा बना दिया और जब नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम सज्दे में गये तो चादर को हुज़ूर सल्ल० की गरदन में डाल दिया और ऐंठना शुरू किया। मुबारक गरदन बड़ी हद तक कस-सी गयी थी, फिर भी आप दिल के पूरे इत्मीनान के साथ सज्दे में पड़े हुए थे। इतने में हज़रत अबूबक्र सिद्दीक़ रज़ि० आए। उन्होंने धक्के देकर उक़्बा को हटाया और ज़ुबान से यह आयत भी पढ़ कर सुनायी—

'क्या तुम एक ऐसे आदमी को मारते हो और सिर्फ़ इस जुर्म में कि

वह अल्लाह को अपना परवरदिगार कहता है, तुम्हारे पास अपनी रोशन दलीलें भी लेकर आया है।'

कुछ बदमाश हज़रत अबूबक्र सिद्दीक़ रज़ि० से लिपट गये और उन्हें मारा-पीटा।

एक और वाक़िआ है कि पैग़म्बरे इस्लाम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ख़ाना काबा में नमाज़ पढ़ने लगे। क़ुरैश भी ख़ाना काबा में आ-बैठे। अबूजहल बोला कि आज शहर में फ़्लां जगह ऊंट ज़िब्ह हुआ है, ओझड़ी पड़ी हुई है, कोई जाए उठा लाए और इस (नबी सल्ल०) के ऊपर धर दे। बदबख़्त उक़्बा उठा, नजासत भरी ओझड़ी उठा लाया और जब नबी सल्ल० सज्दे में गये, तो मुबारक पीठ पर रख दी। पैग़म्बरे इस्लाम सल्ल० तो नमाज़ में अपने रब की तरफ़ ध्यान लगाए हुए थे, कुछ ख़बर न हुई, जबकि काफ़िर हंसी के मारे लोट-पोट हुए जाते थे और एक दूसरे पर गिरे जाते थे।

इब्ने मस्ऊद सहाबी भी मौजूद थे, काफ़िरों की भीड़ देख कर उन का तो हौसला न पड़ा, पर बेचारी सय्यदा ज़ोहरा रज़ि० आ गयीं। उन्हों ने आप की पीठ पर से ओझड़ी को फेंक दिया और इन बद-बख़्तों को बहुत कुछ कहा-सुना भी।

गन्दा प्रचार

ज्यों-ज्यों विरोध बढ़ रहा था, इस्लाम की आवाज़ भी तेज़ी से फैल रही थी। इस प्रचार को देख कर क़ुरैश की परेशानी बराबर बढ़ती गयी। उन्होंने दूसरी चालें चलीं। उन्होंने मुहिम चला दी कि इस्लाम को और मुहम्मद सल्ल० को सोसाइटी से कोई असरदार हिमायत व हमदर्दी न मिले। हिमायत और हमदर्दी से यह महरूमी उन्हें मायूस कर देगी और उन का ज़ोर अपने आप ही टूट जाएगा।

पूरा अरब जानता था कि पैग़म्बरे इस्लाम हज़रत मुहम्मद सल्ल० के सर पर अबूतालिब का हाथ है, जो मक्का के सब से ज़्यादा असरदार शख़्स हैं। सब से पहले उन्हीं पर दबाव डाला गया कि वह अपने भतीजे के सर पर से हाथ खींच लें। उन पर दबाव डालने का सिलसिला चलता रहा, लेकिन हर बार क़ुरैश को नाकामी होती।

इस बार रबीआ के दोनों बेटे उत्बा और शैबा, अबू सुफ़ियान बिन हर्ब, अबुल बख़्तरी, असवद बिन अब्दुल मुत्तलिब, अबू जहल, वलीद बिन मुग़ीरह, हज्जाज बिन आमिर के दोनों बेटे नबीह और मुनब्बह और आस बिन वाइल जैसे सरदार आंहुज़ूर सल्ल० के चचा के पास पहुंचे और बोले—

—ऐ अबू तालिब ! तेरा भतीजा हमारे ख़ुदाओं और देवी-देवताओं को गालियां देता है, हमारे धर्म में ऐब निकालता है, हमारे बुज़ुर्गों को मूर्ख कहता है और हमारे बाप-दादों को गुमराह कहता है, अब या तो तुम उस को हमारे ख़िलाफ़ ऐसी ज़्यादतियां करने से रोको या हमारे और उस के दर्मियान से तुम निकल जाओ, क्योंकि तुम भी (अक़ीदे और मज़हब के लिहाज़ से) हमारी तरह उस के ख़िलाफ़ हो। उस की जगह हम तुम्हारे लिए काफ़ी होंगे।

अबू तालिब ने पूरी बात ठंडे दिल व दिमाग़ से सुनी और नर्मी से समझा-बुझा कर मामला टाल दिया। ये लोग मायूस होकर चले गये।

इसी तरह एक और वफ़्द आया, वह भी यही रोना रोने लगा—

'ऐ अबू तालिब ! तुम हमारे दर्मियान उम्र, शराफ़त और इज़्ज़त, तजुर्बे के लिहाज़ से एक बड़ा दर्जा रखते हो। हमने मांग की थी कि अपने भतीजे से हमें बचाओ, लेकिन तुमने यह नहीं किया और ख़ुदा की क़सम ! जिस तरह हमारे बाप-दादा को गालियां दी जा रही हैं, जिस तरह हमारे बुज़ुर्गों को मूर्ख बताया जा रहा है और जिस तरह हमारे देवी-देवताओं की पकड़ की जा रही है, उसे हम बरदाश्त नहीं कर सकते—मगर यह कि तुम उसे रोको या फिर हम उस से भी और तुम से भी लड़ेंगे, यहां तक कि एक फ़रीक़ का ख़ात्मा हो जाए।

अबू तालिब ने आंहुज़ूर सल्ल० को बुलाया और सारी बात बतायी, फिर नर्मी से कहा कि भतीजे ! मुझ पर ऐसा बोझ न डालो, जिस का उठाना मेरे बस से बाहर हो।

उस वक़्त ऐसी शक्ल बन गयी थी कि हुज़ूर सल्ल० के पांव जमाने के लिए सहारे का जो पत्थर था, वह खसकता नज़र आया, लेकिन पैग़म्बरे इस्लाम सल्ल० ख़ूब जानते थे कि हक़ की आवाज़ को दबाने के ये सब हथकंडे हैं, क़ुरैश की अपनी चौधराहट ख़त्म होती नज़र आ रही है, बौखलाहट में झूठे इल्ज़ाम और ग़लत प्रोपगंडे कर के हक़ की राह से उस के राहियों को हटाने की चालें चल रहे हैं, इस लिए अबूतालिब की

जाहिरी फिसलन के बाद भी आप अडिग रहे, जवाब दिया—

'चचा! खुदा की क़सम!! ये लोग अगर मेरे दाहिने हाथ पर सूरज और बाएं हाथ पर चांद रख कर चाहें कि इस मिशन को छोड़ दूं, तो मैं इस से रुक नहीं सकता, यहां तक कि या तो अल्लाह तआला इस मिशन को ग़ालिब कर दे या मैं इसी जद्दोजेहद में खत्म हो जाऊं।'

अबूतालिब को भी आप सल्ल० के इस एलान में सच्चाई नजर आयी, भतीजे की अडिगता देख कर बोले, जाओ, जो कुछ तुम्हें पसन्द है, उसकी ओर लोगों को बुलाओ, मैं किसी चीज़ की वजह से भी तुम को नहीं छोड़ूंगा।

एक और वफ्द अम्मारा बिन वलीद को लेकर फिर आया। इस बार ये लोग एक और ही स्कीम लेकर आए थे। अबूतालिब से बोले, देखिए यह अम्मारा बिन वलीद है, जो कुरैश में एक मज़बूत और खूबसूरत जवान है, इसे ले लीजिए। इस की अक्ल और इस की ताक़त आपके काम आएगी, इसे अपना बेटा बना लीजिए और इस के बदले में मुहम्मद को हमारे हवाले कर दीजिए, जिसने कि आप के, आप के बाप-दादों के दीन की मुखालफ़त शुरू कर रखी है और आप की क़ौम बिखरती और टूटती जा रही है। इसे हम क़त्ल कर देना चाहते हैं। सीधे-सीधे एक आदमी के बदले में हम एक आदमी आप को देते हैं।

इस बे-तुकी मांग से अबूतालिब भी तिलमिला उठे, बोले, 'तुम लोग यह चाहते हो कि तुम्हारे बेटे को तो मैं लेकर पालूं-पोसूं, मेरे बेटे को तुम लेकर तलवार के नीचे से गुज़ार दो। ऐसा कभी नहीं हो सकता।'

वफ्द खिसया कर चला गया।

आगे चल कर, जब मुखालिफ़ कैम्प से निकल कर दो जयाले जवान हज़रत हमज़ा और उमर रज़ि० इस्लामी कैम्प में शामिल हो गये, तो क़ुरैश में खलबली की नयी लहर दौड़ गयी, उन्होंने महसूस किया कि मुहम्मद की चलायी हुई हवा, इतनी कोशिशों के बावजूद हर घर में पहुंच गयी, कुछ करना चाहिए। अबूतालिब की बीमारी की हालत में लोग फिर पहुंचे। इस बार समझौते की नीयत से आए थे। वफ्द ने कहा—जो कुछ हो रहा, इसे तो आप जानते हैं। अपने भतीजे को बुलवाइए। उस के बारे में हम से अह्द लीजिए और हमारे बारे में उस का अह्द दिलवाइए। वह हम से अलग रहे, हम उस से और उस के मज़हब से न वास्ता रखें।

पैग़म्बरे इस्लाम सल्ल० बुलवाए गये, बातें हुईं, आपने सारी मांगें

सुनने के बाद जवाब दिया, 'ऐ क़ुरैश के शरीफ़ लोगो ! मेरे इस एक कलिमे को मान लो, तो फिर अरब व अजम सब तुम्हारे पैरों तले आ जाएंगे।'

कितने यक़ीन के साथ फ़रमाया था आंहुज़ूर सल्ल० ने गोया अंधेरी रात में आप पूरे यक़ीन के साथ फ़रमा रहे हों कि अभी सूरज निकलने वाला है।

अबू जह्ल कैसे इसे सह लेता, तनक कर बोला, 'हां, तेरे बाप की क़सम ! एक क्यों, दस कलिमे चलेंगे।'

कोई दूसरा बोला, 'यह शख़्स तो ख़ुदा की क़सम ! तुम्हारी मर्ज़ी की कोई बात तो मान कर देने का नहीं ?'

इस के बाद ये लोग मायूस होकर चले गये।

हब्शा की हिजरत

फिर क़ुरैश ने हर मुम्किन कोशिश की कि किसी तरह यह मिशन रुक जाए, इस्लाम की दावत पर बंद बांध दिया जाए, सच्चाई की यह आवाज़ दब जाए, लेकिन—

फूंकों से यह चिराग़ बुझाया न जाएगा।

फिर भी हर मुसीबत की कोई हद होती है। इम्तिहान की जिन कठिन घड़ियों का मुसलमानों को सामना करना पड़ रहा था, उन्हें झेलने और अडिग रहने का उन्होंने एक यादगारी नमूना क़ायम कर दिया था, लेकिन ज़ुल्म व सितम की चक्की का दौर भी ख़त्म होने का नाम न लेता था। मुसलमान पिस रहे थे, दबाए-कुचले जा रहे थे। हज़रत मुहम्मद सल्ल० अपने साथियों का हाल देख-देख कर कुढ़ते, पर कोई ज़ोर न चलता था। सहारा था तो ख़ुदा के ईमान का था, आख़िरत के यक़ीन का था, सच्चाई की आख़िरी जीत की मज़बूत उम्मीदों का था।

हुज़ूर सल्ल० अपने साथियों को तसल्ली देते कि ख़ुदा कोई न कोई रास्ता निकालेगा। मुसलमान बेचैन थे कि अल्लाह की मदद कब आएगी. इन हालात में हुज़ूर सल्ल० ने साथियों को मश्विरा दिया कि, 'ज़मीन में कहीं निकल जाओ, ख़ुदा जल्द ही तुम को किसी जगह इकट्ठा कर देगा।' पूछा गया कि किधर जाएं ? हुज़ूर सल्ल० ने हब्शा की तरह इशारा कर

दिया।

नुबूवत के पांचवें साल इजाज़त मिलने के बाद एक छोटा-सा क़ाफ़िला १२ मर्दों और औरतों का रात के अंधेरे में निकला और जद्दा के बन्दरगाह से जहाज़ में सवार हो कर हब्शा को रवाना हो गया।

इस छोटे से क़ाफ़िले के सरदार हज़रत उस्मान बिन अफ़्फ़ान रज़ि० थे। हज़रत रुक़य्या रज़ि० (हज़रत मुहम्मद सल्ल० की बेटी) उन के साथ थीं। नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया, हज़रत लूत और हज़रत इब्राहीम अलैहिमस्सलाम के बाद यह पहला जोड़ा है, जिन्हों ने ख़ुदा की राह में हिजरत की।

इस क़ाफ़िले के निकलने के बाद जब क़ुरैश को ख़बर हुई तो उन के पीछे आदमी दौड़ा दिए. मगर जब वे बन्दरगाह (जद्दा) पहुंचे तो मालूम हुआ कि उन को ठीक वक़्त पर जहाज़ तैयार मिल गया था और वे अब पहुंच से बाहर हैं।

ये मुहाजिर कुछ ही दिनों (रजब से शव्वाल तक) हब्शा में ठहरे कि एक अफ़वाह पहुंची, यानी यह कि क़ुरैश ने इस्लाम क़ुबूल कर लिया है। ये सभी पलट आए, पर मक्का के क़रीब पहुंचने पर ही मालूम हो गया कि अफ़वाह ग़लत थी।

दोबारा बहुत बड़ा क़ाफ़िला ८५ मर्दों और १७ औरतों का हब्शा की तरफ़ रवाना हुआ। हब्शा में अम्न और सुकून के साथ ज़िंदगी गुज़ारने लगे। इन में नबी सल्ल० के चचेरे भाई हज़रत जाफ़र तैयार भी थे।

हब्शा में मुसलमानों का अम्न और सुकून के साथ रहना क़ुरैश की और ज़्यादा बेचैनी की वजह बन गया। वे एक जगह जमा हुए, सारे मामले पर ग़ौर कर के स्कीम बनाई और अब्दुल्लाह बिन रबीआ और अम्र बिन आस को हब्शा के बादशाह के पास अपना खास दूत बना कर भेजने का फ़ैसला दिया। इस मक़सद के लिए नजाशी और उस के दरबारियों के लिए क़ीमती-क़ीमती तोहफ़े तैयार किये गए और बड़े साज़ व सामान के साथ इन दूतों को हब्शा रवाना किया गया।

हब्शा पहुंच कर ये लोग दरबारियों और पादरियों से साज़िश करने में लग गये। इन को ख़ूब-ख़ूब रिश्वतें चढ़ायीं, लालच दिए और उन के सामने यह शक्ल रखी कि हमारे शहर में कुछ सर-फिरे लोगों ने एक मज़हबी फ़ित्ना खड़ा कर दिया है और यह तुम्हारे मज़हब के लिए भी उतना ही ख़तरनाक है, जितना हमारे बाप-दादों के धर्म के लिए। हम ने इन को

निकाल दिया था, तो अब ये आप की पनाह में आ पड़े हैं। इन को यहां टिकने नहीं देना चाहिए। इस मक़सद में आप हमारी मदद करें।

उन की असल कोशिश यह थी कि दरबार में सारा झगड़ा खुल कर न आने पाए और मुहाजिरों को सिरे से बात करने का मौक़ा ही न मिले। बादशाह यकतरफ़ा बात सुन कर मुसलमानों को हमारे हवाले कर दे। इसी मक़सद के लिए रिश्वत और जोड़-तोड़ के तरीक़े अपनाये गये थे।

ये लोग जब दरबारियों और पादरियों को मक्खन लगा चुके, तो नजाशी के सामने तोहफ़ लेकर पेश हुए, फिर अपना मक़सद बयान किया कि मक्का के शरीफ़ों ने हम को आप की खिदमत में इस लिए भेजा है कि आप हमारे आदमियों को हमारे साथ वापस कर दें। दरबारियों और पादरियों ने भी ताईद की। पर नजाशी ने यकतरफ़ा दावे पर कार्रवाई करने से इन्कार कर दिया और साफ़ कहा कि इन लोगों से हालात मालूम किये बग़ैर मैं उन को तुम्हारे हवाले नहीं कर सकता।

दूसरे दिन दरबार में दोनों फ़रीक़ तलब किए गए।

मुसलमानों को जब तलबी का पैग़ाम पहुंचा, तो उन के दर्मियान मश्विरा हुआ कि बादशाह ईसाई है और हम लोग अपने एतक़ाद और ख्याल के लिहाज़ से उस से इख़्तिलाफ़ ही रखते हैं, तो आख़िर क्या कहा जाए, लेकिन फ़ैसला यही हुआ कि हम दरबार में वही कुछ कहेंगे, जो कुछ ख़ुदा के नबी सल्ल० ने हम को सिखाया है, नतीजा जो भी निकले।

फिर जब ये लोग दरबार में पहुंचे, तो दरबार के आदाब के मुताबिक़ नजाशी को सज्दा नहीं किया।

दरबारियों ने इसे बुरा जाना सवाल किया, गया कि आख़िर तुम लोगों ने सज्दा क्यों नहीं किया ?

हज़रत जाफ़र ने पूरे यक़ीन के साथ जवाब दिया कि हम लोग अल्लाह के सिवा किसी को सज्दा नहीं करते और ख़ुदा के सिवा अल्लाह के रसूल सल्ल० को भी सीधे-सादे तरीक़े से सलाम करते हैं।

अब मक्का के दूतों ने अपना दावा पेश किया कि ये मुहाजिर भगोड़े मुजरिम हैं, इन्होंने अपना एक नया दीन गढ़ लिया है और हमारे देश में फ़ित्ने और बिगाड़ की जड़ बन गये हैं, इस लिए इन को हमारे हवाले किया जाए।

नजाशी ने मुसलमानों से पूछा, यह क्या मामला है और ईसाई धर्म और बुत परस्ती के मुक़ाबले में वह कौन सा धर्म है, जिसे तुम लोगों ने

अख्तियार कर रखा है।

हज़रत जाफ़र रज़ि० मुसलमानों की तरफ़ से उठे, उन्होंने नजाशी से इजाज़त तलब की कि वह पहले मक्का के दूतों से कुछ पूछ लें, फिर अपनी बात कहें। इजाज़त मिलने पर उन्होंने पूछा—

'क्या हम किसी के गुलाम हैं, जो मालिक की बे-इजाज़त भाग आए हों? अगर ऐसा है, तो हमें वापस किया जाना चाहिए?'

अम्र बिन आस बोला, 'नहीं, ये लोग किसी के गुलाम नहीं, आज़ाद शरीफ़ लोग हैं।

पूछा, 'क्या हम किसी को ना-हक़ क़त्ल कर के आए हैं? अगर ऐसा हो तो आप हमें मक़्तूल के वारिसों के हवाले कर दें?'

जवाब मिला, 'नहीं, इन्हों ने खून का एक क़तरा भी नहीं बहाया।'

सवाल किया, 'क्या हम किसी का कुछ माल लेकर भागे हैं? अगर ऐसा हो तो हम उसे अदा करने को तैयार हैं।'

जवाब में कहा, नहीं, इन के ज़िम्मे किसी की एक पाई नहीं।

इस जिरह से जब मुसलमानों की अख्लाक़ी पोजीशन पूरी तरह साफ़ हो गयी, तो हज़रत जाफ़र रज़ि० ने यह तक़रीर की—

'ऐ बादशाह! हम एक ज़माने से जिहालत और गुमराही के अंधेरे में भटक रहे थे, एक खुदा को भूल कर सैकड़ों बुतों को पूजा करते थे, मुर्दार खाते थे, ज़िना, लूट-मार, चोरी और एक दूसरे पर ज़ुल्म करना हमारा रात-दिन का काम था, हमारा हर ताक़तवर अपने कमज़ोर को खा जाने पर फ़ख करता था, ग़रज़ यह कि हमारी ज़िंदगी दरिंदों और जानवरों से भी गयी गुज़री थी।

अल्लाह की रहमत देखिए कि उसने हमारे हाल पर रहम फ़रमाया, हम में से एक शख्स ऐसा पैदा हुआ है, जिसे अल्लाह ने अपना रसूल बनाया। हम उस के खानदान को जानते हैं, वह निहायत शरीफ़ है। हम उसके हालात जानते हैं, वह इंतिहाई सच्चा, अमानतदार और पाकदामन है। दोस्त और दुश्मन सभी उस की नेकी और शराफ़त के क़ायल हैं।

उसने हम को इस्लाम की दावत दी और यह सिखाया कि हम पत्थरों को पूजना छोड़ दें, सिर्फ़ एक अल्लाह को अपना आक़ा और मालिक मानें और उसी की बन्दगी अपनाएं, सच बोलें, क़त्ल व ग़ारत से बाज़ आएं, यतीमों का माल न खाएं, पड़ोसियों की मदद करें, ज़िनाकारी और दूसरी गन्दी बातों से बचें, नमाज़ पढ़ें, रोज़े रखें, अल्लाह की राह में अपना

माल खर्च करें ग़रीबों और बे-सहारों की मदद करें।

हम उस पर ईमान लाए, शिर्क और बुत परस्ती को छोड़ दिया, और तमाम बुरे कामों से तौबा की, इस पर हमारी क़ौम हमारी दुश्मन हो गयी और हमें मजबूर करती रही कि हम फिर पलट कर उन्हीं के दीन पर आ जाएं और इसी ग़रज़ के लिए अब ये लोग आप से हमारी वापसी का इसरार कर रहे हैं।

बात सच्ची हो और कहने वाला पूरे ख़ुलूस से उसे कहे, तो वह अपना असर दिलों पर छोड़ती ही है। नजाशी जैसे ख़ुदा तरस बादशाह का दिल पिघल कर मोम हो गया। कहने लगा कि ज़रा उस किताब का भी कोई हिस्सा सुनाओ, जो तुम लोगों पर उतरी है।

चुनांचे हज़रत जाफ़र रज़ि० ने सूरः मरयम की कुछ आयतें पढ़ कर सुनायीं। अल्लाह की आयतें सुन कर बादशाह का दिल पिघल उठा, उस की आंखें आंसुओं से तर हो गयीं। वह बे-अख़्तियार पुकार उठा, 'ख़ुदा की क़सम ! यह कलाम और इंजील दोनों एक ही चिराग़ का अक्स हैं। बल्कि उस ने यह भी कहा कि, 'मुहम्मद तो वही रसूल हैं, जिन की ख़बर यसूअ मसीह ने दी थी। अल्लाह का शुक्र है कि मुझ उस रसूल का ज़माना मिला।'

साथ ही फ़ैसला दिया कि मुहाजिरों को वापस नहीं किया जा सकता। कार्रवाई ख़त्म हुई और मक्का के दूतों पर मायूसी छा गयी।

दूसरे दिन क़ुरैश ने एक और चाल चली।

दरबार में जा कर कहा कि ज़रा इन मुसलमानों से यह तो पूछिए कि ये हज़रत ईसा अलै० के बारे में क्या अक़ीदा रखते हैं। ये लोग जानते थे कि मुसलमान तो ईसाइयों के अक़ीदे के ख़िलाफ़ हज़रत ईसा को अल्लाह का बेटा कहने के बदले मरयम का बेटा कहते हैं और जब यह बात नजाशी के सामने आएगी तो वह ज़रूर मुसलमानों से बद-गुमान होगा।

नजाशी ने फिर मुसलमानों को दरबार में बुला भेजा। जब यह शक्ल सामने आयी तो पहले तो मुसलमानों को तरद्दुद हुआ कि पता नहीं नजाशी पर क्या इस का असर हो, लेकिन हज़रत जाफ़र रज़ि० ने कहा, जो कुछ भी हो, हमें बात सच्ची ही कहनी चाहिए।

चुनांचे हज़रत जाफ़र रज़ि० ने भरे दरबार में एलान फ़रमाया कि,

'हमारे पैग़म्बर ने हमें बताया है कि हज़रत ईसा अलै० ख़ुदा के बंदे और उस के पैग़म्बर हैं और 'कलिमतुल्लाह' हैं।

यह सुन कर नजाशी ने ज़मीन से एक तिनका उठाया और कहा, 'ख़ुदा की क़सम ! जो तुम ने कहा, हज़रत ईसा इस तिनके के बराबर भी इस से ज़्यादा नहीं थे।'

पादरी जो साज़िश का शिकार और रिश्वत और तोहफ़ों के बोझ से दबे हुये थे, दिल ही दिल में तिलमिला रहे थे, यहां तक कि उनके नथनों से सांस की खरखराहट सुनायी देने लगी।

नजाशी ने उन की कुछ भी परवा न की, हुक्म दिया कि तमाम तोहफ़े वापस कर दिए जाएं। इस तरह क़ुरैश का यह दांव भी नाकाम हो गया और खिसयाने हो कर उन के दूत मक्का लौटे।

नजाशी ने हज़रत जाफ़र और आप के साथियों को इज़्ज़त के साथ अपने मुल्क में रहने की इजाज़त दे दी और उस ने हज़रत मुहम्मद सल्ल० की नुबूवत की तस्दीक़ करके इस्लाम क़ुबूल कर लिया। उस नजाशी का नाम असमहा था। जब उसका इंतिक़ाल हुआ तो हुज़ूर सल्ल० ने ग़ायबाना तौर पर उस की नमाज़ जनाज़ा पढ़ी।

धीरे-धीरे लगभग ८३ मुसलमान हब्शा को हिजरत कर गये।

हज़रत हमज़ा का इस्लाम

मक्का में एक ओर क़ुरैश के ज़ुल्म व सितम की चक्की थी जो बराबर मुसलमानों को अपने पाटों में पीस रही थी, दूसरी तरफ़ पैग़म्बरे इस्लाम हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम और आपके साथियों का सब्र और जमाव था कि समाज के बेहतरीन इंसान भी खिंच-खिंच कर इस मज़्लूम क़ाफ़िले में शरीक होते जा रहे थे।

एक दिन की बात है और यह नुबूवत के छठे वर्ष का वाक़िआ है कि आंहुज़ूर सल्ल० सफ़ा की पहाड़ी पर बैठे हुए थे। अबू जहल वहां पहुंच गया। उस ने नबी सल्ल० को पहले गालियां दीं और जब नबी सल्ल० गालियां सुन कर चुप रहे, तो उस ने पत्थर हुज़ूर सल्ल० के सर पर फेंक मारा, जिस से ख़ून चलने लगा।

इत्तिफ़ाक़ से अब्दुल्लाह बिन जदआन की लौंडी ने यह सारा माजरा देखा। हज़रत हमज़ा शिकार पर गये हुए थे। कमान उठाए हुए वापस आए तो उस लौंडी ने क़िस्सा सुनाया और कहा कि, 'हाय ! काश

तुम खुद देख सकते कि तुम्हारे भतीजे पर क्या गुज़री !'

यह सुन कर भतीजे की हमदर्दी में चचा का दिल तड़प उठा। सीधे क़ुरैश की मज्लिस में पहुंचे, जहां अबू जह्ल बैठा था। हरम में जा कर अबू जह्ल के सर पर कमान मारी और कहा कि, 'क्या तुम ने मुहम्मद को गाली दी थी ? अगर ऐसा है तो मैं भी उन के दीन पर हूं और जो कुछ वह कहता है, वही कुछ मैं भी कहता हूं। अब अगर हिम्मत है, तो मेरे मुक़ाबले पर आओ।'

अबू जह्ल की हिमायत में बनी मख़्ज़ूम का एक शख़्स मज्लिस से उठा, मगर अबू जह्ल ने उसे यह कह कर रोक दिया कि जाने दो, मैं ने अबू अम्मारा के भतीजे को बहुत गन्दी गालियां दी हैं।

हमज़ा फिर नबी सल्ल० के पास गये और कहा, भतीजे ! तुम यह सुन कर खुश होगे कि मैं ने अबू जह्ल से तुम्हारा बदला ले लिया।

नबी सल्ल० ने फ़रमाया, 'चचा ! मैं ऐसी बातों से खुश नहीं हुआ करता, हां, तुम मुसलमान हो जाओ, तो मुझे बड़ी खुशी हो।'

हमज़ा ने जोश में आकर जो कुछ अबू जह्ल से कहा था, उस ने अपना रंग दिखाया, हक़ ग़ालिब आया और उन्हों ने इस्लाम क़ुबूल कर लिया।

हज़रत उमर का इस्लाम

क़ुरैश के ज़ुल्म व सितम की दास्तान का एक हिस्सा उमर से भी मुताल्लिक़ है। उमर सत्ताईसवें साल में थे, जब मुहम्मद सल्ल० की नुबूवत की आवाज़ गूंजी। इस्लाम आप के घराने में भी पहुंच गया। पहले आप के बहनोई सईद ने इस्लाम क़ुबूल किया। उन के असर से आप की बहन फ़ातिमा भी मुसलमान हो गयीं। खानदान के एक और असर और इज़्ज़त वाले शख़्स नईम बिन अब्दुल्लाह ने भी इस्लाम क़ुबूल कर लिया।

पहले तो उमर को उन के इस्लाम की बात न मालूम हुई, ज्यों ही मालूम हुआ, यह आपे से बाहर हो गये और इस्लाम लाने वालों के दुश्मन बन गये।

लबीना उन के खानदान की लौंडी थीं, इस्लाम क़ुबूल करने की वजह से उन्हें इतना मारते कि मारते-मारते थक जाते तो दम लेने के लिए

अलग खड़े हो जाते, सांस लेने के बाद फिर मारना शुरू कर देते।

आखिर एक दिन तै कर लिया कि क्यों न असल शख्स हज़रत मुहम्मद सल्ल० ही पर हाथ साफ़ कर दिया जाए। वह इस ग़रज़ से तलवार लेकर निकले। रास्ते में नईम बिन अब्दुल्लाह से मुलाक़ात हो गयी। उन्हों ने कहा, पहले अपने घर की खबर लो और बहन और बहनोई से निबट लो, फिर किसी और तरफ़ जाना।

फ़ौरन पलटे और बहन के घर पहुंचे। वह क़ुरआन पढ़ रही थीं। आहट हुई तो खामोश हो गयीं और क़ुरआन के उन पन्नों को छिपा लिया।

उमर ने पूछा, यह क्या पढ़ा जा रहा था? बहन ने टाला, कहने लगे कि मुझे मालूम हो चुका है कि तुम दोनों पुराने धर्म से फिर चुके हो। यह कह कर बहनोई पर टूट पड़े। बहन बीच-बचाव के लिए आयीं, तो उन को मारा। उन का जिस्म लहू-लुहान हो गया, लेकिन डबडबाती आंखों के साथ, अपने ईमान को ज़ाहिर करते हुए बोलीं—

'उमर! जो कुछ कर सकते हो, करो, लेकिन इस्लाम अब दिल से नहीं निकल सकता।'

बहन के इस ईमान व यक़ीन का असर उमर पर भी हुआ, कहा, जो तुम पढ़ रही थीं, मुझे भी ला कर सुनाओ।

वह गयीं और क़ुरआन के पन्नों को निकाल लायीं। वह सूर: त्वाहा थी। आप ने पढ़ना शुरू किया और जब इस आयत पर पहुंचे—

'मैं हूं खुदा, मेरे सिवा कोई खुदा नहीं, तो मेरी बन्दगी करो और मेरी याद के लिए नमाज़ क़ायम करो।'

तो यह असर हुआ कि फ़ौरन पुकार उठे—

अश्हदुअल्लाइला-ह इल्लल्लाहु व अश्हदु अन-न मुहम्मदन अब्दुहू व रसूलुहू०

(मैं गवाही देता हूं कि अल्लाह के सिवा कोई माबूद नहीं और मैं गवाही देता हूं कि मुहम्मद उस के बन्दे और रसूल हैं।)

और सीधे आंहज़रत सल्ल० की खिदमत में रवाना हो गये। यह वह ज़माना था कि आंहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम हज़रत अरक़म के मकान में ठहरे हुए थे। दरवाज़े पर पहुंचे तो चूंकि तलवार हाथ में थी, सहाबा को चिन्ता हुई, लेकिन हज़रत हमज़ा रज़ि० ने फ़रमाया कि आने दो, अगर अच्छी नीयत से आया है, तो बेहतर है, वरना इसी की तलवार से उस का सर उड़ा दूंगा।

हज़रत उमर रज़ि० ने अन्दर क़दम रखा तो आंहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने बढ़ कर उन का दामन पकड़ा और फ़रमाया, क्यों उमर ! किस इरादे से आए हो ?

यह सुन कर हज़रत उमर रज़ि० पर एक रोब सा छा गया और बड़ी नर्मी से बोले, ईमान लाने के लिए ।'

हज़रत मुहम्मद सल्ल० बे-साख़्ता पुकार उठे, 'अल्लाहु अक्बर' और साथ ही तमाम साथियों ने नारा-ए-तक्बीर बुलंद किया ।

हज़रत उमर रज़ि० के इस्लाम लाने के बाद मुसलमानों की ताक़त काफ़ी बढ़ गयी, यहां तक कि मुसलमान अभी तक अपने मज़हबी फ़र्ज़ों को एलानिया अदा नहीं कर सकते थे और काबे में जमाअत के साथ नमाज़ पढ़ना तो मुम्किन ही न था । हज़रत उमर के इस्लाम लाने के बाद हालत बदल गयी । उन्हों ने एलानिया अपने इस्लाम का इज़्हार किया, अगरचे इस पर बड़ा हंगामा हुआ, लेकिन आख़िरकार मुसलमानों ने हरमे काबा में जमाअत के साथ नमाज़ पढ़ना शुरू कर दी ।

समाजी बाईकाट

हज़रत उमर रज़ि० हज़रत हमज़ा रज़ि०जैसे मशहूर और हौसला-मंद नव-जवानों के इस्लाम क़ुबूल कर लेने से क़ुरैश ने अच्छी तरह महसूस कर लिया कि अब इस्लाम की ताक़त जिस तेज़ी से बढ़ रही है, वह उनके ख़ात्मे की वजह बन सकती है, इस लिए उन्हों ने जल्द और फ़ैसला कर देने वाली चालों के बारे में सोचना शुरू किया ।

मुहर्रम सन् ०७ नबवी में मक्का के तमाम क़बीलों ने मिल कर एक समझौता किया कि बनू हाशिम ख़ानदान का बाईकाट किया जाए, इसलिए कि मुसलमान न होने के बावजूद वह नबी सल्ल० का साथ नहीं छोड़ता, कोई उन से रिश्ता न क़ायम करे, न उन से शादी-ब्याह का ताल्लुक़ रखे, न लेन-देन करे, न उन से मिले-जुले, न खाने-पीने का सामान उन तक पहुंचने दे, जब तक वे ख़ुद मुहम्मद (सल्ल०) को क़त्ल के लिए हमारे हवाले न कर दें ।

यह समझौता लिख कर काबे के दरवाज़े पर लटका दिया गया ।

यह फ़ैसला अबू तालिब से बहुत बार बात-चीत के बाद इस बात

से मायूस हो कर किया गया था कि न अबू तालिब रसूलुल्लाह को अपनी सरपरस्ती से निकालने पर तैयार हैं और न उन की वजह से बनू हाशिम ताल्लुक़ तोड़ सकते हैं।

अब बनू हाशिम के लिए दो ही रास्ते थे, या तो आंहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को काफ़िरों के हवाले कर दें या फिर इस बाईकाट की वजह से जो मुसीबतें आएं, उन्हें झेलने के लिए तैयार हो जाएं।

चुनांचे अबू तालिब मजबूर हो कर अपने पूरे खानदान के साथ पहाड़ के एक दर्रे में नज़रबंद हो गये, जो विरासत के तौर पर बनू हाशिम की मिल्कियत थी।

इस दर्रे में उन लोगों को आंहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के साथ ३ साल बड़ी सख्त ज़िदगी गुज़ारनी पड़ी। इस नज़रबन्दी के दौर में जो हालात गुज़रे हैं, उनको पढ़कर पत्थर दिलभी पिघलने लगता है। पेड़ों के पत्ते निगले जाते रहे और सूखे चमड़े उबाल-उबाल कर और आग पर भून-भून कर खाए जाते रहे। हालत यह हो गयी कि बनू हाशिम के मासूम बच्चे जब भूख के मारे बिलखते थे, तो दूर-दूर तक उन की दर्द भरी आवाजें जाती थीं। क़ुरैश इन आवाजों को सुनते तो मारे खुशी के झूम-झूम जाते।

नाका बन्दी इतनी सख्त थी कि एक बार हकीम बिन हिज़ाम (हज़रत ख़दीजा के भतीजे) ने कुछ अपने गुलाम के हाथ चोरी-छिपे भेजा, रास्ते में अबू जह्ल ने देख लिया और गेहूं छीनने लगा।

इत्तिफ़ाक से अबुल बख्तरी भी आ गया। उसके अन्दर किसी अच्छे इंसानी जज़्बे ने करवट ली और उस ने अबू जह्ल से कहा कि छोड़ो भी एक भतीजा, अपनी फूफी के लिए कुछ भेजता है, तो तुम उसे भी अब रोकते हो।

इसी तरह हिशाम बिन अम्र चोरी-छिपे कुछ ग़ल्ला भेज देते थे।

तीन वर्ष तक नबी सल्ल० और उन के खानदान ने इसी तरह काटे और जो मुसलमान थे, वे भी अपने घरों में क़ैदी बन कर रहने लगे।

यह तो अल्लाह की मेहरबानी हुई कि हालात ऐसे पैदा हो गये कि दुश्मनों को यह बाइकाट खुद खत्म करना पड़ा।

———

दो बड़े सहारे छूटे

नज़रबंदी और बाईकाट का दौर ख़त्म हुआ, लेकिन इस से यह न समझिए कि हालात सुधर गये थे, बल्कि हालात तो और भी सख़्त हो गये, सख़्त से सख़्त !

यह नुबूवत का दसवां साल था।

इस साल सब से पहला हादसा तो यह हुआ कि हज़रत अली रज़ि० के वालिद अबू तालिब की वफ़ात हो गयी। इस तरह वह एक ज़ाहिरी सहारा भी छिन गया, जो हुज़ूर सल्ल० को अपनी पनाह में दुश्मनों के लिए आख़िर दम तक आप पर हाथ उठाने में रुकावट बना रहा।

इसी साल हुज़ूर सल्ल० को दूसरा सदमा हज़रत ख़दीजा रज़ि० के इंतिक़ाल का उठाना पड़ा। हज़रत ख़दीजा रज़ि० सिर्फ़ आप की बीवी ही नहीं थीं, बल्कि सबसे पहले ईमान लाने वालों में से भी थीं। उन्हों ने इस्लाम से पहले भी और इस्लाम की दावत व तब्लीग़ के हर मरहले में भी हुज़ूर सल्ल० का पूरा-पूरा साथ देकर जीवन साथी होने का वाक़ई हक़ अदा कर दिया। माल भी ख़र्च किया, तसल्लियां भी दीं, मश्विरे भी दिए और भरपूर मदद भी की। सही ही कहा गया है कि—

व कानत लहू वज़ीरा० (वह हुज़ूर सल्ल० के लिए वज़ीर थीं।)

एक ओर एक के बाद एक दो सदमे हुज़ूर सल्ल० को सहने पड़े और दूसरी तरफ़ इन ज़ाहिरी सहारों के हट जाने से मुख़ालफ़त का तूफ़ान और ज़्यादा चढ़ाव पर आ गया। अब तो गोया मौजें सर से गुज़रने लगीं। पर शायद अल्लाह यही चाहता था कि सच्चाई अपना रास्ता आप बनाए, सच्चाई अपनी हिफ़ाज़त आप करे, सच्चाई अपने लिए ख़ुद ही एक सहारा साबित हो और वही हुआ।

अब क़ुरैश इंतिहाई ज़लील हरकतों पर उतर आए थे। लौंडों के झुंड के झुंड पीछे लगा दिए जाते, जो शोर मचाते और हुज़ूर सल्ल० नमाज़ पढ़ते तो वे तालियां पीटते। रास्ता चलते हुए हुज़ूर सल्ल० पर गन्दगी फेंक दी जाती, दरवाज़े के सामने कांटे बिछाए जाते, कभी गला घोंट दिया जाता और कभी ज़ुल्म के हाथ लम्बे कर दिए जाते। खुल्लम खुल्ला गालियां दी जातीं, फब्तियां कसी जातीं। आप के मुबारक चेहरे

पर मिट्टी फेंक दी जाती, बल्कि कुछ दुष्ट बद-तमीज़ी की इस इंतिहा को पहुंच गये थे कि आप के मुबारक रोशन चेहरे पर थूक देते।

एक बार अबू लहब की बीवी उम्मे जमील पत्थर लिए-लिए हुज़ूर सल्ल० की खोज में हरम तक इस इरादे से आयी कि एक ही वार में काम तमाम कर दे, पर हुज़ूर सल्ल० अगरचे हरम में सामने ही मौजूद थे, लेकिन खुदा ने उस की निगाह वहां तक पहुंचने न दी और वह हज़रत अबू बक्र सिद्दीक़ रज़ि० के सामने अपने दिल का बुखार निकाल कर चली आयी।

ऐसे ही एक बार अबू जह्ल ने पत्थर से हुज़ूर सल्ल० को हलाक कर देने का इरादा किया और इसी इरादे से हुज़ूर सल्ल० तक पहुंचा भी, पर अल्लाह ने अबू जह्ल पर ऐसा रौब डाल दिया कि वह कुछ न कर सका।

एक बार तो दुश्मनों का झुंड का झुंड टूट पड़ा और आप को सख्त तक्लीफ़ पहुंचायी। वाक़िआ यों हुआ कि दुश्मन बैठे यही ज़िक्र कर रहे थे कि इस शख्स (मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) के मामले में हमने जो कुछ बरदाश्त किया है, उसकी मिसाल नहीं मिलती। इसी बीच हुज़ूर सल्ल० तशरीफ़ लाए। उन लोगों ने पूछा कि क्या तुम ऐसा और ऐसा कहते हो? हुज़ूर सल्ल० ने पूरी हिम्मत के साथ फ़रमाया, हां, मैं हूं जो यह और यह कहता है।' बस यह कहना था कि चारों ओर से धावा बोल दिया गया।

अब्दुल्लाह बिन अम्र बिन आस का बयान है कि क़ुरैश की तरफ़ से इस से बढ़ कर हुज़ूर सल्ल० पर कोई बड़ा ज़ुल्म मैं ने नहीं देखा।

हमलावर रुक गये, तो खुदा के रसूल ने फिर उसी हिम्मत से काम लेकर उनको इन लफ़्ज़ों में चेतावनी दी कि, 'मैं तुम्हारे सामने यह और यह पैग़ाम लाया हूं कि तुम ज़िब्ह होने वाले हो।' यानी ज़ुल्म की यह छुरी जो तुम मुझपर तेज़ कर रहे हो, तारीख गवाह है कि क़ानूने इलाही आखिरकार इसी से खुद तुम को ज़िब्ह कर डालेगा। तुम्हारा यह ज़ोर और यह ताक़त जो ज़ुल्म के रुख पर मुड़ गयी है, यह यक़ीनी तौर पर खत्म होने वाली है।

हज़रत उस्मान बिन अफ़्फ़ान रज़ि० एक वाक़िआ बयान करते हैं कि प्यारे नबी सल्ल० बैतुल्लाह का तवाफ़ कर रहे थे। उक़्बा बिन मुईत, अबू जह्ल, और उमय्या बिन खल्फ़ हतीम में बैठे हुए थे। जब हुज़ूर सल्ल० उन के सामने से गुज़रते तो वे बुरे कलिमे ज़ुबान से निकालते।

तीन बार ऐसा हुआ। आखिरी बार हुज़ूर सल्ल० के चेहरे का रंग बदल गया, फ़रमाया, 'खुदा की क़सम ! तुम बग़ैर इस के बाज़ न आओगे कि खुदा का अज़ाब जल्द तुम पर टूट पड़े ।'

हज़रत उस्मान रज़ि० कहते हैं कि यह हक़ का रौब था कि यह सुन कर उन में से कोई न था, जो कांप न रहा हो। यह फ़रमा कर हुज़ूर अपने घर को चले तो हज़रत उस्मान और दूसरे लोग साथ हो लिए। इस मौक़े पर हुज़ूर सल्ल० ने हम से ख़िताब कर के फ़रमाया,

'तुम लोगों को खुशख़बरी हो। अल्लाह तआला यक़ीनन अपने दीन को ग़ालिब करेगा और अपने कलिमे की तक्मील करेगा और अपने दीन की मदद करेगा और ये लोग जिन्हें तुम देखते हो, अल्लाह तआला उन को बहुत जल्द तुम्हारे हाथों से ज़िब्ह कराएगा।'

ग़ौर कीजिए, मायूसी के माहौल में यह खुशख़बरी सुनायी जा रही थी और फिर किस शान से यह बहुत ही जल्द पूरी हुई, गोया हक़ के इस आन्दोलन ने हथेली पर सरसों जमा दी।

तायफ़ में तब्लीग़

तायफ़ एक बड़ा हरा-भरा इलाक़ा था। पानी, साया, खेतियां, बाग़, कुछ ठंडी आब व हवा, लोग बड़े खुशहाल थे और दुनियापरस्ती में बुरी तरह मगन। इंसान एक बार धन-दौलत से खुशहाल हो जाए, तो फिर खुदा को भुला देना और अख़्लाक़ी पस्ती का शिकार हो जाना कुछ मुश्किल नहीं। यही हाल तायफ़ के वासियों का था।

मक्का वालों में तो फिर मज़हबी रुख़ और अख़्लाक़ी रख-रखाव पाया जाता था, पर तायफ़ वाले तो पूरी तरह उजड्ड और बे-ढंगे लोग थे और फिर सूद के चलन ने अच्छे इंसानी एहसास भी ख़त्म कर दिया था।

आप तायफ़ पहुंचे तो पहले क़बीला सक़ीफ़ के सरदारों से मुलाक़ात की। ये तीन भाई थे—अब्द या लैल, मस्ऊद और हबीब। इन में से एक के घर में क़ुरैश (बनी जुम्ह) की एक औरत थी। इस वजह से एक तरह की लिहाज़दारी की उम्मीद की जा सकती थी। हुज़ूर सल्ल० उनके पास जा बैठे। उन को बड़े अच्छे ढंग से अल्लाह का पैग़ाम सुनाया, अपनी दावत रखी और उन्हें हक़ के मामले में हिमायत करने को कहा। अब जवाब

सुनिये, जो तीनों की तरफ़ से मिलता है—

एक बोला, अगर वाक़ई ख़ुदा ने ही तुम को भेजा है, तो बस फिर वह काबे का गिलाफ़ नोचवाना चाहता है।

दूसरा बोला, अरे ! क्या ख़ुदा को तुम्हारे अलावा रिसालत के लिए कोई और मुनासिब आदमी न मिल सका।

तीसरे ने कहा, ख़ुदा की क़सम ! मैं तुझ से बात भी नहीं करूंगा, क्योंकि अगर तू अपने कहने के मुताबिक़ वाक़ई अल्लाह का रसूल है, तो फिर तुझ जैसे आदमी को जवाब देना अदब के सख़्त ख़िलाफ़ है और अगर तुम ने ख़ुदा पर झूठ गढ़ा है, तो इस क़ाबिल नहीं हो कि तुम से बात की जाए।

जहर में बुझे हुए तीर थे जो आप के सीने में घुसा दिए गए थे। आपने अपने दिल पर ये सारे ज़ख़्म सह लिए और उन के सामने आख़िरी बात यह रखी कि तुम अपनी ये बातें अपने ही तक रखो और कम से कम दूसरे लोगों के ठोकर खाने की वजह न बनो।

मगर उन्हों ने अपने यहां के घटिया और बाज़ारी लौंडों और नौकरों और गुलामों को उकसा कर आप के पीछे लगा दिया कि जाओ और इस शख़्स को बस्ती से निकाल कर बाहर करो। एक झुंड का झुंड आप के आगे-पीछे हो लिया। ये लोग गालियां देते, शोर मचाते और पत्थर मारते थे। पत्थर ताक-ताक कर टख़नों की हड्डियों पर मारते, ताकि ज़्यादा तक्लीफ़ पहुंचे। हुज़ूर सल्ल० जब निढाल हो जाते, तो बैठ जाते, लेकिन तायफ़ के गुंडे आप को बाज़ू पकड़ कर उठा देते और फिर टख़नों पर पत्थर मारते और तालियां बजा-बजा कर हंसते। ख़ून बराबर बह रहा था और जूतियां अन्दर और बाहर से लुथड़ गयीं। इस बे-मिसाल तमाशे को देखने के लिए बड़ी भीड़ इकट्ठी हो गयी।

गुंडों की टोली इस तरह आप को शहर से निकाल कर एक बाग़ के एहाते में लायी, जो रबीआ के बेटों उत्बा और शैबा का था। आप ने बिल्कुल बे-दम होकर अंगूर की एक बेल से टेक लगा ली।

यही वह मौक़ा था, जब कि दोगाना पढ़ने के बाद आप के होंठों से दर्द भरी दुआ निकली।

इतने में बाग़ के मालिक भी आ पहुंचे। उन के दिलों में कुछ हम-दर्दी पैदा हुई। उन्हों ने अपने ईसाई गुलाम को पुकारा। उस का नाम अदास था, फिर एक तश्तरी में अंगूरों का गुच्छा रख कर भिजवाया।

इसी सफ़र में जिब्रील आते हैं और इत्तिला देते हैं कि पहाड़ों का इंचार्ज फ़रिश्ता आप की खिदमत में हाज़िर है। अगर आप इशारा करें तो वह इन पहाड़ों को आपस में मिला दे, जिन के दर्मियान मक्का और तायफ़ वाक़ेअ हैं और दोनों शहरों को पीस कर रख दे।

और दूसरी जगहों पर तब्लीग़

मक्का वापस आ कर अब नबी सल्ल० ने ऐसा करना शुरू किया कि मुख्तलिफ़ क़बीलों के पड़ावों में तश्रीफ़ ले जाते या मक्का से बाहर चले जाते और जो कोई मुसाफ़िर आता-जाता मिल जाता, उसे ईमान और खुदा परस्ती का वाज़ फ़रमाते।

इन्हीं दिनों क़बीला बनूकन्दा में तश्रीफ़ ले गये। क़बीले के सरदार का नाम मलीह था।

क़बीला बनू अब्दुल्लाह के यहां भी पहुंचे। उन्हें फ़रमाया कि तुम्हारे बाप का नाम अब्दुल्लाह था, तुम भी उसी नाम के (अल्लाह के बन्दे) बन जाओ।

क़बीला बनू हनीफ़ा के घरों में तश्रीफ़ ले गये। उन्हों ने सब से बुरे तरीक़े से नबी सल्ल० का इन्कार किया।

क़बीला बनू आमिर बिन सासआ के पास गये। क़बीले के सरदार का नाम बुहैरा बिन फ़रास था। उसने इस्लाम की दावत सुन कर नबी सल्ल० से पूछा, भला अगर हम तेरी बात मान लें और तू मुखालिफ़ों पर ग़ालिब आ जाए तो क्या यह वायदा करता है कि तेरे बाद यह मामला मुझ से मुताल्लिक़ होगा? नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया, यह तो खुदा के अख्तियार में है कि वह जिसे चाहेगा, मेरे बाद मुक़र्रर करेगा। बुहैरा बोला, खूब! इस वक़्त तो औरतों का मुक़ाबला हम करें और जब तेरा काम बन जाए तो मज़े कोई और उड़ाए। जाओ, हम को तेरे काम से कोई वास्ता नहीं। क़बीलों के सफ़र में हुज़ूर सल्ल० का साथ देने वाले हज़रत अबूबक्र सिद्दीक़ रज़ि० थे।

———

सुवैद बिन सामित का ईमान

इन्हीं दिनों नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को सुवैद बिन सामित मिला। उस का लक़ब अपनी क़ौम में कामिल था। नबी सल्ल० ने उस तक इस्लाम की दावत पहुंचायी।

वह बोला, 'शायद आप के पास वही कुछ है, जो मेरे पास भी है।'

नबी सल्ल० ने पूछा, 'तुम्हारे पास क्या है ?

वह बोला, 'लुक़मान की हिक्मत !'

नबी सल्ल० ने फ़रमाया, 'बयान करो !'

उस ने कुछ अच्छे-अच्छे शेर सुनाए।

नबी सल्ल० ने फ़रमाया, 'यह अच्छा कलाम है, लेकिन मेरे पास क़ुरआन है, जो इस से कहीं बेहतर है। वह हिदायत भी है और नूर भी।' इस के बाद नबी सल्ल० ने उस क़ुरआन की कुछ आयतें सुनायीं। उसे हक़ समझने में देर न लगी। बिला तकल्लुफ़ के वह ईमान लाया।

जब यसरिब लौट कर गया, तो ख़ज़रज क़बीले वालों ने उसे क़त्ल कर डाला।

मदीने में इस्लाम

इस्लाम की आवाज़ जिस तरह अरब के दूर-दूर इलाक़ों तक पहुंच रही थी, उसी तरह मदीने में भी पहुंची।

मदीने में बहुत पहले से यहूदी क़बीले आ कर आबाद हो गये थे, उन्हों ने मदीने के क़रीब अपने छोटे-छोटे क़िले भी बना लिए थे।

औस और ख़ज़रज दो भाई थी, जिन का असल वतन तो यमन था, लेकिन वे किसी ज़माने में यमन छोड़ कर मदीने में आबाद हो गये थे। उन्हीं की नस्ल से वहां दो बड़े-बड़े ख़ानदान हो गये थे जो औस और ख़ज़रज कहलाते थे। यही लोग आगे चल कर मुस्लिम मुहाजिरों की मदद करने की वजह से अन्सार कहलाए।

इन लोगों ने मदीने के आस-पास के इलाक़ों में अपने छोटे-छोटे

बहुत-से क़िले बना रखे थे। ये लोग बुतों की पूजा करते थे, पर यहूदियों से मेल-जोल की वजह से रिसालत, वह्य, आसमानी किताब और आख़िरत के अक़ीदे को जान-सुन रखा था। चूंकि इन के पास अपनी कोई चीज़ नहीं थी, इस लिए मज़हब के मामले में ये लोग अक्सर यहूदियों की धौंस खा जाते थे और उन की बातों को वज़न देते थे।

इन लोगों ने यहूदी उलेमा से यह भी सुन रखा था कि दुनिया में एक पैग़म्बर और आने वाले हैं। जो कोई उन का साथ देगा, वही कामियाब होगा और यह कि इस पैग़म्बर का साथ देने वाले ही सारी दुनिया पर छा जाएंगे। यही जानकारी थी जिसकी वजह से नबी सल्ल० की दावत इन के मान लेने में कोई परेशानी की वजह नहीं बनी।

जिन दिनों नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की तब्लीग़ी कोशिशें ज़ोर-शोर से हो रही थीं अबुल हेशर अनस बिन राफ़अ मक्का आया। उस के साथ बनी अब्दुल अशहल के भी कुछ नव-जवान थे, जिन में से अयास बिन मुआज़ भी था। ये लोग क़ुरैश के पास अपनी क़ौम ख़ज़रज की तरफ़ से समझौता करने आए थे।

नबी सल्ल० घूमते-घामते उन के पास भी पहुंचे और जाकर फ़रमाया—

'मेरे पास ऐसी चीज़ है, जिस में तुम सब की भलाई है, क्या तुम्हें कुछ चाव है ?'

वे बोले, ऐसी क्या चीज़ है ?'

फ़रमाया, 'मैं अल्लाह का रसूल हूं, हिदायत के लिए भेजा गया हूं। मैं अल्लाह के बन्दों को दावत देता हूं कि वे अल्लाह ही की इबादत करें, शिर्क न करें। मुझ पर ख़ुदा ने किताब नाज़िल की है।

फिर उन के सामने इस्लाम के उसूल बयान फ़रमाए, क़ुरआन मजीद भी पढ़ कर सुनाया।

अयास बिन मुआज़, जो अभी नव-जवान थे, सुनते ही बोले, ऐ मेरी क़ौम ! ख़ुदा की क़सम ! यह तुम्हारे लिए उस मक़सद से ज़्यादा बेहतर है, जिस के लिए यहां आए हो।'

अनस बिन राफ़ेअ ने मुट्ठी भर के कंकरियां उठायीं और अयास के मुंह पर फेंक मारीं और कहा, चुप रह, हम इस काम के लिए तो नहीं आए।

अयास वापस आकर कुछ दिनों के बाद मर गया। मर्हूम के दिल में नबी सल्ल० के इसी वाज़ से इस्लाम का बीज बोया गया था, जो मरते

वक़्त फल-फूल ले आया था।

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम तो उठ कर चले गये।

यह वाक़िआ बुआस की तारीख़ी लड़ाई से पहले का है। यह लड़ाई औस व ख़ज़रज के दर्मियान हुई थी।

इन्हीं दिनों ज़माद अज़दी मक्का में आया। यह यमन का रहने वाला था और अरब का मशहूर जादूगर था। जब उस ने सुना कि मुहम्मद पर जिन्नों का असर है, तो उस ने क़ुरैश से कहा कि मैं मुहम्मद का इलाज मंत्र से कर सकता हूं। यह नबी सल्ल० की खिदमत में हाज़िर हुआ और बोला, 'मुहम्मद ! आओ, तुम्हें मंत्र सुनाऊं'। 'नबी सल्ल० ने फ़रमाया, पहले मुझ से सुन लो, फिर आप ने उसे सुनाया—

सब तारीफ़ अल्लाह के वास्ते है। हम उस की नेमतों का शुक्र अदा करते हैं और हर काम में उसी की मदद चाहते हैं। जिसे ख़ुदा राह दिखाता है, उसे कोई गुमराह नहीं कर सकता और जिसे ख़ुदा ही राह न दिखाए उस की कोई रहबरी नहीं कर सकता। मेरी गवाही यह है कि ख़ुदा के सिवा इबादत के लायक़ कोई भी नहीं। वह अकेला है, उस का कोई शरीक नहीं। मैं यह भी ज़ाहिर करता हूं कि मुहम्मद ख़ुदा का बंदा और रसूल है। इस के बाद कहना यह है कि—

ज़माद ने इतना ही सुना था, बोल उठा कि इन्हीं कलिमों को फिर सुना दीजिए। दो तीन बार उस ने इन्हीं कलिमों को सुना और फिर बे-अख़्तियार बोल उठा, मैं ने बहुतेरे काहिन देखे, जादूगर देखे, शायर सुने, लेकिन ऐसा कलाम तो मैं ने किसी से भी नहीं सुना। ये कलिमे तो अथाह समुन्दर जैसे हैं। मुहम्मद ! ख़ुदा के लिए अपना हाथ बढ़ाओ कि मैं इस्लाम की बैअत कर लूं।

यसरिब की छः पाक रूहें

नुबूवत के ग्यारहवें साल के हज के मौसम का ज़िक्र है कि नबी सल्ल० ने रात की तारीकी में मक्का शहर से कुछ मील दूर उक़्बा नामी जगह पर लोगों को बातें करते सुना। इस आवाज़ पर ख़ुदा का नबी सल्ल० उन लोगों के पास पहुंचा। ये छः आदमी यसरिब (मदीना) से आए थे।

उन के सामने नबी सल्ल० ने खुदा की बड़ाई और उस के जलाल का ज़िक्र शुरू किया। उन को मुहब्बत को खुदा के साथ गरमाया, बुतों से उन को नफ़रत दिलायी, नेकी और पाकीज़गी की तालीम देकर गुनाहों और बुराइयों से मना फ़रमाया। कुरआन मजीद की तिलावत फ़रमा कर उन के दिलों को रोशन फ़रमाया। ये लोग अगरचे बुत परस्त थे, लेकिन उन्होंने अपने शहर के यहूदियों को बार-बार यह कहते सुना था कि एक नबी बहुत जल्द आने वाला है। इस तालीम से वे उसी वक़्त ईमान ले आए और जब अपने वतन को लौट कर गए तो दीने हक़ के सच्चे मुबल्लिग़ बन गयें। वे हर एक को यही खुशखबरी सुनाते थे कि वह नबी जिस का तमाम दुनिया को इन्तिज़ार था, आ गया, हमारे कानों ने उस कलाम को सुना, हमारी आंखों ने उस का दीदार किया और उस ने हम को उस ज़िंदा रहने वाले खुदा से मिला दिया है कि दुनिया की ज़िंदगी और मौत अब हमारे सामने कोई क़ीमत नहीं रखती।

उक़बा की पहली बैअत

इन लोगों के प्रचार का नतीजा यह निकला कि यसरिब के घर-घर में आंहज़रत सल्ल० का ज़िक्र होने लगा और अगले साल सन् ११ न० में यसरिब के १२ आदमी मक्का में हाज़िर हुए और नबी सल्ल० के हाथ पर बैअत की।

इन लोगों ने जिन बातों पर नबी सल्ल० से बैअत की थी, वे यह थीं—

१. हम एक खुदा की इबादत किया करेंगे और किसी को उस को शरीक नहीं बनाएं।

२. हम चोरी और ज़िना कारी नहीं करेंगे।

३. हम अपनी औलाद (लड़कियों) को क़त्ल नहीं करेंगे,

४. हम किसी पर झूठी तोहमत नहीं लगाएंगे और न किसी की चुग़ली किया करेंगे,

५. हम नबी सल्ल० की इताअत हर अच्छी बात में किया करेंगे।

चलते वक़्त इन लोगों ने इस बात की ख्वाहिश ज़ाहिर की कि इस्लाम की तालीम के लिए कोई साहब उनके साथ भेज दिए जाएं।

चुनांचे हज़रत मुस्अब बिन उमैर रज़ि० को उनके साथ मदीना भेज दिया गया।

हज़रत मुस्अब बिन उमैर रज़ि० अमीर घराने के लाडले बेटे थे। जब घोड़े पर सवार होकर निकलते, तो आगे-पीछे गुलाम चला करते थे। बदन पर दो सौ रु० से कम की पोशाक कभी न पहनते, पर अब इस्लाम क़ुबूल किया, तो इन चीज़ों से महरूमी उन्होंने पसन्द कर ली। जिन दिनों यह मदीने से दीन की तब्लीग़ कर रहे थे, उन दिनों उनके कंधे पर सिर्फ़ कम्बल का एक छोटा-सा टुकड़ा होता था।

हज़रत मुस्अब बिन उमैर रज़ि० के ख़ुलूस और मेहनत का नतीजा यह निकला कि कुछ ही दिनों में पूरे मदीने में इस्लाम की चर्चा आम हो गयी।

उक़बा की दूसरी बैअत

हज़रत मुस्अब रज़ि० की तालीम से इस्लाम की चर्चा मदीने के तमाम क़बीलों में फैल गयी और उसका नतीजा यह हुआ कि अगले साल ७२ मर्द, दो औरतें यस्रिब के क़ाफ़िले में मिल कर मक्का आए, उनको यस्रिब के मुसलमानों ने इसलिए भेजा था कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को अपने शहर में आने की दावत दें और नबी सल्ल० से मंज़ूरी हासिल करें।

सच्चे ईमान वालों का यह गिरोह उसी मुबारक जगह पर जहां दो साल पहले इस शहर यस्रिब के मुश्ताक़ हाज़िर हुआ करते थे, रात के अंधेरे में पहुंच गया और अल्लाह का प्यारा रसूल सल्ल० अपने चचा अब्बास को लिए हुए वहां जा पहुंचा।

चचा अब्बास ने (जो अभी मुसलमान न हुए थे) उस वक़्त एक बड़े काम की बात कही। उन्होंने कहा, लोगो ! तुम्हें मालूम है कि मक्का के क़ुरैश मुहम्मद (सल्ल०) की जान के दुश्मन हैं। अगर तुम इनसे कोई अह्द व क़रार करने लगो, तो पहले समझ लेना कि यह नाज़ुक और मुश्किल काम है। मुहम्मद से अह्द व पैमान करना लाल और काली लड़ाइयों (यानी बड़ी भयानक लड़ाइयों) को दावत देना है। जो कुछ करो सोच-समझ कर करो, वरना बेहतर है कि कुछ भी न करो।

इन सच्चे ईमान वालों ने अब्बास को कोई जवाब न दिया, हां, रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से अर्ज किया कि हुजूर कुछ इर्शाद फ़रमाएं।

फिर रसूलुल्लाह सल्ल० ने उन को खुदा का कलाम पढ़ कर सुनाया, जिसके सुनने से वे ईमान व यक़ीन के नूर से भर उठे।

अब सब लोगों ने अर्ज किया कि खुदा का नबी सल्ल० हमारे शहर में चल कर बसे, ताकि हमें पूरे का पूरा फ़ैज हासिल हो सके।

नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने मालूम फ़रमाया—

१. क्या तुम दीने हक़ के फैलाने में मेरी पूरी-पूरी मदद करोगे?

२. और जब मैं तुम्हारे शहर में जा बसूं, क्या तुम मेरी और मेरे साथियों की हिमायत अपने बाल-बच्चों की तरह करोगे?

ईमान वालों ने पूछा—

'ऐसा करने का हमको मुआवजा क्या मिलेगा?'

नबी सल्ल० ने फ़रमाया, बहिश्त, (जो निजात और खुदा की खुशी की जगह है।)

ईमान वालों ने अर्ज किया, ऐ खुदा के रसूल! यह तो हमारी तसल्ली फ़रमा दीजिए कि हुजूर सल्ल० हम को कभी छोड़ तो नहीं देंगे?

नबी सल्ल० ने फ़रमाया, नहीं, मेरा जीना, मेरा मरना, तुम्हारे साथ होगा।

इस आखिरी जुम्ले का सुनना था कि सच्चाई के शैदाई खुश हो-हो इस्लाम पर बैअत करने लगे। बरा बिन मारूर वह पहले बुजुर्ग हैं, जिन्होंने उस रात सबसे पहले बैअत ली थी।

हिजरत का हुक्म

उक़्बा की दूसरी बैअत के बाद कुरैश के जुल्म व सितम की इन्तिहा ने मुसलमानों के लिए मक्का में ठहरना ना-मुम्किन बना दिया था, जिसका अंदाजा करने के लिए नीचे का वाक़िआ काफ़ी है।

हिजरत का हुक्म पाते ही जब मुसलमान अपना घर-बार, कुंबा-क़बीला छोड़ कर मदीने की तरफ़ जाने लगे, तो कुरैशियों को यह बात भी खली, उन्होंने रुकावटें पैदा करनी शुरू कर दीं।

हज़रत उम्मे सलमा रज़ि० कहती हैं कि मेरे शौहर अबू सलमा रज़ि० ने हिजरत का इरादा किया, मुझको ऊंट पर बिठाया। मेरी गोद में मेरा छोटा बच्चा सलमा था। जब हम चले तो मेरे क़बीले के लोगों ने अबू सलमा को आ घेरा और कहा कि तू तो जा सकता है, लेकिन यह नहीं हो सकता कि तू हमारी लड़की को ले जाए। इतने में अबू सलमा के क़बीले वाले भी आ गये। उन्होंने कहा कि तू चला जा, लेकिन बच्चा हमारे क़बीले का है, उसे नहीं ले जा सकता। चुनांचे बनू अब्दुल असद तो बच्चे को छीन कर ले गये और बनू मुग़ीरह उम्मे सलमा रज़ि० को ले गये। अबू सलमा तंहा मदीने को चले गये। उम्मे सलमा से शौहर और बच्चा दोनों जुदा हो गये और अबू सलमा ने बीवी और बेटे दोनों को छोड़कर हिजरत का सवाब हासिल किया।

फिर भी इस क़िस्म की रुकावटों और आज़माइशों के बावजूद एक-एक, दो-दो करके लगभग सभी मुसलमान हिजरत कर गये। मक्का में सिर्फ़ हज़रत मुहम्मद सल्ल०, हज़रत अबूबक्र रज़ि० और हज़रत अली रज़ि० और उनके घर वाले बाक़ी रह गए थे। क़ुरैश ने जब देखा कि मुसलमान एक-एक करके सब निकल गए और मदीने में एक अच्छी भली तायदाद, मुसलमानों की जमा हो गयी है, जिस की ताक़त और ख़तरे से इंकार नहीं किया जा सकता, तो उन को अपने मुस्तक़्बिल (भविष्य) की चिन्ता हुई। उन्हें साफ़ मालूम होने लगा कि अगर इस्लाम की जड़ न काटी गयी तो हमारी अपनी ज़िंदगी और इज़्ज़त ख़तरे में है, इस लिए मुख़ालिफ़ों और दुश्मनों ने फ़ैसला किया कि हुज़ूर सल्ल० अब अकेले रह गये हैं, इस लिए अब उनको क़त्ल कर दिया जाए (नऊज़ुबिल्लाह)। उन्होंने तै किया कि हर-हर क़बीले से एक-एक योद्धा लिया जाए। ये तमाम लोग एक ही वक़्त में चारों तरफ़ से मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) को घेर कर उन पर एक साथ वार करें, इस तरह मुहम्मद (सल्ल०) के क़त्ल की ज़िम्मेदारी किसी एक क़बीले पर नहीं, सब पर आ जाएगी।

इधर दुश्मन यह फ़ैसला कर रहे थे, उधर अल्लाह तआला दूसरा फ़ैसला कर रहा था। उस ने आप को हिजरत का हुक्म दे दिया, चुनांचे रात में, जब कि आप का मकान घेर लिया गया था, आप अमानतों को हज़रत अली रज़ि० के सुपुर्द कर के हिजरत के लिए चल पड़े। वहां से निकल कर आप हज़रत अबूबक्र रज़ि० के मकान पर तशरीफ़ लाए, फिर दोनों साथ ही रवाना हुए और सौर की गुफा में जा कर छिप रहे।

हज़रत अबूबक्र रज़ि० ने अपने बेटे अब्दुल्लाह रज़ि० को पहले ही हिदायत कर रखी थी कि दुश्मनों के तमाम हालात और दिन भर की तमाम कार्रवाइयों को रात में आकर बता दिया करें। इसी तरह अपने गुलाम आमिर फ़ुहैरा को हुक्म दे दिया था कि बकरियों का रेवड़ दिन भर इधर-उधर चराते फिरें और रात के वक़्त उस रेवड़ को सौर की गुफा तक चराते हुए ले आया करें। अस्मा रज़ि० बिन्त अबी बक्र के सुपुर्द यह खिदमत थी कि खाना तैयार कर के रात को एहतियात के साथ गुफा वालों के पास पहुंचा दिया करें।

मक्के वालों ने बहुत कोशिश की, इनाम का लालच भी दिया, लेकिन वे हुज़ूर सल्ल० को पकड़ पाने में नाकाम रहे। जब वे थक-हार गये तो अब्दुल्लाह बिन उरैक़त वायदे के मुताबिक़ ऊंटनियां लेकर पहुंचे और इन दोनों को बिठा कर मदीने की तरफ़ चल पड़े।

इसी बीच सुराक़ा बिन मालिक बिन जासम पीछा करता हुआ आ पहुंचा। क़रीब था कि आप के पास पहुंच जाता, उस के घोड़े ने ठोकर खायी और वह नीचे गिर पड़ा। संभला, उठा, सवार हुआ और चल दिया जब बहुत क़रीब पहुंच गया तो घोड़े ने फिर ठोकर खायी, इस बार घोड़े के अगले पांव घुटनों तक धंस गए थे, सुराक़ा फिर गिरा, संभला, उठा, सवार हुआ और हिम्मत कर के आगे बढ़ना चाहा, लेकिन हिम्मत न पड़ी। फिर उस ने प्यारे नबी सल्ल० से जान की अमान मांगी। अमान दी गयी। सुराक़ा आगे बढ़ा और अर्ज़ किया, अब मैं हर एक हमलावर को पीछे ही रोकता रहूंगा और फिर उन्हों ने ऐसा ही किया।

मदीने में

८ रबीउल अव्वल सन् १३ नबवी को, सोमवार के दिन, मुताबिक़ २३ सितम्बर सन् ६२२ ई० अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम क़ुबा में पहुंचे।

मदीने वालों ने जब से सुना था कि हुज़ूर सल्ल० ने मक्का छोड़ दिया है, वे हर दिन सुबह-सवेरे शहर से निकल कर बाहर जमा होते और दोपहर तक इंतिज़ार कर के वापस लौट जाते। एक दिन ये लोग अभी वापस ही हुए थे कि हुज़ूर पहुंच गये और एक शख्स के पुकारने से सब

वापस लौट आए और अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के चारों ओर परवानों की तरह जमा हो गए।

अक्सर मुसलमान ऐसे थे कि जिन्हों ने अभी तक हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का दीदार नहीं किया था, उन्हें नबी सल्ल० और हज़रत अबूबक्र रज़ि० के पहचानने में परेशानी होने लगी। हज़रत अबूबक्र रज़ि० इस परेशानी को समझ गए और आप के मुबारक सर पर साया कर के खड़े हो गए।

क़ुबा मदीने से तीन मील की दूरी पर एक जगह है. अंसार के बहुत से खानदान आबाद थे। उनमें अम्र बिन औफ़ सब से मशहूर खानदान था और कुलसूम बिन हदम उसके सरदार थे। यह सआदत उन्हीं की क़िस्मत में थी कि हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने सब से पहले उन की मेहमानी क़ुबूल फ़रमायी और आप ने क़ुबा में उनके मकान-पर क़ियाम फ़रमाया।

हज़रत अली रज़ि० जो आप के रवाना होने के तीन दिन के बाद चले थे, वे भी तशरीफ़ लाए और यहां ही क़ियाम फ़रमाया।

क़ुबा में आंहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का पहला काम एक मस्जिद की तामीर थी। आपने मुबारक हाथों से मस्जिद की बुनियाद रखी और दूसरे साथियों के साथ मिल कर खुद उस मस्जिद की तामीर की।

कुछ दिन क़ुबा में ठहरने के बाद आप मदीने की तरफ़ रवाना हुए। यह जुमा का दिन था। रास्ते में बनी मालिक के मुहल्ले में ज़ुहर की नमाज़ का वक़्त हो गया। यहां सौ आदमियों के साथ जुमे की नमाज़ पढ़ी और खुत्बा दिया। यह इस्लाम में पहला जुमा था।

जुमा की नमाज़ से फ़ारिग़ होकर नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम यस्रिब के दक्खिन से शहर में दाखिल हुए और आज ही से शहर का नाम मदीनतुन्नबी (नबी का शहर, जिसे अब सिर्फ़ मदीना कहते हैं) हो गया।

दाखिले की अजीब शान थी। गली-कूचे अल्लाह की पाकी, बड़ाई और तारीफ़ के कलिमों से गूंज रहे थे। मर्द-औरत-बूढ़े-बच्चे, सभी प्यारे नबी सल्ल० के दीदार के शौक़ में बेताबी से इन्तिज़ार कर रहे थे।

अंसार की मासूम लड़कियां प्यारी आवाज़ और पाक ज़ुबानों से उस वक़्त के गीत गा रही थीं—

अत्तलअल बद-रु अलैना मिन सनी यातिल विदाओ

व-ज-ब़श्शुक्र अलैना मा दआ लिल्लाहि दाओ
अय्युहल मब्अ़सु फ़ीना जिअ्-त बिल अम्रिल मताओ

(चौदहवीं का चांद निकल आया, विदाअ की पहाड़ियों से हम पर ख़ुदा का शुक्र वाजिब है, जब तक दुआ मांगने वाले दुआ मांगें। तेरे हुक्म की इताअत फ़र्ज़ है, तेरा भेजने वाला बुज़ुर्ग व बरतर है।)

य मासूम लड़कियां दफ़ बजा-बजा कर गा रही थीं।

नह्नु जवारिम मिम बनिन्नज्जारि या हब्बज़ा मुहम्मदम मिनजारी

(हम नज्जार ख़ानदान की लड़कियां हैं। मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) कैसे अच्छे पड़ोसी हैं।)

इसी तरह मदीने में दाख़िले के वक़्त हर जांनिसार अंसारी के दिल की तमन्ना थी कि हुज़ूर सल्ल० की मेहमानी का शर्फ़ उसे हासिल हो। हर क़बीला सामने आ कर अर्ज़ करता कि 'हुज़ूर सल्ल० ! यह घर है, यहां क़ियाम फ़रमाएं। इस लिए मेहमानी का शर्फ़ किसे हासिल हो ? यह एक सवाल था, जिस का जवाब आसान न था।

आंहज़रत सल्ल० ने फ़रमाया कि मेरी ऊंटनी जिस के मकान के सामने ठहर जाए, वही इस ख़िदमत को अंजाम दे। चुनांचे यह शर्फ़ अबू अय्यूब अंसारी के हिस्से में आया, जहां अब मस्जिदे नबवी है। इस के क़रीब उन का मकान था। यह मकान दोमंज़िला था। उन्हों ने ऊपरी हिस्सा पेश किया, लेकिन आंहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने लोगों के आने-जाने की आसानी देखते हुए नीचे की मंज़िल में रहना पसन्द फ़रमाया और हज़रत अबू अय्यूब और उन की बीवी के हिस्से में ऊपर की मंज़िल आयी।

हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने सात महीने तक यहीं क़ियाम फ़रमाया। इस के बाद जब मस्जिदे नबवी के क़रीब आप के क़ियाम के लिए हुजरे बन गए, तो वहां चले गए। थोड़े ही दिनों के अन्दर आप के ख़ानदान के लोग भी मदीना चले आए।

मदीना में पहुंचने पर

१. मदीने में क़ियाम के बाद सब से पहला और ज़रूरी काम एक मस्जिद की तामीर था, जहां आप ने क़ियाम फ़रमाया था, उस के क़रीब

ही कुछ जमीन बंजर पड़ी थी, जो दो यतीमों की थी। उन को क़ीमत देकर यह जमीन हासिल की गयी और मस्जिद की तामीर शुरू की गयी। उस वक़्त भी आप मजदूरों की तरह सब के साथ मिल कर काम करते थे और पत्थर उठा-उठा कर लाते थे। यह मस्जिद बहुत ही सादा तरीक़े पर बनायी गयी थी। कच्ची ईंटों की दीवारें, खजूर की छत, खजूर के तनों के स्तून। इस मस्जिद का क़िब्ला बैतुल मक़्दिस की तरफ़ रखा गया, क्योंकि अभी तक मुसलमानों का क़िब्ला भी वही था। फिर जब क़िब्ला काबे की तरफ़ हो गया, तो मस्जिद में भी उसी हिसाब से घट-बढ़ कर दी गई। मस्जिद का फ़र्श कच्चा था, बारिश होती तो मस्जिद में कीचड़ हो जाती थी, कुछ दिनों के बाद फ़र्श बना लिया गया।

मस्जिद के एक सिरे पर एक पटा हुआ चबूतरा था, जिसे सुफ़्फ़ा कहते हैं। यह उन लोगों के ठहरने की जगह थी, जो इस्लाम लाए थे, लेकिन उनका कोई घर-द्वार न था। पास ही प्यारे नबी सल्ल० की बीवियों के लिए हुजरे भी बने।

२. मक्के से जो मुसलमान घर-बार छोड़ कर मदीना आ गये थे, वे लगभग सभी बे-सहारा थे। उन में जो लोग खाते-पीते थे, वे भी अपना माल मक्का से नहीं ला सके थे और उन को छोड़-छाड़ कर यों ही आना पड़ा था। अगरचे ये सब मुहाजिर मदीना के मुसलमानों (अंसार) के मेहमान थे, लेकिन बहरहाल अब उन के रहने के बन्दोबस्त की जरूरत महसूस हो रही थी। यों भी लोग अपने हाथों से मेहनत कर के ज़िंदगी बसर करना पसन्द करते थे, चुनांचे जब मस्जिदे नबवी की तामीर खत्म हो गयी, तो आंहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने एक दिन अंसार को बुलाया और उन से फ़रमाया कि ये मुहाजिर तुम्हारे भाई हैं। फिर आपने एक शख्स को अंसार में से और एक को मुहाजिरों में से बुला कर फ़रमाया कि आज से तुम दोनों एक दूसरे के भाई हो। इस तरह सब मुहाजिरों को एक-दूसरे का भाई बना दिया और ये अल्लाह के मुख्लिस बन्दे सच-मुच भाई ही क्या, भाई से भी कहीं ज्यादा साथी बन गए।

अंसार मुहाजिरों को अपने घर ले गए और अपनी कुल जायदाद और सामान का हिसाब उन के सामने रख दिया और कह दिया कि आधा तुम्हारा और आधा हमारा। बाग़ों की आमदनी, खेती की पैदावार, घर का सामान, मकान, जायदाद, ग़रज़ यह कि हर चीज उन में भाइयों की तरह बंट गयी और ये बे-घर मुहाजिर सब के सब इत्मीनान से बस गए।

साथ ही बहुत-से मुहाजिरों ने कारोबार शुरू कर दिया, दुकानें खोल लीं और दूसरे कामों में लग गए। इस तरह मुहाजिरों ने बसने का काम अंजाम दिया और इस तरफ़ से इत्मीनान हासिल हुआ।

मदीने के नए हालात

☐ मदीने में मुख़्तलिफ़ अक़ीदों वाले और मुख़्तलिफ़ मज़हब वाले लोग आबाद थे। वहां थोड़ी तायदाद में यहूदी भी आबाद थे। यहूदियों के तो कई ज़बरदस्त क़बीले, बनू नज़ीर, बनू क़ैनुक़ाअ, बनू क़ुरैज़ा थे, जो अपने जुदा-जुदा क़िलों में रहा करते थे, तिजारत और सूद के कारोबार की वजह से बहुत मालदार थे।

ये यहूदी इस्लाम और मुसलमानों को किसी क़ीमत पर पसन्द न करते थे, बल्कि इस इन्तिज़ार में थे कि मौक़ा मिले तो मुसलमानों का गला काटें।

☐ यही हाल ईसाइयों का भी था। इन्हों ने जब देखा कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ईसाइयों के खुद गढ़े हुए फ़र्ज़ी अक़ीदों, जैसे खुदा के बेटे का ख्याल, तीन खुदाओं का ख्याल वग़ैरह को रद्द कर रहे हैं और हज़रत ईसा अलै० की सही तालीम दे रहे हैं और उन्होंने देखा कि उन का झूठ और मन गढ़त बातों की हक़ीक़त खोल दी गयी है, तो वे भी पैग़म्बरे इस्लाम हज़रत मुहम्मद सल्ल० के दुश्मन हो गए।

☐ मदीने की हालात का अन्दाज़ा करने के लिए अब्दुल्लाह बिन उबई बिन सलूल के हाल पर भी एक नज़र डाल लेना ज़रूरी है। यहूदियों के अलावा मदीने का मशहूर और असरदार आदमी यह भी था। औस व ख़ज़रज के क़बीलों पर इस का पूरा रौब था और इस को उम्मीद थी कि इन ताक़तवर क़बीलों की मदद से मदीने की सब से बड़ी ताक़त वही बन जाएगा। अब उस ने देखा कि औस व ख़ज़रज मुसलमान हो रहे हैं, तो खुद भी (बद्र की लड़ाई के बाद) ज़ाहिरी तौर पर मुसलमानों से मिल गया, लेकिन जब उस ने देखा कि यहूदी नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के खिलाफ़ हो गए हैं, तो उस ने चाहा कि यहूदियों पर भी उस का पहला असर क़ायम रहे और मुसलमान होने वाले क़बीले भी पहले ही की तरह उसके मातहत रहें। उसने यह रवैया अपनाया कि मुसलमानों में बैठ

कर उन से अपनी दोस्ती ज़ाहिर करता और दूसरी क़ौमों के सामने उन के साथ अपने मेल का बखान करता।

यहूदी, ईसाई और मुनाफ़िक़—ये तीनों अब जहां इस्लाम और मुसलमानों के मुख़ालिफ़ और दुश्मन बन गए थे और इन्हें सामने रख कर हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को नयी पालीसी और नया अन्दाज़ इख़्तियार करना था, वहीं मदीना में आने के बाद अब नयी बात यह पैदा हुई थी कि मुसलमानों की एक छोटी-सी स्टेट जन्म ले चुकी थी, जिसे न सिर्फ़ यह कि अपने पैरों पर खड़ा होना था, बल्कि जिसे मज़बूत बनाने के लिए उस के दुश्मनों का जो उस की जड़ काट देने पर तुले हुए थे, मुक़ाबला करना था।

बद्र की लड़ाई

मदीना में मुसलमानों के क़दम जमने की वजह से मक्का के क़ुरैश को तिलमिलाहट फ़ितरी थी, मदीने के यहूदी अलग मुख़ालिफ़ हो गये थे, यह दूसरी बात है कि अभी बस एक समझौते में बंध हुए दीख पड़ रहे थे। मदीने के मुनाफ़िक़ गरचे अभी खुले नहीं थे और उतने उभरे भी नहीं थे, जितना बाद में उभरे, लेकिन बहरहाल वे भी घात में थे कि मौक़ा मिले तो मुसलमानों को नुक़सान पहुंचाएं।

मक्का के क़ुरैश को मुसलमानों और नबी सल्ल० के साथ ऐसी दुश्मनी थी कि उन के वतन छोड़ कर ३०० मील परे चले जाने के बाद भी उन को चैन न आया, मदीने पर हमलावर होने का इरादा कर लिया।

इसी बीच शाबान सन ०२ हि० (फ़रवरी या मार्च सन ६२१ ई०) में क़ुरैश का एक बहुत बड़ा क़ाफ़िला, जिस के साथ लगभग ५० हज़ार अशर्फ़ी का माल था, शाम से वापस आते हुए उस इलाक़े के क़रीब आया जो मुसलमानों के निशाने पर था। क़ाफ़िले के साथ तीस-चालीस मुहा-फ़िज़ों से ज़्यादा लोग न थे और इस बात का डर था कि कहीं मदीने के क़रीब वाले इलाक़े में पहुंचने के बाद मुसलमान उस पर हमला न कर दें।

क़ाफ़िले का सरदार अबू सुफ़ियान था। उसने इस ख़तरे को महसूस करके एक शख़्स को मक्के दौड़ाया कि वह वहां से मदद लेकर आये, चुनांचे उस शख़्स ने मक्के में आ कर एक शोर मचा दिया कि 'क़ाफ़िले को मुसल-

माल लूटे ले रहे हैं। दौड़ो, मदद के लिए दौड़ो।'

क़ाफ़िले में जो माल था, उस से बहुत से लोगों का ताल्लुक़ था, फिर यह एक क़ौमी भी मस्अला बन गया। चुनांचे इस पुकार पर क़ुरैश के तमाम बड़े-बड़े सरदार लड़ाई के लिए निकल खड़े हुए और लगभग एक हज़ार जोशीले नव-जवानों की एक फ़ौज तैयार हो गई। यह फ़ौज इंतिहाई शान व शौकत के साथ मक्के से इस इरादे के साथ रवाना हुई कि अब मुसलमानों का ख़ात्मा कर डालना चाहिए, ताकि यह रोज़-रोज़ की झंझट ही मिट जाये।

एक तरफ़ माल बचाने की तमन्ना, दूसरी तरफ़ पुरानी दुश्मनी और तास्सुब का जोश, ग़रज़ यह कि ये लोग पूरी शान और पक्के इरादे के साथ मदीने पर चढ़ाई के लिए रवाना हुए।

इधर नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को भी इन हालात की इत्तिला बराबर पहुंच रही थी। आप ने यह महसूस फ़रमाया कि अब वह वक़्त आ गया है कि अगर इस वक़्त क़ुरैश को अपने इरादों में कामियाबी मिल गयी और उन्हों ने मुसलमानों की इस नयी जमाअत को नीचा दिखा दिया, तो फिर इस्लाम और मुसलमानों के पनपने का सवाल बड़ा कठिन हो जाएगा और हो सकता है कि इस्लाम की आवाज़ हमेशा के लिए दब जाए।

इस लिए आंहज़रत सल्ल० ने फ़ैसला फ़रमाया कि इस वक़्त जो ताक़त भी मयस्सर है, उसे ले कर मैदान में निकले और यह फ़ैसला हो जाए कि जीने का हक़ किसे है, किसे नहीं ?

यह फ़ैसला कर लेने के बाद नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने मुहाजिरों और अन्सार को जमा किया और पूरे हालात उनके सामने साफ़-साफ़ रख दिए कि एक तरफ़ मदीने के उत्तर में तिजारती क़ाफ़िला गुज़र रहा है, दूसरी तरफ़ दक्खिन में क़ुरैश का लश्कर चला आ रहा है, अल्लाह का वायदा है कि इन दोनों में से कोई एक तुम्हें मिल जाएगा ! बताओ तुम किस के मुक़ाबले पर चलना चाहते हो ? जवाब में बहुत-से सहाबा ने यही ख़्वाहिश ज़ाहिर की कि क़ाफ़िले पर हमला किया जाए, लेकिन नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के सामने तो कुछ और था, इस लिए आप ने फिर अपना सवाल दोहराया। इस पर मुहाजिरों में से एक सहाबी मिक़दाद बिन अस्व रज़ि० ने उठ कर फ़रमाया—

'ऐ अल्लाह के रसूल सल्ल० ! जिधर आप को आप का रब हुक्म

दे रहा है, उस तरफ़ चलिए, हम आप के साथ हैं। हम बनी इस्राईल की तरह यह कहने वाले नहीं हैं कि 'जाओ तुम और तुम्हारा खुदा दोनों लड़ें, हम यहां बैठे हैं।'

मगर इस मस्अले में आखिरी राय क़ायम करने से पहले अंसार की राय मालूम करना ज़रूरी था, इस लिए हुज़ूर सल्ल० ने उन लोगों से सीधा सवाल कर के अपनी बात दोहरायी। इस पर हज़रत साद बिन मुआज़ रज़ि० उठे और फ़रमाया, 'ऐ अल्लाह के रसूल सल्ल० ! हम आप पर ईमान लाए हैं, आपकी तस्दीक़ कर चुके हैं, इस बात की गवाही दे चुके हैं कि आप जो कुछ लाए हैं, वह हक़ है, आप की इताअत का पक्का अह्द कर चुके हैं, पस ऐ अल्लाह के रसूल ! आप ने जो कुछ इरादा फ़रमा लिया है, उसे कर गुज़रिए। क़सम है उस ज़ात की, जिस ने आप को हक़ के साथ भेजा है कि अगर आप हमें समुन्दर पर जा पहुंचें और उसमें उतर जाएं, तो हम आप का साथ देंगे और हम में से एक भी पीछे न रहेगा, हम लड़ाई में जमे रहेंगे, मुक़ाबले में सच्ची जां-निसारी दिखाएंगे और ना-मुम्किन नहीं कि अल्लाह आप को हम से वह कुछ दिखा दे, जिसे देख कर आप की आंखें ठंडी हो जाएं। पस अल्लाह की बरकत के भरोसे पर आप हमें ले चलें।

इन तक़रीरों के बाद फ़ैसला हो गया कि क़ाफ़िले के बजाए लश्कर ही के मुक़ाबले के लिए चलना है, लेकिन यह फ़ैसला कोई मामूली फ़ैसला न था। मुसलमानों की जमाअत क़ुरैश के मुक़ाबले में बहुत कमज़ोर थी। लड़ाई के क़ाबिल लोगों की तायदाद तीन सौ से कुछ ही ज़्यादा थी, जिनमें से दो-तीन के पास घोड़े थे और ऊंट भी सत्तर से ज़्यादा न थे। लड़ाई का सामान भी ना-काफ़ी था। सिर्फ़ साठ आदमियों के पास ज़िरहें (कवच) थीं, इसी लिए मुसलमानों में थोड़े-से लोगों को छोड़ कर बाक़ी लोग दिलों में डर रहे थे और उन्हें ऐसा लग रहा था, जैसे जानते-बूझते मौत के मुंह में जा रहे हैं।

अपनी बे-सर व सामानी के बावजूद १२ रमज़ान सन ०२ हि० को नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम अल्लाह के भरोसे पर लगभग ३०० मुसलमानों को साथ ले कर मदीना से निकल खड़े हुए और उन्हों ने सीधी दक्खिन पश्चिम की राह ली, जिधर से क़ुरैश का लश्कर आ रहा था। १६ रमज़ान को बद्र के क़रीब पहुंचे। बद्र एक गांव का नाम है, जो मदीना मुनव्वरा से दक्खिन पच्छिम की ओर लगभग ८० मील की दूरी

पर वाक़ेअ है। यहां पहुंचने पर पता चला कि क़ुरैश का लश्कर घाटी के दूसरे सिरे तक आ पहुंचा है, इस लिए आंहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के हुक्म की वजह से यहां ही पड़ाव डाल दिया गया।

उधर दुश्मनों की फ़ौज बड़ी सज-धज के साथ निकली थी। एक हज़ार से ज़्यादा सिपाही थे और लगभग सौ सरदार शरीक थे। सिपाहियों के लिए रसद का बहुत अच्छा इन्तिज़ाम था। उत्बा बिन रबीआ फ़ौज का ज़िम्मेदार था।

जिस वक़्त दोनों फ़ौजें एक दूसरे के मुक़ाबले में आयीं, तो यह एक अजीब मंज़र था। एक तरफ़ अल्लाह पर ईमान रखने वाले और उस के सिवा किसी दूसरे की बन्दगी और इताअत क़ुबूल न करने वाले ३१३ मुसलमान थे, जिन के पास लड़ाई का सामान ठीक नहीं था और दूसरी तरफ़ साज़ व सामान से लैस एक हज़ार से ज़्यादा काफ़िरों का लश्कर था, जो इस फ़ैसले के साथ आया था कि तौहीद की इस आवाज़ को हमेशा के लिए दबा कर ही दम लेगा।

इस मौक़े पर हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने ख़ुदा के आगे दुआ के लिए हाथ फैला दिए और इंतिहाई आजिज़ी और गिड़गिड़ाहट के साथ दुआ फ़रमायी कि, ऐ अल्लाह! ये क़ुरैश हैं। पूरी शान के साथ और इस इरादे के साथ आए हैं कि तेरे रसूल को झूठा साबित करें। ऐ अल्लाह! अब तेरी वह मदद आ जाए, जिस का तूने मुझ से वायदा फ़रमाया है। ऐ अल्लाह! अगर आज यह मुट्ठी भर जमाअत हलाक हो गयी, तो धरती पर तेरी कभी इबादत न हो सकेगी।

ईमान का यही वह दर्जा है, जिसके हासिल हो जाने के बाद अल्लाह की मदद आती है और ज़रूर आती है, चुनांचे बद्र के मैदान में भी अल्लाह तआला ने इन कमज़ोर ३१३ मुसलमानों की मदद फ़रमायी और उन के मुक़ाबले में एक हज़ार से ज़्यादा के लश्कर को ऐसी हार हुई कि गोया क़ुरैश की सारी ताक़त ही टूट गयी। इस लड़ाई में क़ुरैश के लगभग ७० आदमी मारे गये और इतने ही क़ैद हो गये। इन मारे जाने वालों में उन के बड़े-बड़े सरदार लगभग सब ख़त्म हो गए। उन में शैबा, उत्बा, अबू जह्ल, ज़मआ, आस, उमैया वग़ैरह ख़ास तौर से ज़िक्र के क़ाबिल हैं। इन सरदारों की मौत ने क़ुरैश की कमर तोड़ दी।

मुसलमानों में से छः मुहाजिर और आठ अंसार ने शहादत पायी।

क़ैदी, जो पकड़े गए

लड़ाई में जो-जो लोग क़ैद हो कर आए थे, उन के साथ मुसलमानों का सुलूक और हुज़ूर सल्ल० का बर्ताव अपनी मिसाल आप है।

इस्लाम से पहले दुनिया में जितनी क़ौमें और हुकूमतें थी, वे जंगी क़ैदियों के साथ बड़ा ही ज़ालिमाना बर्ताव करती थीं, जिन्हें सुन कर बदन के रोंगटे खड़े हो जाते हैं। सच तो यह है कि आज भी, जब कि दुनिया अपने को तहज़ीब वाली समझती है, जंगी क़ैदियों के साथ किसी इंसानियत का व्यवहार नहीं करती।

जंगी क़ैदियों के साथ नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने जो रवैया अपनाया, वह दो तरह का था—

(क) या तो फ़िदया ले कर आज़ाद कर दिया,

(ख) या बग़ैर फ़िदया लिए ही आज़ाद कर दिया।

मुसलमानों को बद्र की लड़ाई में जो क़ैदी हाथ आए थे ये मक्का के लोग थे, जिन से बढ़ कर मुसलमानों का दुश्मन और कोई न था। नबी सल्ल० ने सब से पहले इस मामले को अपने साथियों के सामने मश्विरे के लिए पेश किया। हज़रत अबूबक्र सिद्दीक़ रज़ि० ने राय दी कि क़ैदियों से जुर्माना ले कर छोड़ दिया जाए। इस राय के पीछे जो दलील काम कर रही थी, उस में दुश्मन की माली ताक़त कमज़ोर करने और अपनी ताक़त बढ़ाने की मस्लहत भी काम कर रही होगी, पर इस के पीछे असल हिक्मत व मस्लहत इंसानियत, रहमत और अच्छे अख्लाक़ का बर्ताव ही था। इसी का नतीजा था कि इन में से ज़्यादातर बाद में मुसलमान हो कर इस्लामी सफ़ में शामिल हो गये।

खुलासा यह कि बद्र की लड़ाई के ७२ क़ैदियों में से बहुतों को तो प्यारे नबी सल्ल० ने जुर्माना लेकर आज़ाद फ़रमा दिया।

इन क़ैदियों को मेहमान की तरह रखा गया था। बहुत-से क़ैदियों के बयान मौजूद हैं, जिन्होंने इक़रार किया है कि मदीना वाले अपने बच्चों से बढ़ कर उस के आराम का ख्याल करते थे। सिर्फ़ दो क़ैदी (उक़्बा बिन अबी मुईत व नज़्र बिन हारिस) क़त्ल कराए गए थे। यह सज़ा उन के

पिछले जुर्मों का नतीजा थी।

जो क़ैदी फ़िदया दे कर नहीं छूटे थे और ग़रीब थे, लिखना-पढ़ना भी जानते थे, वे इस शर्त पर रिहा कर दिए गए कि वे दस-दस बच्चों को लिखना-पढ़ना सिखा दें।

बद्र की लड़ाई अपने असर और नतीजों के एतबार से काफ़ी अहम थी।

यह लड़ाई असल में अल्लाह के उस अज़ाब की पहली क़िस्त थी, जो इस्लाम की दावत क़ुबूल न करने की सज़ा में मक्का के काफ़िरों के लिए मुक़द्दर हो चुका था। इस लड़ाई ने यह ज़ाहिर कर दिया कि इस्लाम और कुफ़्र में जीने का हक़ किसे है और आगे हालात का रुख़ क्या होगा? इस तरह अरब के दूसरे क़बीलों में इस्लाम और मुसलमानों का वज़न बढ़ गया।

बद्र की लड़ाई के बाद

बद्र की लड़ाई में अगरचे मुसलमानों को फ़त्ह नसीब हुई थी, लेकिन इस लड़ाई का मतलब यह था कि गोया मुसलमानों ने भिड़ों के छत्ते में पत्थर मारे थे। बद्र की लड़ाई पहली लड़ाई थी, जिसमें कुफ़्फ़ार का मुक़ाबला मुसलमानों ने डट कर किया और जीत हासिल की। इस वाक़िए ने सारे अरब को मुसलमानों से चौंका दिया।

बद्र की लड़ाई के कुछ दिनों बाद का ज़िक्र है कि सफ़वान बिन उमैया (जिस का बाप बद्र में क़त्ल हुआ था) और उमैर बिन वहब (जिस का बेटा अब भी मुसलमानों के हाथ में था) मक्का से बाहर वीरान जगह पर जमा हुए और नबी सल्ल० के ख़िलाफ़ बातें करने लगे।

उमैर बोला, अगर मुझ पर क़र्ज़ न होता, जिसे मैं अदा नहीं कर सकता और अगर मुझे अपने कुंबे के बे-बस रह जाने का ख़्याल न होता, तो मैं ख़ुद मदीना जाता और मुहम्मद को क़त्ल ही कर के आता।

सफ़वान बोला, तेरा क़र्ज़ मैं चुका दूंगा और तेरे कुंबे का ख़र्च, जब तक मैं ज़िंदा रहूं, मेरे ज़िम्मे होगा।

उमैर बोला, बेहतर, यह राज़ किसी पर न खुले।

फिर उमैर ने अपनी तलवार की धार को तेज़ करवाया और ज़हर

ने उसे बुलवाया और मक्के से रवाना हो गया।

उमैर मदीने में पहुंच कर मस्जिदे नबवी के सामने अपना ऊंट बिठा रहा था कि ऊंट बोल पड़ा। हज़रत उमर फ़ारूक़ रज़ि० ने उसे देखा और पहचाना और दिल में समझ गये कि यह शैतान ज़रूर फ़सादी इरादे से आया है, इस लिए आगे बढ़ कर नबी सल्ल० से अर्ज़ किया कि उमैर बिन वहब मुसल्लह चला आ रहा है। नबी सल्ल० ने फ़रमाया, उसे मेरे पास आने दो।

हज़रत उमर फ़ारूक़ रज़ि० ने उस की तलवार की मुठिया पर क़ब्ज़ा कर लिया। उस की गरदन पकड़ कर नबी सल्ल० के सामने ले गये। नबी सल्ल० ने यह देखा, तो फ़रमाया, उमर! इसे छोड़ दो। उमैर! तुम मेरे पास आ जाओ। उमैर ने आगे बढ़कर सलाम किया। नबी सल्ल० ने पूछा, कहो, किस तरह आए? कहा, अपने बेटे की खबर लेने आया हूं। नबी सल्ल० ने पूछा, यह तलवार कैसी है?

उमैर बोला, यह क्या तलवार है? और हमारी तलवारों ने आप का पहले भी क्या कर लिया है?

नबी सल्ल० ने फ़रमाया, तुम सच-सच बताओ।

उमैर ने फिर उसी जवाब को दोहरा दिया।

नबी सल्ल० ने फ़रमाया, देख तू और सफ़वान मक्का से बाहर वीरान पहाड़ में गये थे। सफ़वान ने तेरा क़र्ज़ और तेरे कुंबे का खर्च अपने ऊपर ले लिया है और तू ने मेरे क़त्ल का वायदा किया और इसी इरादे से तू यहां आया है। उमैर! तू यह क्यों न समझा कि मेरा हिफ़ाज़त करने वाला खुदा है।

उमैर यह सुन कर हैरान रह गया और बोला, अब मेरा दिल मान गया कि आप ज़रूर अल्लाह के नबी और रसूल हैं। खुदा का शुक्र है कि यही चीज़ मेरे इस्लाम का बहाना बन रही है।

नबी सल्ल० ने सहाबा रज़ि० से फ़रमाया, अपने भाई को दीन सिखाओ, क़ुरआन याद कराओ और उसके बेटे को आज़ाद कर दो। उमैर रज़ि० ने अर्ज़ किया, ऐ अल्लाह के रसूल सल्ल०! मुझे इजाज़त दीजिए कि मैं मक्का ही वापस जाऊं और लोगों को इस्लाम की दावत दूं। मेरे दिल में आता है कि अब मैं बुतपरस्तों को उसी तरह सताया करूं, जिस तरह पहले मैं मुसलमानों को सताता रहा हूं।

उमैर के मदीना जाने के बाद सफ़वान का यह हाल था कि क़ुरैश

के सरदारों से कहा करता था, देखो कुछ दिनों में क्या गुल खिलने वाला है कि तुम बद्र का सदमा भूल जाओगे। जब सफ़वान को खबर लगी कि उमैर मुसलमान हो गया, तो उसे बड़ा सदमा हुआ और उसने क़सम खायी कि जब तक ज़िंदा रहूं, उमैर से बात न करूंगा, न उसे कोई फ़ायदा पहुंचने दूंगा।

उमैर मक्का में आया, वह इस्लाम की मुनादी किया करता था और अक्सर लोग उसके हाथ पर इस्लाम क़ुबूल कर रहे थे।

बद्र में हारने के बाद अबू सुफ़ियान ने नहाने-धोने से क़सम खा ली थी, जब तक मुसलमानों से बदला न लिया जाए, चुनांचे वह दो सौ सवारों को लेकर मक्का से निकला। जब मदीने के क़रीब पहुंचा तो साथियों को बाहर छोड़कर खुद रात की तारीकी में मदीने के अन्दर आया। सलाम बिन मुश्कम यहूदी से मिला, रात भर शराब की बोतलें चलती रहीं, शायद दोनों के मश्विरे से यह तै हुआ कि मुक़ाबले का वक़्त नहीं, इसलिए अबू सुफ़ियान रात के आखिर में वहां से निकला। मुसलमानों के फलदार पेड़ों, खजूरों को आग लगा कर और एक मुसलमान और उसके साथी को क़त्ल करके मक्के को वापस चला गया।

खबर मिलने पर क़रक़रतुल बद्र तक पीछा किया, इसी लिए उसका नाम 'ग़ज़वतुल बद्र' कहा जाता है।

अबू सुफ़ियान की ऊंटनी सत्तू की थैलियां गिराती गयी थी, जिसे मुसलमानों ने उठा लिया था, इसलिए उस का नाम सत्तू वाली लड़ाई भी हुआ।

उहुद की लड़ाई

मक्के के मुश्रिकों के दिलों में एक तो यों ही मुसलमानों से बदला लेने की आग भड़क रही थी, चुनांचे उनके कितने ही बड़े-बड़े सरदारों ने बदला लेने की क़स्में खा रखी थीं। हर क़बीला जोश और गुस्से से भरा हुआ था कि इन हालात में यहूद की तरफ़ से मक्के वालों को उभारने की कोशिशों ने आग पर तेल डालने का काम किया और अभी बद्र की लड़ाई को मुश्किल से साल भर ही गुज़रा था कि ये खबरें मदीना पहुंचने लगीं कि मक्के के मुश्रिक एक बहुत ज़बरदस्त लश्कर लेकर मदीने पर हमले के

लिए बिल्कुल तैयार हो चुके हैं।

पैग़म्बरे इस्लाम सल्ल० ने शव्वाल सन ०३ हि० के पहले हफ़्ते में दो आदमियों को सही ख़बर लाने के लिए रवाना किया। उन्होंने आकर इत्तिला दी कि क़ुरैश का लश्कर तो मदीने के क़रीब ही आ गया है और मदीने की एक चरागाह उनके घोड़ों ने साफ़ भी कर डाली है।

अब नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने सहाबा से मश्विरा किया कि क्या फ़ौज का मुक़ाबला मदीने ही में किया जाए या बाहर निकल कर लड़ाई लड़ी जाए?

ज़्यादातर मुहाजिरों और अंसार ने शहर में रह कर मुक़ाबला करने की तज्वीज़ रखी, लेकिन बद्र में शरीक न हो पाने वाले नव-जवानों ने जोश व ख़रोश से इस राय पर ज़ोर दिया कि बाहर निकल कर मुक़ाबला किया जाए।

हुज़ूर सल्ल० ने दोनों तज्वीज़ें सुनीं, घर तश्रीफ़ ले गये और ज़िरह (कवच) पहन कर वापस तश्रीफ़ लाए, गोया दूसरी तज्वीज़ को आपने क़ुबूल फ़रमा लिया।

क़ुरैश ने मदीना के क़रीब पहुंच कर उहुद की पहाड़ी पर अपना पड़ाव डाला।

आंहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम उसके एक दिन बाद जुमा की नमाज़ पढ़कर एक हज़ार सहाबियों के साथ शहर से रवाना हुए। उन में अब्दुल्लाह बिन उबई भी था जो अगरचे ऊपरी दिल से मुसलमान हो चुका था, लेकिन असल में वह मुसलमानों का दुश्मन था और आख़िर वक़्त तक मुनाफ़िक़ ही रहा। यह भी मुसलमानों के साथ था। इसका असर मानने वाले और भी बहुत से मुनाफ़िक़ मुसलमानों के साथ मिले हुए थे। कुछ दूर जा कर अब्दुल्लाह बिन उबई अपने साथ तीन सौ लोगों को तोड़ कर अलग हो गया और अब सिर्फ़ ७०० सहाबी बाक़ी रह गये।

ऐसे मौक़े पर उसकी यह हरकत एक ज़बरदस्त साज़िश थी, मुसलमानों को हार का मुंह दिखाने की, लेकिन जिन मुसलमानों के दिल अल्लाह पर ईमान, आख़िरत के यक़ीन और हक़ की राह में शहीद होने के शौक़ से भरे हुए थे, उनपर इस वाक़िए का कोई ना-गवार असर नहीं पड़ा और अब ये बचे हुए मुसलमान ही अल्लाह के भरोसे पर आगे बढ़े।

इस मौक़े पर आंहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने अपने साथियों का जायज़ा लिया और जो कम-उम्र थे, उनको वापस फ़रमा दिया

इन नव-जवानों में राफ़ेअ और समुरा रज़ि० दो नव-उम्र लड़के भी थे। इन नव-उम्रों को जब फ़ौज से अलग किया जाने लगा, तो राफ़ेअ अपने पंजों के बल खड़े हो गये, ताकि क़द में कुछ ऊंचे दिखायी देने लगें और ले लिए जाएं। उन की यह तर्कीब चल गयी, लेकिन समुरा को शिर्कत की इजाज़त न मिली, तो इस पर उन्हों ने कहा कि जब राफ़ेअ ले लिए गये हैं, तो मुझे भी इजाज़त मिलनी चाहिए। मैं तो उन को कुश्ती में पछाड़ देता हूं। चुनांचे उन के दावे के सबूत के लिए दोनों में कुश्ती हुई और जब उन्हों ने राफ़ेअ को पछाड़ दिया, तो वे भी फ़ौज में ले लिए गये। यह एक छोटा-सा वाक़िआ है, लेकिन इस से अन्दाज़ा होता है कि मुसलमानों में अल्लाह की राह में जिहाद करने का किस क़दर जज़्बा मौजूद था।

उहुद का पहाड़ मदीने से लगभग ४ मील के फ़ासले पर है। आंहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने अपनी फ़ौज को इस तरह लगाया कि पहाड़ पीछे था और क़ुरैश की फ़ौज सामने। पीछे की तरफ़ सिर्फ़ एक दर्रा था, जिस से पीछे की तरफ़ से हमला होने का डर था, वहां आप ने अब्दुल्लाह बिन जुबैर को पचास तीरंदाज़ देकर मुक़र्रर फ़रमा दिया कि 'किसी को इस दर्रे के रास्ते से आने न देना और तुम यहां से किसी हाल में न हटना। अगर तुम देखो कि परिंदे हमारी बोटियां नोचे लिए जाते हैं, तब भी तुम अपनी जगह न छोड़ना।'

क़ुरैश इस मौक़े पर बड़े साज़ व सामान से आए थे, लगभग पांच हज़ार बहादुरों की फ़ौज के साथ लड़ाई का काफ़ी सामान मौजूद था। इस फ़ौज में लगभग तीन हज़ार ऊंट सवार और दो सौ घोड़ सवार और सात सौ ज़िरह पोश पैदल सवार भी थे।

अरबों की जिस लड़ाई में औरतें शामिल होती थीं, उस में वे जान पर खेल कर लड़ते थे। उन्हें यह ख्याल होता था कि अगर लड़ाई में हार हो गयी तो समझो, औरतों की निगाह में बे-इज़्ज़ती हो गयी इस लड़ाई के मौक़े पर बहुत-सी औरतें भी फ़ौज की साथ थीं। इनमें बहुत-सी तो वे थीं, जिनके बेटे और क़रीबी रिश्तेदार बद्र की लड़ाई में मारे गये थे और उन्हों ने मन्नतें मानी थीं कि वे उन के क़ातिलों का खून पी कर दम लेंगी।

लड़ाई की शुरूआत

चुनांचे लड़ाई शुरू होते ही चौदह कुरैशी औरतों की एक टोली ने हिंदा की सरदारी में दफ़ बजा कर जंगी राग अलापना शुरू किया। वे गा रही थीं—

हम आसमानी सितारों की बेटियां हैं, और हम क़ालीनों पर चलती हैं। अगर तुम क़दम आगे बढ़ाओगे, तो हम तुम्हें गले लगाएंगी और पीछे हटोगे, तो तुम से अलग हो जाएंगी।

दफ़ पर जोश और शर्म दिलाने वाले शेरों से क़ुरैशी फ़ौज में मुसलमानों से बदला लेने का जज़्बा और तेज़ हो गया और लड़ाई शुरू हो गइ,

लड़ाई जोरों पर चली, मुसलमानों का पल्ला भारी रहा, क़ुरैश की फ़ौज के बहुत-से लोग मारे गये और उन के बहुत-से आदमी मारे गए। उनकी फ़ौज में भगदड़ मच गयी। मुसलमान यह समझे कि उन्होंने मैदान मार लिया। चुनांचे उन्हों ने इस शुरू की जीत को आख़िरी हद तक पहुंचाने के बदले ग़नीमत का माल लूटना शुरू किया। इधर के जो लोग दर्रे की हिफ़ाज़त पर लगाये गए थे उन्हों ने जब देखा कि मुसलमान माल लूटने में लगे हुए हैं और दुश्मन के पैर उखड़ गए हैं, तो वे समझे कि लड़ाई का ख़ात्मा हो चुका है और वे भी ग़नीमत का माल लूटने के लिए लपके। उन के सरदार हज़रत अब्दुल्लाह बिन जुबैर ने उन्हें रोका और आंहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का हुक्म याद दिलाया, मगर सिवाए कुछ आदमियों के और कोई न रुका।

ख़ालिद बिन वलीद ने, जो उस वक़्त काफ़िरों की फ़ौज की एक टुकड़ी को कमांड कर रहे थे, इस मौक़े से फ़ायदा उठाया और पहाड़ी का चक्कर काटकर पीछे से मुसलमानों पर हमला कर दिया हज़रत अब्दुल्लाह बिन जुबैर और उन के कुछ साथी, जो दर्रे की हिफ़ाज़त के लिए बाक़ी रह गए थे, उन्हों ने मुक़ाबला भी किया, लेकिन वे काफ़िरों के हल्ले को रोक न सके और शहीद हो गये।

दुश्मन यकायक पीछे से मुसलमानों पर टूट पड़े। इधर जो भागते हुए लोगों ने यह रंग देखा, तो वे भी पलट पड़े और अब दोनों तरफ़ से मुसलमानों पर हमला हो गया।

इस अचानक काया पलट से मुसलमान बौखला गए, उन में भगदड़ मच गयी, इंतिहा यह कि घबराहट में मुसलमानों के हाथों मुसलमान शहीद हो गये। मौक़ा ग़नीमत देख, दुश्मनों ने हुज़ूर सल्ल० पर हल्ला बोल दिया। आप यह हालत देख दौड़ते हुए मुसलमानों को पुकार रहे थे,

'अल्लाह के बन्दो ! इधर मेरी तरफ़ आओ, अल्लाह के बन्दो ! इधर मेरी तरफ़ आओ।'

मगर लोग बद-हवासी में सुन नहीं रहे थे। एक वक़्त ऐसा भी आया कि सिर्फ़ १२ सहाबी आप के पास रह गये।

मौक़ा पाकर अब्दुल्लाह बिन क़ुमैया ने मुबारक चेहरे पर तलवार मारी, जिस से खुद की कड़ियां टूट कर जबड़े में घुस गयीं। इब्ने हिशाम ने ऐसा पत्थर मारा कि बाज़ू घायल हो गया, उत्बा के पत्थर से रसूलुल्लाह के चार दांत टूट गए। एक बार दुश्मन के हल्ले से आप गढ़े में गिर गए और कुछ चोटें भी आयीं लेकिन मुट्ठी भर साथियों ने इस तरह आप की हिफ़ाज़त की कि ऐसी मिसालें तारीख़ में भी नहीं मिलतीं। हज़रत मुस्अब बिन उमैर,जो आप सल्ल० से शक्ल में मिलते जुलते थे, शहीद कर दिए गए और उनके शहीद होते ही ख़बर उड़ा दी गयी कि हुज़ूर सल्ल० शहीद कर दिए गये।

इस से मुसलमानों में और ज़्यादा परेशानी फैल गयी। इस का असर मुसलमानों में दो क़िस्म का हुआ—

एक तरफ़ हज़रत उमर रज़ि० ने तलवार फेंक कर कहा कि अब लड़ कर क्या लेना, जब कि रसूलुल्लाह सल्ल० भी शहीद हो गए। उन पर हुज़ूर सल्ल० की मुहब्बत इतनी ग़ालिब थी कि उन की निगाह में इस सब से क़ीमती मताअ को खो देने के बाद बड़ी-से-बड़ी जीत भी जीत न थी।

दूसरी तरफ़ इब्ने नज़्र (हज़रत अनस अन्सारी के चचा) ने यह सुना तो कहा, 'रसूलुल्लाह के बाद हम ज़िंदा रह कर क्या करेंगे ?' और फिर इस बे-जिगरी से लड़े कि कुछ ही देर में अस्सी से ज़्यादा घावों की लज़्ज़त समेट कर शहादत का प्याला लबों से लगा लिया।

फिर हालत पलटना शुरू हुई। हर मुस्लिम सिपाही अपनी-अपनी जगह तलवारों में घिरा था और हुज़ूर सल्ल० को देखने के लिए बे-ताब। सब से पहले काब बिन मालिक ने प्यारे नबी सल्ल० को देख लिया और पुकार कर कहा कि, 'मुसलमानो ! यह रहे ख़ुदा के रसूल !'

फिर ज्यों-ज्यों यह ख़बर फैलती गयी, मुस्लिम फ़ौजियों में नया

जोश फैलने लगा, आवाज़ हर तरफ़ से मर्कज़ की तरफ़ दौड़ने लगे, दुश्मनों का हल्ला कम हुआ, तो हुज़ूर सल्ल० पहाड़ की चोटी पर चले गए। अबू सुफ़ियान ने उधर का रुख़ किया, तो सहाबियों ने बुलन्दी से पत्थर बरसा कर उसे लौटा दिया। अब दुश्मन को डर हुआ कि उसे जो इत्तिफ़ाक़ से जीत मिल गयी है, कहीं वह हाथ से जाती न रहे, इस लिए मक्की फ़ौज की टुकड़ियां भी सिमटने लगीं।

अबू सुफ़ियान ने सामने की एक पहाड़ी पर चढ़कर हुज़ूर के बारे में यक़ीनी जानकारियां हासिल करनी चाहीं, आख़िर उस ने बुलन्द आवाज़ से हुज़ूर सल्ल० और अबूबक्र और उमर रज़ि० का नाम ले ले कर पुकारा कि कोई है। उधर से जान-बूझ कर कोई जवाब न दिया गया, तो कहने लगा, 'सब मारे गए।'

हज़रत उमर रज़ि० तड़प कर बोल उठे, 'ओ ख़ुदा के दुश्मन! हम सब ज़िंदा व सलामत हैं।'

अबू सुफ़ियान ने नारा लगाया, 'ऐ हुबल! तू सर बुलंद रहे।

जवाब मिला, 'अल्लाह ही की ज़ात बुलन्द व बरतर है।'

अबू सुफ़ियान ने फिर हांक लगायी, 'हमारे साथ उज़्ज़ा है, तुम्हारे साथ उज़्ज़ा नहीं।'

इधर से कहा गया, 'अल्लाह हमारा आक़ा है, तुम्हारा कोई आक़ा नहीं।'

इस लड़ाई में ७० मुसलमान शहीद हुए और ४० घायल। दूसरी तरफ़ दुश्मन फ़ौज के सिर्फ़ ३० आदमी मौत के घाट उतारे जा सके।

उहुद के बाद

दो-एक क़बीलों को छोड़ कर अरब के लगभग तमाम ही क़बीले इस नयी उठती ताक़त के मुख़ालिफ़ थे। लेकिन बद्र की जीत के बाद इन क़बीलों की हिम्मतें कुछ पस्त हो गयी थीं और ये एक तरह से तरद्दुद में पड़ गए थे कि अब क्या रवैया अपनाया जाए, लेकिन उहुद की लड़ाई के बाद हालात बदल गये और अरब के बहुत-से क़बीले इस्लाम के ख़िलाफ़ उठ खड़े हुए। ऐसे कुछ क़बीलों के वाक़िए नीचे लिखे जाते हैं—

१. मुहर्रम सन् ०४ हि० में क़ुत्न इलाक़े के तल्हा बिन ख़ुवैलद और

सलमा बिन खुवैलद ने बनी असद बिन खुज़ैमा को मदीना के खिलाफ़ बग़ावत पर तैयार किया। इत्तिला मिलते ही हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम अबू सलमा मख्ज़ूमी को डेढ़ सौ आदमियों के साथ इन के मुक़ाबले के लिए रवाना फ़रमाया। ये लोग क़ुत्न पहुंचे तो दुश्मन भाग निकले।

२. इस के बाद उसी महीने में असा पहाड़ियों के एक क़बीले लेह्यान ने मदीने पर चढ़ाई का इरादा किया। हज़रत अब्दुल्लाह बिन अनीस, उन के मुक़ाबले के लिए भेजे गए और उन का सरदार सुफ़ियान क़त्ल किया गया और हमला करने वाले वापस हो गए।

३. क़ुरैश ने क़ौम अज़ल और क़ारा के सात शख्सों को गांठ कर मदीना में नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के पास भेजा कि हमारे क़बीले इस्लाम लाने को तैयार हैं, उनको सिखाने-पढ़ाने के लिए अपने कुछ लोगों को भेज दीजिए। रसूलुल्लाह सल्ल० ने दस बुज़ुर्ग सहाबियों को, जिन के सरदार आसिम बिन साबित थे, उन के साथ कर दिया। जब ये सहाबी उन के क़ब्ज़े में हो गए तो उन के दो सौ नव-जवान आए कि उन्हें ज़िंदा गिरफ़्तार कर लें। आठ सहाबी मुक़ाबला करते हुए शहीद हुए और दो बुज़ुर्ग हज़रत खुबैब और हज़रत ज़ैद रज़ि० गिरफ़्तार कर लिए गए।

सुफ़ियान हज़ली मक्का में ले गया क़ुरैश के हाथ बेच दिया, हज़रत खुबैब ने उहुद की लड़ाई में एक शख्स हारिस बिन आमिर को क़त्ल किया था। हारिस के बेटों ने हज़रत खुबैब को इस लिए खरीद लिया कि वे उन्हें अपने बाप के बदले में क़त्ल करेंगे। हारिस के बेटों ने उन्हें कुछ दिनों तक भूखा-प्यासा क़ैद रखा।

फिर ज़ालिमों ने खुबैब रज़ि० के फांसी को तख्ते के नीचे ले जाकर खड़ा कर दिया और कहा, अगर इस्लाम छोड़ दो तो तुम्हारी जान-बख्शी हो सकती है। उन्हों ने जवाब दिया कि 'जब इस्लाम बाक़ी न रहा तो जान को बचा कर क्या करेंगे।'

अब काफ़िरों ने पूछा कि कोई तमन्ना हो तो बयान करो।

हज़रत खुबैब रज़ि० ने कहा, दो रक्अत नमाज़ पढ़ लेने की हमें मोहलत दी जाए। मोहलत दी गयी, उन्हों ने नमाज़ अदा की। हज़रत खुबैब रज़ि० ने कहा, मैं नमाज़ में ज़्यादा वक़्त लगाता, मगर सोचा कि दुश्मन यह न कहें कि मौत से डर गया है। फिर उन ज़ालिमों ने हज़रत खुबैब को फांसी पर लटका दिया और उन के जिस्म के एक-एक हिस्से पर

करके लगाए।

ऐसे ही हज़रत ज़ैद को सफ़वान बिन उमैया रज़ि० ने क़त्ल करने के लिए ख़रीदा और ख़रीद कर शहीद कर डाला। अल्लाहु अकबर! इन दोनों का दिल इस्लाम पर कितना मुत्मइन था, उन को दीने हक़ पर कितनी इस्तिक़ामत थी, इन को हमेशा की निजात और ख़ुदा की ख़ुशनूदी का कितना यक़ीन था कि इन तमाम तक्लीफ़ों और घावों को बर्दाश्त करते हुए ज़रा उफ़ तक न की।

8. सफ़र सन् ०४ हि० में किलाब क़बीले का सरदार अबूबरा आंहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर हुआ और कहा कि कुछ लोगों को मेरे साथ भेज दीजिए। मेरी क़ौम के लोग इस्लाम की दावत सुनना चाहते हैं। आंहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने सत्तर सहाबी उन के साथ कर दिए। उन में से बहुत से अस्हाबे सुफ़्फ़ा में से थे। इन लोगों को क़बीले के रईस आमिर बिन तुफ़ैल ने धोखे कर क़त्ल करा दिया। इस वाक़िए से आंहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को बे-इंतिहा सद्मा हुआ, महीने भर तक फ़ज्र की नमाज़ में आपने इन ज़ालिमों के लिए बद-दुआ फ़रमायी। इन सत्तर सहाबियों में से सिर्फ़ एक सहाबी हज़रत अम्र बिन उमैया को आमिर ने यह कह कर छोड़ दिया था कि मेरी मां ने एक ग़ुलाम आज़ाद करने की मन्नत मानी थी, जा, मैं तुझे इस मन्नत में आज़ाद करता हूं।

जब हज़रत अम्र बिन उमैया वापस आ रहे थे तो रास्ते में उन्हें आमिर के क़बीले के दो आदमी मिले। आपने उन्हें क़त्ल कर दिया और यह समझे कि हमने आमिर क़बीले के लोगों की बे-वफ़ाई का कुछ तो बदला ले लिया।

जब आंहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को इस वाक़िए का इल्म हुआ तो आपने सख़्त ना-पसंद फ़रमाया, क्योंकि आप उस क़बीले के लोगों को ज़बान दे चुके थे और यह बात इस इक़रार के ख़िलाफ़ थी। चुनांचे आपने इन दोनों के ख़ूंबहा अदा कर देने का एलान फ़रमा दिया।

यहूदियों की शरारतें

यहूदी अगरचे हिजरत के पहले ही साल अम्न व शान्ति का अह्द

मुसलमानों से कर चुके थे, लेकिन उनकी शरारत पसन्दी ने उन्हें ज्यादा दिनों तक छिपा रहना पसन्द न किया। अह्द करने के डेढ़ साल बाद ही शरारतों की शुरूआत हो गयी।

□ जब मुसलमान नबी सल्ल० के साथ बद्र की तरफ़ गए हुये थे, उन्हीं दिनों का ज़िक्र है कि एक मुसलमान औरत जो क़ैनुक़ाअ के मुहल्ले में दूध बेचने गयी, कुछ यहूदियों ने शरारत की और उसे भरे बाज़ार में नंगा कर दिया। औरत की चीख़-पुकार सुन कर एक मुसलमान मौक़े पर आ पहुंचा। उसने गुस्से में आकर फ़सादी यहूदी को क़त्ल कर दिया। इस पर सब यहूदी जमा हो गये, उस मुसलमान को भी मार डाला और बलवे भी किया। नबी सल्ल० ने बद्र से वापस आकर यहूदियों को इस बलवा के बारे में मालूम करने के लिए बुलाया था, उन्हों ने समझौते का काग़ज़ भेज दिया और लड़ाई पर तैयार हो गये।

यह हरकत अब बग़ावत तक पहुंच गयी थी, इस लिए उनको यह सज़ा दी गयी कि मदीना छोड़ दें और ख़ैबर में जाकर आबाद हों।

□ हम पहले लिख चुके हैं कि क़ुरैश ने मदीने के बुतपरस्तों को नबी सल्ल० के ख़िलाफ़ लड़ाई लड़ने के बारे में ख़त लिखा था, मगर हज़रत मुहम्मद सल्ल० की मुस्तैदी ने उनकी चाल न चलने दी। फिर बद्र में हार जाने के बाद क़ुरैश ने यहूदियों को लिखा कि 'तुम जायदादों और क़िलों के मालिक हो, तुम मुहम्मद सल्ल० से लड़ो, वरना हम तुम्हारे साथ ऐसा और ऐसा करेंगे, तुम्हारी औरतों के पाज़ेब तक उतार लेंगे।' इस ख़त के मिलने पर बनू नज़ीर ने अह्द तोड़ने और रसूलुल्लाह सल्ल० को धोखा देने का इरादा कर लिया।

सन० ४ हि० का ज़िक्र है कि नबी सल्ल० एक क़ौमी चन्दा हासिल करने के लिए बनू नज़ीर के मुहल्ले में तशरीफ़ ले गये। उन्होंने आंहज़रत सल्ल० को एक दीवार के नीचे बिठा दिया और तद्बीर यह की कि इब्ने जह्हाश दीवार के ऊपर जाकर एक भारी पत्थर नबी सल्ल० पर गिरा दे और हुज़ूर सल्ल० की ज़िंदगी का ख़ात्मा कर दे।

प्यारे नबी सल्ल० को इस शरारत का इल्म हो गया और सही-सालिम चले आए।

आख़िरकार मजबूर होकर प्यारे नबी सल्ल० ने उनके क़िले को घेर लिया। यह घेरा १५ दिन तक चलता रहा, यहां तक कि बनू नज़ीर इस शर्त पर राज़ी हो गये कि वे अपना जितना माल व अस्बाब ऊंटों पर लाद

कर ले जा सकें, ले जाएं और अपने घरों को छोड़ कर निकल जाएं। उन्होंने छः सौ ऊंटों पर सामान लादा, अपने घरों को अपने हाथों से गिराया, बाजे बजाते हुए निकले और ख़ैबर जा बसे।

☐ यहूदियों में काब बिन अशरफ़ मशहूर शायर था। उसने बद्र की लड़ाई के बाद ऐसे शेर लिखे कि जिनसे मुसलमानों के ख़िलाफ़ मक्का में आग लग गयी। उस ज़माने में शायरों का बड़ा असर था। उसने बद्र की लड़ाई में क़त्ल होने वाले क़ुरैश के ऐसे दर्द भरे मर्सिए लिखे और फिर उन्हें जाकर मक्के में सुनाया कि जो सुनता था, सर पीटता था और रोता था। फिर मदीने में आंहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की बुराई में शेर कहे और लोगों को तरह-तरह से आपके ख़िलाफ़ उभारा। एक बार तो एक दावत के बहाने बुला कर आंहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को क़त्ल कर देने की भी साज़िश की। इन हालात को देखते हुए आपने सहाबियों से मश्विरा किया कि क्या होना चाहिए। चुनांचे आपकी मर्ज़ी से हज़रत मुहम्मद बिन मुस्लिमा ने काब बिन अशरफ़ को रबीउल अव्वल सन० ३ हि० में क़त्ल कर दिया।

दुश्मनों की चालें

अन्दर के दुश्मनों से निबटने के बाद हुज़ूर सल्ल० की मुश्किल ज़रूर आसान हो गयी थीं, लेकिन यहूदियों ने बाहर जा कर और अरब के मुश्रिकों, ख़ास तौर से क़ुरैश से सांठ-गांठ करके मुसलमानों का ख़ात्मा कर डालने के उपाय सोचने लगे और तमाम क़बीलों ने मिल कर मदीने पर हमला करने की तैयारियां शुरू कर दीं।

१. अबू सुफ़ियान उहुद के मैदान में किए गये एलान के मुताबिक़ दो हज़ार प्यादों और ५० सवारों के साथ एक टुकड़ी लेकर हमले के लिए निकला। हुज़ूर सल्ल० भी इत्तिला पाते ही १५०० प्यादों और दस सवारों के साथ बद्र पहुंचे। आठ दिन वहीं कैम्प डाल कर क़ुरैश की फ़ौज का इंतिज़ार किया। मगर अबू सुफ़ियान मक्का से एक मंज़िल दूरी पर——ज़हरान या अस्फ़ान नामी जगह तक आ कर वापस चला गया कि सूखे की वजह से यह साल लड़ाई के लिए मुनासिब नहीं। आख़िर हुज़ूर सल्ल० भी अबू सुफ़ियान की वापसी की इत्तिला पाकर मदीना तशरीफ़ ले आए।

२. मुहर्रम सन्० ४ हि० में बनी ग़त्फ़ान के कुछ क़बीलों, बनी महारिब और बनी सालबा की जंगी तैयारियों की इत्तिला आयी। हुज़ूर सल्ल० चार सौ रज़ाकारों की जमाअत लेकर निकले। मुक़ाबले के लिए, नज्द में वहां एक फ़ौज मौजूद थी, लेकिन अमली तौर पर लड़ाई न हो सकी।

उसी जगह का वाक़िआ है कि ग़ौरस नामी मुश्रिक अपनी क़ौम के सामने यह इरादा कर के निकला कि मैं मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) को क़त्ल करके रहूंगा। वह आया तो हुज़ूर सल्ल० एक पेड़ के साए में तंहा आराम फ़रमा रहे थे, आपकी तलवार पेड़ से लटक रही थी। ग़ौरस ने वही तलवार तान कर ललकारा कि बताओ अब कौन तुम्हें बचा सकता है। हुज़ूर सल्ल० ने बे-खौफ़ होकर कहा कि 'खुदा बचाने वाला है।'

३. दौमतुल जुंदल तिजारती कारवानों का जंक्शन भी था और यहां ईसाइयों और यहूदियों के मज़हबी प्रचारक और सियासी हरकारे भी काम करते थे। फिर बनू नज़ीर के खैबर वग़ैरह जाने की वजह से उन की मदीना के खिलाफ़ साज़िशी चालें चलने का भी यह अड्डा बनने लगा था, ख़ास तौर से यह वाक़िआ बड़ी सियासी अहमियत रखता है कि मक्का के क़ुरैश और खैबर के यहूदियों की सांठ-गांठ के तहत ईसाई सरदार उकैदर ने मदीना के लिए ग़ल्ला लाने वाले कारवानों को तंग करना शुरू किया। हुज़ूर सल्ल० तक इत्तिला पहुंची कि दौमतुल जुन्दल में दुश्मन अपनी ताक़त जमा कर के मदीना पर हमलावर होना चाहता है। रबीउल अव्वल सन्० ५ हि० में आपने एक हज़ार की जमाअत लेकर फ़ौरन क़दम आगे बढ़ाया। दौमतुल जुन्दल में जब मुस्लिम फ़ौज की रवानगी की इत्तिला मिली तो दुश्मन बिखर गये। हुज़ूर सल्ल० ने आगे बढ़ने की ज़रूरत न समझी।

४. अब बनू मुस्तलक़ के बारे में खबर आयी कि वे हमले की तैयारियां कर रहे हैं। बुरैदा असलमी को भेजकर तह्क़ीक़ात करायी गयी। खबर सही निकली। हुज़ूर सल्ल० ने ३ शाबान सन् ०५ हि० को फ़ौजी इक़दाम किया। निहायत तेज़ रफ़्तारी से मरीसीअ (पानी का चश्मा) जा पहुंचे। हारिस बिन अबी ज़ुरार, बनी मुस्तलिक़ का सरदार लड़ने पर तैयार था। हुज़ूर सल्ल० के यकायक जा पहुंचने से उस के फ़ौजी बिखर गये और सिर्फ़ उसी क़बीले के लोग रह गए। पहले ही हल्ले में

हारिस के जत्थे को हार हो गयी। लूट के माल में बहुत से मवेशी हाथ आए और सारी तायदाद जंगी क़ैदी बन गयी। गिरफ़्तार होने वालों में (हज़रत) जुवैरिया भी थीं। उन्होंने इस्लाम क़ुबूल कर लिया। हुज़ूर सल्ल० ने उनकी रज़ामंदी से उन्हें अपने निकाह में ले लिया। इसका नतीजा यह हुआ कि मुसलमानों ने तमाम क़ैदियों को यह कह कर आज़ाद कर दिया कि अल्लाह के रसूल सल्ल० के क़राबतदारों को हम अब क़ैद में नहीं रख सकते।

अहज़ाब की लड़ाई

उहुद की लड़ाई में अगरचे क़ुरैश को इत्तिफ़ाक़ से एक मौक़ा मिल गया था कि वे मुसलमानों को अपना ज़ोर दिखा देते और कहने को उन्हों ने मुसलमानों से बद्र की हार का बदला भी ले लिया था, लेकिन वे खूब समझते थे कि वे उहुद से जीत कर नहीं लौटे हैं और यह भी उन्हें अंदाज़ा हो गया था कि अब वे अपनी मौजूदा ताक़त के साथ मदीने की मुस्लिम स्टेट को हराने के क़ाबिल नहीं हैं। वे एक साल में और ज़्यादा तैयारी के बाद लड़ने का पक्का वायदा करके उहुद से विदा हुए थे और इसका एलान भी अबू सुफ़ियान ने कर दिया था, मगर मक्का से फ़ौज लेकर निकलने के बाद वह हालात को अपने मुनासिब न देख कर वापस लौट गया।

वक़्त गुज़रने के साथ-साथ अब क़ुरैश के लिए मुम्किन भी न था कि अकेले मदीना को हराने के लिए निकलें, लेकिन मुसलमानों के दूसरे दुश्मनों जैसे यहूदियों वग़ैरह ने क़ुरैश को मिलाकर और एक जुट होकर मदीना को हराने की स्कीम बना ली।

इसी तरह ज़ीक़ादा सन्० ५ हि० में दस हज़ार की एक भारी-भरकम फ़ौज, जिसमें क़ुरैश, बुतपरस्त, यहूदी वग़ैरह सभी शामिल थे, मदीना की ओर बढ़ी।

हुज़ूर सल्ल० ने इन तैयारियों की इत्तिला दौमतुल जुन्दल के सफ़र ही में मिल गयी थी और आप उसी के डर से जल्दी वापस भी आ गये थे। मश्विरा हुआ, तज्वीज़ मदीना ही में रह कर मुक़ाबला करने की हुई और शहर की हिफ़ाज़त के लिए हज़रत सलमान फ़ारसी का यह मश्विरा क़ुबूल किया गया कि ईरान के तरीक़े पर खन्दक़ खोदी जाए।

खंदक की खुदाई के लिए वही तीन हज़ार मुस्लिम रज़ाकार मज़दूर बने, जिन्हें फ़ौजियों की ज़िम्मेदारी भी अदा करनी थी। दस-दस आदमियों की टोलियां बनायी गयीं और हर टोली को २० गज़ का टुकड़ा सौंपा गया। अन्दाज़े के मुताबिक़ खंदक की चौड़ाई दस गज़ रखी गयी, इसी तरह उसकी गहराई भी ५ गज़ से कम न थी। कुल मिला कर इस की लंबाई साढ़े तीन मील थी।

यह वाक़िआ दुनिया का अनोखा वाक़िआ है कि तीन हफ़्ते में इतना बड़ा काम मुस्लिम रज़ाकारों ने मुकम्मल कर लिया, लगभग ३ लाख ८ हज़ार घन गज़ मिट्टी को खोदना और उसे साफ़ करना कोई खेल न था। हर आदमी पर एक सौ से ज़्यादा घन गज़ मिट्टी आती है, फिर सामान की मौजूदगी का हाल यह था कि खुदाई के कुछ हथियार बनू क़ुरैज़ा से समझौते के तहत उधार लिए गए थे और टोकरियां न होने की वजह से हज़रत अबूबक्र व उमर रज़ि० जैसे बुज़ुर्ग लोग चादरों और दामनों में मिट्टी भर-भर कर उठाते थे।

खन्दक़ खोदने, पत्थर तोड़ने, मिट्टी हटाने में नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम खुद भी सहाबा को मदद देते थे। एक बार तो एक चट्टान एक जगह आ गयी। वह किसी तरह टूटने में न आती थी। अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम तशरीफ़ लाए और एक ऐसी कुदाल मारी कि सारी चट्टान चूरा-चूरा हो गयी।

इधर खन्दक़ मुकम्मल हुई, उधर शव्वाल सन ०५ हि० में दुश्मन का टिड्डी दल फ़ौजें लिए आ पहुंचा। ये दुश्मन अगरचे बहुत बड़ी तायदाद में थे, लेकिन खंदक़ देख कर हैरान रह गए। उन के नापाक इरादों पर पानी फिरता नज़र आया, इस लिए कि उन के घोड़े और ऊंट खन्दक़ के बाहरी किनारे तक ही पहुंच सकते थे। इक्का-दुक्का घुड़सवारों ने जोश में आ कर खन्दक़ पार करने की कोशिश की, मगर वे उस के अन्दर गिर कर खत्म हो गये। कमज़ोर हिस्सों से वे धावा बोलने की कोशिश करते, मगर मुसलमान फ़ौजी चौकियां ग़फ़लत से काम लिए बग़ैर सामने मौजूद होतीं और तीरंदाज़ दुश्मन का मुंह फेर देते।

मुसलमान थे तो तीन हज़ार, लेकिन हुज़ूर सल्ल० ने उन को इस तरह तर्तीब दी थी कि सामने खन्दक़ थी और पीछे सुलअ पहाड़। चौकियों पर निगरानी इतनी सख्त थी कि दुश्मन की एक कोशिश भी कामियाब नहीं हो पा रही थी। इस लड़ाई में तलवारें और नेज़े बिल्कुल बेकार थे।

बस, दोनों तरफ़ से कुछ न कुछ तीरंदाजी ही हो जाती। कई दिनों के घेरे
से तंग आ कर एक दिन दुश्मन ने बड़ा जोर दिखाया, कभी यहां से हमला
किया, कभी वहां से, मगर कोई नतीजा न निकलता।

घेरे का बहुत दिनों तक रहना मुसलमानों के लिए परेशानी की
वजह थी, पर दुश्मन भी अपनी जगह परेशान थे। सलाह-मश्विरे के बाद
एक भरपूर हमला करने के लिये यह तै पाया कि बनू क़ुरैज़ा को हुज़ूर
सल्ल० के खिलाफ़ अह्द तोड़ने पर उभारा जाए और वे अन्दर से हमला-
वर हों। अबू सुफ़ियान के कहने पर हुई बिन अख़्तब ने यह मिशन अपने
ज़िम्मे लिया। वह बनी क़ुरैज़ा के सरदार काब बिन असैद के पास पहुंचा,
मक़सद बयान किया। उसने पहले तो इंकार किया कि मैंने हमेशा मुहम्मद
को वायदे का सच्चा पाया है, उन से किया गया अह्द तोड़ना बड़ी बे-
मुरव्वती है, मगर इब्ने अख़्तब ने पूरे ज़ोर से बात दोहरायी और उस पर
ऐसा जादू चलाया कि उस से अपनी बात मनवा ली।

यह ख़बर मुसलमानों तक पहुंची, हुज़ूर सल्ल० ने तहक़ीक़ करायी,
बात सही निकली, तो हुज़ूर सल्ल० की ज़ुबान से बस इतना निकला,
'अल्लाहु अक्बर, हस्बुनल्लाहु नेअमल वकील०'

मोर्चे का फैलाव, घेरे का बहुत दिन तक बाक़ी रहना, तायदाद की
कमी बे-सर व सामानी की इंतिहा, उपवास की हालत, उस पर रात का
जागना, मुनाफ़िक़ों का बहाने बना-बना कर अलग हो जाना, फिर इस
दर्जे की जान मारी कि नमाज़ें क़ज़ा हो-हो गयीं, यह कुछ मामूली दर्जे का
इम्तिहान न था, इस पर जब शहर के अन्दर भी ग़द्दारी की बारूदी सुरंगें
बिछ गयीं और बनी क़ुरैज़ा की तरफ़ से बग़ली छुरा भोंकने का ख़तरा सर
पर आ गया तो आज हम अन्दाज़ा नहीं कर सकते कि तीन हज़ार मुसल-
मान जां-निसारों के जज़्बात किस रंग के होंगे।

दूसरी तरफ़ घेरा जितना लम्बा होता गया, हमला करने वालों की
हिम्मतें पस्त होती गयीं। दस हज़ार आदमियों के खाने-पीने का इन्तिज़ाम
करना कोई आसान काम न था। फिर इंतिहाई सर्दी। इसी बीच एक बार
ऐसी सख़्त तूफ़ानी हवा चली कि काफ़िरों के डेरे उखड़ गये, सारी फ़ौज
तितर-बितर हो गयी। हवा क्या थी, ख़ुदा का अज़ाब था और वाक़ई यह
तूफ़ान अल्लाह तआला ने मुसलमानों के लिए रहमत और काफ़िरों के
लिए अज़ाब बना कर ही भेजा था।

———

बनू क़ुरैज़ा का अंजाम

अहज़ाब की लड़ाई से इत्मीनान हो जाने के बाद नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने बनू क़ुरैज़ा को बुला भेजा कि वे सामने आ कर अपनी उस पालिसी को साफ़ करें जो उन्हों ने अहज़ाब की लड़ाई के मौक़े पर मुसलमानों की जड़ काटने के लिए बग़ावत की राह अपनायी थी। बनू क़ुरैज़ा ने तो अपने अमल से यह साबित ही कर दिया था कि वे मुसलमानों के हक़ में उस खुले हुए दुश्मन से कहीं ज़्यादा खतरनाक हैं, जो खुल कर मुखालफ़त करता है।

हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का बदला हुआ रुख देख कर वे सब के सब क़िला बंद हो गये और लड़ाई की पूरी तैयारी कर ली।

उस वक़्त मुसलमानों को यह मालूम हुआ कि बनू नज़ीर का सरदार हुई बिन अख्तब, जो बनू क़ुरैज़ा को मुसलमानों के खिलाफ़ उभारने पर आया था, अब तक उन के क़िले के अन्दर बन्द है।

बनू क़ुरैज़ा की यह ग़द्दारी उन की कोई पहली हरकत न थी, बल्कि बद्र की लड़ाई में उन्हों ने क़ुरैश की (जो मुसलमानों पर हमलावर हुए थे) हथियारों से मदद की थी, मगर उस वक़्त रहमदिल नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उन का यह क़ुसूर माफ़ कर दिया था।

अब उन के क़िला बन्द हो जाने से मुसलमानों को मज्बूर हो कर लड़ना पड़ा। ज़िलहिज्जा के महीने में घेर लिया गया, जो २५ दिन तक चला। घेरे की सख्ती से बनू क़ुरैज़ा तंग आ गए। उन्हों ने क़बीले के मुसलमानों को, जिन से उन के ताल्लुक़ात थे, बीच में डाला और नबी सल्ल० से मनवा लिया कि बनू क़ुरैज़ा के मामले में साद बिन मुआज़ को (जो औस क़बीले के सरदार थे) हकम (सरपंच और मुंसिफ़) मान लिया जाए। जो फ़ैसला साद कर दें, खुदा के नबी (सल्ल०) उसी को मंज़ूर कर लें।

बनू क़ुरैज़ा क़िला से निकल आए और मुक़दमा साद बिन मुआज़ के सुपुर्द किया गया। खुदा जाने बनू क़ुरैज़ा के यहूदियों और औस के मुसलमानों ने साद बिन मुआज़ को हकम बनाते हुए क्या-क्या उम्मीदें उन से लगायी होंगी, मगर ज़रूरी तह्क़ीक़ और जानकारी हासिल करने के

बाद उन्हों ने यह फ़ैसला दिया कि—

१. बनी क़ुरैज़ा के लड़ने वाले मर्द क़त्ल किए जाएं,

२. औरतें और बच्चे मम्लूक बनाए जाएं, और

३. माल बांट लिया जाए।

इस फ़ैसले के बारे में यह बात भी ज़ेहन में रहनी चाहिये कि यहूदियों के अपने चुने हुये मुंसिफ़ ने लगभग वही सज़ा दी थी जो यहूदी अपने दुश्मनों को दिया करते थे और जो उन की शरीअत में है, बल्कि उन की शरीअत में ज्यादा सख़्त सज़ा दी हुई है।

हुदैबिया का समझौता

काबा इस्लाम का असल मर्कज़ था, उसे हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम और उन के बेटे हज़रत इस्माईल अलै० ने अल्लाह के हुक्म से तामीर किया था। मुसलमानों को इस्लाम के इस मर्कज़ से निकले हुए अब छः साल हो चुके थे, फिर इस्लाम के अहम अर्कान में हज भी अहम रुक्न था। इस लिए अब मुसलमानों की पूरी ख्वाहिश थी कि वे खाना-ए-काबा का हज करें।

यों तो अरब वाले साल भर लड़ते रहते थे, फिर भी हज के मौक़े पर चार महीनों में वे इस लिए लड़ाई बन्द कर देते थे कि लोगों को काबे तक जाने और वापस आने के लिए अम्न मयस्सर आ जाए और इस तरह वे इत्मीनान के साथ काबे की ज़ियारत कर सकें।

सन् ०७ हि० में नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने एक ख्वाब मुसलमानों को सुनाया। फ़रमाया मैं ने देखा, गोया मैं और मुसलमान मक्का पहुंच गये हैं और बैतुल्लाह का तवाफ़ कर रहे हैं।

इस ख्वाब के सुनने से मुहाजिर मुसलमानों को खास तौर से, और तमाम मुसलमानों को आम तौर से, उस शौक़ ने, जो बैतुल्लाह के तवाफ़ का उन के दिल में था, बेचैन कर दिया और उन्हों ने उसी साल नबी सल्ल० को मक्का के सफ़र के लिए तैयार कर लिया। मदीना से मुसलमानों ने लड़ाई का सामान साथ नहीं लिया, बल्कि क़ुर्बानी के ऊंट साथ लिए और सफ़र भी ज़ीक़ादा के महीने में किया, जिस में अरब पुराने रिवाज के मुताबिक़ लड़ाई हरगिज़ न किया करते थे और जिस में हर

एक दुश्मन को भी बे-रोक-टोक मक्का में आने की इजाजत हुआ करती थी। १४०० मुसलमान साथ चलने को तैयार हो गए। जुल हुलैफ़ा पहुंच कर क़ुर्बानी की इब्तिदाई रस्में अदा की गयीं। इस तरह इस बात का एलान हो गया कि मुसलमानों का इरादा सिर्फ़ खाना-ए-काबा की जियारत का है, लड़ाई या हमले का कोई इम्कान नहीं। फिर भी आंहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने एक साहब को मक्का भेजा कि वह जा कर क़ुरैश के इरादों की खबर लाएं. वे खबर लाये कि क़ुरैश ने तमाम क़बीलों को इकट्ठा करके कह दिया है कि मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) मक्का में नहीं आ सकते और यह कि वे सब मुक़ाबले के लिए तैयार हैं उन लोगों ने मक्के से बाहर एक जगह पर अपनी फ़ौजें जमा करना शुरू करदीं और मुक़ाबले के लिए बिल्कुल तैयार हो गये।

आंहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम इस इत्तिला के बावजूद आगे बढ़ते रहे और हुदैबिया नामी जगह पर पहुंच कर क़ियाम किया। मक्का से एक मंज़िल के फ़ासले पर हुदैबिया नाम का एक कुआं है और यही नाम इस गांव का भी पड़ गया है। यहां क़बीला खुज़ाआ के सरदार आंहज़रत सल्ल० की खिदमत में हाज़िर हुए और बताया कि क़ुरैश ने लड़ाई की तैयारी कर ली है और वे आप को मक्का में न जाने देंगे।

आपने फ़रमाया कि उन से जा कर कह दो कि हम तो सिर्फ़ उमरा के ख्याल से आए हैं, लड़ाई करना मक़सद नहीं है। हमें खाना-ए-काबा के तवाफ़ और ज़ियारत का मौक़ा देना चाहिए।

जब यह पैग़ाम क़ुरैश के पास पहुंचा, तो कुछ दुष्ट लोगों ने तो कहा कि, 'हमें मुहम्मद का पैग़ाम सुनने की ज़रूरत ही नहीं है. लेकिन संजीदा लोगों में से एक शख्स उर्व: ने कहा कि. 'नहीं, तुम मेरे ऊपर भरोसा करो और मैं जा कर मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) से बात करता हूं।'

चुनांचे उर्व: आंहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की खिदमत में हाज़िर हुआ, लेकिन कोई मामला तै न हो सका।

इस बीच क़ुरैश ने एक दस्ता मुसलमानों पर हमला करने के लिए भी भेज दिया। ये लोग गिरफ़्तार कर लिये गये।

अब यह तै पाया कि समझौते के लिए हज़रत उस्मान रज़ियल्लाहु अन्हु को मक्का भेजा जाए। हज़रत उस्मान मक्का तशरीफ़ ले गये, लेकिन क़ुरैश किसी तरह राज़ी न हुए कि मुसलमानों को काबे की ज़ियारत का मौक़ा दिया जाये, बल्कि उन्होंने हज़रत उस्मान रज़ि० को भी रोक लिया।

यहां मुसलमानों में किसी तरह यह खबर उड़ गयी कि हज़रत उस्मान रज़ि० शहीद कर दिये गये।

इस खबर ने मुसलमानों को बे-चैन कर दिया। आंहज़रत सल्ल-ल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इस खबर को सुन कर फ़रमाया कि अब तो उस्मान रज़ि० के खून का बदला लेना ज़रूरी है। यह कह कर आप एक बबूल के पेड़ के नीचे बैठ गये और यहां आपने सहाबा किराम रज़ियल्लाहु अन्हुम अजमईन से बैअत ली। क़ुरआन मजीद में भी इस का ज़िक्र है—

'अल्लाह राज़ी हुआ उन मोमिनों से, जबकि वह पेड़ के नीचे तुम्हारे (हाथ पर) बैअत कर रहे थे।'

बैअत इस बात पर थी कि अगर लड़ना भी पड़ा तो हम मर जाएंगे लेकिन लड़ाई से मुंह न मोड़ेंगे और क़ुरैश से हज़रत उस्मान रज़ि० का बदला लेंगे।

इस बैअत में मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने अपने बाएं हाथ को उस्मान रज़ि० का दायां हाथ क़रार दिया और उन की तरफ़ से अपने दाएं हाथ पर बैअत की। इस बैअत का हाल सुन कर क़ुरैश डर गये और उन के सरदार एक-एक कर हुदैबिया में हाज़िर हुये।

उर्वः बिन मस्ऊद, जो क़ुरैश की तरफ़ से आया था, उस ने क़ुरैश से वापस जा कर कहा—

'ऐ क़ौम! मुझे नजाशी (हब्शा का बादशाह), क़ैसर (रूम का बादशाह) किसरा (ईरान का बादशाह) के दरबार में जाने का मौक़ा मिला है, मगर कोई भी बादशाह ऐसा नज़र नहीं आया, जिस की अज़मत उस के दरबार वालों के दिल में ऐसी हो, जैसे मुहम्मद (सल्ल०) के साथियों के दिल में मुहम्मद की है। मुहम्मद थूकता है, तो उस का लुआब ज़मीन पर गिरने नहीं पाता, किसी न किसी के हाथ ही पर गिरता है और वह शख्स इस आबे देहन को अपने चेहरे पर मल लेता है।

जब मुहम्मद कोई हुक्म देता है- तो तामील के लिए सब दौड़ पड़ते हैं, जब वुज़ू करता है, तो इस्तेमाल किये हुये पानी के लिए ऐसे गिरे पड़ते हैं, गोया लड़ाई हो पड़ेगी, जब वह कलाम करता है तो सब के सब चुप हो जाते हैं। उन के दिल में मुहम्मद का इतना अदब है कि वह उस के सामने नज़र उठा कर नहीं देखते। मेरी राय है कि उस से सुलह कर लो, जिस तरह भी बने।

सोच-समझ कर क़ुरैश समझौता करने पर तैयार हो गये।

क़ुरैश ने सुहैल बिन अम्र को अपना सफ़ीर बना कर भेजा, ताकि वह समझौते के बारे में बात-चीत करें।

उन से देर तक सुलह के बारे में बात-चीत होती रही और आखिरकार सुलह की शर्तें तै हो गयीं। जिन शर्तों पर समझौता हुआ था, वे यह थीं—

□ मुसलमान इस साल वापस चले जाएं।

□ अगले साल आएं और सिर्फ़ तीन दिन ठहर कर वापस चले जाएं।

□ हथियार लगा कर न आएं, सिर्फ़ तलवार साथ रख सकते हैं, मगर वह भी म्यान में रहेगी, बाहर न निकाली जाएगी।

□ मक्के में जो मुसलमान बाक़ी रह गये हैं, उन में से किसी को अपने साथ न ले जायें और अगर कोई मुसलमान मक्के में वापस आना चाहे, तो उसे भी न रोकें।

□ काफ़िरों का मुसलमानों में से अगर कोई शख्स मदीना चला जाए तो उसे वापस कर दिया जाए, लेकिन अगर कोई मुसलमान मक्का में जाए तो वह वापस नहीं किया जाएगा।

□ अरब क़बीलों को अख्तियार होगा कि वे मुसलमानों या काफ़िरों में से जिस के साथ चाहें, समझौता कर लें।

यह समझौता दस साल तक क़ायम रहेगा।

शर्त न० ५ सुन कर तमाम मुसलमान, अलावा अबूबक्र रज़ि० घबरा उठे। हज़रत उमर रज़ि० इस बारे में ज़्यादा जोश में थे, लेकिन नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने हंस कर इस शर्त को भी मंज़ूर फ़रमा लिया।

समझौता हज़रत अली रज़ि० ने लिखा था। उन्हों ने शुरू में लिखा 'बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम'

सुहैल जो क़ुरैश की तरफ़ से समझौता करा रहा था, बोला, खुदा की क़सम! हम नहीं जानते कि रहमान किसे कहते हैं, 'बिस्मिकल्लाहुम-म' लिखो। नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने वही लिख देने का हुक्म दिया।

हज़रत अली ने फिर लिखा, यह समझौता मुहम्मद रसूलुल्लाह और क़ुरैश के दर्मियान हुआ है।

सुहैल ने इस पर भी एतराज उठाया और नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उसकी ख्वाहिश पर मुहम्मद बिन अब्दुल्लाह लिखने का हुक्म दिया।

हज़रत अबू जुन्दल का मामला

समझौते की शर्त न० ५ के बारे में क़ुरैश का ख़याल था कि इस शर्त से डर कर कोई शख्स आगे मुसलमान न होगा, लेकिन यह शर्त अभी तै ही हुई थी और समझौता नामा लिखा ही जा रहा था, दोनों तरफ़ से दस्तख़त भी न हुई थीं कि सुहैल बिन अम्र (जो मक्का की ओर से समझौता नामे पर दस्तख़त करने का अख़्तियार रखता था) के सामने अबू जुन्दल मक्के से भाग कर वहां पहुंच गए। वह मक्का में मुसलमान हो गये थे। क़ुरैश ने उन्हें क़ैद कर रखा था।

सुहैल ने कहा, इसे हमारे हवाले कीजिए।

नबी सल्ल० ने फ़रमाया कि समझौता नामे के पूरे होने पर उस के ख़िलाफ़ न होगा, यानी जब तक समझौता नामा पूरा न हो जाए, उस की शर्तों पर अमल नहीं हो सकता।

सुहैल ने बिगड़ कर कहा कि तब हम समझौता ही नहीं करते।

नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने हुक्म दिया और अबू जुन्दल क़ुरैश के सुपुर्द कर दिए गये।

क़ुरैश ने मुसलमानों के कैम्प में उनकी मश्कें बांधीं, पांवों में जंजीर डालीं और खींच कर लेगये। नबी सल्ल० ने जाते वक़्त इतना फ़रमा दिया था कि 'अबू जुन्दल ! ख़ुदा तेरी मदद करेगा, घबराना मत !'

अबू जुन्दल की ज़िल्लत और क़ुरैश का ज़ुल्म देख कर मुसलमानों के अन्दर जोश और ग़ुस्सा तो पैदा हुआ, यहां तक कि हज़रत उमर ने आं-हज़रत से कह दिया कि जब आप अल्लाह के सच्चे नबी हैं तो फिर हम यह ज़िल्लत क्यों सहें, लेकिन आंहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि 'मैं ख़ुदा का पैग़म्बर हूं और उसके हुक्म की नाफ़रमानी नहीं कर सकता। ख़ुदा मेरी मदद करेगा।'

ग़रज़ यह कि समझौता मुकम्मल हुआ। अबू जुन्दल को समझौते की शर्त के मुताबिक़ वापस होना पड़ा और इस्लाम के फ़िदाकारों ने रसूल की इताअत का कड़ा इम्तिहान पास कर लिया।

———

खुली जीत

इस समझौते को क़ुरआन मजीद ने खुली जीत कहा और आप ने इस समझौते से बहुत बड़े-बड़े मक़सद हासिल किए—

१. एक यह कि मुसलमानों और मक्का और अरब के मुश्रिकों के दर्मियान हर तरह के मेल-जोल के रास्ते खुल गये। लोग आने-जाने लगे। वर्षों के बिछड़े हुए रिश्ते-नातेदार इकट्ठे हो कर बैठे। मक्के में जो ग़लत फ़हमियां हुज़ूर और मुसलमानों के बारे में थीं, वे मुश्रिकों की तरफ़ से सामने आयीं और मुसलमानों ने उन को साफ़ किया, लोगों के सवालों का जवाब दिया, उन्हें अपनी बातें खोल कर बतायीं, यहां तक कि हक़ की और इस्लाम की दावत घर-घर चर्चा का मज़्मून बन गयी और अम्न की हालत में इस्लाम इस तेज़ी से फैला कि हुदैबिया के समझौते के बाद के दो वर्ष में इतनी तायदाद खुशी-खुशी हक़ के मोर्चे पर आ खड़ी हुई, जितनी इस से पहले के अठारह-उन्नीस वर्षों में कुल मिला कर हासिल हुई थी, यहां तक कि ख़ालिद और अम्र बिन आस जैसे काम के नव-जवान भी इसी समझौते के बाद ही इस्लाम के हल्क़े में दाख़िल हुए।

२. दूसरा फ़ायदा यह कि लड़ाइयों से निजात पा कर मुसलमानों की ज़ेहनी और अख़्लाक़ी इस्लाह और खुद स्टेट के अच्छे इन्तिज़ाम का काम अंजाम देने के लिए एक सुनहरा मौक़ा मिल गया।

३. तीसरा दीन की दावत विदेशों में भी फैलाने का मौक़ा इसी समझौते के बाद ही हासिल हुआ (इस की तफ़्सील आगे आ रही है)

४. चौथा फ़ायदा यह पहुंचा कि मुसलमान ख़ैबर के यहूदियों की दुश्मनी भरी कार्रवाई का मुंह बन्द करने के लिए क़ुरैश की तरफ़ से बिल्कुल बे-फ़िक्र हो गये। चुनांचे हुदैबिया के समझौते के बाद फ़ौरन ही इस्लामी हुकूमत की तवज्जोह इस तरफ़ गयी।

५. पांचवां फ़ायदा यह हासिल हुआ कि अरब के क़बीलों को आज़ादी हासिल हो गयी कि उन में से, जो भी चाहे, मदीना की हुकूमत का साथ दे। यह ऐसा दरवाज़ा खुला कि जिसमें से गुज़र कर नये-नये लोग मुसल-मानों को यह मदद पहुंचा सकते थे और क़ुरैश कोई रोक-टोक नहीं कर सकते थे, चुनांचे बनू ख़ुज़ाआ ने तो ठीक उन्हीं दिनों इस्लामी हुकूमत से

ताल्लुक़ छोड़ लिया।

६. और छठा नतीजा तो यह निकलना ही था कि एक ही साल बाद बड़े ठाठ से मुसलमान हरमे काबा की ज़ियारत के लिए मक्का में दाखिल हुए और उस वक़्त क़ुरआन की पेशीनगोई के मुताबिक़ 'अम तहफ़्फ़ुज़' का माहौल बना हुआ था।

७. फिर यह कि समझौते की धारा ५ खुद क़ुरैश के गले का कांटा बन गयी। अबू जुन्दल और अबू-बसीर वग़ैरह ने अपनी ताक़त बना कर दुश्मनों को परेशान करना शुरू कर दिया।

यही सब वजहें थीं जिस से इस समझौते को 'खुली जीत' कहा जाता है।

ख़ैबर की लड़ाई

ख़ैबर मदीना से शाम की तरफ़ तीन मंज़िल पर एक जगह का नाम है: यह यहूदियों की खालिस आबादी का क़स्बा था। आबादी के चारों तरफ़ मज़बूत क़िले बनाए हुए थे।

नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को हुदैबिया से पहुंचे हुए अभी थोड़े ही दिन (एक महीने से कम) हुए थे कि सुनने में आया कि ख़ैबर के यहूदी फिर मदीने पर हमला करने वाले हैं और अहज़ाब की लड़ाई की नाकामी का बदला लेने और अपनी खोयी हुई जंगी इज़्ज़त व क़ुव्वत को मुल्क भर में बहाल करने के लिये एक ज़बरदस्त लड़ाई करना चाहते हैं।

उन्हों ने क़बीला बनू ग़त्फ़ान के चार हज़ार लड़ाका बहादुरों को भी अपने साथ मिला लिया था और समझौता यह था कि अगर मदीना जीत लिया गया तो ख़ैबर की पैदावार का आधा हिस्सा बनू ग़त्फ़ान को देते रहेंगे।

नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इस लड़ाई में सिर्फ़ उन्हीं साथियों को साथ चलने की इजाज़त दी थी जो बैअतुरिज़्वान में शरीक हुए थे। इन की तायदाद चौदह सौ थी, जिन में से दो सौ घोड़सवार थे।

सामने की फ़ौज के सरदार उकाशा बिन मिहसन असदी रज़ियल्लाहु अन्हु और दाएं बाज़ू के सरदार हज़रत उमर बिन खत्ताब रज़ि० और बाएं बाज़ू के सरदार कोई और सहाबी थे।

बीस सहाबी औरतें भी फ़ौज में आयी थीं, जो बीमारों और घायलों की ख़बरगीरी और तीमारदारी के लिए साथ होती थीं।

इस्लामी फ़ौज ख़ैबर के पास रात के वक़्त पहुंच गयी थी, लेकिन नबी सल्ल० की आदत यह थी कि रात को लड़ाई शुरू न करते थे और न कभी शबख़ूं डाला करते, इसलिए इस्लामी फ़ौज ने मैदान में डेरे डाल दिए। लड़ाई के लिए इस जगह का चुनाव बहादुर सहाबी हुबाब बिन मुंज़िर रज़ि० ने किया था। यह मैदान अह्ले ख़ैबर और बनू ग़त्फ़ान के बीच पड़ता था।

इस तद्बीर का फ़ायदा यह हुआ कि जब बनू ग़त्फ़ान ख़ैबर के यहूदियों की मदद को निकले, उन्हों ने इस्लामी फ़ौज को आगे बढ़ने में बहुत बड़ी रुकावट पाया और इसलिए चुप-चाप अपने घरों को वापस चले गये।

हज़रत उस्मान बिन अफ़्फ़ान रज़ियल्लाहु तआला अन्हु इस कैम्प के ज़िम्मेदार अफ़सर थे।

महमूद बिन मुस्लिमा रज़ियल्लाहु तआला अन्हु को हमलावर फ़ौज का सरदार बनाया गया और उन्होंने क़िला नुआम पर लड़ाई की शुरूआत कर दी। नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम खुद भी हमलावर फ़ौज में शामिल हुए थे। बाक़ी फ़ौजी कैम्प हज़रत उस्मान बिन अफ़्फ़ान रज़ि० की निगरानी में था।

महमूद बिन मुस्लिमा रज़ि० पांच दिन तक बराबर हमला करते रहे, लेकिन क़िला फ़त्ह न हुआ। पांचवें या छठे दिन का ज़िक्र है कि महमूद रज़ियल्लाहु तआला अन्हु लड़ाई के मैदान की गर्मी से ज़रा सुस्ताने के लिए बाएं क़िले की दीवार के साए में लेट गये।

कनाना बिन हक़ीक़ यहूदी ने उन्हें ग़ाफ़िल देख कर एक पत्थर उन के सिर पर दे मारा, जिस से वे शहीद हो गये। फ़ौज की कमान मुहम्मद बिन मुस्लिमा रज़ियल्लाहु अन्हु के भाई ने संभाल ली और शाम तक बड़ी बहादुरी से लड़े। मुहम्मद बिन मुस्लिमा की राय हुई कि यहूदियों के नख़्लिस्तान को काटा जाए, क्योंकि यह उन लोगों को एक-एक बच्चे के बराबर प्यारा है। इस तद्बीर से क़िले वालों पर असर डाला जा सकेगा। इस तद्बीर पर अमल शुरू हो गया था कि अबूबक्र रज़ियल्लाहु तआला अन्हु ने नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के हुज़ूर में हाज़िर होकर दर्ख़ास्त की कि इलाक़ा यक़ीनन मुसलमानों के हाथ पर फ़त्ह होने वाला है, फिर हम उसे अपने हाथों क्यों ख़राब करें। नबी सल्लल्लाहु अलैहि

सल्लम ने इस राय को पसन्द फ़रमाया और इब्ने मुस्लिमा के पास नख़्लिस्तान काटने के बारे में मना करने का हुक्म भेज दिया।

शाम को मुहम्मद बिन मुस्लिमा रज़ि० ने अपने भाई की मज़्लूमाना शहादत का क़िस्सा खुद ही नबी सल्ल० की ख़िदमत में आ कर अर्ज़ किया।

नबी सल्ल० ने फ़रमाया, कल फ़ौज का निशान उस शख़्स को दिया जाएगा। (या वह शख़्स निशान हाथ में लेगा), जिस से अल्लाह तआला और अल्लाह के रसूल सल्ल० मुहब्बत करते हैं और अल्लाह तआला फ़त्ह इनायत फ़रमाएगा।

यह ऐसी तारीफ़ थी, जिसे सुन कर फ़ौज के बड़े-बड़े बहादुर अगले दिन की कमान मिलने के आरज़ूमंद हो गये थे।

उस रात लश्कर की देख-भाल की ख़िदमत हज़रत उमर बिन ख़त्ताब रज़ियल्लाहु तआला अन्हु के सुपुर्द थी। उन्हों ने घूमते हुए एक यहूदी को गिरफ़्तार कर लिया और उसी वक़्त नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ख़िदमत में लाए। आंहज़रत सल्ल० तहज्जुद की नमाज़ में थे। जब फ़ारिग़ हुए तो यहूदी से बातें कीं। यहूदी ने कहा कि अगर उस की औरत व बच्चे को, जो क़िले के अन्दर हैं, अमान अता हो, तो वह बहुत से जंगी भेद बता सकता है। यह वायदा उस से कर लिया गया। यहूदी ने बताया कि नुताात के अन्दर दफ़न कर रहे हैं। मुझे वह जगह मालूम है, जब मुसलमान क़िला नुताात ले लेंगे, तो मैं वह जगह बता दूंगा, बताया कि क़िला शन्न के तहख़ानों में क़िला तोड़ने के बहुत से हथियार, तोपें वग़ैरह मौजूद हैं। जब मुसलमान क़िला शन्न फ़त्ह कर लेंगे, तो मैं वे तहख़ाने भी बता दूंगा।

सुबह हुई, तो नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने हज़रत अली मुर्तज़ा रज़ि० को याद फ़रमाया। लोगों ने अर्ज़ किया कि उन की आंख आयी हुई है और आंखों में दर्द भी होता रहा है। हज़रत अली रज़ियल्लाहु तआला अन्हु आ गये, तो नबी सल्ल० ने लुआबे मुबारक जनाबे मुर्तज़ा रज़ि० की आंखों को लगा दिया। उसी वक़्त आंखें खुल गयीं, न आंख की लाली बाक़ी थी और न दर्द की तक्लीफ़। फिर फ़रमाया, अली, जाओ, खुदा की राह में जिहाद करो, पहले इस्लाम की दावत दो, बाद में लड़ाई करो। अली! अगर तुम्हारे हाथ पर एक शख़्स भी मुसलमान हो जाए, तो यह काम भारी ग़नीमतों के हासिल हो जाने से बेहतर होगा।

हज़रत अली मुर्तज़ा रज़ि० ने नाइम क़िले पर लड़ाई की पहल की। मुक़ाबले के लिए क़िले का मशहूर सरदार महंब मैदान में निकला। यह अपने आप को हज़ार बहादुरों के बराबर कहा करता था।

महंब का भाई यासिर निकला। उसे हज़रत ज़ुबैर बिन अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु ने ख़ाक में सुला दिया।

इस के बाद हज़रत अली मुर्तज़ा रज़ियल्लाहु अन्हु के आम हमले से नाइम क़िला जीत लिया गया।

उसी दिन क़िला सअब को हज़रत हुबाब बिन मुंज़िर रज़ियल्लाहु अन्हु ने घेरे के तीसरे दिन बाद फ़त्ह कर लिया। क़िला सअब से मुसलमानों को जौ, खजूर, छोहारे, मक्खन, रौग़ने ज़ैतून, चर्बी और दूसरी चीज़ें बड़ी मिक़्दार में मिलीं। फ़ौज में रसद की कमी से जो तक्लीफ़ हो रही थी, वह दूर हो गयी। इसी क़िले से क़िले तोड़ने वाले हथियार भी बरामद हुए, जिस की ख़बर यहूदी जासूस दे चुका था। उस से अगले दिन क़िला नुतात जीत लिया गया। अब क़िला ज़ुबैर जो एक पहाड़ी टीले पर वाक़ेअ था और अपने बानी ज़ुबैर के नाम से याद किया जाता था, हमला किया गया। दो दिन के बाद एक यहूदी फ़ौजे इस्लाम में आया। उस ने कहा, यह क़िला तो महीने भर तक भी तुम फ़त्ह नहीं कर सकोगे। मैं एक राज़ बताता हूं। इस क़िले के अन्दर पानी एक ज़मीन के नीचे की राह से जाता है. अगर पानी का रास्ता बन्द कर दिया जाए, तो फ़त्ह मुम्किन है, मुसलमानों ने पानी पर क़ब्ज़ा कर लिया। अब क़िले वाले क़िले से बाहर निकल कर खुले मैदान में आ कर लड़े और मुसलमानों ने उन्हें हरा कर क़िले को जीत लिया।

फिर हिस्ने उबई पर हमला शुरू हुआ। इस क़िले वालों ने सख़्त मुक़ाबला किया। उन में से एक शख़्स, जिस का नाम ग़ज़वान था, मुक़ाबले के लिए बाहर निकला। हुबाब रज़ियल्लाहु मुक़ाबले को गये। उसका सीधा हाथ कट गया। वह क़िले को भागा। हुबाब ने पीछा किया। फिर हमला किया, वह गिर पड़ा और क़त्ल कर दिया गया।

क़िले से एक और जवान निकला, जिस का मुक़ाबला एक मुसलमान ने किया, मगर मुसलमान उस के हाथ से शहीद हो गया। अबूदुजाना रज़ियल्लाहु तआला अन्हु निकले। उन्हों ने जाते ही उस के पांव काट दिए और फिर क़त्ल कर डाला।

यहूदी पर रौब छा गया और बाहर निकलने से रुक गये। अबू-

दुजाना रजि० आगे बढ़े। मुसलमानों ने उन का साथ दिया। तक्बीर कहते हुए क़िले की दीवार पर जा चढ़े। क़िला फ़त्ह कर लिया। क़िले वाले भाग गये। इस क़िले से बकरियां और कपड़े और अस्बाब बहुत-सा मिला।

अब मुसलमानों ने हिस्ने बिर्र पर हमला कर दिया। वहां के क़िले वालों ने मुसलमानों पर इतने तीर बरसाए और इतने पत्थर गिराए कि मुसलमानों को भी तोपों का इस्तेमाल करना पड़ा। तोप वही थे जो हिस्ने सअब से ग़नीमत में मिले थे। तोपों से क़िले की दीवारें गिरायी गयीं और क़िला जीत लिया गया।

रोशनी फैलने लगी

इसी तरह हुदैबिया के समझौते ने हर-हर क़बीले के लिए इस्लाम क़ुबूल करने का दरवाज़ा खोल दिया, एक तरफ़ तो प्यारे नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की क़ुरआन की शक्ल में दलील भरी बातें, दूसरी तरफ़ आप की पाक और अमली ज़िंदगी, तीसरी तरफ़ जाहिली ताक़त का खौफ़ दूर होना, ये सब चीज़ें ऐसी थीं, जिस ने उन के दिल सच्चाई और नेकी के पैग़ाम के लिए पूरी तरह खोल दिए। उन्हों ने खुद अपने अन्दर से सच्चाई के इस नूर की प्यास महसूस की थी, इस प्यास से बे-ताब होकर मदीना की तरफ़ लपके, वहां के जाम भर-भर कर पिए और फिर जाकर अपने इलाक़ों और क़बीलों में लोगों के दिलों में ईमान की उस मिठास को उतार दिया, जिसे वे खुद अपने भीतर महसूस कर रहे थे।

यों उजाला फैलता गया और अंधेरियां दूर होती चली गयीं।

बादशाहों के नाम इस्लाम की दावत

सच तो यह है कि हुदैबिया के समझौते से कुछ इत्मीनान हुआ तो हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने दावत व तब्लीग़ के काम पर और ज़्यादा तवज्जोह फ़रमायी। एक दिन आप ने अपने साथियों को खिताब फ़रमाया कि ऐ लोगो! अल्लाह तआला ने मुझे दुनिया के लिए

रहमत बना कर भेजा है (मेरा पैग़ाम सारी दुनिया के लिये है और यह सब के लिये रहमत है) देखो, ईसा के हवारियों की तरह इख्तिलाफ़ न करना, जाओ मेरी तरफ़ से हक़ का पैग़ाम सब को पहुंचा दो।

इसी ज़माने में यानी सन ०६ हि० के आखिर या शुरू ०७ हि० में आप ने बड़े-बड़े बादशाहों के नाम दावती खत भी लिखे, जिन को लेकर मुख्तलिफ़ सहाबा मुख्तलिफ़ मुल्कों को भेजे गये। ये खत छोटे देशों को भी भेजे गये थे और बड़े देशों को भी, जैसे रूम और ईरान के बादशाहों को भी।

मक्का जीत लिया गया

हुदैबिया के समझौते के मुताबिक़ यह भी तै हुआ था कि, 'दस साल तक लड़ाई न होगी और जो क़ौमें नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से मिलना चाहें, वे इधर मिल जाएं और जो क़ौमें क़ुरैश की तरफ़ मिलना चाहें, वे उधर मिल जाएं।'

इस के मुताबिक़ बनी खुज़ाआ नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की तरफ़ और बनू बिक्र क़ुरैश की तरफ़ मिल गये थे।

समझौते को अभी दो साल न हुए थे कि बनू बिक्र ने खुज़ाआ पर हमला किया और क़ुरैश ने भी बनू बिक्र की हथियारों से मदद दी, इक्रिमा बिन अबू जह्ल, सुहैल बिन अम्र (समझौते पर इसी ने दस्तखत किए थे) सफ़वान बिन उमैया (क़ुरैश के मशहूर सरदार) खुद भी नक़ाब पोश हो कर मय अपने साथियों के बनू खुज़ाआ पर हमलावर हुए।

इन बेचारों ने अमान भी मांगी, भाग कर खाना काबा में पनाह भी ली, मगर उन को हर जगह बे-रहमी के साथ क़त्ल कर डाला। वे मज़्लूम जब 'इलाह-क, इलाह-क' (अपने खुदा के वास्ते, अपने खुदा के वास्ते) कह कर रहम की दर्खास्त करते थे, तो ये ज़ालिम उन के जवाब में कहते थे 'ला इलाहल यौम' (आज खुदा कोई चीज नहीं)।

मज़्लूमों के बचे-खुचे चालीस आदमी जिन्हों ने अपनी जान बचा ली थी, नबी सल्ल० की खिदमत में पहुंचे और अपनी मज़्लूमी और बर्बादी की दास्तान सुनायी। अम्र बिन सालिम खुज़ाई ने दर्द भरी नज़्म में तमाम वाक़िए सुनाये।

प्यारे नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को जब ये हालात मालूम हुए, तो आपको सख्त तक्लीफ़ हुई और आपने क़ुरैश के पास एक दूत भेजा और कहला भेजा कि क़ुरैश अपनी हरकत से बाज़ आ जाएं और इन तीन शर्तों में से किसी एक को क़ुबूल कर लें—

१. ख़ुज़ाआ के जो लोग मारे गये हैं, उन का ख़ून बहा अदा किया जाए, या

२. क़ुरैश बनू बिक्र की हिमायत न करें, या फिर

३. इस बात का एलान कर दिया जाए कि हुदैबिया का समझौता ख़त्म हो गया।

दूत के ज़रिए यह पयाम सुन कर क़ुरैश में से एक शख़्स क़ुरता बिन उमर ने कहा कि, 'हमें सिर्फ़ तीसरी शर्त मंज़ूर है।'

दूत के चले जाने के बाद उन्हें अफ़सोस हुआ और उन्हों ने फिर अपनी तरफ़ से अबू सुफ़ियान को दूत बना कर भेजा कि वह हुदैबिया के समझौते को बहाल करा लाएं। लेकिन प्यारे नबी सल्ल०को अब क़ुरैश की तरफ़ से इत्मीनान नहीं था, इस लिए आपने अबू सुफ़ियान की बात को ना-मंज़ूर कर दिया।

ख़ाना काबा ख़ालिस तौहीद का वह मर्कज़ था, जिसे हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम ने ख़ालिस ख़ुदा की इबादत के लिए तामीर फ़रमाया था, लेकिन वह अभी तक मुश्रिकों के क़ब्ज़े में था और शिर्क का सब से बड़ा गढ़ बना हुआ था। आंहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम के दीन की दावत देते थे और ख़ालिस तौहीद के परस्तार थे। इस एतबार से ज़रूरी था कि तौहीद के इस पाक मर्कज़ को तमाम गंदगियों से जल्द से जल्द पाक किया जाए, लेकिन अभी तक हालात ने इस की इजाज़त नहीं दी थी, मगर अब आंहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने यह अन्दाज़ा फ़रमा लिया कि अब वक़्त आ गया है कि अल्लाह के इस मुक़द्दस घर को सिर्फ़ उसी की इबादत के लिए ख़ास कर लिया जाए और बुतपरस्ती की तमाम ना-पाकियों से इस घर को पाक कर दिया जाए, चुनांचे आंहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उन तमाम क़बीलों के पास पैग़ाम भेजे, जिनसे समझौते थे और इस बात की एहतियात फ़रमायी कि मक्के वालों को इस तैयारी की ख़बर न होने पाये।

जब सब तैयारियां मुकम्मल हो गयीं, तो आंहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने २० रमज़ानुल मुबारक को मक्के की तरफ़ कूच फ़र-

आया, लगभग दस हज़ार जां-निसारों का निहायत शानदार लश्कर साथ था और रास्ते में अरब के दूसरे क़बीले भी मिलते थे।

इस्लामी लश्कर जब मक्के के पास पहुंचा, तो अबू सुफ़ियान, जो लश्कर का अन्दाज़ा कर रहे थे, गिरफ़्तार कर के आंहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की खिदमत में पेश किये गये।

यह वही अबू सुफ़ियान हैं, जो अब तक इस्लामी की मुखालफ़त में बहुत पेश-पेश थे, उन्हों ने ही बार-बार मदीने पर हमले की साज़िशें की थीं, यहां तक कि आंहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को क़त्ल कराने की खुफ़िया तद्बीरें भी की थीं। ये सब बातें ऐसी थीं कि अबू सुफ़ियान को फ़ौरन ही क़त्ल करा देना चाहिए था, लेकिन आंहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उन पर मेहरबानी की नज़र डाली और फ़रमाया कि—

'जाओ, आज तुम से कोई पूछ-गछ न की जाएगी। अल्लाह तुम्हें माफ़ करे। वह सब रहम करने वालों से बढ़ कर रहम करने वाला है।

अबू सुफ़ियान के साथ यह मामला बिल्कुल ही अनोखा मामला था, आप सल्ल० की इस मेहरबानी ने अबू सुफ़ियान के दिल की आंखें खोल दीं और उन्हें यह मालूम हो गया कि मक्के पर फ़ौज ले कर आने वाला तो अपने दुश्मनों से बदला लेने के लिए उनके खून का प्यासा है और न दुनिया के बादशाहों की तरह घमंड और ग़ुरूर में पड़ा हुआ है, यही वजह थी कि अगरचे आंहज़रत सल्ल० ने अबू सुफ़ियान को आज़ाद कर दिया, लेकिन वह मक्का वापस न गये, बल्कि इस्लाम क़ुबूल करके आंहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के जां-निसारों में शामिल हो गये।

नबी सल्ल० की ख़्वाहिश यह थी कि मक्के वालों को इस वाक़िए की खबर न होने पाये, चुनांचे ऐसा ही हुआ कि जब आंहज़रत सल्ल० ने मक्का तक पहुंच कर पड़ाव डाला और मक्का वालों को खबरदार करने के लिए लश्कर में अलाव रोशन करने का हुक्म दिया, तब उनको खबर हुई।

दूसरी सुबह नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने हुक्म दिया कि फ़ौज मुख्तलिफ़ रास्तों से शहर में दाखिल हो और इन हुक्मों की पाबन्दी करो—

१. जो कोई शख्स हथियार फेंक दे, उसे क़त्ल न किया जाए,

२. जो कोई शख्स खाना-काबा के अन्दर पहुंच जाए, उसे क़त्ल न किया जाए,

३. जो कोई शख्स अपने घर में बैठ रहे, उसे क़त्ल न किया जाए,

४. जो कोई शख्स अबू सुफ़ियान के घर जा रहे, उसे क़त्ल न किया जाए,

५. जो कोई शख्स हकीम बिन हिज़ाम के घर जा रहे, क़त्ल न किया जाए,

६. भागने वाले का पीछा न किया जाए,

७. ज़ख्मी को क़त्ल न किया जाए

८. क़ैदी को क़त्ल न किया जाए।

शहर में दाखिल होने वाले दस्तों में से सिर्फ़ उस दस्ते का जो खालिद बिन वलीद रज़ि० के मातहत था, कुछ मुक़ाबला हुआ, जिस में मक्के वालों को भागना पड़ा बाक़ी सब दस्ते बे-रोक-टोक शहर में दाखिल हो गये।

अल्लाह के रसूल सल्ल० जिस वक़्त २० रमज़ान को शहर में दाखिल हुए, उस वक़्त सर झुकाए क़ुरआन मजीद (सूरः फ़त्ह) की तिलावत फ़रमा रहे थे। ऊंट की सवारी पर बैतुल्लाह को जा रहे थे और ऊंट पर अपने आज़ाद किए हुए गुलाम ज़ैद के बेटे उसामा रज़ियल्लाहु अन्हु को सवार कर रखा था। वहां पहुंच कर पहले खुदा के घर को बुतों से पाक किया, उस वक़्त बैतुल्लाह के आस-पास ३६० बुत रखे हुए थे। नबी सल्लल्लाहु धनुष के कोने (या छड़ी की नोक से) हर एक बुत को गिराते जा रहे थे और मुबारक ज़ुबान से यह पढ़ रहे थे—

हक़ आ गया और बातिल चला गया। बेशक बातिल जाने के लिए है।

—बनी इस्राईल, रुकूअ ९

हुनैन के मैदान में

मक्का की जीत और क़ुरैश के लगभग सभी लोगों के इस्लाम क़ुबूल कर लेने की खबर सुन कर अरब के उन क़बीलों में ज़्यादा खलबली और परेशानी पैदा हुई जो मुसलमानों के साथ न थे, उन्हीं में हवाज़िन और सक़ीफ़ के क़बीले थे, जो तायफ़ और मक्का के दर्मियान रहते थे और क़ुरैश के दुश्मन समझे जाते थे। ये क़बीले न मुसलमानों के साथ थे, न मक्का के क़ुरैश के, उन को यह चिन्ता हो गयी कि मुसलमान मक्का के बाद अब हमारे ऊपर हमलावर होंगे। इसी डर ने उन्हें एक भारी तायदाद

में फ़ौज की शक्ल में जमा कर दिया।

नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को जब इस की खबर पहुंची, तो आप ने भी लड़ाई की तैयारी शुरू कर दी। दस हज़ार मुहाजिर व अंसार आप के साथ मदीने से आए थे, वे सब और दो हज़ार मक्का के लोग, इस तरह कुल बारह हज़ार की फ़ौज आप के साथ मक्का से रवाना हुई। जब यह फ़ौज हुनैन की घाटी में पहुंची तो दुश्मनों ने इस्लामी फ़ौज के क़रीब पहुंचने की खबर सुन कर हुनैन की घाटी के दोनों तरफ़ घातों में छिप कर मुसलमानों की फ़ौज का इन्तिज़ार किया।

मुसलमान अभी ढलान पर ढलती रात की तारीकी में उतर ही रहे थे, कि अचानक दुश्मनों ने निशाने पर आ कर तीरंदाजी शुरू कर दी। इस अचानक हमले से मुसलमान घबरा गये, वे बिखर गए, हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इस मौक़े पर भी हिम्मत और जुरात से काम लिया। आप के आस-पास कुछ गिनती के साथियों को छोड़ कर मुसलमानों में बिखराव पैदा हो चुका था। आप ने एलान करा के मुसलमानों को जमने और हुज़ूर सल्ल० के पास आ जाने पर ज़ोर दिया। मुसलमानों में ढारस बंधी, फिर उन्हों ने संभल कर ऐसा ज़ोरदार हमला किया कि लड़ाई का नक्शा ही बदल गया। दुश्मन मैदान छोड़ कर भागे, वे दो हिस्सों में बंट गये—

□ उन का सरदार मालिक बिन औफ़ लड़ने वाले मर्दों को ले कर तायफ़ के क़िले में जा ठहरा।

□ दूसरा गिरोह, जिस में उन के बाल-बच्चे थे और माल व दौलत थी, औतास की घाटी में जा छिपा।

नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने तायफ़ के क़िले को घेर लेने का हुक्म दिया और औतास की तरफ़ अबू आमिर अश्अरी रज़ि० को भेजा अबू आमिर अश्अरी रज़ि० ने वहां पहुंच कर दुश्मन के बाल-बच्चों और माल व दौलत पर क़ब्ज़ा कर लिया। जब नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को औतास का नतीजा मालूम हुआ तो क़िले का घेरा उठा लेने का हुक्म दिया, क्योंकि उन लोगों पर बाल-बच्चों के जाते रहने की भारी मुसीबत पड़ चुकी थी।

औतास में २४ हज़ार ऊंट, ४० हज़ार बकरियां, चार हज़ार औक़िया चांदी और छः हज़ार औरतें और बच्चे मुसलमानों को हाथ लगे थे।

नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम अभी लड़ाई के मैदान के क़रीब ही ठहरे हुए थे कि क़बीला हवाज़िन के छः सरदार आए और उन्हों ने रहम की दर्ख्वास्त पेश कर दी।

इन में वे लोग थे, जिन्हों ने तायफ़ में नबी सल्ल० पर पत्थर बरसाए थे और आख़िरकार वहां ज़ैद रज़ियल्लाहु अन्हु रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को बेहोशी की हालत में उठा कर लाए थे।

नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया, हां, मैं ख़ुद तुम्हारा इन्तिज़ार कर रहा था और इसी इन्तिज़ार में लगभग दो हफ्ते हो गए कि लूट का माल भी न बांटा गया था। मैं अपने हिस्से के और अपने ख़ानदान के हिस्से के क़ैदियों को आसानी से छोड़ सकता हूं और अगर मेरे साथ सिर्फ़ अंसार व मुहाजिर ही होते तो सबका छोड़ देना भी मुश्किल न था, मगर तुम देखते हो कि इस फ़ौज में मेरे साथ वे लोग भी हैं, जो अभी मुसलमान नये हुए, इस लिए एक उपाय की ज़रूरत है। तुम कल सुबह की नमाज़ के बाद आना, खुले मज्मे में अपनी दर्ख्वास्त पेश करना, उस वक़्त कोई शक्ल निकल आएगी, फ़रमाया, तुम चाहे माल का लेना पसन्द कर लो या बाल-बच्चों का, क्योंकि हमलावर फ़ौज को ख़ाली रखना मुश्किल है।

दूसरे दिन वही सरदार आए और उन्हों ने आम मज्मे में अपने क़ैदियों की रिहाई की दर्ख्वास्त नबी सल्ल० की ख़िदमत में पेश की।

नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया, मैं अपने और बनू अब्दुल मुत्तलिब के क़ैदियों को बग़ैर किसी मुआवज़ा के रिहा करता हूं। अंसार व मुहाजिर ने कहा, हम भी अपने-अपने क़ैदियों को बग़ैर किसी मुआवज़े के आज़ाद करते हैं।

अब बनी सुलैम व बनी फ़ज़ारा रह गये। उन के नज़दीक यह अजीब बात थी कि हमलावर दुश्मन पर (जो ख़ुश क़िस्मती से क़ाबू में आ गया हो) ऐसा रहम व मेहरबानी की जाए, इस लिए उन्होंने अपने हिस्से के क़ैदियों को आज़ाद न किया। नबी सल्ल० ने उन्हें बुलाया। हर एक क़ैदी की क़ीमत छः ऊंट क़रार पायी। यह क़ीमत नबी सल्ल० ने अदा कर दी और इस तरह बाक़ी क़ैदियों को भी आज़ादी दिलायी, फिर सब क़ैदियों को अपने पास से कपड़े पहना कर रुख़्सत फ़रमाया।

इन क़ैदियों में दाई हलीमा की बेटी शीमा बिन्त हारिस भी थी। नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उस दूध की बहन को पहचाना और

उस के बैठने के लिए अपनी चादर ज़मीन पर बिछा दी। फ़रमाया, अगर तुम मेरे पास ठहरो, तो बेहतर है। अगर क़ौम में वापस जाना है तो अख़्तियार है। उसने वापस जाना चाहा और उसे पूरी इज़्ज़त के साथ उस की क़ौम में भेज दिया।

ग़नीमत का माल नबी सल्ल० ने उसी जगह बांट दिया। ज़्यादातर हिस्से उन लोगों को दिए गए थे जो थोड़े दिनों पहले इस्लाम लाए थे। अंसार को, जो मुख़्लिस थे, उस में से कुछ भी न दिया था, फ़रमाया, अंसार के साथ मैं ख़ुद हूं, लोग माल ले-लेकर अपने अपने घर जाएंगे और अंसार अल्लाह के नबी को साथ लेकर अपने घरों में दाख़िल होंगे।

अंसार इस फ़रमाने पर इतने ख़ुश थे कि माल वालों को यह ख़ुशी हासिल न हुई।

तबूक की लड़ाई

अरब के उत्तर में रूम की बड़ी हुकूमत थी। इस हुकूमत के साथ संघर्ष तो मक्का की जीत से पहले ही शुरू हो गया था। नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने एक ख़त इस्लाम की दावत ले कर उत्तर की ओर उन क़बीलों के पास भी भेजा था, जो शाम की सरहद के क़रीब आबाद थे, ये लोग ज़्यादातर ईसाई थे और इन पर रूमी हुकूमत का पूरा दबाव था। इन लोगों ने इस्लामी वफ़्द के पन्द्रह आदमियों को क़त्ल कर दिया था। और सिर्फ़ वफ़्द के सरदार हज़रत साद बिन उमैर ग़िफ़ारी बचकर वापस आए थे। उस ज़माने में आंहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने बसरा के सरदार शुरहबील के नाम भी इस्लाम की दावत का पैग़ाम भेजा था, मगर उस ने भी आप के दूत हज़रत हारिस बिन उमैर को क़त्ल कर दिया था। यह सरदार भी क़ैसरे रूम के हुक्मों के मातहत था। इन्हीं वजहों से आंहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने जुमादल ऊला सन ०८ हि० में तीन हज़ार मुसलमानों की एक फ़ौज शाम की सरहद की तरफ़ भेजी थी, ताकि इस हल्क़े में अब फिर मुसलमानों को बिल्कुल कमज़ोर समझ कर तंग न किया जाए।

जब इस फ़ौज के आने की इत्तिला शुरहबील को मिली तो वह लगभग एक लाख फ़ौज साथ लेकर मुक़ाबले के लिए निकला, लेकिन मुस-

मुसलमान इस इत्तिला के बावजूद आगे बढ़ते रहे।

क़ैसरे रूम उस वक़्त हम्स की जगह मौजूद था, उस ने भी अपने भाई थ्योडर के साथ एक लाख और ज़्यादा फ़ौज भेज दी, पर मुसलमान बराबर आगे बढ़ते रहे और आखिरकार मौता की जगह पर ये तीन हज़ार सर फ़रोश इतनी बड़ी रूमी फ़ौज से टकरा गये। देखने में तो इस क़दम का नतीजा यह होना चाहिए था कि मुसलमानों की यह थोड़ी-सी जमाअत इतनी भारी फ़ौज के मुक़ाबले में बिल्कुल खत्म हो जाती, लेकिन अल्लाह का फ़ज़्ल ऐसा रहा कि रूमियों की इतनी बड़ी फ़ौज उन मुसलमानों का कुछ भी न बिगाड़ सकी।

दूसरे ही साल क़ैसर ने मुसलमानों को मौता की लड़ाई की सज़ा देने के लिए शाम की सरहद पर फ़ौजी तैयारियां शुरू कर दीं और अपने मातहत अरब क़बीलों से फ़ौजें इकट्ठी करने लगा।

नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को भी इन तैयारियों का हाल मालूम हुआ। यह मौक़ा मुसलमानों के लिए बड़ा नाज़ुक मौक़ा था। उस वक़्त अगर ज़रा भी सुस्ती दिखायी जाती तो सारा काम सपना बनकर रह जाता। एक तरफ़ तो अरब के वे सब क़बीले फिर सर उठाते, जिन्हें अभी-अभी मक्के और हुनैन की लड़ाई में हार खानी पड़ी थी। दूसरी तरफ़ मदीने के मुनाफ़िक़, जो इस्लाम के दुश्मनों से सांठ-गांठ रखते थे, ठीक वक़्त पर इस्लामी जमाअत के अन्दर ऐसा फ़साद पैदा करते कि फिर मुसलमानों का संभालना बड़ा मुश्किल हो जाता। ऐसी हालत में रूम की हुकूमत के भरपूर हमले का मुक़ाबला करना कोई आसान बात न होती और इस बात का खतरा था कि इन तीन हमलों की ताब न लाकर मुसल-मानों को हार का मुंह देखना पड़ता। यही सब वजहें थीं कि प्यारे नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़ैसला फ़रमाया कि हमें क़ैसर को ज़बर-दस्त ताक़त से टक्कर लेना ही है, क्योंकि इस मौक़े पर ज़रा-सी भी कम-ज़ोरी दिखाने से सब बना-बनाया काम बिगड़ जाएगा।

मुसलमानों के लिए उस वक़्त किसी जंगी तैयारी के लिए तैयार हो जाना एक बड़ा सख्त इम्तिहान था, मुल्क में सूखा पड़ा हुआ था, सख्त गर्मी का मौसम था, फ़स्लें पकने को क़रीब थीं और लड़ाई का सामान भी पूरा न था। इन हालात के बावजूद नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने मौक़े की नज़ाकत का अन्दाज़ा फ़रमाने के बाद लड़ाई का आम एलान कर दिया और साफ़ साफ़ बता दिया कि कहां जाना है और किस

लिए जाना है।

ग़रज़ आप तीस हज़ार की फ़ौज के साथ मदीने से तबूक के लिए निकले। आपने अपने पीछे मदीने में सबाअ बिन अर्तफ़ा को ख़लीफ़ा बनाया और हज़रत अली मुर्तज़ा रज़ि०को मदीने में अह्ले-बैत की ज़रूरतों के लिए रोक दिया।

फ़ौज में सवारियों की बड़ी कमी थी। १८ आदमियों के लिए एक ऊंट मुक़र्रर था। रसद के न होने की वजह से अक्सर जगह पेड़ों के पत्ते खाने पड़े, जिस से ओंठ सूज गये थे। पानी कहीं-कहीं तो मिला ही नहीं। (ऊंट को, अगरचे वे सवारी के लिए पहले ही कम थे) ज़िब्ह करके उनकी आंतों का पानी पिया करते थे।

ग़रज़ यह कि पूरे सब्र और जमाव के साथ, तमाम तक्लीफ़ों को सहते हुए ये लोग तबूक पहुंच गए।

तबूक पहुंच कर नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने एक महीने क़ियाम फ़रमाया। शाम वालों पर इस हरकत का असर यह हुआ कि उन्होंने अरब पर हमलावर का ख़्याल उस वक़्त छोड़ दिया और इस हमलावरी का बेहतरीन मौक़ा आंहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की वफ़ात के बाद फ़ौरन क़रार दिया।

अभी आंहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम तबूक से मदीना वापस तश्रीफ़ नहीं लाए थे कि रास्ते ही में सूरः तौबा नाज़िल हुई और अल्लाह तआला ने अपने नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को बहुत सी ऐसी हिदायतें दीं, जिन पर आप को मदीना वापस आने के बाद अमल करना था।

अब तक मुनाफ़िक़ों के साथ जिस नर्म पालिसी पर अमल किया गया था और जिस के मातहत उन के वे उज़्र क़ुबूल कर लिए गये थे, जो उन्हों ने लड़ाई से जान बचाने के लिए तबूक के सफ़र के वक़्त आंहुज़ूर सल्ल० की ख़िदमत में पेश किए थे, उस को बिल्कुल बदल देने की हिदायत की गयी और साफ़-साफ़ कह दिया गया कि उन के साथ मामला सख़्ती का किया जाए। ये अगर ईमान के अपने झूटे दावे को सही साबित करने के लिए माली इम्दाद पेश करें, तो वह क़ुबूल न की जाए। उन में से कोई मर जाए तो नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम उस के जनाज़े की नमाज़ न पढ़ाएं। मुसलमान उनसे शख़्सी और ख़ानदानी ताल्लुक़ात की वजह से ख़ुलूस और दोस्ती का मामला न रखें।

आख़िरी हज

हज इस्लाम की एक बड़े दर्जे की बुनियादी इबादत है।

हज के फ़र्ज़ किए जाने का हुक्म सन ०५ हि० में नाज़िल हुआ।

इसी साल हुज़ूर सल्ल०ने हज़रत अबूबक्र सिद्दीक़ रज़ि० को अमीरे हज बना कर तीन सौ साथियों के साथ मक्का रवाना फ़रमाया कि उन को अपनी सरदारी में हज कराए।

हज़रत अबूबक्र रज़ि० की सरदारी के साथ हज़रत अली रज़ि० को एक दूसरी ज़िम्मेदारी सौंपी कि वह सूर: बरात (पहली ४० आयतें) हज के इज्तिमाअ में सुनाएं और अल्लाह के हुक्म के मुताबिक़ ज़रूरी एलान लोगों तक पहुंचा दें। जिन बातों का एलान किया गया, वे यह थीं—

□ एक तो पिछले जाहिलाना शिर्क पर क़ायम रह कर जिन लोगों ने हुज़ूर या इस्लामी रियासत से समझौते कर के अपने को महफ़ूज़ कर रखा था, उन के सामने एलान कर दिया गया कि चार महीने की मोहलत है, इस के बाद तमाम ऐसे समझौते अल्लाह के हुक्म से ख़त्म समझे जाएंगे इस बीच वे अपने लिए रास्ते का चुनाव कर लें कि उन्हें क्या करना है। यह उन मुश्रिकों के लिए एलान था जिन्हों ने समझौतों के ख़िलाफ़ काम किए थे और इस्लाम के ख़िलाफ़ दुश्मनी और लड़ाई के ख़तरनाक मोर्चे बनाए थे।

□ रहे वे मुश्रिक, जिन्होंने ईमानदारी के साथ समझौतों का ख़्याल रखा था, उन के समझौतों को उनकी मुक़र्रर मुद्दतों तक बहाल रखा गया।

□ एक एलान यह किया गया कि आगे से हरम पाक और मस्जिद के मुतवल्ली मुश्रिक न रहने पाएंगे।

□ आगे कोई मुश्रिक हरम की हद। में दाख़िल न हो सकेगा, न कोई शिर्क भरी रस्म अदा की जाएगी।

□ मुश्रिकों के तरीक़े पर कोई भी शख़्स नंगे हो कर बैतुल्लाह का तवाफ़ न कर सकेगा।

□ इसी मौक़े पर ख़ुदा की तरफ़ से चार महीनों के हराम किए जाने का एलान भी किया गया और इन महीनों में मनमानी तब्दीलियों का दरवाज़ा बन्द कर दिया गया।

सन १० हिजरी में नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने हज का इरादा फ़रमाया और हर तरफ़ इत्तिला भेज दी गयी कि नबी सल्ल० हज के लिए तशरीफ़ ले जाने वाले हैं। इस इत्तिला के बाद गिरोह-गिरोह करके लोग मदीना में जमा होने लगे। इस में हर दर्जे और हर तबके के लोग थे।

जुल हुलैफ़ा में नबी सल्ल० ने एहराम बांधा और यहीं से लब्बैक अल्लाहुम-म लब्बैक ला शरी-क ल-क लब्बैक इन्नलहम-द वन्निअ्-म-त व ल-मुल-क ला शरी-क ल-क' का तराना बुलन्द किया और मक्का मुअज़्ज़मा को एहराम के साथ रवाना हो गये।

इस मुक़द्दस कारवां के साथ रास्ते में हर-हर जगह से जत्थ के जत्थ लोग शामिल हो जाते थे। नबी सल्ल० का राह में जब किसी टीले से गुज़र होता था, तीन-तीन बार तक्बीर ऊंची आवाज़ से कहते थे।

जब मक्का के क़रीब पहुंचे, तो ज़ीतुवा में थोड़ी देर के लिए ठहरे और फिर मक्का के ऊपरी हिस्से से इंसानों की इस भीड़ को लेकर मक्का में दाखिल हुए और दिन के उजाले में काबे का तवाफ़ किया।

काबे की ज़ियारत से फ़ारिग़ होने के बाद सफ़ा और मर्वः पहाड़ों पर तशरीफ़ ले गये, उन की चोटियों पर चढ़ कर और काबे की तरफ़ रुख कर के तक्बीर कही और—

लाइला-ह इल्लल्लाहु वह्दहू लाशरी-क लहू-लहुल मुल्कु व लहुल हम्दु व हु-व अला कुल्लि शैइन क़दीर० लाइला-ह इल्लल्लाहु वह्दहू अंज-ज़ वअ्द-हू व न-स-र अब्दहू व ह-ज़-मल अह्ज़ा-ब वह्दहू०के तराने गाए।

आठवीं ज़िलहिज्जा को मक्का की कियामगाह से रवाना हो कर मिना ठहरे। ज़ुहर, अस्र, मग़रिब, इशा, सुबह की नमाज़ें मिना में अदा फ़रमायीं।

नवीं ज़िलहिज्जा को आंहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम सूरज निकलने के बाद नमरा की घाटी में आकर उतरे। उस घाटी के एक तरफ़ अरफ़ात में तशरीफ़ लाये, जो तमाम आदमियों से भरा हुआ था और हर शख्स तक्बीर व तह्लील, तह्मीद व तक़्दीस में लगा हुआ था। उस वक़्त एक लाख चवालीस हज़ार (या चौबीस हज़ार) का मज्मा अल्लाह के हुक्मों को पूरा करने के लिए हाज़िर था। नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने पहाड़ी पर चढ़ कर और क़सवा पर सवार हो कर खुत्बा फ़रमाया—

□लोगो! मैं ख्याल करता हूं कि मैं और तुम फिर कभी इस मज्लिस में इकट्ठे नहीं होंगे।

□ लोगो ! तुम्हारे खून, तुम्हारे माल और तुम्हारी इज़्ज़तें एक दूसरे पर ऐसी ही हराम हैं, जैसा कि तुम आज के दिन को, इस शहर को, इस महीने की हुर्मत करते हो। लोगो ! तुम्हें बहुत जल्द खुदा के सामने हाज़िर होना है, और वह तुम से तुम्हारे आमाल के बारे में सवाल फ़रमाएगा।

□ लोगो ! जाहिलियत की हर एक बात मैं अपने क़दमों के नीचे पामाल करता हूं। जाहिलियत के क़त्लों के तमाम झगड़े मिटाता हूं। पहला खून, जो मेरे खानदान का है यानी इब्ने रबीआ बिन हारिस का खून, जो बनी साद में दूध पीता था और हुज़ैल ने उसे मार डाला था, मैं छोड़ता हूं। जाहिलियत के ज़माने का सूद मिटा दिया गया। पहला सूद अपने खानदान का, जो मैं मिटाता हूं, वह अब्बास बिन अब्दुल मुत्तलिब का सूद है, वह सारे का सारा छोड़ दिया गया।

□ लोगो ! अपनी बीवियों के बारे में अल्लाह से डरते रहो। खुदा के नाम की ज़िम्मेदारी से तुम ने उनको बीवी बनाया और खुदा के कलाम से तुम ने उनका जिस्म अपने लिए हलाल बनाया है। तुम्हारा हक़ औरतों पर इतना है कि वह तुम्हारे बिस्तर पर किसी ग़ैर को (कि उस का आना तुम को नागवार है) न आने दें, लेकिन अगर ये ऐसा करें तो उन को ऐसी मार मारो जो ज़ाहिर न हो। औरतों का हक़ तुम पर यह है कि तुम उन को अच्छी तरह खिलाओ, अच्छी तरह पहनाओ।

□ लोगो ! मैं तुम में वह चीज़ छोड़ चला हूं कि अगर उसे मज़बूत कर लोगे, तो कभी गुमराह न होगे। वह क़ुरआन अल्लाह की किताब है।

□ लोगो! न तो मेरे बाद कोई पैग़म्बर है और न कोई नयी उम्मत पैदा होनी वाली है। खूब सुन लो कि अपने परवरदिगार की इबादत करो और पांच वक़्त की नमाज़ अदा करो। साल भर में एक महीना रमज़ान के रोज़े रखो, अपने मालों की ज़कात निहायत खुशदिली के साथ दिया करो। खाना-ए-खुदा का हज करो और अपने ज़िम्मेदारों और हाकिमों की इताअत करो, जिस का बदला यह है कि तुम लोग यह पूरा कर के परवरदिगार की जन्नत-फ़िरदौस में दाखिल होगे।

□ लोगो ! क़ियामत के दिन तुम से मेरे बारे में भी पूछा जाएगा। मुझे ज़रा बता दो कि तुम क्या जवाब दोगे ?

सब ने कहा, हम इस की गवाही देते हैं कि आप ने अल्लाह के हुक्म हम को पहुंचा दिए। आप ने रिसालत व नुबूवत का हक़ अदा कर दिया।

आप ने हम को खोटे-खरे के बारे में अच्छी तरह बता दिया। (उस वक़्त) नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने शहादत की उंगली को उठाया। आसमान की तरफ़ उंगली को उठाते थे और फिर लोगों की तरफ़ झुकाते थे। (फ़रमाते थे) ऐ ख़ुदा ! सुन ले, (तेरे बन्दे क्या कह रहे हैं) ऐ ख़ुदा गवाह रहना कि (ये लोग क्या गवाही दे रहे हैं) ऐ ख़ुदा ! गवाह रह (कि ये सब कैसा साफ़ इक़रार कर रहे हैं।)

□ देखो, जो लोग मौजूद हैं, वे उन लोगों को जो मौजूद नहीं हैं, उनको तब्लीग़ करते रहें, मुम्किन है कि कुछ सुनने वालों से वे लोग ज़्यादा उस कलाम को याद रखने और हिफ़ाज़त करने वाले हों, जिन पर तब्लीग़ की जाए।

हुज़ूर सल्ल० की बीमारी और वफ़ात

२९ सफ़र, सोमवार का दिन था, नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम एक जनाज़े से वापस आ रहे थे, रास्ते में दर्द शुरू हो गया, फिर तेज़ बुख़ार आ गया।

हज़रत अबू सईद ख़ुदरी रज़ि० का बयान है कि जो रूमाल हुज़ूर सल्ल० ने अपने मुबारक सर पर डाल रखा था, मैंने उसे हाथ लगाया, तो सेंक आता था, बदन ऐसा गर्म था कि मेरे हाथ से सहा न गया। मैं ने ताज्जुब ज़ाहिर किया, फ़रमाया, नबियों से बढ़ कर किसी को तक्लीफ़ नहीं होती, इसी लिए उन का बदला सब से बढ़ा हुआ होता है।

बीमारी की हालत में ११ दिनों तक मस्जिद में आ कर ख़ुद नमाज़ पढ़ाते रहे। कुल १३ या १४ दिन आप बीमार रहे थे।

आख़िरी हफ़्ता नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने हज़रत आइशा रज़ि० के घर में पूरा फ़रमाया था।

उम्मुलमोमिनीन हज़रत आइशा रज़ि० फ़रमाती हैं कि जब कभी नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम बीमार हुआ करते, तो यह दुआ पढ़ा करते और अपने जिस्म पर हाथ फेर लिया करते—

अज़्हिबिल बा-स रब्बन्नासि वश्फ़ि अन्तश्शाफ़ी ला शिफ़ा-अ इल्ला शिफ़ाउ-क शिफ़ाअल्ला युग़ादिरु सक़मन०

तर्जुमा—ऐ इन्सानी नस्ल के पालने वाले ! ख़तरे को दूर

फ़रमा दे और सेहत अता कर। शिफ़ा देने वाला तू ही है और उसी शिफ़ा का नाम शिफ़ा है, जो तू इनायत करता है, ऐसी सेहत दे कि कोई तक्लीफ़ बाक़ी न छोड़े।

इन दिनों मैं ने यह दुआ पढ़ी थी और नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के हाथों पर दम कर के चाहा कि जिस्मे अत्हर पर मुबारक हाथों को फेरूं, आंहज़रत सल्ल० ने हाथ हटा लिए और फ़रमाया—

अल्लाहुम-मग्फ़िरली व अल्हिक्नी बिर्रफ़ीक़िल अअ्ला०

सनीचर या इतवार का ज़िक्र है कि हज़रत अबूबक्र सिद्दीक़ रज़ि० की इमामत में ज़ुहर की नमाज़ क़ायम हो चुकी थी नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम हज़रत अब्बास व हज़रत अली मुर्तज़ा रज़ियल्लाहु अन्हुमा के कंधों पर सहारा दिए हुए नमाज़ के लिए आए। हज़रत अबूबक्र रज़ि० पीछे हटने लगे तो नबी सल्ल० ने इशारे से फ़रमाया कि पीछे मत हटो। फिर हज़रत अबूबक्र रज़ि० के बराबर बैठ कर नमाज़ में शरीक हो गये। अब अबूबक्र सिद्दीक़ रज़ि० तो आंहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की इक़्तिदा करते थे और बाक़ी सब लोग हज़रत अबूबक्र रज़ि० की तक्बीरों पर नमाज़ अदा कर रहे थे।

दोशंबा के दिन सुबह की नमाज़ के वक़्त नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने वह पर्दा उठाया जो हज़रत आइशा रज़ि० और मस्जिदे नबविया के दर्मियान पड़ा हुआ था। उस वक़्त नमाज़ हो रही थी। थोड़ी देर तक नबी सल्ल० उस पाक नज़ारे को, जो हुज़ूर सल्ल० की पाक तालीम का नतीजा था, देख रहे थे। इस नज़ारे से आप के मुबारक चेहरे पर ख़ुशी और होंठों पर मुस्कराहट थी।

सहाबा रज़ि० का शौक़ और बे-क़रारी से यह हाल हो गया था कि आप के चेहरे की तरफ़ ही तवज्जोह रखे रहे हज़रत अबूबक्र सिद्दीक़ रज़ि० यह समझे कि अल्लाह के नबी का इरादा नमाज़ में आने का है। वह पीछे हटने लगे तो अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने हाथ के इशारे से फ़रमाया कि नमाज़ पढ़ाते रहो। यही इशारा सब की तस्कीन की वजह बना। फिर हुज़ूर सल्ल० ने परदा छोड़ दिया। वह नमाज़ हज़रत अबूबक्र रज़ि० ही ने मुकम्मल फ़रमायी।

इस के बाद हुज़ूर सल्ल० पर किसी दूसरी नमाज़ का वक़्त नहीं आया।

किन वक़्त तो प्यारी बेटी हज़रत फ़ातिमा रज़ि० को दुनिया की औरतों की सरदार होने की खुशखबरी सुनायी। हज़रत फ़ातिमा रज़ि० ने हुज़ूर सल्ल० की हालत को देख कर कहा, आह! कितनी बेचैनी है? फ़रमाया कि तेरे बाप को आज के बाद कोई बे-चैनी न होगी।

फिर हज़रत हसन व हुसैन रज़ि० को बुलाया। दोनों को चूमा और उन के एहतराम की वसीयत फ़रमायी।

फिर पाक बीवियों रज़ि० को बुलाया और उनको नसीहतें फ़रमायीं,

फिर हज़रत अली रज़ि० को बुलाया। उन्हों ने मुबारक सर अपनी गोद में रख लिया। उनको भी नसीहत फ़रमायी, इसी मौक़े पर फ़रमाया,

अस्सलातु अस्सलातु व मा म-ल-कत ऐमानुकुम

तर्जुमा—(ख्याल रखो) नमाज़, नमाज़ और बांदियां।

हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अन्हु कहते हैं कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की आख़िरी वसीयत यही थी।

हज़रत आइशा रज़ि० फ़रमाती हैं कि इसी इर्शाद को हुज़ूर सल्ल० कई बार दोहराते रहे।

अब नज़अ की हालत पैदा हो गयी। उस वक़्त प्यारे नबी सल्ल० को हज़रत आइशा रज़ि० सहारा दिए हुए पीठ के पीछे बैठी थीं। पानी का प्याला हुज़ूर सल्ल० के सिरहाने रखा हुआ था, नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम प्याले में हाथ डालते और चेहरे पर फेर लेते थे। मुबारक चेहरा कभी लाल होता, कभी पीला पड़ जाता था। ज़ुबाने मुबारक से फ़रमाते थे—

लाइला-ह इल्लल्लाहु इन-न लिल मौति स-क-रात०

यानी अल्लाह के सिवा और कोई माबूद नहीं। मौत कड़वाहट हुआ ही करती है।

इतने में अब्दुर्रहमान बिन अबूबक्र रज़ि० आ गये। उन के हाथ में ताज़ा मिस्वाक थी। हुज़ूर सल्ल० ने मिस्वाक पर नज़र डाली, तो सिद्दीक़ा रज़ि० ने मिस्वाक को अपने दांतों से नर्म बना दिया। हुज़ूर सल्ल० ने मिस्वाक की, फिर हाथ को बुलन्द फ़रमाया और फ़रमाया—

अल्लाहुम्मर्रफ़ीक़ल अअ्ला

उस वक़्त हाथ लटक गया। पुतली ऊपर को उठ गयी।

१२ रबीउल अव्वल सन ११ हि०, दोशंबा के दिन, चाश्त का वक़्त

था कि मुबारक जिस्म से रूह परवाज़ कर गयी। उस वक़्त मुबारक उम्र ६३ साल क़मरी हिसाब से ४ दिन थी।

इन्ना लिल्लाहि व इन्ना इलैहि राजिऊन अ-फ़ इम मित-त फ़ हुमुल ख़ालिदून०

नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को तीन कपड़ों में कफ़नाया गया, मय्यत उसी जगह रखी रही, जहां इंतिक़ाल हुआ था।

नमाज़ जनाज़ा पहले कुंबे वालों ने, फिर मुहाजिरों ने, फिर अंसार के मर्दों ने और औरतों ने, फिर बच्चों ने अदा की। इस नमाज़ में इमाम कोई न था। मुबारक हुजरा तंग था, इस लिए दस-दस शख़्स अन्दर जाते थे, जब वे नमाज़ से फ़ारिग़ होकर बाहर आते, तब और दस अन्दर जाते।

यह सिलसिला लगातार रात-दिन जारी रहा। इस लिए बुधवार की रात में, यानी वफ़ात से लगभग ३२ घंटे बाद आप को दफ़न फ़रमाया गया।

ख़िलाफ़ते राशिदा

हज़रत अबूबक्र सिद्दीक़ रज़ि०

आप का नाम अब्दुल्लाह था, बाप का नाम अबू क़हाफ़ा था, छठी पीढ़ी में मुर्रा पर आप हज़रत मुहम्मद सल्ल० से ख़ानदानी हैसियत से मिल जाते हैं। आप की मां का नाम सलमा है, जो अबू क़हाफ़ा की चचेरी बहन थीं। उपनाम अबू बक्र और लक़ब (उपाधि) सिद्दीक़ था, इसलिए कि आप ने बे-ख़ौफ़ होकर हज़रत मुहम्मद सल्ल० की बे-झिझक तस्दीक़ फ़रमायी और सिद्क़ (सच्चाई) को अपने लिए लाज़िम फ़रमाया।

हज़रत अबूबक्र सिद्दीक़ रज़ि० बड़ी ख़ूबियों के मालिक थे। आप सच को पसन्द करते, सच बोलना आप की ख़ूबी थी। यही वजह थी कि जब प्यारे नबी सल्ल० ने आप को इस्लाम की दावत दी तो आप ने ज़रा भी टाल-मटोल न किया, फ़ौरन क़ुबूल कर लिया।

हज़रत अबूबक्र रज़ि० सब से पहले हज़रत मुहम्मद सल्ल० पर ईमान लाए। जिस शख़्स ने सबसे पहले हज़रत मुहम्मद सल्ल० के साथ नमाज़ पढ़ी, वह हज़रत अबूबक्र सिद्दीक़ रज़ि० ही थे।

हज़रत अली रज़ि० ने एक बार लोगों से पूछा कि तुम्हारे नज़दीक सबसे ज़्यादा बहादुर शख़्स कौन है? सब ने कहा आप। आप ने फ़रमाया कि मैं हमेशा अपने बराबर के जोड़ से लड़ता हूं, यह कोई बहादुरी नहीं, तुम सबसे ज़्यादा बहादुर आदमी का नाम लो। सबने कहा, हमें मालूम नहीं। हज़रत अली रज़ि० ने फ़रमाया कि सबसे बहादुर शख़्स हज़रत अबूबक्र रज़ि० हैं। बद्र की लड़ाई में हमने अल्लाह के रसूल सल्ल० के लिए एक सायबान बनाया था, हमने पूछा कि हज़रत मुहम्मद सल्ल० के पास कौन रहेगा कि मुश्रिकों से आप पर हमला करने से

बाज रखे। क़सम ख़ुदा की हम में से किसी शख़्स की, हिम्मत न पड़ी, मगर अबूबक्र सिद्दीक़ रज़ि० नंगी तलवार लेकर खड़े हो गये और किसी को पास न फटकने दिया और जिस शख़्स ने आप पर हमला किया, अबूबक्र सिद्दीक़ रज़ि० उस पर हमलावर हुए।

एक बार मक्का मुअज़्ज़मा में मुश्रिकों ने अल्लाह के रसूल सल्ल० को पकड़ लिया और आप को घसीटने लगे और कहने लगे कि तू ही है, जो एक ख़ुदा को मानता है, अल्लाह की क़सम ! किसी को दुश्मनों के मुक़ाबले की हिम्मत न हुई मगर अबूबक्र सिद्दीक़ रज़ि० आगे बढ़े, वे दुश्मनों को मार-मार कर हटाते जाते थे और कहते जाते थे कि हाय अफ़सोस ! तुम ऐसे शख़्स को क़त्ल करना चाहते हो, जो कहता है मेरा ख़ुदा एक है। यह फ़रमा कर हज़रत अली करमल्लाहु वज्हहू रो पड़े और फ़रमाने लगे, भला यह तो बताओ कि मोमिन आले फ़िरऔन अच्छे हैं या अबूबक्र रज़ि०, लेकिन जब लोगों ने जवाब न दिया, तो फ़रमाया कि जवाब क्यों नहीं देते? अल्लाह की क़सम ! अबूबक्र रज़ि० की एक घड़ी उनकी हज़ार घड़ियों से बेहतर है, वह तो ईमान को छिपाते थे और हज़रत अबूबक्र रज़ि० ने अपने ईमान को ज़ाहिर किया।

हज़रत अबूबक्र रज़ि० तमाम सहाबा किराम रज़ि० में सबसे ज़्यादा सख़ी थे। हज़रत मुहम्मद सल्ल० ने फ़रमाया था कि जितना मुझे अबूबक्र सिद्दीक़ रज़ि० के माल से नफ़ा पहुंचा है, किसी के माल से नहीं पहुंचा। हज़रत अबूबक्र रज़ि० रोकर फ़रमाने लगे कि मैं और मेरा माल क्या चीज़ है, जो कुछ है, सब आप का ही तुफ़ैल है।

एक दिन हज़रत उमर फ़ारूक़ रज़ि० तबूक की लड़ाई के चन्दे का ज़िक्र करते हुए कहने लगे, हज़रत मुहम्मद सल्ल० ने जब हमें माल सदक़ा करने का हुक्म दिया, तो मैंने हज़रत अबूबक्र सिद्दीक़ से बढ़ कर माल सदक़ा करने का पक्का इरादा कर लिया और अपना आधा माल सदक़ा कर दिया। अल्लाह के रसूल सल्ल० ने मुझ से पूछा कि अपने बाल-बच्चों के लिए भी छोड़ा है ? मैं ने कहा, हां बाक़ी आधा। इतने में हज़रत अबूबक्र सिद्दीक़ रज़ि० अपना सारा माल लिए हुए आ गये। हज़रत मुहम्मद सल्ल० ने उनसे भी वही सवाल किया। उन्होंने जवाब दिया कि बाल-बच्चों के लिए ख़ुदा और रसूले ख़ुदा काफ़ी हैं। मैंने यह देख कर कहा कि मैं कभी अबूबक्र रज़ि० से किसी बात में न बढ़ सकूंगा।

आप सहाबा किराम रज़ि० में सबसे बड़े आलिम और ज़हीन थे। हज़रत अली रज़ि० ने कई बार फ़रमाया है कि इस उम्मत मुस्लिमा में सबसे ज़्यादा अफ़ज़ल अबूबक्र सिद्दीक़ रज़ियल्लाहु अन्हु हैं। एक बार हज़रत अली कर्रमल्लाहु वज्हहू ने फ़रमाया कि जो शख़्स मुझ को अबूबक्र व उमर रज़ि० पर फ़ज़ीलत देगा, मैं उस पर दुर्रे लगाऊंगा।

अता बिन रिबाह रह० कहते हैं कि बैअते ख़िलाफ़त के दूसरे दिन हज़रत अबूबक्र रज़ि० चादरें लिए हुए बाज़ार को जाते थे। हज़रत उमर रज़ियल्लाहु अन्हु ने पूछा आप कहां जा रहे हैं ?, फ़रमाया बाज़ार। हज़रत उमर रज़ि० ने कहा कि अब आप यह धंधा छोड़ दें। आप मुसलमानों के अमीर हो गये हैं। आप ने फ़रमाया, फिर मेरे और घर वाले कहां से खाएं? हज़रत उमर रज़ि० ने कहा कि यह काम अबू उबैदा रज़ि० के सुपुर्द कीजिए, चुनांचे दोनों साहब हज़रत अबू उबैदा रज़ियल्लाहु अन्हु के पास गये और उन से हज़रत अबूबक्र सिद्दीक़ रज़ि० ने कहा कि मेरा और मेरे बाल-बच्चों का ख़र्चा मुहाजिरों से वसूल कर दिया करो। चुनांचे ऐसा ही किया गया।

यह थे हज़रत अबूबक्र रज़ि० जो हुज़ूर सल्ल० की वफ़ात के बाद ख़लीफ़ा बने।

पहले ख़लीफ़ा

लोग मस्जिद के आंगन में जमा थे। सरकार सल्ल० के कफ़न-दफ़न से अभी फ़ुर्सत न पायी थी कि एक आदमी ख़बर लाया कि मदीना वाले ख़लीफ़ा चुनने की साज़िश में लगे हुए हैं।

वक़्त नाज़ुक था, मुसलमानों में फूट का ख़तरा अच्छे मुसलमानों को चिंता में डाल रहा था, इसलिए कि वे जानते थे कि इस्लाम की नयी दीवारों में अभी दराड़ पड़ गयी तो पूरी बनी-बनायी इमारत धड़ाम से नीचे आ जायेगी। इस तरह मुसलमानों के लिए ज़रूरी हो गया था कि रसूलुल्लाह का एक जानशीं, बग़ैर किसी इख़्तिलाफ़ के चुना जाए, इसलिए यह बहुत ज़रूरी था कि हर मुम्किन कोशिश से इस फ़ित्ने पर क़ाबू पा लिया जाए।

इस्लाम पर जान न्योछावर करने वालों में से हज़रत अबूबक्र

सिद्दीक़, उमर, और अबू उबैदा बिन जर्राह रज़ि० वहां जल्द से जल्द पहुंचे जहां लोग जमा थे और काना-फूसियां चल रही थीं। वे कह रहे थे, मदीना का हाकिम हम लोगों में से ही चुना जाना चाहिए। यह बाहर के आये हुए लोगों का हक़ नहीं है। हमारी तलवारों की वजह से ही इस्लाम ने तरक़्क़ी की है। उन्हों ने क़रीब-क़रीब साद बिन उबादा को चुन लिया था। वह कुछ कहना चाहते थे, लेकिन हज़रत अबूबक सिद्दीक़ रज़ि० ने उन्हें रोका और फ़रमाया—

'जो कुछ तुम कह रहे थे, बिल्कुल सच और ठीक है, मगर अरब की हालत यह है कि सिवाए क़ुरैश के लोगों के किसी के पीछे चलना पसंद न करेंगे।'

एक मदीने का रहने वाला बोला, तो फिर दो आदमी चुन लिए जाएं, एक तुम में से हो और एक हम में से।

हज़रत उमर रज़ि० ने कहा, यह ना-मुम्किन है।

साद बिन उबादा रज़ि०, जिन्हें उस वक़्त बुख़ार आ रहा था, और उसी कमरे में लेटे हुए थे, बोले 'इस तरह मुसलमानों में फूट डालना ज़ुल्म है।'

बात-चीत बहस में बदल गयी, बहस से झगड़े तक नौबत पहुंची।

एक आदमी ने तेज़ी में कहा, इन नये आने वालों का कोई हक़ नहीं। हमें इनको निकाल देना चाहिए।

क़रीब था कि लोग आपस ही में गुथ जाते। वक़्त की नज़ाकत देखते हुए, सूझ के धनी हज़रत अबूबक्र रज़ि० आगे बढ़े और हज़रत उमर रज़ि० और हज़रत अबू उबैदा रज़ि० की तरफ़ इशारा करके कहा, इन दोनों में से एक को चुन लो और अपना ख़लीफ़ा बनाकर बैअत कर लो।

इन हर दो ने एक साथ कहा, हरगिज़ नहीं। सरकार सल्ल० के फ़रमान के मुताबिक़ पहले ही से नमाज़ों की इमामत आपके सुपुर्द है, इसलिए आप हमारे सरदार हैं। अपना हाथ दीजिए कि हम आपकी बैअत करें।

फिर क्या था। देखते-देखते लोगों की भीड़ ने हज़रत अबूबक्र सिद्दीक़ रज़ि० के हाथ पर बैअत शुरू कर दी और वह बग़ैर इख़्तिलाफ़ के ख़लीफ़ा चुन लिए गये।

अगले दिन सरकार सल्ल० को ग़ुस्ल देकर लोगों ने हज़रत आयशा रज़ि० के हुजरे में दफ़न किया। दूसरे दिन हज़रत अबूबक्र रज़ि० मिंबर पर चढ़े। मस्जिद में हज़ारों की भीड़ मौजूद थी। आप कुछ देर मिंबर पर बैठे रहे, फिर फ़रमाया, ऐ लोगो! मैं तुम्हारा हाकिम हूं। मैं तुम से अच्छा नहीं हूं और न इस क़ाबिल हूं। जब मैं इस्लामी शरीअत के मुताबिक़ सारे काम करूं और तुम्हारी ख़िदमत करूं, तो तुम्हारा फ़र्ज़ है कि मेरी मदद करो। अगर मैं बाद में सीधे रास्ते से भटक जाऊं तो तुम्हारा फ़र्ज़ है कि मुझे सीधे रास्ते पर डाल दो, सच्चाई की पैरवी करो और झूठ को नज़दीक न आने दो। तुम में सबसे कमज़ोर की मदद मेरा फ़र्ज़ है और अगर सब से ताक़तवर ने कमज़ोर के हक़ छीन लिए तो कमज़ोर की मदद करना मेरा ईमान होगा। ख़ुदा की राह में लड़ने से कतराना नहीं और जो उसकी राह से भटक जाएगा, उसपर उसकी फिटकार होगी। उस वक़्त तक मेरी पैरवी करना, जिस वक़्त तक मैं ख़ुदा और उसके रसूल सल्ल० के हुक्मों पर चलूं। अगर मैं ख़ुदा और उसके रसूल सल्ल० की ना-फ़रमानी करूं, तो तुम हरगिज़-हरगिज़ मेरे हुक्मों को न मानना।

इस तक़रीर के बाद हज़रत अबूबक्र सिद्दीक़ ने रसूलुल्लाह सल्ल० के ख़लीफ़ा होने की हैसियत से नमाज़ की इमामत करायी।

कुछ अहम काम

रसूलुल्लाह सल्ल० की वफ़ात पर मक्का और मदीना के अलावा तमाम अरब के लोगों ने बग़ावत कर दी। दूसरे लफ़्ज़ों में मुहाजिरों और अन्सार के अलावा सबने ज़कात देने से इन्कार कर दिया।

लेकिन हज़रत अबूबक्र सिद्दीक़ रज़ि० ने बड़ी हिम्मत से काम लेकर कहा, अगर ये लोग ज़कात न देंगे, तो इन पर फ़ौजकशी की जाएगी। हज़रत उमर रज़ि० बार-बार यह कहते कि रसूलुल्लाह सल्ल० के क़ौल के मुताबिक़, जिसने कलिमा पढ़ लिया उस पर फ़ौजकशी नहीं हो सकती।

हज़रत अबूबक्र रज़ि० बार-बार कहते कि ज़कात तो पांच फ़र्ज़ों में से एक फ़र्ज़ है और उसी पर पूरी हुकूमत टिकी हुई है, बैतुलमाल (राजकोष) ज़कात ही पर चल रहा है और बग़ैर इसके हुकूमत कमज़ोर हो जाएगी।

चुनांचे हज़रत अबूबक्र ने फ़ौजकशी की और थोड़े ही दिनों में बग़ावत करने वालों का पूरा ज़ोर टूट गया।

इसी तरह प्यारे नबी सल्ल० ने अपने आखिरी दौर में शाम पर चढ़ाई की जो तैयारी की थी, उस में फ़ौज का सेनापति हज़रत उसामा बिन ज़ैद रज़ि० को मुक़र्रर किया था। यह बिल्कुल नव-उम्र थे। हुज़ूर सल्ल० की बीमारी की वजह से यह फ़ौज कूच न कर सकी। हज़रत अबूबक्र रज़ि० ने इस फ़ौज को कूच करने का आर्डर दे दिया।

यह वही वक़्त था जबकि हर तरफ़ से बग़ावत की खबरें आ रही थीं। एक बड़ा नाज़ुक वक़्त था मुल्क व क़ौम के लिए। हज़रत उसामा भी परेशान थे कि ऐसे मौक़े पर फ़ौज के कूच का आर्डर मुनासिब नहीं मालूम होता। लोग चाहते थे कि इस मुहिम को अभी मुल्तवी कर दिया जाए, जब तक कि पूरे मुल्क में अम्न व अमान न हो जाए।

लेकिन हज़रत अबूबक्र रज़ि० का हुक्म था कि सरकार सल्ल० ने उसामा को सेनापति बनाकर शाम देश पर हमले के लिए हुक्म दिया था, मैं किसी तरह इस हुक्म के खिलाफ़ नहीं चल सकता। मैं सबसे पहला यही काम करूंगा, चाहे मैं अकेला रह जाऊं और मुझे अपनी जान ही क्यों न देनी पड़े।

चुनांचे फ़ौज ने कूच किया। हज़रत अबूबक्र उसामा को हिदायतें देने के लिए कुछ दूर उनके साथ तशरीफ़ ले गये। वह घोड़े पर सवार थे, और खलीफ़ा उनके साथ-साथ पैदल चल रहे थे।

सेनापति ने अर्ज़ किया कि या तो आप घोड़े पर सवार हो जाएं या मुझे नीचे उतरने की इजाज़त दें।

हज़रत अबूबक्र सिद्दीक़ रज़ि० ने फ़रमाया, आप बिल्कुल घोड़े पर से नहीं उतर सकते और न ही मैं सवार होने को तैयार हूं। क्या आप नहीं चाहते कि मेरे क़दम भी खुदा की राह में धूल से सनें, क्या आप को याद नहीं कि ग़ाज़ी (योद्धा) का हर क़दम खुदा को भला मालूम होता है और ग़ाज़ी दोज़ख में नहीं जाएंगे।

आप ने जो हिदायतें दीं, वे इस तरह हैं—

१. किसी काम में खियानत न करना,
२. ग़नीमत के माल में से कुछ न लेना,
३. किसी समझौते के खिलाफ़ काम न करना,
४. दुश्मन की लाशों को बेइज़्ज़ती न करना,

५. फलदार पेड़ों को न काटना और न उनको आग लगाना।

६. किसी बच्चे को क़त्ल न करना, न किसी औरत पर हमला करना और न किसी बूढ़े आदमी को क़त्ल करना।

७. किसी बच्चे को किसी हालत में भी उसकी मां से जुदा न करना।

८. बकरियां, भेड़ें, गायें, ऊंट और घोड़ों को बर्बाद न करना।

९. यहूदियों और ईसाइयों के राहिबों और पादरियों पर हमला न करना और न उन लोगों पर हमला करना, जो तुम पर हमला न करें।

१०. लोगों के मज़हब में ज़बरदस्ती दख़ल न देना और क़तई तौर पर किसी को ज़बरदस्ती मुसलमान बनाने की कोशिश न करना।

हज़रत अबूबक्र रज़ि० ये हिदायतें देकर फिर वापस मदीना लौट आये।

उसामा रज़ि० की फ़ौज जिन रास्तों से गुज़री, वहां के लोग रोब में आ गये और उन को यक़ीन हो गया कि हुकूमत बेशक ताक़तवर है, वरना इस ख़तरे की हालत में ऐसी मुहिम का ख़्याल बेकार की बात है। चुनांचे वे डर कर सीधे रास्ते पर आ गये।

बग़ावत कुचल दी गयी

हुज़ूर सल्ल० की वफ़ात के बाद बाग़ियों ने यह समझ लिया था कि शायद इस्लाम की ताक़त टूट चुकी है, इसलिए जगह-जगह उन्होंने सर उठाने शुरू कर दिये थे। चुनांचे हज़रत अबूबक्र सिद्दीक़ ने इन बग़ावतों को कुचलने के लिए ग्यारह बहादुर सरदारों की मातहती में अलग-अलग टुकड़ियां रवाना की गयीं, जैसे—

१. ख़ालिद बिन वलीद को हुक्म था कि तलैहा को हराने के बाद मालिक बिन नुवैरा का सर कुचलने के लिए जाएं।

२. इक्रिमा को मुसैलमा को क़ाबू में करने के लिए यमामा भेजा।

३. शुरहबील बिन हुस्ना को इक्रिमा की मदद के लिए भेजा गया और हुक्म हुआ कि वहां से फ़ारिग़ हो कर क़बीला क़ुज़ाआ को पस्त करें और उसके बाद कुन्दा पर हमला करें।

४. ख़ालिद बिन सईद को मशारिफ़े शाम की तरफ़ भेजा।

५. अम्र बिन आस को क़ुज़ाआ, वदीआ और हारिस के दमन के लिए भेजा।

६. हुज़ैफ़ा बिन महज़, दबा के लोगों को पस्त करने चले।

७. मुहाजिर बिन अबी उमैया, अस्वद के दमन के लिए गये।

८. अर्फ़जा बिन हुरैमसा, मुहरा के बाशिंदों का सर कुचलने के लिए भेजे गये।

९. अला बिन हज़्रमी बहरैन गये।

१०. तुरैफ़ा बिन माजिज़, बनी सुलैम और हवाज़िन के दमन के लिए निकले।

११. सुवैदा बिन मुक़रिन यमन की तरफ़ चले।

इस शानदार स्कीम से कोई जगह ऐसी न रही, जहां फ़ित्ने या फ़साद का खतरा रहता। खलीफ़ा ने मदीना वापस आकर एक फ़रमान जारी किया कि दीन से हर फिरने वाला और हर बाग़ी, जहां कहीं भी वह है, अगर वह तौबा कर ले, तो उसकी ग़लती माफ़ कर दी जाएगी, लेकिन जो लोग हठ पर क़ायम रहेंगे, उन पर हमला करके उनको तलवार के घाट उतार दिया जाएगा और उनके बच्चे और औरतें क़ैद कर ली जाएंगी।

इसके बाद एक साल के अन्दर ही पूरे मुल्क में बग़ावत कुचल दी गयी और चारों तरफ़ अम्न व अमान क़ायम हो गया

इराक़ पर क़ब्ज़ा

बारहवीं हिजरी तक पहुंचते-पहुंचते जब पूरे मुल्क में अम्न क़ायम हो गया, तो खलीफ़ा का ध्यान सरहदी इलाक़ों और दूसरे इलाक़ों की सरगर्मियों की ओर भी गया।

हज़रत खालिद रज़ि० और मुस्ना बिन हारिसा के दोनों दस्ते एक होकर आगे बढ़े। अभी यह फ़ौज इराक़ की सरहद में दाखिल हो हुई थी कि आस-पास की छोटी-छोटी रियासतें रोब में आकर खुद ही समझौते पर तैयार हो गयीं।

फिर इराक़ के हाकिम को इस्लाम की दावत पेश की गयी। वह बहुत नाराज़ हुआ और लड़ने-मरने पर तैयार हो गया। मुक़ाबला हुआ

और हुर्मुज़ की फ़ौज हार कर भाग खड़ी हुई।

ईरान के बादशाह को जब इस पसपाई का हाल मालूम हुआ तो उसने बहुत पेच व ताब खाया और अपने एक मशहूर जनॅल अंदाज़ज़र की सरदारी में फिर एक भारी फ़ौज भेजी, फिर मुक़ाबला हुआ और दुश्मन हार गया।

इस तरह जीतते हुए हज़रत ख़ालिद रज़ि० अपनी फ़ौज के साथ आगे बढ़ते चले गये, यहां तक कि फ़रात नदी के किनारे अपना पड़ाव डाल दिया। दुश्मन भी ख़ामोश न था, उसकी फ़ौजें मुसलमानों को ख़त्म कर देने का इरादा किए पड़ी थीं। जब लड़ाई हुई तो दुश्मन ही को हार का मुंह देखना पड़ा।

वहां से जीत हासिल करने के बाद हज़रत ख़ालिद रज़ि० अपनी फ़ौज के साथ आगे, आस-पास के क़बीलों से समझौता करते हुए यमूंक की तरफ़ बढ़े। वहां सख़्त मुक़ाबला हुआ। इतनी घमासान की लड़ाई हुई कि तीन हज़ार मुसलमान शहीद हुए। नामी सहाबी भी शहीद हो गये, फिर जीत मुसलमानों के ही हाथ रही।

इस तरह शाम मुल्क पर मुसलमानों का क़ब्ज़ा हो गया

ज़िंदगी के आख़िरी दिन

सन् १३ हि० के जुमादलउख़रा महीने के शुरू में हज़रत अबूबक्र सिद्दीक़ रज़ि० बुख़ार में मुब्तला हुए। पन्द्रह दिन में बुख़ार में तेज़ी पैदा हो गयी। जब आप को यक़ीन हो गया कि आख़िरी वक़्त आ पहुंचा है, तो आप ने सबसे पहले हज़रत अब्दुर्रहमान बिन औफ़ को बुला कर ख़िलाफ़त के बारे में मश्विरा किया। हज़रत अब्दुर्रहमान बिन औफ़ रज़ि० से आप ने फ़रमाया कि उमर के बारे में तुम्हारा क्या ख़्याल है? उन्होंने कहा कि उमर रज़ि० के मिज़ाज में सख़्ती है। आप ने फ़रमाया, उमर की सख़्ती की वजह सिर्फ़ यह है कि मैं नर्म तबियत रखता था। मैंने ख़ुद अन्दाज़ा कर लिया है कि जिस मामले में मैं नर्मी अपनाता था, उसमें उमर रज़ि० की राय सख़्ती लिए हुए होती थी, लेकिन जिस मामले में मैंने सख़्ती से काम लिया, उनमें उमर रज़ि० हमेशा नर्मी का पहलू अपनाते थे। मेरा ख़्याल है कि ख़िलाफ़त उन को ज़रूर नर्मदिल और मोत-

दिल बना देगी।

इस के बाद आप ने हज़रत उस्मान रज़ि० को बुलाकर यही सवाल किया। उन्हों ने कहा कि उमर रज़ि० का अन्दर उन के बाहर से अच्छा है।

फिर आप ने हज़रत अली कर्रमल्लाहु वज्हहू को बुलाकर यही सवाल किया। उन्हों ने भी यही जवाब दिया।

इसके बाद हज़रत तलहा रज़ि० तशरीफ़ लाए, उनसे भी मश्विरा किया, फिर आप ने हज़रत उस्मान ग़नी रज़ि० को बुलाकर वसीयत नामा लिखने का हुक्म दिया, जो इस तरह तैयार हुआ—

'यह वह अह्द है, जो अबूबक्र खलीफ़ा-ए-रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उस वक़्त किया है, जबकि उसका आखिरी वक़्त दुनिया का और अव्वल वक़्त आखिरत का है। ऐसी हालत में काफ़िर भी ईमान लाता और फ़ाजिर भी यक़ीन ले आता है। मैं ने तुम लोगों पर उमर बिन खत्ताब रज़ि० को मुक़र्रर किया है और मैंने तुम लोगों की भलाई और बेहतरी में कोताही नहीं की, पस अगर उमर रज़ि० ने सब्र व अक़्ल से काम लिया, तो यह मेरी उसके बारे में जानकारी थी और अगर बुराई की तो, मुझको ग़ैब का इल्म नहीं है और मैंने तो बेहतरी और भलाई का इरादा किया है और हर आदमी को अपने कामों का नतीजा भुगतना है, और जिन्होंने ज़ुल्म किया है, बहुत जल्द देख लेंगे कि किस पहलू पर फेरे जाते हैं।

जब यह तहरीर लिखी जा चुकी, तो आप ने हुक्म दिया कि लोगों को पढ़ कर सुना दो। फिर उसी बीमारी की हालत में खुद भी बाहर आए और मज्मे से बोले कि मैं ने अपने किसी अज़ीज़ रिश्तेदार को खलीफ़ा नहीं बनाया है, न सिर्फ़ मैंने अपनी राय से ऐसा किया है, बल्कि लोगों से राय ले कर खलीफ़ा बनाया है, तो क्या तुम लोग उस शख्स के खलीफ़ा होने पर रज़ामंद हो जिस को मैं ने तुम्हारे लिए चुना है? यह सुनकर लोगों ने कहा कि हम आप के चुनाव और आप की तज्वीज़ को पसन्द करते हैं, फिर हज़रत सिद्दीक़े अक्बर रज़ि० ने फ़रमाया कि तुम को चाहिए कि उमर फ़ारूक़ रज़ि० का कहना सुनो और उसकी इताअत करो, सबने इताअत का इक़रार किया। इस के बाद हज़रत उमर फ़ारूक़ रज़ि० से बोले—

'ऐ उमर! मैंने तुम को अस्हाबे रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि

व सल्लम पर अपना नायब बनाया है, अल्लाह से खुले-छिपे में डरते रहना, ऐ उमर ! अल्लाह के कुछ हक़ हैं, जो रात से मुताल्लिक़ हैं, उनको वह दिन में नहीं क़ुबूल करेगा, ऐसे ही कुछ हक़ दिन से मुताल्लिक़ है, जिनको वह रात में क़ुबूल नहीं करेगा। अल्लाह तआला नफ़्लों को क़ुबूल नहीं करता, जब तक कि फ़र्ज़ न अदा कर दिए जाएं।

ऐ उमर ! जिनके नेक अमल क़ियामत में वज़नी होंगे, वही कामियाब होंगे और जिनके नेक अमल कम होंगे, वही मुसीबत में फंसेंगे 'ऐ उमर ! फ़लाह व निजात की राहें क़ुरआन मजीद पर अमल करने और हक़ की पैरवी से मयस्सर होती हैं।......ऐ उमर ! तुम जब मेरी इन वसीयतों पर अमल करेगो, तो मुझे गोया अपने पास बैठा हुआ पाओगे।'

यह तहरीर और वसीयत वग़ैरह की कार्रवाई २२ जुमादल उख़रा सन १३ हि० को लिखी गयी और उसी दिन शाम को मग़रिब बाद तिरसठ साल की उम्र में आप का इंतिक़ाल हुआ और इशा से पहले आप दफ़्न कर दिए गए।

इन्नालिल्लाहि व इन्ना इलैहि राजिऊन

जिस वक़्त हज़रत अबूबक्र सिद्दीक़ रज़ि० की वफ़ात की ख़बर मदीने में फैली, तमाम शहर में ग़म की लहर दौड़ गयी। हज़रत अली रज़ि० ने यह ख़बर सुनी, तो रो पड़े और रोते हुए आप के मकान पर आए, दरवाज़े पर खड़े होकर फ़रमाने लगे—

'ऐ अबूबक्र ! ख़ुदा तुम पर रहम करे। ख़ुदा की क़सम ! तुम तमाम उम्मत में सब से पहले ईमान लाए। तुम सब से ज़्यादा यक़ीन वाले, सबसे बे-नियाज़ और हज़रत मुहम्मद सल्ल० की सब से ज़्यादा हिफ़ाज़त और देख-भाल करते, सब से ज़्यादा इस्लाम के हामी और मख़्लूक़ की भलाई चाहने वाले थे। तुम ने आप (सल्ल०) की तस्दीक़ की, जब दूसरों ने झुठलाया और उस वक़्त रसूले ख़ुदा का साथ दिया, जब दूसरों ने कमज़ोरी दिखायी, जब लोग मदद और हिमायत से रुके हुए थे, तुम ने खड़े हो कर रसूले ख़ुदा की मदद की, ख़ुदा ने तुम को अपनी किताब में सिद्दीक़ कहा।'

हज़रत उमर फ़ारूक़ रज़ि० इस ख़बर को सुन कर फ़रमाने लगे—

'ऐ रसूलुल्लाह सल्ल० के ख़लीफ़ा ! तुमने अपने बाद क़ौम को बड़ी

सख्त तक्लीफ़ दी और उन को मुसीबत में डाल दिया। तुम्हारी धूल को भी पहुंचना मुश्किल है, मैं तुम्हारी बराबरी कहां कर सकता हूं।'

बीवियां और बच्चे

हज़रत अबूबक्र सिद्दीक़ रज़ियल्लाहु अन्हु की पहली बीवी क़ुतीला बिन्त अब्दुल अज़ीरी थीं, जिस से अब्दुल्लाह बिन अबी बक्र रज़ि० और उन के बाद अस्मा बिन्त अबी बक्र रज़ि० (अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ि० की वालिदा) पैदा हुईं।

दूसरी बीवी आप की उम्मे रोमान थीं। उन के पेट से अब्दुर्रहमान बिन अबी बक्र रज़ि० और हज़रत आइशा सिद्दीक़ा रज़ियल्लाहु तआला अन्हा पैदा हुईं।

जब हज़रत अबू बक्र सिद्दीक़ रज़ियल्लाहु अन्हु मुसलमान हुए तो पहली बीवी ने मुसलमान होने से इन्कार किया, उस को आप ने तलाक़ दे दी। दूसरी बीवी उम्मे रोमान रज़ि० मुसलमान हो गयीं। मुसलमान होने के बाद भी आप ने दो निकाह और किए। एक अस्मा बिन्त अमीस रज़ि० से किया, जो जाफ़र बिन अबी तालिब रज़ि० की बीवी थीं, उन के पेट से मुहम्मद बिन अबीबक्र रज़ि० पैदा हुए। दूसरा निकाह हबीबा बिन्त खारिजा अन्सारिया रज़ि० से किया, जो क़बीला खज़रज से थीं, उनके पेट से एक बेटी उम्मे कुलसूम रज़ि० आप की वफ़ात के बाद पैदा हुईं।

दूसरे ख़लीफ़ा हज़रत उमर रज़ि०

आप का ताल्लुक़ भी क़ुरैश के इज़्ज़तदार घरानों से था। आठवीं पीढ़ी में आप का वंश हज़रत मुहम्मद सल्ल० के वंश से मिल जाता है।

हज़रत उमर फ़ारूक़ रज़ियल्लाहु अन्हु को उर्फ़ में अबू हफ़्स कहते थे प्यारे नबी सल्ल० ने आप को फ़ारूक़ का लक़ब दिया था। आप हिजरत से चालीस साल पहले पैदा हुए, लड़कपन में ऊंटों को चराया, जवानी में पहलवानी की, और बाद में तिजारत में लग गये।

इस्लाम क़ुबूल करने का वाक़िआ

हज़रत उमर रज़ि० खुद फ़रमाते थे कि एक रात मैं अपने घर से निकला तो रसूलुल्लाह को काबे में नमाज़ पढ़ते पाया। मैं आप के पीछे खड़ा हो गया। आपने सूरः फ़ातिहा पढ़ी, तो मुझे इस सूरः पर बड़ी हैरत हुई। मैंने दिल में कहा कि यह शख्स शायर है। तब तक आप ने यह आयत पढ़ी 'इन्नहू ल क़ौलु रसूलिन करीम। वमा हु-व बिक़ौलि शाइर क़लीलम मा तुअ्मिनून।'

(यह एक बुज़ुर्ग रसूल का कलाम है और यह किसी शायर का कलाम नहीं। तुम बहुत कम ईमान लाते हो।)

हज़रत उमर को ख्याल हुआ, 'क्या यह काहिन हैं कि मेरे दिल की बात जान गए।'

लेकिन इस के बाद ही आप ने यह पढ़ा 'वला बिक़ौलि काहिन क़लीलम मा तज़क्करून। तनज़ीलुम मिर्रब्बिल आलमीन।

(और न किसी काहिन का कलाम है। तुम बहुत ही कम ध्यान करते हो, उतारा हुआ है सारी दुनिया के रब की तरफ़ से।)

हज़रत उमर कहते हैं कि इन आयतों के सुनने से मुझ पर बड़ा असर हुआ।

एक रिवायत में है कि हज़रत उमर एक दिन रसूलुल्लाह के क़त्ल के इरादे से घर से निकले, लेकिन रास्ते में उन्हें अपनी बहन और बहनोई के ईमान लाने की खबर मिली तो उन के घर गए और उन्हें मारा-पीटा और फिर आखिर में क़ुरआन सुना, जिस से उन का दिल पूरे तौर पर नर्म पड़ गया और वह चंद दिन अरक़म के मकान में पहुंचे, जहां रसूलुल्लाह छिप-कर लोगों को दीन की तालीम देते थे। फिर वहां पहुंच कर आपने इस्लाम का कलिमा पढ़ा।

हज़रत अली का बयान है कि हज़रत उमर के अलावा किसी ने सुभकर हिजरत नहीं की। हज़रत उमर ने जब इरादा किया तो हथियार बांधा, तीर कमान लिया और फिर मस्जिदे हराम में आए, जहां क़ुरैश के लोग बैठे हुए थे। तवाफ़ किया, नमाज़ पढ़ी फिर उन लोगों से कहा जो कोई अपने मां-बाप को बे-वलद और अपने लड़कों को यतीम और अपनी

बीवी को बेवा करना चाहे, इस वक़्त वह आ कर मुझ से मिले। किसी की हिम्मत न हुई कि वह कुछ कहता।

अपनी ख़िलाफ़त के ज़माने में जब हज़रत उमर मुल्क शाम में पहुंच रहे थे तो उस मुल्क के ज़िम्मेदार आप के इस्तक़्बाल के लिए निकले और उन्होंने कहा, 'आप ऊंटनी छोड़ कर घोड़े पर सवार हों, ताकि लोगों पर शौकत और हैबत ज़ाहिर हो।'

हज़रत उमर ने फ़रमाया 'अना क़ौमुन अअज़्ज़नल्लाहु बिल इस्लामि।' (हम वह क़ौम हैं जिसे ख़ुदा ने इस्लाम के ज़रिए इज़्ज़त बख़्शी है।)

एहतियात इतना करते थे कि जब इस्लामी फ़ौज शाम की तरफ़ रवाना हुई तो आपके बेटे अब्दुल्लाह बिन उमर ने कहा 'लश्कर के साथ मैं भी जिहाद में जाना चाहता हूं।' तो हज़रत उमर ने फ़रमाया, मुझे डर है कि तू कहीं ज़िना में गिरफ़्तार न हो जाए।

हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर ने कहा 'ऐ अमीरुल मोमिनीन ! मेरे बारे में आप ऐसा गुमान करते हैं?

हज़रत उमर ने फ़रमाया 'मुम्किन है मुसलमानों को फ़त्ह हासिल हो और कोई लौंडी बिके और लोग तेरे साथ तुझे ख़लीफ़ा का बेटा समझ कर क़ीमत में रियायत करें और तू ज़ाहिरी हुक्म को देखते हुए ख़रीद को सही समझे और उस लौंडी को हाथ लगाए, तो हक़ीक़त में यह ज़िना होगी।

हज़रत उमर रात में अक्सर लोगों का हाल मालूम करने के लिए गश्त लगाया करते थे। एक रात वह गुज़र रहे थे कि एक औरत अपनी बेटी से कह रही थी 'उठ दूध में पानी मिला दे।

बेटी ने कहा 'क्या तुझे ख़बर नहीं है कि अमीरुल मोमिनीन ने मुनादी की है कि कोई दूध में पानी न मिलाए।'

मां ने कहा, 'इस वक़्त न अमीरुल मोमिनीन हैं, न मुनादी है।'

लड़की ने कहा, 'हमारे लिए यह मुनासिब नहीं कि हम ज़ाहिर में तो फ़रमांबरदारी करें और तनहाई में नाफ़रमानी—अल्लाह तो देख रहा है।'

हज़रत उमर इस बात से इतना ख़ुश हुए कि उस लड़की से अपने बेटे आसिम का निकाह कर दिया। इसी लड़की की नवासी हज़रत उमर

बिन अब्दुल अज़ीज़ की मां हुईं जो बहुत नेक ख़लीफ़ा हुए और जिन्हों ने हज़रत उमर की याद ताज़ा कर दी।

हज़रत उमर जब किसी को हाकिम बना कर भेजते तो उस को लिखते थे कि ऐश और सजावट से दूर रहो। क़ीमती और बारीक कपड़ा मत पहनो, मैदे की रोटी मत खाओ, तुर्की घोड़े पर मत सवार हो, अपने दरवाज़े पर चौकीदार मत बिठाओ, ताकि लोग आसानी से अपनी ज़रूरतें बयान कर सकें। अद्ल और इंसाफ़ के ख़िलाफ़ मत जाओ।

लड़ाइयां और जीत

सब से पहला काम जो हज़रत उमर रज़ि० ने किया वह इस्लामी फ़ौज को सही ढंग से तर्तीब देकर उसे अपनी मुहिम को कामियाब बनाने का था। हज़रत मुस्ना के लिए फ़ौज भर्ती करने का काम इसी मक़्सद से किया गया।

हज़रत उमर के ज़माने में लड़ाइयों का लंबा सिलसिला चला था, जिसे थोड़े में सन्वार इस तरह समझिए कि—

१. अबू उबैद रज़ि० की सरदारी में ईरानी फ़ौज से घमासान की लड़ाई हुई, हज़रत अबू उबैद और उस के बाद बनने वाले सात सेनापति शहीद किए गए, मगर जीत फिर भी इस्लामी फ़ौज की हुई। बग़दाद के आस-पास का पूरा इलाक़ा क़ब्ज़े में आ गया।

२. हज़रत साद की सरदारी में क़ादसिया के मैदान में ईरान के मशहूर सरदार और योद्धा रुस्तम से लड़ाई हुई, लड़ाई बहुत ज़ोर से लड़ी गयी, रुस्तम मारा गया और ग़नीमत का बहुत सा माल मुसलमानों के क़ब्ज़े में आया। इसी लड़ाई के मौक़े पर नौशेरवां का चमचमाता ताज, किसरा, हरमुज़ और क़ुबाद के ख़ंजर, राजा दाहर, ख़ाक़ाने चीन और बहराम की तलवारें भी हाथ आयी थीं। जब यह माल बंट रहा था, तो हज़रत उमर रज़ि० फूट-फूट कर रोने लगे। किसी ने कहा, यह तो ख़ुशी की जगह है और आप रो रहे हैं। आपने जवाब दिया, यह माल व दौलत कभी-कभी क़ौम में फूट डाल देती है, मुझे यह डर कंपाए दे रहा है कि कहीं यह दौलत व हश्मत हमारे लोगों को लोभ का शिकार न बना दे।

३. हज़रत साद की फ़ौज आगे बढ़ी। जलूला पर इराक़ की आख़िरी

लड़ाई हुई, इस्लामी फ़ौज की शानदार जीत हुई और इराक़ पर मुसलमानों का पूरा क़ब्ज़ा हो गया।

४. दमिश्क़ पर चढ़ाई और जीत का सिलसिला अगरचे हज़रत अबूबक्र के ज़माने में शुरू हो चुका था, मगर यह जीत हज़रत उमर रज़ि० के दौर में पूरी हुई। दमिश्क़ के जीतने का सेहरा हज़रत ख़ालिद रज़ि० के सर बंधता है।

५. दमिश्क़ की हार के बाद सभी बहुत ना-उम्मीद हो गये, मगर एक बार फिर उन्होंने हिम्मत से मुक़ाबला करने की ठानी, ज़बरदस्त तैयारी की और चालीस हज़ार की फ़ौज मुसलमानों से मुक़ाबले के लिए शहर बेसान के क़रीब जमा हो गयी। लेकिन यह तैयारी भी मुसलमान फ़ौज पर कोई असर न डाल सकी। वह जीतती रही और आगे बढ़ती रही।

६. हज़रत अबू उबैदा की सरदारी में शाम के हम्स ज़िला पर भी क़ब्ज़ा कर लिया गया। अब हज़रत अबू उबैदा हिरक़्ल की राजधानी तक पहुंच आये थे।

७. रूमियों की लगातार हार ने इन की हिम्मतें पस्त कर दी थीं। क़ैसर हिरक़्ल ने फिर हिम्मत बांधी और ज़ोरदार हमला करके मुसलमानों की कमर तोड़ देने का इरादा किया। ज़बरदस्त तैयारी के बाद रूमी फ़ौज आगे बढ़ी। यर्मूक में हज़रत अबू उबैदा ने अपना पड़ाव किया। घमासान की लड़ाई हुई, मुसलमानों को जीत नसीब हुई।

८. बैतुलमक़्दिस कई हैसियत से मुसलमानों के लिए एक ख़ास अहमियत रखता है। बैतुलमक़्दिस बहुत से नबियों का गहवारा है, साथ ही वह मुसलमानों का क़िबला भी रहा है। अब जीतते हुए हज़रत अबू उबैदा रज़ि० की फ़ौजों ने बैतुल मक़्दिस का रुख किया। मुसलमानों का रौब पहले दूर-दूर तक पड़ा हुआ था, इस भारी फ़ौज को देखकर ईसाइयों ने तुरन्त समझौते की दरख़्वास्त की। मगर एक शर्त यह लगायी कि ख़लीफ़ा ख़ुद तशरीफ़ लाकर अपने हाथ से समझौते की शर्तें तै करें। जब हज़रत उमर को इस की इत्तिला दी गयी, तो आप आने में कुछ झिझके, मगर सलाह व मश्विरा के बाद यह तै पाया कि हज़रत उमर का बैतुलमक़्दिस जाना निहायत अहम और ज़रूरी है। हज़रत अली को अपना नायब मुक़र्रर करके ३ रजब को आप मदीना से रवाना हुए।

जाबिया का समझौता

बैतुलमक़्दिस से क़रीबी जगह जाबिया में मुसलमान सरदारों और जनरलों ने हज़रत उमर रज़ि० का स्वागत किया। मुसलमान सरदारों और जनरलों के चमचमाते कपड़ों को देखकर हज़रत उमर बहुत बिगड़े और अपना गुस्सा और रंज ज़ाहिर करने के लिए उन पर कंकरियां फेंकीं। उन सबने एक मुंह होकर उन्हें यक़ीन दिलाया कि हम सब ने कपड़ों के नीचे फ़ौजी हथियार पहन रखे हैं, फिर डर से कांपते हुए अर्ज़ किया कि दुश्मन पर रौब बिठाने के लिए यह ज़रूरी है कि हुज़ूर भी अपना कपड़ा बदल लें। यह सुनकर हज़रत उमर रोने लगे और फ़रमाया, तुम्हें मालूम नहीं, हम अनजाने, जाहिल और बुतों के पुजारी थे, ख़ुदा ने हमें इस्लाम की दौलत से मालामाल किया, 'क्या यह काफ़ी नहीं कि हम उसका शुक्र अदा करें और फिर उसी गुमराही में न जाएं।

ईसाइयों के सरदार के साथ अमीरुल मोमिनीन ने शहर का मुआयना किया और कई जगहों की सैर की। ईसाई तारीख़ लिखने वाले लिखते हैं कि नमाज़ का वक़्त होने पर सरदार ने, जब वह अमीरुल मोमिनीन को एक गिरजा दिखा रहा था, अर्ज़ की कि हुज़ूर नमाज़ अदा फ़रमा लें। अमीरुल मोमिनीन ने इन्कार कर दिया और फ़रमाया कि अगर आज मैं यहां नमाज़ अदा करूं, तो मुम्किन है मुसलमान इस ख़्याल से कि यहां एक वक़्त नमाज़ अदा की गयी थी, गिरजा पर क़ब्ज़ा करने की कोशिश करें। इसी ख़्याल को ध्यान में रखते हुए ख़लीफ़ा ने एक दस्तावेज़ एक और गिरजा के पादरी को दी कि, 'एक वक़्त में एक से ज़्यादा मुसलमान इस गिरजा में दाख़िल नहीं हो सकते।

वहां मुसलमानों और ईसाइयों में जो समझौता हुआ, वह इस बात का खुला सबूत है कि मुसलमानों ने दूसरी क़ौमों के साथ कितनी नर्मी का सबूत दिया है?

समझौता इस तरह है—

ख़ुदा का बंदा अमीरुल मोमिनीन उमर अल्लाह पाक की मेहरबानी से बैतुल मक़्दिस के लोगों के साथ नीचे लिखा समझौता करता है—

१. वह उन्हें यक़ीन दिलाता है कि उनकी जानें, जायदादें, इबादत-

चाहें, उन के गिरजे, उन की सलीबें (क्रास), जिनकी वे इज्ज़त करते हैं हर तरह से महफ़ूज़ होंगी और हुकूमत का फ़र्ज़ होगा कि वह उन की हिफ़ाज़त करे।

२. उनको इख़्तियार होगा कि वे जिस तरह चाहें, गिरजों में या गिरजों के बाहर अपने विश्वास के मुताबिक़ इबादत करें।

३. उनकी जायदादें और मिल्कियतें किसी हाल में भी ज़ब्त न की जाएंगी।

४. उन के गिरजे, मस्जिद या दूसरी इमारतें हरगिज़ न बदली जाएंगी। न उनकी सलीबें उनसे छीनी जाएंगी।

५. यहूदी और ईसाई दूसरे लोगों की तरह जिज़्या अदा करेंगे।

६. यूनानी शहर से निकाल दिए जाएंगे, मगर उनसे किसी क़िस्म की छेड़छानी न की जाएगी, मगर जो ठहरना चाहें और वचन दें कि वे आगे की ज़िंदगी अम्न के साथ गुज़ारेंगे, उन्हें रहने का पूरा अख़्तियार होगा। वे ईसाई जो यूनानियों के साथ जाना चाहें अपने तमाम सामान के साथ जा सकते हैं।

७. जब तक आगे फ़सल पक कर तैयार न हो, किसी से भी जिज़्या न वसूल किया जाएगा।

इस समझौते पर ख़ालिद बिन वलीद, अम्र बिन आस, मुआविया बिन अबू सुफ़ियान और अब्दुर्रहमान बिन औफ़ ने गवाह के तौर पर दस्तख़त किये हैं।

यह समझौता आज की तरक़्क़ी की दुनिया की आंख खोल देने के लिए काफ़ी है।

ख़लीफ़ा का आदर्श

इसके बाद हज़रत उमर रज़ि०, जो दो ज़बरदस्त बादशाहों और बड़ी हुकूमतों को बुरी तरह हरा चुके थे, बैतुल् मक़्दिस की तरफ़ चले। उनके कपड़े पुराने थे, पैवंद लगे हुए थे, दुबले और कमज़ोर ऊंट पर वह सवार थे। उन के साथ उनका ग़ुलाम था।

वे दोनों बारी-बारी ऊंट पर सवार हो कर मंज़िलें तै करते गये, चुनांचे जब वह शहर में दाख़िल हुए तो उनका ग़ुलाम ऊंट पर सवार था

और हज़रत उमर रज़ि० ऊंट की महार थामे हुए थे। मुसलमानों ने उनकी बड़ी खुशामद की कि वे कपड़े बदल लें, मगर उन पर बिल्कुल असर न हुआ।

शहर में दाखिल होने पर ईसाई सरदार ने एक क़मीज़ और चादर उन्हें पेश की। उन्हों ने सिर्फ़ इस शर्त पर उसे क़ुबूल किया कि जब तक उन के कपड़े धुल जाएं, वे पहन लेंगे।

बैतुलमक़्दिस में आप कई दिन तक ठहरे रहे और ज़रूरी फ़र्मान जारी करते रहे। एक दिन हज़रत बिलाल रज़ि० ने अमीरुल मोमिनीन के पास शिकायत की कि अफ़सर तो अच्छे-अच्छे खाने खाते हैं और हमारे जैसे सिपाहियों को ग़रीबों जैसी बहुत ही मामूली रोटी दी जाती है।

अमीरुल मोमिनीन ने हुक्म दिया कि आगे हर सिपाही को तंख्वाह और ग़नीमत के माल के अलावा अच्छा खाना सरकार की तरफ़ से दिया जाए।

हज़रत उमर रज़ि० शहीद कर दिए गये

इस समझौते के बाद भी कुछ छोटी-बड़ी लड़ाइयों का सिलसिला चला, यहां तक कि रूम और फ़ारस की दोनों बड़ी ताक़तें इस्लामी हुकूमत के क़ब्ज़े में आ गयीं। मिस्र की तरफ़ इस्लामी फ़ौजें आगे बढ़ीं और उसे भी अपने क़ब्ज़े में कर लिया।

यहां यह बात याद रखने की है कि इराक़ की लड़ाई में एक सख्त-दिल शख्स फ़ीरोज नामी गिरफ़्तार हो कर लड़ाई में पकड़े गये क़ैदियों के साथ मदीना पहुंचा। हज़रत उमर रज़ि० ने उसी वक़्त भांप लिया कि मदीना में इन ईरानियों का ठहरना फ़ायदेमंद न होगा, मगर सब लोगों की राय थी, इसलिए खामोश रहे।

यह बद-क़िस्मत मुग़ीरा बिन शोबा का ग़ुलाम था। और बढ़ईगिरी, लोहारी और नक़्क़ाशी का पेशा करता था। उस ज़ालिम ने एक दिन आप के पास हाज़िर होकर अर्ज़ किया कि मुग़ीरा ने मुझ पर बहुत भारी टैक्स लगा रखा है, जो मैं अदा नहीं कर पाऊंगा।

आप ने पूछा, कितनी रक़म अदा करनी पड़ती है?

उस ने जवाब दिया कि क़रीब सात आना रोज़।

हज़रत उमर को हैरत हुई, फ़रमाया कि तुम्हारे पेशों को देखते हुए यह रक़म कुछ ज़्यादा नहीं है, इसलिए मैं दख़ल नहीं दे सकता।

उस वक़्त तो वह ख़ामोश होकर चला गया, लेकिन दूसरे दिन सुबह की नमाज़ के वक़्त ख़ंजर ले कर मस्जिद के एक कोने में आ छिपा। सफ़ें ठीक कर हज़रत उमर ने रोज़ की तरह नमाज़ पढ़ानी शुरू ही की थी कि उस ज़ालिम ने छिप कर हज़रत उमर रज़ि० पर लगातार छः वार किये। जब नाफ़ के नीचे गहरा घाव आ गया तो उस हिम्मती ख़लीफ़ा ने हज़रत अब्दुर्रहमान बिन औफ़ का हाथ पकड़ कर अपनी जगह खड़ा कर दिया और ख़ुद ज़मीन पर गिर पड़े। क़ातिल ने इसी बीच और भी कई लोगों को घायल कर दिया और आख़िर में अपने आप को भी मार दिया।

नमाज़ ख़त्म हुई, हज़रत उमर रज़ि० की फ़ौरन मरहम पट्टी की गयी, दवा दी गयी। घाव बहुत गहरा था इसलिए वह बहुत तेज़ी से निढाल होते गये। लोगों को जब महसूस हुआ की मामला नाज़ुक हो गया है, उन्होंने मश्विरा किया, अपना जानशीन मुक़र्रर फ़रमा दीजिए।

पहले तो हज़रत उमर रज़ि० ने हज़रत आइशा रज़ि० से इजाज़त मंगवायी कि उन्हें प्यारे नबी सल्ल० के पहलू में दफ़न किया जाए। इजाज़त मिल गयी। फिर आप ने जानशीन के चुनाव पर ध्यान दिया। आपने बहुत सोचा, पर किसी एक पर इत्मीनान न हुआ। बहुत सोच-विचार के बाद छः आदमियों—हज़रत अली, उस्मान, ज़ुबैर, तल्हा, साद बिन वक़्क़ास और अब्दुर्रहमान बिन औफ़ का नाम लिया कि इन में से जिस के बारे में ज़्यादा लोगों की राय बने, उसे ख़लीफ़ा मुक़र्रर कर लिया जाए।

मुल्क व मिल्लत की तड़प आप को आख़िरी वक़्त भी बे-चैन कर रही थी चुनांचे फ़रमाया, ख़लीफ़ा का फ़र्ज़ होगा कि वह मुहाजिर, अंसार, अरब के जो दूसरे लोग और वे अरब जो दूसरे मुल्कों में आबाद हैं और ईसाई यानी ग़ैर-मुस्लिम जनता को ध्यान में रखे और हर तरह उनके माल व जान की हिफ़ाज़त करे।

इन तमाम नसीहतों से फ़ारिग़ हो कर आप ने फिर अपने बेटे अब्दुल्लाह को याद फ़रमाया और उन्हें कुछ वसीयत की। फिर वह इंतिक़ाल फ़रमा गये।

इन्ना लिल्लाहि व इन्ना इलैहि रजिऊन०

फिर हज़रत उस्मान, तल्हा, साद बिन वक़्क़ास, अब्दुर्रहमान बिन औफ़ और हज़रत अली ने आप को क़ब्र में उतारा, आप की आरामगाह

प्यारे नबी सल्ल० के पहलू में है।

इस दौर की ख़ास बातें

हज़रत उमर रज़ि० के दौर में इस्लाम बहुत दूर-दूर तक फैल चुका था। आप की वफ़ात के वक़्त राज्य का कुल रक़बा (क्षेत्रफल) २२५१०३० वर्गमील था।

आपके दौर में हुकूमत सही मानी में जमहूरियत (लोकतंत्र) पर चल रही थी। आम जनता को भी इन्तिज़ामी बातों में दख़ल देने का हक़ था, यहां तक कि गवर्नर भी लोगों के मशिवरे से रखे जाते। चुनांचे जब अबूमूसा अश्अरी, गवर्नर बसरा के ख़िलाफ़ लोगों ने शिकायतें कीं तो उनकी जांच एक कमीशन के ज़रिए करायी गयी।

एक बार का ज़िक्र है कि एक आदमी मदीना की गलियों में बुलंद आवाज़ से कह रहा था की क्या अमीरुल मोमिनीन की बख़्शिश सिर्फ़ इस लिए हो जाएगी कि उन्होंने गवर्नरों को मुक़र्रर करने के कुछ उसूल बना दिये हैं? क्या उनको मालूम है कि अयाज़ बिन ग़नम बहुत बारीक कपड़े पहनते है और दरवाज़े पर दरबान मुक़र्रर कर रखे हैं, ताकि ग़रीब लोग उन तक न पहुंच पाएं और उन्हें हर वक़्त फ़रियादी आकर तंग न करते रहें। हज़रत उमर ने जब सुना तो फ़ौरन जांच का हुक्म दे दिया। जांच के बाद जब पता चला कि बात सही है तो उसी वक़्त उन्हें मुनासिब सज़ा सुना दी।

हज़रत साद, जो गवर्नर थे, उन की ड्योढ़ी के गिराने को सभी जानते हैं, वह भी इस जांच का ही नतीजा था।

इसी तरह हर-हर शोबे (विभाग) में, चाहे वह इन्तिज़ाम का हो या इन्साफ़ का, माल का हो या खेती-बाड़ी का, पुलिस का हो या फ़ौज का, हर जगह हज़रत उमर ने सुधार करके पब्लिक के लिए बेहतर बना दिया था।

जन-सेवा तो आप की मशहूर ही है। इस मामले में मुस्लिम-ग़ैर मुस्लिम का भेद-भाव आप ने नहीं किया। एक बार हज़रत उमर रज़ि० शाम से लौट रहे थे, देखा कि कुछ आदमी धूप में खड़े हैं। आपको ताज्जुब हुआ, पूछा इसकी वजह क्या है? आप को बतलाया गया कि

ये लोग जज़िया नहीं देते। आप ने न देने की वजह पूछी। बतलाया गया, वजह सिर्फ़ ग़रीबी है। आप भड़क उठे, कहा, इनको फ़ौरन रिहा कर दो और याद रखो कि आगे कभी ऐसी हरकत न करना।

एक बार एक ईसाई ने प्यारे रसूल को गाली दी। ग़ुरफ़ा उस वक़्त मौजूद थे. वह सुनकर बहुत ख़फ़ा हुए और ईसाई के मुंह पर एक थप्पड़ ज़ोर से मारा कि वह बेहोश हो गया। आप को पता चला तो आप ने बहुत सख्त तंबीह की।

हज़रत उमर रज़ि० का अपना ग़ुलाम ईसाई था, जिसका नाम वस्तुक़ था। आप उसको नसीहतें करते, मगर जब उसने इस्लाम क़ुबूल करने से बिल्कुल इंकार कर दिया, तो आप ने फ़रमाया, मैंने अपना फ़र्ज़ अदा कर दिया, अब तुम्हारी मर्ज़ी है, इस्लाम मानो या न मानो, धर्म में कोई ज़बरदस्ती तो होती नहीं।

दूसरों की ख़िदमत और हमदर्दी में हज़रत उमर किस तरह अपना चैन हराम कर चुके थे, इसका अंदाज़ा इससे कीजिए—

एक बार आप शाम देश से वापस आ रहे थे कि रास्ते में एक ख़ेमा देखा। इजाज़त लेकर ख़ेमा के अन्दर गये और एक औरत से पूछा कि उमर का क्या हाल है? उसने जवाब दिया, वह शाम से रवाना हो चुका है, मगर ख़ुदा उसे बर्बाद करे कि उसने आज तक मुझे एक पैसा भी नहीं दिया और इस वक़्त मैं सख्त परेशान हूं। आप ने फ़रमाया कि इतनी दूर का हाल उसे किस तरह मालूम हो सकता है? यह सुन कर वह औरत बोली कि अगर वह अपनी जनता के हाल की ख़बर नहीं रखता, तो उसे ख़लीफ़ा बनने का क्यों शौक़ है? आप पर इस वाक़िए का इतना असर हुआ कि देर तक रोते रहे, फिर उस का वज़ीफ़ा मुक़र्रर कर दिया।

एक बार एक क़ाफ़िला मदीने में आया और शहर के बाहर ठहरा। हज़रत उमर रज़ि० रात को पहरा देने वहां गये, तो क्या सुन रहे हैं कि एक ख़ेमे में एक बच्चा बे-अख़्तियार रो रहा है। आप ने आगे बढ़ कर उस के रोने का हाल मालूम किया, तो उसकी मां ने कहा कि अमीरुल मोमिनीन का हुक्म है कि जब तक बच्चा दूध न छोड़े, उस का वज़ीफ़ा मुक़र्रर न किया जाए, इसलिए मैं उसका दूध छुड़ाना चाहती हूं और वह ज़िद करता है। आप बहुत शर्मिंदा हुए और हुक्म दे दिया कि आगे जब बच्चा पैदा हो उसी वक़्त से उसका वज़ीफ़ा मुक़र्रर किया जाए।

एक रात मदीने से तीन मील के फ़ासले पर आपने देखा कि एक

औरत कुछ पका रही है और बच्चे रो रहे हैं। मालूम करने पर पता चला कि उनके पास खाने को कुछ नहीं है और सिर्फ़ पानी उबाल कर वह उनको तसल्ली दे रही है। आप यह वाक़िया देख कर बहुत दुखी हुए, मदीना वापस आये, ज़रूरत के सामान अपनी पीठ पर लाद कर उसी वक़्त उस जगह वापस आये, आग तेज करके खुद खाना पकाया और बच्चों को खिलाया। जब बच्चे खा चुके, तब जाकर आपको इत्मीनान हुआ। औरत ने तो इतना असर लिया कि फ़ौरन बोल पड़ी, खुदा की क़सम ! तुम अमीरुल मोमिनीन बनने लायक़ हो।

एक औरत दर्दे ज़ेह (प्रसव-पीणा) से बे-क़रार थी। आपने अपनी बीवी उम्मे कुल्सूम को साथ लाकर उसकी सेवा में लगा दिया, खुद बाहर उस औरत के शौहर के पास बैठे रहे। थोड़ी देर के बाद उम्मे कुल्सूम बाहर निकलीं और कहा, अमीरुल मोमिनीन ! अपने दोस्त को लड़का पैदा होने पर मुबारकबाद दें। वह आदमी अमीरुल मोमिनीन सुनकर चौंक पड़ा, मगर आप ने उसकी तसल्ली की, और कहा कि कल बच्चे का नाम-पता लिखा देना ताकि उसका वज़ीफ़ा मुक़र्रर हो जाए।

आम तौर पर अमीरुल मोमिनीन का खाना जौ की रोटी और जैतून का तेल था। कभी-कभी मांस, दूध, तरकारी वग़ैरह भी दस्तरखान पर आ जाते। मामूली क़मीज़ और तहबंद पहने रहते, सर पर अक्सर एक क़िस्म की टोपी होती थी।

आप का रंग गेहुंवा था, क़द बहुत लम्बा था, गालों पर गोश्त बहुत कम था। घनी दाढ़ी और बड़ी-बड़ी मूंछें थीं। सर के अगले हिस्से के बाल उड़ गये थे।

तीसरे ख़लीफ़ा हज़रत उस्मान रज़ि०

नाम उस्मान बिन अफ़्फ़ान, उर्फ़ अबू अम्र, अबू अब्दुल्लाह था। इस्लाम से पहले आप अबू अम्र के नाम से मशहूर थे, मुसलमान होने के बाद हज़रत रुक़ैया से आप के यहां हज़रत अब्दुल्लाह पैदा हुए, तो आप अबू अब्दुल्लाह के नाम से मशहूर हुए। हज़रत उस्मान रज़ि० आंहज़रत सल्लल्लाहु अलहि व सल्लम की फुफेरी बहन के बेटे थे।

कुछ ख़ूबियां

आप की हया बहुत मशहूर थी। हज़रत ज़ैद बिन साबित का क़ौल है कि आंहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया है कि उस्मान मेरे पास से गुज़रे तो मुझसे एक फ़रिश्ते ने कहा कि मुझे इनसे शर्म आती है, क्योंकि क़ौम इनको क़त्ल कर देगी। आंहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इर्शाद फ़रमाया है कि जिस तरह उस्मान ख़ुदा और उसके रसूल से हया करते हैं, फ़रिश्ते उनसे हया करते हैं। हज़रत इमाम हसन रज़ि० से हज़रत उस्मान रज़ि० का ज़िक्र आया तो उन्होंने फ़रमाया कि अगर कभी हज़रत उस्मान नहाना चाहते, तो दरवाज़े को बन्द करके कपड़े उतारने में इस क़दर शर्माते कि पीठ सीधी न कर सकते थे।

आप ने हब्शा की भी और मदीना की भी दोनों हिजरतें कीं। आप शक्ल व सूरत में हज़रत मुहम्मद सल्ल० से मिलते-जुलते थे।

पहले आप की शादी प्यारे नबी सल्ल० की बेटी रुक़ैया से हुई थी, वह बद्र की लड़ाई के दिन इन्तिक़ाल फ़रमा गयीं, तो आंहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने अपनी दूसरी बेटी हज़रत उम्मे कुलसूम रज़ि० की शादी आप से कर दी। इसीलिए आप को ज़िन्नूरैन कहा जाता है। उम्मे कुलसूम रज़ि० भी सन् ०९ हि० में इंतिक़ाल फ़रमा गयीं।

सबसे पहले इस्लाम क़ुबूल करने वालों में हज़रत उस्मान रज़ि० का नम्बर चौथा था। आप बहुत मालदार थे और इसी तरह सबसे ज़्यादा सख़ी और ख़ुदा की राह में ख़र्च करने वाले भी थे।

आप इबादत ज़्यादा से ज़्यादा करते थे। रात भर खड़े होकर नमाज़ पढ़ते, और बर्षों रोज़े रखते थे।

हज़रत अबूबक्र रज़ि० और हज़रत उमर रज़ि० के ज़माने में आप का ख़ास एहतराम किया जाता था। और आप उन बड़े लोगों में से थे, जिनसे मश्विरा लेना ज़रूरी था।

आप के मिज़ाज में बड़ी सादगी था। दौलत की रेल-पेल के बावजूद कपड़े सादा पहनते, खाना सादा खाते। उनको तो यह भी पसन्द न था कि उनकी बीवी क़ीमती कपड़े पहनें।

ख़लीफ़ा का चुनाव

अगर हज़रत उमर रज़ि० को अपना जानशीन मुक़र्रर करने की मोहलत मिली होती तो वह ज़रूर इस काम को अच्छी तरह अंजाम दे लेते, लेकिन ऐसा शायद अल्लाह को मंज़ूर न था, उन्हें मोहलत न मिल सकी, अल-बत्ता उन्हों ने एक कमेटी बना दी कि इनमें से जिस पर ज़्यादा लोगों की राय बने, उसे ख़लीफ़ा बना लिया जाए।

ख़लीफ़ा उमर रज़ि० की वफ़ात के बाद पांच आदमियों की यह कमेटी हज़रत आइशा रज़ि० के मिले हुए कमरे में जमा हुई।

अब्दुर्रहमान ने इसके फ़ैसले के लिए और मश्विरे के लिए लोगों के घर जा-जा कर रातें बसर कीं। हज के मौक़े पर लोग गये थे, वे अभी वापस न हुए थे, उनसे मश्विरा तलब किया। सब की राय उस्मान रज़ि० के हक़ में थी।

तीसरे दिन अबू तलहा ने कहा कि अब ज़्यादा सोच-विचार बेकार है और अमीरुल मोमिनीन की वसीयत के मुताबिक़ मैं और ज़्यादा मोहलत न दूंगा। इसके बाद सलाह व मश्विरे में तेज़ी शुरू हो गयी और आख़िर में हज़रत उस्मान रज़ि० ख़लीफ़ा चुन लिये गये।

हज़रत उस्मान रज़ि० के चुनाव के बाद एक नया गुल खिला कि किसी आदमी ने उबैदुल्लाह बिन उमर रज़ि० को इत्तिला दी कि उनके बाप के क़त्ल से पहले अबूलूलू यानी फ़ीरोज़ क़ातिल को उसने ईरानी शाहज़ादा हरमुज़ान और साद के ईसाई गुलाम के साथ बातें करते देखा था। उस आदमी ने उबैदुल्लाह बिन उमर के दिमाग़ में यह बात डाल दी कि उनके बाप साज़िश का शिकार हुए हैं। उबैदुल्लाह यह सुन कर भड़क उठे और बिना किसी जांच-पड़ताल के गुलाम और ईरानी शह-ज़ादा को क़त्ल कर डाला। लोग इसी हालत में उबैदुल्लाह को अमीरुल मोमिनीन के हुज़ूर में ले गये। गवाही का सवाल ही न उठता था, क्योंकि मुल्ज़िम को इक़बाले जुर्म था। साज़िश की कोई गवाही पेश न की जा सकी। फ़ैसला करने में इख़्तिलाफ़ शुरू हो गया। किसी ने क़त्ल की सज़ा तज्वीज़ की, किसी ने जुर्माने की, हज़रत उस्मान ने जुर्माने की सज़ा सुना दी, लोग इस पर भड़क उठे।

हज़रत उस्मान रज़ि० ने तमाम बड़े-बड़े ओहदेदारों और गवर्नरों की तनख्वाह में एक सौ दिरहम बढ़ा दिया । वे इससे तो खुश हो गये, मगर मुल्की ख़ज़ाने पर एक ऐसा बोझ पड़ गया, जिसको जनता ने पसंद न किया ।

बग़ावत दबा दी गयी

हज़रत उमर रज़ि० की वफ़ात के बाद मुल्क में एक ज़बरदस्त साज़िश बे-निक़ाब हुई । बादशाह ईरान के सिपाहियों ने जगह-जगह एक उपद्रव खड़ा कर दिया ।

तमाम मुसलमान इस साज़िश से परेशान हो उठे । इब्ने अम्र गवर्नर बसरा, इस बग़ावत का दमन करने पर मुक़र्रर किये गये, उन्हों ने देखते-देखते ईरान की सीमा पर पहुंच कर उपद्रव की बढ़ती लहर को दबा कर रख दिया ।

फिर उत्तर-पूरब की तरफ़ बढ़कर उन्होंने कुछ और नये इलाक़े जीत लिए और मुसलमानों का रोब एक बार फिर पूरे मुल्क पर क़ायम हो गया ।

इसके बावजूद कभी-कभी कोई न कोई क़ौम उनके मुक़ाबले के लिए उठ खड़ी होती । तुर्कों और क़ौमे हज़र ने लगातार मुसलमानों का नुक़्सान करके मुल्क में बद-अमनी फैला दी थी । हज़रत उस्मान ने इनका सर कुचलने के लिए एक बड़ी फ़ौज तैयार कराकर उनके मुक़ाबले के लिए भेजा । घमासान की लड़ाइयां हुईं, परेशानियां और कठिनाइयां भी पैदा हुईं, लेकिन ख़लीफ़ा की तेज़ी और अक़्लमंदी से इन सब मसअलों पर क़ाबू पा लिया गया ।

इधर क़ैसर रूम ताक में बैठा था कि किसी तरह शाम देश को वह मुसलमानों से छीन ले । हज़रत उस्मान के ख़लीफ़ा बनने के दूसरे साल ही रूमी फ़ौजें एशिया माइनर की तरफ़ से शाम में आ गयीं । हज़रत उस्मान ने मुक़ाबले का इंतिज़ाम किया, नतीजे में क़ैसर को मुंह की खानी पड़ी ।

शुरू के छः साल

इधर चूंकि बार-बार क़ैसर शाम पर चढ़ाई कर रहा था, इसलिए अमीर मुआविया ने दरबारे खिलाफ़त में इजाज़त चाही कि उन्हें साइप्रेस पर हमला करने दिया जाए। एक ही हमले में जज़ीरा (द्वीप) जीत लिया गया।

इसी तरह रूमियों की कमर के टूटने और बार-बार हार जाने के बावजूद वे कभी-कभी सोते में करवटें भी ले लिया करते थे। मिस्र के गवर्नर अम्र बिन आस की जगह जब अब्दुल्लाह बिन साद गवर्नर बनाये गये, तो उन्हें हिदायत दी गयी कि उत्तरी अफ्रीक़ा के हलक़ों में जहां से रूमी बराबर झड़पें और लड़ाइयां करते रहते हैं, जाएं, और ज़रूरत पड़े तो उनसे लड़ाई करके उन्हें बिल्कुल इस इलाक़े से निकाल दें। फिर फ़ौज अब्दुल्लाह बिन साद की मदद के लिए रवाना हुई।

इस लड़ाई में अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर, अब्दुल्लाह बिन उमर और अब्दुल्लाह बिन अब्बास ने शिर्कत की। बड़ी ज़बरदस्त लड़ाई हुई, जो एक समय तक चली। आख़िर जीत मुसलमानों की हुई।

हज़रत उस्मान की खिलाफ़त के पहले छः सालों में राज्य तेज़ी से बढ़ रहा था। कई नये इलाक़ों पर मुसलमानों का क़ब्ज़ा हो गया था। हज़रत उमर रज़ि० का क़ायम किया हुआ रौब मौजूद था। जब किसी ने बग़ावत की, फ़ौरन, उस पर क़ाबू पा लिया गया। यही वह दौर था जब मुसलमानों ने समुद्री बेड़े भी तैयार कराये थे। ग़रज़ यह कि हर तरफ़ खुशहाली थी, बरकत थी, जीत थी, लेकिन अंदर ही अंदर दिलों से मुहब्बत, हमदर्दी, भाई-चारा उठता जा रहा था, जलन, एक दूसरे को नीचा दिखाने की कोशिश वग़ैरह बीमारियां बढ़ने लगी थीं।

हर क़िस्म के लोगों ने इस्लाम क़ुबूल किया था, इसमें कुछ ऐसे मुनाफ़िक़ इस्लाम के नाम पर घुस आये थे जो इस्लाम में मुसलमानों को नुक़्सान पहुंचाने के लिए ही आये थे।

बाद के छः साल

पहले छः साल के अन्दर यह आम ख्याल था कि हज़रत उस्मान

अपनी सूझ-बूझ, हिम्मत और बहादुरी में किसी तरह भी हज़रत उमर से कम नहीं हैं, लेकिन बाद के छः सालों में लोगों को बहुत ज़्यादा शिकायतें पैदा हो गयी थीं और ज़्यादातर लोग यही समझने लगे थे कि इन शिकायतों का एक ही इलाज है, वह यह कि अमीरुल मोमिनीन यानी ख़लीफ़ा को हटाया जाए।

लोगों को शिकायत पैदा हुई कि अमीरुल मोमिनीन अपने रिश्तेदारों को ऊंचे-ऊंचे ओहदे दे रहे हैं, चाहे उसके योग्य हों या नहीं।

इस बात की भी शिकायत थी कि अमीरुल मोमिनीन गवर्नरों के ख़िलाफ़ शिकायतें सुनने से इंकार करते हैं, क्योंकि वे उन के अपने क़रीबी लोग हैं।

ये और इसी तरह की दो चार शिकायतें जनता में पैदा हो गयी थीं लेकिन ग़ौर किया जाए तो इन शिकायतों में कोई जान न थी, बद-गुमानी का ज़्यादा दख़ल था।

अमीरुल मोमिनीन उस्मान की ख़िलाफ़त के आठवें साल में एक आदमी, जिस का नाम इब्ने सबा था, जो यहूदी नस्ल का यमनी था, बसरे में आया। उसकी मां हब्शिन थी। उन दिनों बसरा के गवर्नर अब्दुल्लाह बिन उमर थे। यह आदमी यहां पहुंच कर मुसलमान हो गया। कहा जाता है कि वह मुनाफ़िक़ था और उस का इस्लाम क़ुबूल करना सिर्फ़ एक बहाना था।

शुरू में उसने अपना ध्यान गवर्नर के ख़िलाफ़ प्रचार करने में लगाये रखा। वह एक तीर से दो शिकार करना चाहता था। उस का ख़्याल था कि इस से एक तो गवर्नर के ख़िलाफ़ बेचैनी बढ़ेगी और दूसरे ख़लीफ़ा के ख़िलाफ़ लोगों में सुन-गुन शुरू हो जाएगी कि क्यों उन्होंने ऐसे ना-क़ाबिल, और बुरे गवर्नर मुक़र्रर किये।

जब गवर्नर बसरा को उसकी साज़िश का पता चला तो उसने हुक्म दिया कि इसे बसरा से निकाल दिया जाए। यहां से निकल कर वह कुछ दिनों कूफ़ा, शाम, और मिस्र में घूमता फिरा। अगर्चे वह हर जगह से जहां कहीं गया, निकाला ही गया, फिर भी फूट और साज़िश का बीज हर जगह बोने में वह कामियाब हुआ। सिर्फ़ शाम ही एक ऐसी स्टेट थी, जहां उसका प्रचार कामियाब न हो सका, इस लिए कि अमीर मुआविया की सूझ-बूझ उसकी साज़िश से बढ़-चढ़ कर थी।

इब्ने सबा की साज़िश

इब्ने सबा की मां हब्शी नस्ल की थी, इसलिए लोग उसे इब्ने सौदा कहा करते थे। जब यह आदमी शाम में था तो उसने एक सीधे-सादे सहाबी हज़रत अबूज़र ग़िफ़ारी को अपनी शरारतों का निशाना बनाना चाहा। अबूज़र रज़ि० बहुत ही नेक आदमी थे, मगर दुनिया और दुनिया के उसूलों को बिल्कुल नहीं जानते थे। न जाने उन के दिमाग़ में यह बात कैसे आ गयी थी कि मुसलमान के लिए माल जमा करना सुन्नत व शरीअत के ख़िलाफ़ है, वह हमेशा यही कहा करते कि मुसलमान को जो माल ज़रूरत से ज़्यादा बचे, उसे ग़रीबों में बांट देना चाहिए।

इब्ने सौदा ने इन से मुलाक़ात की, कहा, देखिए अमीर मुआविया गवर्नर शाम बैतुल माल को अल्लाह का माल कहता है, हालांकि हर चीज़ अल्लाह की है तो फिर उस माल को अल्लाह का माल कहने का क्या मत-लब? इसका मक़सद सिर्फ़ यह है कि वह ख़ुद बैतुल माल को हज़म कर जाए वह अल्लाह के नाम पर ग़रीबों को धोखा दे रहा है। अबूज़र के दिमाग़ में पहले ही यह बात समायी हुई थी कि मुसलमान के लिए माल जमा करना गुनाह है, इस लिए वह उस की चालों के आसानी से शिकार हो गये।

जब अमीर मुआविया को इसका इल्म हुआ कि इब्ने सौदा की चालों का असर लेकर अबूज़र मुसलमानों में नफ़रत फैला रहे हैं तो उन्होंने अबू-ज़र को समझाया कि आप ऐसी बातें छोड़ दें, क्योंकि इन के बुरे नतीजे ही निकलते हैं। फिर भी अबूज़र अपनी बात पर जमे रहे।

इसी तरह इब्ने सौदा बराबर अपने काम में लगा रहा और दूसरे सहाबियों के पास पहुंच कर उनको उकसाना शुरू किया। मगर ये अबूज़र की तरह सादा तबियत नहीं थे। हर मामले को ख़ूब समझते थे। वे फ़ौरन ताड़ गये कि इब्ने सौदा मुसलमानों में फूट के बीज डाल रहा है। उबादा बिन उसामा अमीर मुआविया के पास पहुंचे और इस आदमी की शरारतों का ज़िक्र करते हुए गवर्नर को मश्विरा दिया कि वह उसे शाम से निकाल दें। इस पर गवर्नर ने उस को शाम से निकल जाने का हुक्म दे दिया।

इब्ने सौदा तो चला गया लेकिन अबूज़र अपनी बात पर जमे रहे। गवर्नर ने ख़लीफ़ा को रिपोर्ट कर दी। ख़लीफ़ा ने उन्हें बुलाया, समझाया,

लेकिन जब वह न माने तो उन्हें, फ़ित्ने फैलने न पायें, इससे बचने के लिए शाम के बजाए रेबा चले आने का हुक्म दिया गया और वहीं दो साल बाद इंतिक़ाल फ़रमा गये।

अगरचे हज़रत अबूज़र ने तमाम उम्र कोई ऐसा काम न किया जो क़ानून और शरीअत के खिलाफ़ हो, मगर उन लोगों ने, जो इन बातों से नाजायज़ फ़ायदा उठाना चाहते थे, इस का खूब प्रचार किया कि एक सहाबी को देश निकाला दे दिया गया है।

इब्ने सौदा मिस्र पहुंचा तो उस का प्रोपगन्डा और तेज़ हो गया। अब तो वह हज़रत उस्मान के खिलाफ़ ज़हर उगलने लगा था। हर तरीक़े से लोगों को भड़काता, मामूली-मामूली बातों को ऐसा रंग देकर बयान करता कि हुकूमत के खिलाफ़ लोग भड़क उठे।

बाद में इब्ने सबा और उसके ऐजेंटों ने तो यही पेशा ही अख्तियार कर लिया कि प्रोपगंडे करके पूरे देश में बे-चैनी का माहौल पैदा कर दें। इस तरह दिन और रातें गुज़रती गयीं, जब इन की गिनती की गयी तो मालूम हुआ कि चार साल की लम्बी मुद्दत गुज़र चुकी है। और इन बाग़ि-यों और फ़ित्ना फैलाने वालों ने एक भयानक सूरत पैदा करदी है, बस खुल्लम खुल्ला बग़ावत की देर है।

प्रोपगंडा करने में इब्ने सबा ने एक नयी चाल यह चली कि गव-र्नरों को बदनाम करने के लिए दूसरे राज्यों में प्रचार किया जाए यानी यह कि कूफ़ा के गवर्नर को बदनाम करने के लिए शाम में प्रोपगंडा किया जाए और शाम के गवर्नर को दूसरे राज्य में। इसमें यह भेद है कि अगर किसी गवर्नर को उस के इलाक़े में बदनाम किया गया तो लोग फ़ौरन कह उठेंगे कि यह ग़लत प्रोपगंडा है, लेकिन अगर दूर के राज्यों में बदनाम किया जाए, तो चूंकि असल हालत मालूम ही न हो सकेगी, इस लिए बद-गुमानी जड़ पकड़ने लगेगी।

इस नये तरीक़े में वे ज़्यादा कामियाब रहे। हर चारों तरफ़ से मदीना में खत आने लगे कि फ़्लां गवर्नर ऐसा है, फ़्लां वैसा है। हज़रत उस्मान ने फ़ौरन पूरे मुल्क में जांच का हुक्म दे दिया और अलग-अलग लोगों को जांच कराने का हुक्म दिया।

सबने पूरी ईमानदारी और इंसाफ़ के साथ जांच की, हर जगह यही मालूम हुआ कि किसी को कोई शिकायत नहीं है, लोग मुत्मइन और खुश-हाल हैं, सिर्फ़ मिस्र की रिपोर्ट साज़िश का शिकार हो गयी।

ख़लीफ़ा ने सर्क्युलर के ज़रिए भी हालात मालूम किये, आपने हज के मौक़े पर लोगों के मिलने की आम इजाज़त दे दी कि वे आकर शिकायतें करें, ताकि उन्हें दूर किया जा सके। गवर्नरों की मीटिंग बुला ली। इब्ने सबा की शरारतों का भी ज़िक्र आया लेकिन हज़रत उस्मान की नर्मी ने उस पर बहुत ज़्यादा सख़्ती करने की इजाज़त नहीं दी।

इब्ने सौदा को ख़ूब मालूम था कि हज के मौक़े पर गवर्नरों की कांफ्रेंस हो रही है, तमाम गवर्नर और बड़े ओहदेदार अपने इलाक़ों से ग़ायब हैं, इस लिए उस ने इस मौके से ख़ूब फ़ायदा उठाने की ठान ली। उसने तै किया कि फ़्लां दिन बाक़ी ओहदेदारों पर हर जगह हमला कर के उन्हें क़त्ल कर दिया जाए और हज़रत उस्मान के ख़िलाफ़ एक आम बग़ा-वत पैदा कर दी जाए।

दूसरी जगह तो साजिश कामियाब न हो सकी, मगर कूफ़ा में जो शरारतों का हेड क्वार्टर था, एक जल्सा हुआ और यज़ीद बिन क़ैस ने मिंबर पर चढ़ कर कहा कि अब हज़रत उस्मान को ख़िलाफ़त से अलग कर देना चाहिए। क़ाक़ाअ बिन उमर जो छावनी के अफ़सर थे, अपने सिपाहियों के साथ वहां आ पहुंचे और यज़ीद बिन क़ैस को गिरफ़्तार करना चाहा, तो वह रोने लगा और कहा कि मेरे दिल में तो मुसलमानों की भलाई के सिवा और कुछ है नहीं, मैं तो सिर्फ़ अमीरुल मोमिनीन का ध्यान इस ओर खींचना चाहता हूं कि गवर्नर ज़ुल्म कर रहा है। क़ाक़ाअ ने तंबीह कर-कराकर उसे छोड़ दिया।

ज़ाहिर में तो वे लोग ख़ामोश हो गये, लेकिन दिल में तै कर लिया कि अब अपनी मुहिम और तेज़ करनी है।

इस के बाद इन शरारत पसन्दों ने पूरे मुल्क के शरारत पसंदों को इत्तिला भिजवायी कि मदीना पहुंचो ताकि वहां हज़रत उस्मान से मांग की जाए कि ज़ालिम गवर्नर हटाये जाएं।

हज़रत उस्मान को इसकी इत्तिला मिली तो उन्हों ने कुछ लोगों को लगा दिया कि यह देखें ये लोग चाहते क्या हैं? बातों-बातों में उन लोगों ने मालूम कर लिया कि इन लोगों का मक़्सद सिर्फ़ हज़रत उस्मान को बद-नाम करना है। मदीना से वापस जा कर फिर ये जनता को बताएंगे कि हम ने हर मुम्किन तरीक़े से हालात सुधारने की कोशिश की मगर अब अमीरुल मोमिनीन ज़िद पर अड़े हुए हैं, हम फिर भारी तायदाद में मदीना आकर अमीरुल मोमिनीन से मांग करेंगे, कि वह ख़िलाफ़त से अलग हो

जाएं। अगर उन्हों ने हमारी बात मान ली तो बेहतर, वरना हमें उन्हें क़त्ल कर देने में भी कोई झिझक न होगी।

हज़रत उस्मान को पूरी ख़बर दी गयी। हज़रत उस्मान ने एक आम जलसा बुलाया, उस में तमाम सहाबी जमा हुए, उन लोगों के सामने पूरी रिपोर्ट रखी गयी। सबकी यही राय थी, इन शरारत पसंदों को क़त्ल कर दो। अगर हज़रत उस्मान रज़ि० उन लोगों की बात पर अमल कर लेते तो शायद बाद के फ़ित्ने न पैदा होते, लेकिन उन की नर्मी तो सभी जानते थे, कहा, एक बार फिर हम इन को माफ़ कर देंगे और हर तरह कोशिश करेंगे कि वे अपने मंसूबे से रुक जाएं।

इसके बाद अमीरुल मोमिनीन मिंबर पर चढ़े और उन दंगाइयों के इल्ज़ामों का जवाब दिया और सफ़ाई पेश कर दी। लोग पूरी तरह मुत्मइन हो गये और खुले आम कहा कि ये सब इल्ज़ाम बेहूदा हैं और शरारत की वजह से बनाये गये हैं।

इधर हज़रत उस्मान का यह हाल था, उधर शरारत पसन्द इसे अपनी कामियाबी समझ रहे थे। उन्होंने इरादा किया कि इस बार वे हज़रत उस्मान को वह मज़ा चखाएंगे कि माफ़ करना ही भूल जाएंगे।

ग़रज़ फिर गिरोहों में जमा हो इन्हों ने शहर मदीना को घेर लिया और हज़रत उस्मान से सख़्ती से मांग की कि वह ख़िलाफ़त से अलग हो जाएं। उनकी यह पूरी मांग बे-दलील थी। हज़रत उस्मान ने इस मांग के आगे सर झुकाने से इंकार कर दिया।

फिर इन बलवाइयों ने हज़रत उस्मान रज़ि० का मकान घेर लिया, मकान में घुस गये। हज़रत उस्मान रज़ि० अपने कमरे में क़ुरआन पाक की तिलावत फ़रमा रहे थे, तिलावत करते ही में उन को एक ज़ालिम ने आगे बढ़ कर शहीद कर दिया।

इन्नालिल्लाहि व इन्ना इलैहि राजिऊन०

ग़रज़ यह कि १८ ज़िलहिज्जा सन् ३५ हिजरी मुताबिक़ १७ जून ६५६ ई० को बयासी साल की उम्र में १२ साल ख़िलाफ़त करते हुए यह पाक हस्ती ज़ालिमों के हाथों से अपने रब की तरफ़ रुजू कर गयी।

———

चौथे ख़लीफ़ा हज़रत अली रज़ि०

नाम अली बिन अबू तालिब था। हज़रत मुहम्मद सल्ल० ने आप को अबुल हसन और अबू तुराब की उर्फ़ियत से ख़िताब फ़रमाया। आपकी वालिदा का नाम फ़ातिमा बिन्ते असद बिन हाशिम था।

हज़रत अली करमल्लाहु वज्हहू आंहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के चचेरे भाई थे और दामाद भी। आप का क़द दर्मियानी था, बदन दोहरा था, सर के बाल किसी क़दर उड़े हुए, बाक़ी पूरे जिस्म पर बाल, लम्बी और घनी दाढ़ी, गेहुवां रंग था।

हज़रत अली रज़ि० सब से पहले इस्लाम लाने वालों में से थे। आप उन लोगों में से हैं, जिन्होंने क़ुरआन मजीद को जमा कर के हज़रत मुहम्मद सल्ल० की ख़िदमत में पेश किया था। आप बनी हाशिम में सब से पहले ख़लीफ़ा थे।

हज़रत मुहम्मद सल्ल० ने जब मक्का से मदीने को हिजरत की तो आप को मक्का में इस लिए छोड़ गये कि तमाम अमानतें लोगों को पहुंचा दें, प्यारे नबी सल्ल० के इस हुक्म को पूरा करने के बाद आप भी हिजरत कर के मदीना पहुंच गये, सिवाए तबूक की लड़ाई के आप तमाम लड़ाइयों में आंहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के साथ शरीक हुए। तबूक की लड़ाई को जाते वक़्त आप को हज़रत मुहम्मद सल्ल० मदीने का आमिल यानी अपना नायब बना गए थे। उहुद की लड़ाई में हज़रत अली करमल्लाहु वज्हहू के मुबारक जिस्म पर सोलह घाव आए थे। ख़ैबर की लड़ाई में आंहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने झंडा आप के हाथ में दिया था और पहले से फ़रमा दिया था कि ख़ैबर आप के हाथ पर जीता जाएगा।

आप को अपना नाम अबू तुराब बहुत पसन्द था। जब कोई शख़्स इस नाम से आप को पुकारता था, तो आप बहुत ख़ुश होते थे। इस नाम के पड़ने की वजह यह है कि एक दिन आप घर से निकल कर मस्जिद में आए और वहीं पड़ कर सो गये, आंहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम मस्जिद में तशरीफ़ लाए और हज़रत अली रज़ि० को उठाया तो जिस्म से मिट्टी पोंछते जाते थे और फ़रमाते जाते थे कि अबू तुराब उठो।

एक बार हज़रत मुहम्मद सल्ल० ने फ़रमाया कि जिस का मैं दोस्त हूं, उस के अली रज़ि० भी दोस्त हैं, फिर फ़रमाया कि इलाही ! जो शख्स अली रज़ि० से मुहब्बत रखे तू भी उससे मुहब्बत रख और जो अली रज़ि० से दुश्मनी रखे, तू भी उस से दुश्मनी रख।

हज़रत उस्मान रज़ि० की शहादत के बाद

अमीरुल मोमिनीन हज़रत उस्मान रज़ि० के क़त्ल के बाद मदीने पर भय छा गया। कोई सोच भी नहीं सकता था कि ये ज़ालिम इतनी बेदर्दी और ज़ुल्म का खेल खेलेंगे। वे लोग जिन्हों ने जुर्म किया था, वे अब शर्मिंदा थे।

हज़रत उस्मान के अज़ीज़-रिश्तेदार मायूस हो कर मक्का चले गये। एक आदमी हज़रत उस्मान की बीवी की कटी हुई उंगलियों को, जो बलवाइयों ने बचाते वक़्त काट दी थीं, उस्मान के खून में रंगे हुए कुरते में लपेट कर दमिश्क़ जा पहुंचा और उन्हें अमीर मुआविया के सामने पेश कर के खूब रोया और मदद चाही।

पांच दिन तक मदीना में बलवाइयों का तूफ़ान मचा रहा, छठे दिन बलवाइयों ने मांग की कि किसी को खलीफ़ा चुना जाए। हज़रत अली रज़ि० पर भी डर छाया हुआ था। उन्हों ने हज़रत तल्हा या हज़रत ज़ुबैर रज़ि० की बैअत पर अपनी रज़ामन्दी ज़ाहिर कर दी, मगर बाद में दोस्तों और साथियों के कहने पर खलीफ़ा बनना मंज़ूर कर लिया।

फिर बाग़ी मदीना से चले गये।

इन बाग़ियों के चले जाने के बाद लोगों ने चीख व पुकार से आसमान सर पर उठा लिया, हर तरफ़ चीख व पुकार होने लगी। पूरी क़ौम ने मिल कर फ़ैसला किया था कि अमीरुलमोमिनीन के क़ातिलों से क़त्ल का बदला लिया जाए। हज़रत तल्हा व ज़ुबैर रज़ि० ने हज़रत अली पर बहुत ज़ोर डाला, मगर हज़रत अली यह फ़रमाते, मैं तुम्हारी बात सही समझता हूं, मगर बेबस और मजबूर हूं, बाग़ी हमारे क़ब्ज़े और अख्तियार से बाहर हैं, कुछ इंतिज़ार करो, खुदा हमारी रहनुमाई करेगा।

मगर उस वक़्त इस बदला लेने की तज्वीज़ पर फ़ौरन ग़ौर कर के

कोई अमली कार्रवाई की जाती तो यह भरोसे के साथ कहा जा सकता है कि बाद के कड़वे और नागवार वाक़िए न होते।

सबसे पहला काम

सबसे पहला काम जो हज़रत अली रज़ि० ने करना चाहा, वह सूबों के गवर्नरों की तब्दीली का था। लोगों ने मश्विरा दिया कि अभी आप इस काम को न करें। जब पूरा मुल्क आप की बैअत कर ले, फिर आप यह सब क़दम उठा सकते हैं, मगर हज़रत अली इस पर तैयार न हुए। हज़रत मुआविया रज़ि० की गवर्नरी भी वह ख़त्म करना चाहते थे। हालांकि बड़ा ख़तरनाक काम था।

उन्होंने दो ख़त एक अमीर मुआविया के नाम और दूसरा अबू मूसा गवर्नर कूफ़ा के नाम रवाना किये। अबू मूसा ने अपनी इताअत का पैग़ाम अमीरुल मोमिनीन के ख़त के जवाब में भेज दिया, अमीर मुआविया ने कोई जवाब न दिया।

दमिश्क़ की मस्जिद के आंगन में अमीर मुआविया रज़ि० ने हज़रत उस्मान रज़ि० का ख़ून से भरा हुआ कुरता एक झंडे पर लटका रखा था। उन की बीवी की कटी हुई उंगलियां मस्जिद के आंगन में पड़ी थीं। इन चीज़ों को देख-देख कर लोगों की बेचैनी बढ़ रही थी, वे क़ातिलों से बदला लेना चाहते थे और बार-बार अमीरुल मोमिनीन से मांग करते थे कि क़ातिलों से फ़ौरन बदला लिया जाए।

बहरहाल वह दूत जो अमीरुल मोमिनीन का ख़त अमीर मुआविया रज़ि० के नाम लाया था, वह हर रोज़ जवाब मांगता था। आख़िर कुछ मुद्दत बीत जाने के बाद अमीर मुआविया ने एक सादा काग़ज़, जिस पर कुछ न लिखा था, लिफ़ाफ़े में बंद कर के अपने आदमी के हाथ उस दूत के साथ हज़रत अली रज़ि० की ख़िदमत में भेज दिया।

हज़रत अली को देख कर ताज्जुब हुआ। उन्हों ने दूत से जानना चाहा। दूत ने पूरी सूरत वहां की बता दी। और यह भी कि लोगों का ख़्याल है कि इस क़त्ल में आप का भी हाथ है।

हज़रत अली परेशान भी हुए और गुस्से से कांप भी रहे थे। आपने उसी हालत में फ़रमाया, 'वतन के सपूतो ! अपने हथियारों से तैयार हो

जाओ।'

चार हज़ार आदमी फ़ौरन तैयार हो गये और अमीर मुआविया के खिलाफ़ बग़ैर सोचे-समझे जंग का एलान कर दिया।

हज़रत तल्हा और हज़रत ज़ुबैर रज़ि० ने हालात का अंदाज़ा लगा कर मदीना से बाहर चले जाने की ठान ली और उमरः की ग़रज़ से मक्का चले आये।

जंगे जमल[1]

जब आइशा रज़ि० हज से वापस आ रही थीं तो रास्ते में उन्हें अमीरुल मोमिनीन हज़रत उस्मान के क़त्ल और हज़रत अली के ख़लीफ़ा चुने जाने की खबर मिली। मारे रंज के कांपने लगीं, बोलीं, यह हिम्मत ? मुझे फ़ौरन मक्का वापस ले चलो। मैं जब तक हज़रत उस्मान के क़त्ल का बदला न ले लूं मुझे सब्र न आयेगा। वह यह कहकर वापस मक्का लौट गयीं।

इसी बीच तल्हा व ज़ुबैर भी मक्का पहुंच गये और यहां उनकी ज़ुबानी क़त्ल की दास्तान सुनने वालों का तांता बंध गया। लोग इन वाक़िआत को सुनकर रोने और पीटने लगे, क़स्में खा-खाकर कहते थे कि जब तक क़ातिलों से बदला न लिया जाए, उन्हें क़रार न आयेगा। यही बातें हज़रत ज़ुबैर रज़ि० ने भी कहीं।

इन तमाम बातों को सुन कर यहां के लोग भी भड़क उठे और हज़ारों आदमी झंडे तले आ मौजूद हुए।

तै हुआ कि दंगाइयों को सज़ा देने के लिए सबसे पहले बसरा पर हमला किया जाए। तीन हज़ार आदमी अपने घरों से निकल पड़े।

हज़रत आइशा रज़ि० की मातहती में इस फ़ौज ने मक्का से कूच किया, वह एक ऊंट पर महमिल में सवार थीं। हज़रत तल्हा और ज़ुबैर रज़ि० साथ में थे।

जब यह फ़ौज एक जोहड़ 'हव्व़ब' पर पहुंची तो आइशा कुत्तों की आवाज़ सुनकर बहुत परेशान हुईं। उन्हें प्यारे नबी की पेशीनगोई याद

---

१. ऊंट की लड़ाई,

आ गयी कि 'बबूब के कुत्ते मेरी एक बीवी को भौकेंगे। उन्होंने इरादा कर लिया कि वापस लौट आएं। मगर लोगों ने उन्हें यक़ीन दिलाया कि यह जगह बबूब नहीं है और उन्हें समझाया कि वे वापस न जाएं, वरना ख़तरा है कि फ़ौज में बिखराव पैदा हो जाएगा।

जब हज़रत अली को मालूम हुआ कि एक फ़ौज बसरा पर चढ़ाई के इरादे से आयी है तो उन्होंने अपनी फ़ौजें बसरा की तरफ़ रवाना कर दीं।

गवर्नर बसरा ने अपने दो दूत भेजे कि वे देखें कि बसरा के बाहर किसी औरत की मातहती में कैसी और क्यों फ़ौज आयी है।

हज़रत आइशा ने आने का मक़सद समझा दिया।

गवर्नर को इस बात से तसल्ली न हुई और उसने शहर को हवाला करने से इंकार कर दिया। दोनों फ़ौजे आमने-सामने खड़ी हो गयीं।

हज़रत आइशा रज़ि० ने फिर एक बार गवर्नर के आदमियों से बात-चीत की, ताकि लड़ाई जहां तक मुम्किन हो, टाल दी जाए। लेकिन बात नहीं बनी। हज़रत आइशा लड़ाई लड़ने आयी भी नहीं थीं, लेकिन इसको क्या किया जाए कि बसरा की फ़ौज में ज़्यादातर वही बलवाई थे जो हज़रत उस्मान रज़ि० के क़त्ल के ज़िम्मेदार थे। उनकी पूरी कोशिश थी कि एक बार पूरी तरह ख़ून-ख़राबा हो जाए ताकि वे लूट से अपना हाथ रंग सकें। आख़िर उस फ़ौज के एक आदमी ने हज़रत आइशा रज़ि० की फ़ौज पर हमला कर दिया।

हज़रत आइशा रज़ि० ने वहां से कूच का हुक्म दे दिया और फ़ौजों को दूसरी जगह ले गयीं।

बलवाई यह समझे कि हमारे डर की वजह से आइशा रज़ि० चली गयी हैं। दूसरे दिन उन्हों ने हज़रत आइशा को बहुत बुरे लफ़्ज़ों में याद किया, इससे और फ़साद भड़क उठा।

सरकारी फ़ौज ने सिर्फ़ गालियां ही न दीं, बल्कि उससे अगले दिन धावा बोल दिया।

इस नाज़ुक वक़्त में भी हज़रत आइशा रज़ि० ने एक आम एलान जारी किया कि वह मुसलमानों का ख़ून बहाना गुनाह समझती हैं। फिर भी नापाक लोगों को तसल्ली न हुई, सिवाए लड़ाई के कोई चारा न था।

हज़रत आइशा रज़ि० ने लड़ाई जीत ली।

दूसरी तरफ़ से अम्न के लिए दरख़्वास्त की गयी, आख़िर बात-चीत

के बाद ने पाया कि कुछ आदमी मदीना भेजे जाएं और यह मालूम किया जायें कि क्या हज़रत तल्हा व ज़ुबैर रज़ि० ने हज़रत अली रज़ि० की बैअत राज़ी-ख़ुशी से की थी या उनसे ज़बरदस्ती ली गयी थी? अगर यह साबित हो जाए कि उन्हों ने अपनी रज़ामंदी से बैअत की थी तो बसरा हज़रत आइशा रज़ि० के सुपुर्द कर दिया जायेगा और अगर जवाब नहीं में आये तो ये फ़ौजें ख़ुद-बख़ुद बसरा से कूच कर जाएंगी।

एक कमीशन मदीना भेजा गया, पूरी खोज-बीन के बाद उन्होंने रिपोर्ट दी कि सच में तल्हा और ज़ुबैर से बैअत ज़बरदस्ती ली गयी थी। इन फ़सादियों ने इस रिपोर्ट की परवाह न करते हुए हज़रत आइशा रज़ि० की फ़ौज पर रात के वक़्त हमला कर दिया। मगर उन्हें हार हुई और हज़रत आइशा रज़ि० ने सत्तरह अक्तूबर ६५६ को बसरा पर क़ब्ज़ा कर लिया।

हज़रत अली रज़ि० ने लोगों को यक़ीन दिलाया कि वह कूफ़ा को मदीना के बजाए राजधानी बनायेंगे, बशर्ते कि लोग इस मौक़े पर उनकी मदद करें।

फिर वह ख़ुद बीस हज़ार फ़ौज लेकर बसरा आ गये, कई दिन तक बातचीत चलती रही। दोनों फ़ौजें एक दूसरे के मुक़ाबले में डेरे डाले पड़ी रहीं।

हज़रत अली रज़ि० ने हज़रत आइशा रज़ि० को पैग़ाम भेजा कि छः हज़ार मुसलमान पहली लड़ाई में काम आये हैं, मैं ख़ुद हज़रत उस्मान रज़ि० के क़ातिलों से बदला लेना चाहता हूं, मगर मजबूर हूं, अगर आगे लड़ाई हुई तो और छः हज़ार मुसलमान मुफ़्त में मारे जाएंगे।

हज़रत आइशा रज़ि० ने पैग़ाम कहलाया कि पांच महीने हो गये और हज़रत उस्मान के क़ातिलों को कोई सज़ा नहीं मिली, अगर हमें यक़ीन दिलाया जाए कि क़ातिलों से बदला लिया जाएगा तो जिस तरह हज़रत चाहें, हम करने को तैयार हैं।

बहरहाल बात-चीत चलती रही।

अभी यह बात-चीत चल ही रही थी कि उसी रात हज़रत अली रज़ि० के दुष्ट सिपाहियों ने, जो फ़सादी थे, हज़रत आइशा रज़ि० की फ़ौज पर यकायकी हमला कर दिया। घमासान की लड़ाई हुई कि हज़ारों मुसलमान शहीद हुए, तमाम रात भयानक लड़ाई जारी रही। बहुत सवेरे हज़रत आइशा रज़ि० एक ऊंट पर सवार इस नीयत से ख़ेमे से निकलीं

कि शायद उन्हें देखकर लोग लड़ाई से रुक जाएं।

लड़ाई ने भयानक शक्ल अख़्तियार कर ली। हज़रत तल्हा, ज़ुबैर और हज़रत अली रज़ि० आपस में मिले, उन्हों ने लड़ाई ख़त्म करने की हर मुम्किन कोशिश की, मगर उनकी समझ में नहीं आता था कि क्या किया जाए।

इस हालत में जबकि ये लोग मश्विरे में लगे हुए थे, फ़सादियों ने हज़रत आइशा के ऊंट को घेर लिया। वे चाहते थे कि हज़रत आइशा रज़ि० को गिरफ़्तार कर लिया जाए और मुसलमान मजबूर थे कि प्यारे नबी सल्ल०की चहेती बीवी को हर सूरत से बचाएं, चाहे जान की बाज़ी लगानी पड़े। इसलिए ख़ूब ज़ोर की लड़ाई शुरू हो गयी।

तीरों की बारिश हो रही थी ख़तरा बहुत बढ़ गया था। हज़रत अली रज़ि० ख़ुद बढ़कर आये और उन्हें पूरी इज़्ज़त व एहतराम के साथ अपने साथ ले गये। वहां कुछ दिनों ठहरने के बाद फिर वह मदीना वापस हो गयीं। मदीना पहुंच कर वह उमरः के लिए मक्का तशरीफ़ ले गयीं, फिर मदीना वापस लौट आयीं और कई साल तक वहां रहीं और सन् ५८ हि० में जबकि उन की उम्र ६६ साल की थी, वह इंतिक़ाल फ़रमा गयीं।

हज़रत तल्हा और हज़रत ज़ुबैर रज़ि० को भी फ़सादियों ने धोके से शहीद कर दिया।

राजधानी की तब्दीली

फिर हज़रत अली रज़ि० ने वायदे के मुताबिक़ मदीना के बजाए कूफ़ा को राजधानी बना लिया। हज़रत अली रज़ि० का ख़्याल था कि मदीने के लोग उतने काम नहीं आएंगे जितने कूफ़े के लोग आएंगे। उनका विचार था कि हज़रत मुआविया रज़ि० से उन्हें ज़रूर लड़ना पड़ेगा, इस में कूफ़ा के लोग ही काम आएंगे।

हज़रत उस्मान के क़त्ल की मांग कुछ दिनों के लिए ठंडी पड़ गयी। हज़रत अली ने अपने चचेरे भाइयों को जो हज़रत अब्बास के बेटे थे, कई जगहों पर गवर्नर की हैसियत से मुक़र्रर किया, मगर इससे कोई फ़ायदा न हुआ और जल्द ही फिर माहौल बिगड़ गया।

उश्तर ने जो असल फ़सादियों में से एक था, बसरा में फिर शरारत शुरू कर दी, कहता, हमें हज़रत उस्मान के क़त्ल से क्या फ़ायदा पहुंचा है? हमने अपने भाइयों तल्हा और ज़ुबैर रज़ि० को क़त्ल कर के क्या हासिल किया है ? वग़ैरह-वग़ैरह ।

हज़रत अली रज़ि० ने मुंह बन्द करने के लिए उसे एक ओहदा भी दे दिया, लेकिन उस का कोई फ़ायदा न हुआ । मिस्र में और सरहदों पर बग़ावत शुरू हो गयी । हज़रत मुआविया रज़ि० जो भरे बैठे थे, वह अलग ।

सुफ़्फ़ैन की लड़ाई

अमीरुल मोमिनीन हज़रत अली रज़ि० की राजधानी को तब्दीली के बाद कुछ वक़्त अम्न रहा, इस लिए आस-पास के लोग अमीरुल मोमिनीन को बैअत लेने के लिए जुट कर कूफ़ा आने शुरू हुए ।

एक बद्दू सरदार के साथ अमीर मुआविया रज़ि० के ताल्लुक़ात बड़े अच्छे थे और वह कूफ़े का रहने वाला था । हज़रत अली रज़ि० ने उन्हें अमीर मुआविया रज़ि० के लिए पैग़ाम दे कर भेजा कि वह अमीरुल मोमिनीन की बैअत कर लें और इस्लामी हुकूमत को बिखरने और टूटने से बचा लें ।

अमीर मुआविया रज़ि० ने अपने दोस्त बद्दू सरदार की बहुत आव-भगत की और अर्ज़ किया कि मुझे बैअत लेने में क़तई कोई इंकार नहीं है । मुझे इसका भी डर है कि मेरे न करने से इस्लामी हुकूमत बिखर सकती है, मगर जब तक हज़रत उस्मान रज़ि० के क़ातिलों से बदला न लिया जाए, मेरा बैअत लेना नामुम्किन है । इतना ही नहीं, हम शामी सरदारों ने क़सम खायी है कि हम सोने के लिए बिस्तर और पलंग इस्तेमाल नहीं करेंगे, ग़ुस्ल न करेंगे, जब तक कि हम क़ातिलों को तलवार की धार पर न चढ़ा लें ।

हज़रत अली रज़ि० को जब सब बातें मालूम हुईं तो क़ातिलों को मारने के बजाए उन्हों ने अमीर मुआविया रज़ि० से लड़ने का ही फ़ैसला किया । पचास हज़ार की फ़ौज ले कर हज़रत अली रज़ि० ख़ुद आगे बढ़े ।

अमीर मुआविया की फ़ौज भी मुक़ाबले पर आ डटी ।

पहले बात-चीत का दौर शुरू हुआ, लेकिन वह नाकाम रही।

फ़ौजें आमने-सामने डटी रहीं, लेकिन दोनों को इसी का इंतिज़ार रहा कि शायद मामला बात-चीत से हल हो जाए और ख़ूंरेज़ी न हो। इसी बीच नया साल शुरू हो गया, वक़्ती तौर पर एक महीने के लिए समझौता हो गया। फिर बात-चीत शुरू हुई, हर फ़रीक़ अपनी ज़िद पर अड़ा हुआ था, इस लिए बेहतर नतीजा नहीं निकल सका।

यह वक़्ती समझौते की मुद्दत भी ख़त्म हो गयी। हज़रत अली ने नये सिरे से जंग की तैयारियां शुरू करदीं। हालात बद से बदतर होते चले गये, लड़ाई छिड़ गयी, घमासान की लड़ाई।

फ़ैसला न हो सका, मामला ख़ुदा को सौंप दिया गया। तै हुआ कि हर फ़रीक़ अपना एक आदमी मुक़र्रर कर दे और वे सब ख़ुदा के हुक्म के मुताबिक़ जो फ़ैसला दें, उस पर अमल करे। दो आदमी हज़रत उम्र बिन आस और हज़रत मूसा अश्अरी मुक़र्रर किये गये।

सरपंचों का फ़ैसला

समझौते के मुताबिक सरपंच -चार-चार सौ सवारों के साथ निहायत शान व शौकत से दौमतुल जुंदल में जो कूफ़ा और दमिश्क़ के दर्मियान वाक़े है, इकट्ठा हुए, एक आलीशान ख़ेमे के चारों तरफ़ गार्ड लगा दिये गये कि कोई बीच में ख़लल न डाल सके। देर तक हर पहलू पर बातें होती रहीं।

अबू मूसा और अम्र इस पर एक राय थे कि हज़रत उस्मान का क़त्ल ज़ालिमाना और नाजायज़ था। अम्र ने निहायत होशियारी से कहा तो अमीर मुआविया की मांग जायज़ और दुरुस्त है कि उस्मान के क़ातिलों से बदला लेना ज़रूरी है, ऐसी हालत में हम क्यों न अमीर मुआविया को अपना ख़लीफ़ा बनायें।

अबू मूसा ने जवाब दिया कि इस मांग करने से अमीर मुआविया हज़रत उस्मान के जानशीन नहीं हो सकते।

ग़रज़ यह कि हर पहलू से बहस हुई, लेकिन किसी नतीजे पर न पहुंच सके। बस राय बनी तो यह कि हज़रत अली अगर ख़लीफ़ा न रहें तो फ़िल्ना व फ़साद रुक सकता है, लेकिन फिर कौन हो ? इस पर एक राय नहीं बन सकी।

बग़ावत की लहर

जब हज़रत अली ने सरपंच ते कर लिए तो उन की फ़ौज में एक जमाअत इस क़िस्म की पैदा हुई जो सरपंचों को बिल्कुल पसन्द न करती थी। इन लोगों ने हज़रत अली की फ़ौज से अलग हो कर अपना इंतिज़ाम कर लिया। इस तरह एक बाग़ी फ़ौज तैयार हो गयी जिन का नारा था 'फ़ैसला ख़ुदा के हाथ है', उन का उसूल था कि किसी बादशाह या ख़लीफ़ा की ज़रूरत नहीं है, मुसलमानों पर हुकूमत एक मजिलस के ज़रिए होनी चाहिए। ये निकलने वाले खारजी कहलाये।

हज़रत अली रज़ि० ने अपने चचेरे भाई इब्ने अब्बास रज़ि० को खारजियों के सरदार के पास भेजा कि वे उन से बात कर के उन्हें सीधे रास्ते पर लायें। मगर कोई नतीजा न निकला।

इस के बाद हज़रत अली रज़ि० ने उनके सरदार को समझाया, उन की बातों का उन पर अच्छा असर पड़ा। उन्हों ने हज़रत अली रज़ि० की बातें मान लीं और अपना कैम्प तोड़ कर अपने-अपने घरों को चले गये।

पंचों का फ़ैसला आते ही उन्हों ने हज़रत अली के विरोध पर कमर कस लिया। फिर गवर्नर ने उन्हें बसरा से निकाल दिया। ये सब कूफ़ा की पार्टी से जा मिले।

सरपंचों के फ़ैसले के बाद हज़रत अली रज़ि० ने अमीर मुआविया रज़ि०पर फिर से हमले की तैयारी शुरू कर दी। एक बड़ी फ़ौज तैयार हो गयी। अभी वह शाम की तरफ़ चले ही थे कि उन्हें पैग़ाम पहुंचा कि खारजियों ने क़त्ल व ग़ारत से मुल्क में बहुत बुरी तरह अशांति फैला रखी है। अगर इस को रोक थाम न की गयी तो ख़तरा यह है कि यह फ़ित्ना कोई और रंग न अख़्तियार कर ले। इन लोगों को इसी हालत में पीछे छोड़ कर जाना मुनासिब नहीं। हज़रत अली रज़ि० को यह राय पसंद आयी और वह बजाए शाम देश के दजला को पार कर के नहरवान जा पहुंचे, खारजियों को पैग़ाम भिजवाया कि हथियार डाल कर फ़ौरन इता-यत कर लो।

बात-चीत का सिलसिला कई दिन तक चला, कुछ तो हज़रत अली रज़ि० के साथ हो लिए, कुछ मुक़ाबले पर उतर आये, यहां तक कि मुंह

की खायी। कुछ भाग गये और कुछ मारे गये।

जो भाग गये, छिपे तौर पर बग़ावत, फ़ित्ना-फ़साद फैलाने लगे, मगर से उन्हें फिर दबा दिया गया, लेकिन मौक़ा पाते ही वे फिर सर उठाने लगते।

इन तमाम मुसीबतों से हज़रत अली रज़ि० कुछ परेशान हो गये। इन हालात में वह हज़रत मुआविया रज़ि० का क्या मुक़ाबला करते, सिवाए इसके कि एक लम्बी मुद्दत तक ख़त व किताबत चली, यहां तक कि दोनों में सुलह हो गयी कि वे एक दूसरे के इलाक़े में किसी क़िस्म का दख़ल न देंगे, बल्कि एक दूसरे को अपना मित्र समझेंगे।

हज़रत अली रज़ि० शहीद कर दिये गये

हज़रत अली और अमीर मुआविया में सुलह क्या हुई कि ख़ारजियों के सब मंसूबे फ़ेल हो गये। अब उन की कोशिश हो गयी कि इन दोनों की हुकूमतों का ख़ात्मा कर दिया जाए। इन में से बहुत से मक्का-मदीना जा कर बस गये।

हालात पर वे बराबर ग़ौर करते रहे, यहां तक कि एक दिन वे इस नतीजे पर पहुंचे कि कुछ जान पर खेलने वाले ऐसे तैयार किए जाएं जो इन दोनों का ख़ात्मा कर दें। साथ ही अम्र की भी जान लें कि उन का भी बहुत असर था। उन्हों ने अपनी तलवारों को तेज़ ज़हर में बुझाया और क़ुरआन को हाथ में ले कर क़सम खायी कि या तो वे अपना फ़र्ज़ अदा करेंगे, या इस कोशिश में अपनी जान गंवा देना पसंद कर लेंगे। इस काम के लिए जुमा का दिन तै हुआ।

इत्तिफ़ाक़ कहिए या क़ुदरत का खेल कि उस जुमा को हज़रत अम्र बीमार पड़ गये, मस्जिद न आये। उन की जगह उन के नायब ने नमाज़ पढ़ायी और क़ातिल के हाथों शहीद हुए। अमीर मुआविया रज़ि० बुरी तरह घायल हुए।

अमीरुलमोमिनीन हज़रत अली का क़त्ल एक आदमी इब्ने मुल्जिम के सुपुर्द हुआ। उस के साथ क़ातिल दो और थे, जिन्हों ने भी अपनी तलवारों को ज़हर में बुझाया, और जान को हथेली पर रख कर मस्जिद के दरवाज़े में जा छिपे, जहां से हज़रत अली रज़ि० गुज़रा करते थे।

जैसे ही हज़रत अली मस्जिद के आंगन में दाखिल हुए, इन तीनों ने एक साथ उन पर हमला कर दिया। एक क़ातिल ने अमीरुल मोमिनीन के बाज़ू को घायल किया, दूसरे ने आप की टांगों पर वार किया, इब्ने मुल्जिम ने सर पर वार कर के उन्हें बहुत बुरी तरह घायल कर दिया। इब्ने मुल्जिम को लोगों ने गिरफ़्तार कर लिया, एक साथी की तो वहीं बोटी-बोटी नोच ली गयी, मगर दूसरा भाग गया।

अमीरुल मोमिनीन हज़रत अली रज़ि० को उन के मकान पर ले गये। क़ातिल इब्ने मुल्जिम उन के सामने पेश किया गया। उन्हों ने बहुत नर्मी से उस से बातें कीं। उस की तीखी बातों का जवाब द । नर्मी से दिया। किसी क़िस्म का गुस्सा या जोश ज़ाहिर न किया, बल्कि अपने बेटे हसन रज़ि० से फ़रमाया, इब्ने मुल्जिम की अच्छी तरह हिफ़ाज़त करो कि वह कहीं भाग न जाए। मगर उस से किसी क़िस्म की सख़्ती न करना, अगर मैं मर जाऊं तो क़त्ल कर डालना।

घाव बहुत गहरा था। इस लिए हज़रत अली रज़ि०के बारे में सभी मायूस हो रहे। लोगों ने पूछा, क्या आप के बाद हज़रत हसन रज़ि० को ख़लीफ़ा बना दिया जाए।

आप ने बड़ी सादगी से फ़रमाया, नहीं, मैं इस का हुक्म नहीं देता, और न ही मना करता हूं, जिस तरह तुम लोगों की मर्ज़ी हो, करो।

अमीरुल मोमिनीन हज़रत अली रज़ि० के कफ़न-दफ़न के बाद हज़रत हसन रज़ि० ने क़ातिल को अपने रू-ब-रू तलब किया। उसने अपने नापाक इरादे का निडर हो कर ज़िक्र किया। आख़िर में उसे क़त्ल कर दिया गया।

हज़रत अली रज़ि० की ख़िलाफ़त पर एक नज़र

हज़रत अली रज़ि० उन ख़लीफ़ों में से थे, जिनके बाद कोई शख़्स ऐसा न रहा, जिसकी इज़्ज़त और जिसकी मान्यता पूरी इस्लामी दुनिया में हो। हज़रत आइशा रज़ि० ने जब हज़रत अली रज़ि० की शहादत का हाल सुना, तो फ़रमाया, अब अरब लोग, जो चाहें सो करें, क्योंकि

अली रज़ि० के बाद कोई ऐसा बाक़ी न रहा कि उनको किसी बुरे काम से मना करेगा।

हज़रत उमर फ़ारूक़ रज़ि० अपने दौर में हज़रत अली रज़ि० के मश्विरे को ज़्यादा अहमियत देते थे। हज़रत उस्मान ग़नी रज़ि० को भी उन्होंने हमेशा सच्चे और अच्छे मश्विरे दिए और इस बात की बिल्कुल परवाह न की कि हज़रत उस्मान रज़ि० उन के मश्विरे पर अमल करते हैं या दूसरे की बात मानते हैं।

हज़रत अली रज़ि० चार साल नौ महीना ख़लीफ़ा रहे। अगरचे यह सब साज़िशों और आपस के लड़ाई-दंगों में बीत गया, फिर भी उन की हुकूमत बड़े इंसाफ़ की हुकूमत थी।

ख़लीफ़ा होते हुए भी आप की यह हालत थी कि एक मोटा-सा तहबंद बांधे रहते थे, उस पर एक मोटी रस्सी लिपटी होती थी। कभी एक चादर ओढ़ लेते और एक से तहबंद का काम लेते। इस हाल में कूफ़े के बाज़ारों में यह देखते फिरते थे कि कहीं दुकानदार नाप-तौल में कमी तो नहीं करते। एक दिन बाज़ार में खड़े थे, देखा कि एक लौंडी रो रही है। पूछा तुम क्यों रो रही हो ? कहने लगी, मेरे आक़ा ने एक दिरहम की खजूरें मंगाई थीं वह उसे पसन्द नहीं आयीं, इसलिए फेर दीं, अब दुकानदार वापस नहीं लेता। हज़रत अली रज़ि० ने दुकानदार से कहा, भाई खजूर बेचने वाले ! अपनी खजूरें ले ले और दिरहम वापस कर दे।

उसने आप को धक्का दिया। यह देख कर लोग जमा हो गये और कहने लगे, तू नहीं जानता ? यह अमीरुल मोमिनीन हैं। दुकानदार ने यह सुनकर खजूरें ले लीं और दिरहम वापस कर दिए और हज़रत अली रज़ि० से कहने लगा, 'मैं चाहता हूं कि आप मुझसे ख़ुश हो जायें।' आपने फ़रमाया कि, 'मुझे सिर्फ़ यही बात ख़ुश कर सकती है कि तू लोगों को उनका पूरा हक़ दे दिया कर।

आपके कपड़ों में कितने ही पेवन्द होते थे। कपड़ा फट जाता था तो उसे अपने आप सी लेते थे। जूती फट जाती थी तो उस की मरम्मत भी आप ही कर लिया करते थे। जाड़े के मौसम में भी उनका यही हाल होता था कि एक ही चादर ओढ़े हुए हैं और ठन्ड से सारा बदन कांप रहा है।

एक बार कपड़ा ख़रीदने निकले। आप का ग़ुलाम क़ंबर साथ था। दो मोटी-मोटी चादरें ख़रीदीं। फिर क़ंबर से कहने लगे इनमें से जो तुझे पसन्द है वह ले ले। एक उसने ले ली और दूसरी आप ने ओढ़ ली।

हज़रत इमाम हसन रज़ि०

हज़रत हसन रज़ि० हज़रत अली बिन अबी तालिब रज़ि० के बड़े बेटे थे और खुलफ़ा-ए-राशिदीन में सबसे आखिरी खलीफ़ा समझे जाते हैं।

आप शाबान ०६ हि० में पैदा हुए। शक्ल व सूरत आंहुज़ूर सल्ल० से बहुत मिलती थी। आप से प्यारे नबी सल्ल० मुहब्बत भी बहुत किया करते थे।

हज़रत हसन रज़ि० बहुत समझदार, संजीदा मिज़ाज, सखी दाता थे, आप को फ़िल्नों और खूंरेज़ी से सख्त नफ़रत थी। आप ने पैदल पचीस हज किए। उमैर बिन इस्हाक़ कहते हैं कि सिर्फ़ हज़रत हसन रज़ि० ही एक ऐसे शख्स थे कि जब बात करते थे, तो मैं चाहता कि आप बातें किए चले जाएं और अपनी बात खत्म न करें और आपकी ज़ुबान से मैं ने कभी कोई गाली या गन्दी बात नहीं सुनी। अली बिन ज़ैद रज़ि० कहते हैं कि हज़रत इमाम हसन रज़ि० ने दो बार सारा माल अल्लाह की राह में खैरात किया और तीन बार आधा-आधा खैरात किया, यहां तक कि एक जूता रख लिया, एक दे दिया, एक मोज़ा रख लिया, और एक दे दिया। एक बार आप के सामने ज़िक्र हुआ कि अबूज़र रज़ि० कहते हैं कि मैं खुशहाली से ग़रीबी को और तन्दुरुस्ती से बीमारी को ज़्यादा अज़ीज़ रखता हूं, आपने फ़रमाया कि खुदा उन पर रहम करे, मैं तो अपने आप को बिल्कुल खुदा के हाथ में छोड़ता हूं और किसी बात की तमन्ना नहीं करता कि वह जो कुछ चाहे करे, मुझे दखल देने की क्या मजाल है।

आप ने रबीउल अव्वल सन् ४१ हि० में खिलाफ़त हज़रत अमीर मुआविया रज़ि० के सुपुर्द कर दी। आपने माह रबीउल अव्वल सन् ५० हि० में वफ़ात पायी। कुछ लोग कहते हैं कि आप की शहादत ज़हर के ज़रिए हुई। हज़रत इमाम हुसैन रज़ि० ने आप से बहुत मालूम करने की कोशिश की कि बता दें, ज़हर किसने दिया, मगर आप ने न बतलाया और फ़रमाया कि जिस पर मेरा शुबहा है, अगर वही मेरा क़ातिल है, तो अल्लाह तआला सख्त इन्तिक़ाम लेने वाला है, वरना, कोई क्यों मेरे वास्ते क़त्ल किया जाए।

हज़रत हसन रज़ि० की ख़िलाफ़त के कुछ वाक़िए

हज़रत अली रज़ि० से वफ़ात के वक़्त पूछा गया था कि आप के बाद हज़रत हसन रज़ि० के हाथ पर बैअत की जाए? हज़रत अली रज़ि० ने फ़रमाया, मैं अपने हाल में फंसा हुआ हूं, तुम जिसको पसन्द करो, उसके हाथ पर बैअत कर लेना। लोगों ने इसको इमाम हसन रज़ि० के बारे में इजाज़त समझ कर उन के हाथ पर बैअत की। बैअत के वक़्त हज़रत इमाम हसन रज़ि० लोगों से इक़रार लेते जाते थे कि—

'मेरे कहने पर अमल करना, जिससे मैं लड़ूं, तुम भी लड़ना और जिससे मैं सुलह करूं, तुम भी उससे सुलह करना।

इस बैअत के बाद ही कूफ़ा वालों में कानाफूसी शुरू हो गयी कि इनका इरादा लड़ाई लड़ने का नहीं है। उधर हज़रत अली रज़ि० की शहादत की ख़बर सुनते ही अमीर मुआविया रज़ि० ने अपनी ख़िलाफ़त का एलान कर दिया और बैअत लेनें लगे। हज़रत अमीर मुआविया रज़ि० बैअत के काम से फ़ारिग़ होकर दमिश्क़ से कूफ़ा की तरफ़ रवाना हुए और हज़रत इमाम हसन रज़ि० के पास पैग़ाम भेजा कि सुलह लड़ाई से बेहतर है और मुनासिब यही है कि आप मुझको ख़लीफ़ा मानकर मेरे हाथ पर बैअत कर लें। हज़रत हसन रज़ि० ने यह सुनकर कि हज़रत अमीर मुआविया रज़ि० कूफ़ा का इरादा रखते हैं, चालीस हज़ार की फ़ौज अपने साथ ली और कूफ़ा से रवाना हुए। बाद में यही फ़ैसला हुआ कि अमीर मुआविया रज़ि० से सुलह कर ली जाए, ख़िलाफ़त उनको सौंप दी जाए और मुसलमानों के ख़ून-ख़राबे से बचा जाए। अगर चे हज़रत हसन रज़ि० के इस फ़ैसले की मुख़ालफ़त उनके घर वालों ने भी की और क़रीबी साथियों ने भी, लेकिन आप ने किसी मश्विरे को तस्लीम न किया और सुलह कर ली।

यह सुलह सन ४१ हि० में हज़रत अली रज़ि० की शहादत से छः माह बाद हुई। सुलह हो जाने पर हज़रत मुआविया रज़ि० कूफ़ा से दमिश्क़ चले गये और जब तक इमाम हसन रज़ि० ज़िन्दा रहे, उनके

साथ अमीर मुआविया रज़ि० इज़्ज़त व ताज़ीम का बर्ताव करते रहे।

हज़रत इमाम हसन रज़ि० जल्द ही कूफ़ा से मदीना मुनव्वरा मुंतक़िल हो गये और वहीं सन ५० हि० या ५१ हि० में वफ़ात पायी।

ख़िलाफ़ते बनू उमैय्या

हज़रत अमीर मुआविया रज़ि०

हज़रत अमीर मुआविया रज़ि० हिजरत से सत्तरह साल पहले पैदा हुए यानी वह हज़रत अली रज़ि० से छः साल छोटे थे। हज़रत मुआविया रज़ि० की पैदाइश के वक़्त इन के वालिद अबूसुफ़ियान की उम्र चालीस से कुछ ज्यादा थी यानी अबूसुफ़ियान हुज़ूर सल्ल० से दस साल उम्र में बड़े थे।

अमीर मुआविया रज़ि० लड़कपन ही से बहुत ज़हीन और अच्छे इन्तिज़ाम करने वाले थे। लम्बे क़द के, सुर्ख़ व सफ़ेद रंग ख़ूबसूरत और रोबदार आदमी थे। हुज़ूर सल्ल० ने अमीर मुआविया रज़ि० को देखकर फ़रमाया कि यह अरब के किसरा (बादशाह) हैं।

आख़िरी उम्र में मुआविया रज़ि० का पेट किसी क़दर बढ़ गया था और मिंबर पर बैठ कर ख़ुत्बा सुनाने की शुरूआत अमीर मुआविया रज़ि० से हुई।

अमीर मुआविया रज़ि० ख़ूब पढ़े-लिखे आदमी थे। फ़त्हे मक्का के दिन अपने बाप अबूसुफ़ियान के साथ पचीस साल की उम्र में मुसलमान हुए और फिर हज़रत मुहम्मद सल्ल० की वफ़ात तक साथ रहे। मदीना वापसी पर आप को हुज़ूर सल्ल० ने कातिबे वह्य मुक़र्रर किया। वह्य की किताबत के अलावा बाहर से आये हुए वफ़्दों की देख-भाल और

उनकी मेहमान-नवाजी का काम हज़रत मुआविया रज़ि० ही के सुपुर्द था।

हज़रत अबूबक्र रज़ि० के ज़माने में आप ने बहुत-सी लड़ाइयों में शिर्कत की और कामियाबी हासिल की।

हज़रत उमर फ़ारूक़ रज़ि० ने यज़ीद बिन अबूसुफ़ियान के इंतिक़ाल के बाद आपको दमिश्क़ का गवर्नर मुक़र्रर किया।

हज़रत उस्मान रज़ि० के ज़माने में आप को शाम (सीरिया) के पूरे इलाक़े का हाकिम बना दिया गया और हज़रत उस्मान ही के दौर में हज़रत मुआविया रज़ि० ने शाम में इस्लामी हुकूमत की जड़ें काफ़ी मज़बूत थीं।

हज़रत उस्मान रज़ि० की शहादत के बाद हज़रत अली रज़ि० से आप ने जो मुक़ाबला किया, उस का ज़िक्र पहले आ चुका है। रबीउल अव्वल सन् ४१ हि० की आख़िरी दहाई में हज़रत अमीर मुआविया रज़ि० और हज़रत हसन रज़ि० में समझौता हुआ और उसके बाद सज़रत अमीर मुआविया बा-क़ायदा तमाम इस्लामी मुल्क के ख़लीफ़ा क़रार दिए गये। ख़लीफ़ा बनने के बाद वह बीस साल और ज़िंदा रहे।

ख़िलाफ़त के कुछ वाक़िए

अमीर मुआविया रज़ि० ने इस्लामी हुकूमत को मज़बूत बनाने के लिए जो सबसे बड़ा काम किया, वह यह था कि उन्हों ने ख़ारजियों के फ़िल्ने की जड़ें काट दीं। यही ख़ारजी थे, जो पूरे मुल्क में फ़िल्ना फैला रहे थे, साज़िशें कर रहे थे, मुसलमानों को आपस में लड़ा रहे थे, अवाम के ख़ून की नदियां बहा रहे थे, इन ख़ारजियों के फ़िल्ने को बुरी तरह कुचल दिया।

क़ैसरे रूम की ओर से शाम देश की उत्तरी सीमाओं को हमेशा ख़तरा रहता था, शाम के साहिल पर समुद्री हमलों का भी डर था, मिस्र व अफ़्रीक़ा पर भी रूमियों की समुद्री चढ़ाइयां होती रहती थीं। हज़रत मुआविया रज़ि० ने अन्दरूनी मस्अलों से निबट कर रूमी ख़तरों की तरफ़ अपना पूरा ध्यान लगा दिया, समुद्री फ़ौज तैयार की, समुद्री फ़ौज के सिपाहियों की तंख्वाहें ज़्यादा कीं, लगभग दो हज़ार जंगी नावें तैयार करायीं। थल सेना (बर्री फ़ौज) को पहले से ज़्यादा मज़बूत किया।

मौसम के हिसाब से भी फ़ौजें तैयार कीं। इन्हीं तैयारियों की वजह से क़ैसर रूम की हिम्मत पर पानी फिर दिया और सन ४३ हि० में सजिस्तान वग़ैरह जीत लिए गये।

इसी साल बरक़ा और सूडान की ओर इस्लामी फ़ौज आगे बढ़ी और इन इलाक़ों में इस्लामी हुकूमत का रक़बा बहुत फैल गया।

सन् ४८ हि० में हज़रत मुआविया रज़ि० ने क़ैसर की राजधानी क़ुस्तुन्तुनिया पर समुद्री हमला करने का इरादा किया। एक बड़ी फ़ौज तैयार हुई, इस फ़ौज में बड़े-बड़े सहाबा किराम रज़ि० भी शरीक हुए। सुफ़ियान बिन औफ़ इस फ़ौज के सरदार बनाये गये। इस फ़ौज में हज़रत अमीर मुआविया का बेटा यज़ीद भी शामिल था। यह फ़ौज अगरचे हमले में कामियाब नहीं हो सकी, लेकिन इस हमले ने क़ैसर की रही-सही हिम्मत तोड़ दी।

हज़रत मुआविया रज़ि० ही के ज़माने में सिंध पर हमला किया गया था और सिंध का एक बड़ा हिस्सा जीत लिया गया था।

यज़ीद की वली अहदी

सन् ५० हि० में मुग़ीरा बिन शोबा कूफ़े से दमिश्क़ आ गये और उन्होंने हज़रत अमीर मुआविया रज़ि० से कहा कि मैं ने हज़रत उस्मान रज़ि० की शहादत का वाक़िआ मदीना में देखा है और तमाम मंज़र मेरी आंखों के सामने घूम रहे हैं कि ख़िलाफ़त के मामले में कैसे-कैसे हंगामे हुए, पस मेरे नज़दीक मुनासिब यह है कि आप अपने बेटे यज़ीद को अपने बाद ख़लीफ़ा नामज़द कर दें। इसी में मुसलमानों की बेहतरी और भलाई है। हज़रत मुआविया रज़ि० ने यह कभी सोचा भी न होगा, उन्हों ने मुग़ीरा रज़ि० से ताज्जुब से पूछा, क्या यह मुम्किन है कि लोग मेरे बेटे की ख़िलाफ़त के लिए बैअत कर लें? मुग़ीरा बोले, यह बात बड़ी आसानी से मुम्किन है। कूफ़े वालों को मैं तैयार कर लूंगा, बसरा वालों को ज़ियाद बिन अबू सुफ़ियान मजबूर कर देंगे, मक्का और मदीना में मरवान बिन हकम और सईद बिन आस लोगों को हमवार कर सकेंगे, शाम में किसी की मुख़ालफ़त का इम्कान नहीं। चुनांचे कोशिशों के बाद यज़ीद की वली अह्दी को आमतौर पर लोगों ने लालच,

दबाव या राजी-खुशी से तस्लीम कर लिया। मुखालफ़त सिर्फ़ मदीना और मक्का के बुजुर्गों की तरफ़ से हुई और उनकी मुखालफ़त में बजन भी था।

शुरू रजब सन् ६० हि० में जब हजरत अमीर मुआविया रजि० बीमार हुए और उनको यक़ीन होने लगा कि अब आखिरी वक़्त क़रीब आ गया है, तो उन्होंने यजीद को बुलवाया। यज़ीद उस वक़्त दमिश्क़ से बाहर शिकार में था या किसी मुहिम पर गया हुआ था, फ़ौरन क़ासिद रवाना हुआ और यजीद को बुलाकर लाया। यजीद हाजिर हुआ तो उन्होंने उसकी तरफ़ खिताब करते हुए फ़रमाया—

ऐ बेटे! मेरी वसीयत को तवज्जोह से सुन और मेरे सवालों का जवाब दे। अब अल्लाह का फ़रमान यानी मेरी मौत का वक़्त क़रीब आ गया है, सो बता कि मेरे बाद मुसलमानों से कैसा व्यवहार करना चाहता है?

यजीद ने जवाब दिया कि मैं अल्लाह की किताब और अल्लाह के रसूल सल्ल० की सुन्नत की पैरवी करूंगा।

अमीर मुआविया रजि० ने कहा कि सुन्नते सिद्दीक़ी रजि० पर भी अमल होना चाहिए कि उन्हों ने विधर्मियों से लड़ाई लड़ी और इस हालत में इन्तिक़ाल फ़रमाया कि उम्मत उनसे खुश थी।

यज़ीद ने कहा कि नहीं, सिर्फ़ अल्लाह की किताब और अल्लाह के रसूल सल्ल० की सुन्नत की पैरवी काफ़ी है।

अमीर मुआविया रज़ि० ने फिर कहा कि ऐ बेटे! उमर रज़ि० की सीरत की पैरवी कर, उन्होंने शहरों को आबाद किया और फ़ौज को मजबूत किया और ग़नीमत का माल फ़ौज में तक्सीम किया।

यज़ीद ने जवाब दिया कि नहीं, सिर्फ़ अल्लाह की किताब और अल्लाह के रसूल की सुन्नत की पैरवी काफ़ी है।

अमीर मुआविया रजि० ने कहा कि ऐ बेटे! उस्मान ग़नी रजि० की सीरत पर अमल करना कि उन्होंने लोगों को अपनी जिंदगी में फ़ायदा पहुंचाया और सखावत की।

यजीद ने कहा कि, नहीं, सिर्फ़ अल्लाह की किताब और अल्लाह के रसूल सल्ल० की सुन्नत ही मेरे लिए काफ़ी है।

अमीर मुआविया ने यह सुनकर फ़रमाया कि ऐ बेटे! तेरी इन बातों से मुझको यक़ीन हो गया कि तू मेरी बातों पर अमल दरामद न करेगा। मेरी वसीयत और नसीहत के खिलाफ़ ही करेगा। ऐ यजीद!

तू इस बात पर घमंड न करना कि मैं ने तुझको अपना वलीअह्द बना लिया है और तमाम दुनिया ने तेरी फ़रमांबरदारी का इक़रार कर लिया है। अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ि० की ओर से तो ज्यादा अंदेशा नहीं है, क्योंकि वह दुनिया से बेज़ार हैं। हुसैन बिन अली रज़ि० को इराक़ वाले जरूर तेरे मुक़ाबले के लिए मैदान में निकालेंगे, तू अगर उनको जीत ले, तो उनको क़त्ल हरगिज न करना और रिश्तेदारी को ध्यान में रखना। अब्दुल्लाह बिन जुबैर रज़ि० ऐसे शख्स हैं कि अगर तू इन पर क़ाबू पाए, तो क़त्ल कर देना। मक्का और मदीने के रहने वालों पर हमेशा एहसान करना और इराक़ वाले अगर हर दिन हाकिम को बदलने की ख्वाहिश करें, तो हर दिन हाकिम को उनकी खुशी के लिए बदलते रहना। शाम वालों को हमेशा अपना मददगार समझना और उनकी दोस्ती पर भरोसा करना।

इसके बाद यजीद फिर शिकार में चला गया।

अमीर मुआविया की हालत बराबर नाज़ुक होती चली गयी। मरते वक्त उन्होंने वसीयत की कि ये बाल और नाखून मेरे मुंह और आंखों में रख देना। जह्हाक बिन क़ैस ने जनाज़े की नमाज पढ़ायी। दमिश्क़ में बाबे जाबिया और बाबे सग़ीर के दर्मियान दफ़्न किए गये।

खिलाफ़ते मुआविया रज़ि० पर एक नज़र

हज़रत मुआविया रज़ि० की हुकूमत को, जिस का ज़माना बीस साल है, एक कामियाब हुकूमत कहा जा सकता है। हंगामे, बग़ावत, डाके, बद-अम्नी इस तरह का ज़िक्र के क़ाबिल कोई वाक़िआ नहीं हुआ। हुकूमत को चलाने और मुल्क के इन्तिज़ाम को ठीक-ठाक रखने की हज़रत अमीर मुआविया रज़ि० ने भरपूर कोशिश की और इसमें वह पूरी तरह कामियाब रहे।

हज़रत मुआविया रज़ि० ने हर दिन का जो प्रोग्राम बनाया था, वह इस तरह था—

वह हर रोज फ़ज्र की नमाज के बाद मक़ामी फ़ौजदार या कप्तान पुलिस की रिपोर्ट सुनते, इस के बाद वज़ीर, सलाहकार और खास-खास लोग राज-काज के अहम कामों के बारे में सलाह-मश्विरे के लिए आते उसी

वक़्त पेशकार हर प्रान्त से आयी हुई रिपोर्टें सुनाते। जुहर के वक़्त नमाज़ के लिए वह महल से बाहर निकलते और नमाज़ पढ़ा कर मस्जिद ही में बैठ जाते। वहां लोगों की ज़ुबानी फ़रियादें सुनते, अर्जियां लेते। इस के बाद महल में वापस आ कर सरदारों से मुलाक़ात करते, फिर दोपहर का खाना खाते और थोड़ी देर आराम करते। अस्र की नमाज़ के बाद वज़ीरों, दरबारियों और सलाह कारों से मुलाक़ात करते, शाम के वक़्त सब के साथ दरबार में खाना खाते और एक बार लोगों को मुलाक़ात का मौक़ा दे कर आज का काम खत्म कर देते।

यज़ीद बिन मुआविया

अबू खालिद यज़ीद बिन मुआविया सन २५ हि० या २६ हि० में, जब कि हज़रत अमीर मुआविया रज़ि० शाम देश के हाकिम थे, पैदा हुआ। यज़ीद ने पैदा होते ही हुकूमत और माल व दौलत के घर में आंखें खोली थीं। अमीर मुआविया ने यज़ीद की तालीम व तर्बियत पर खास तवज्जोह दी। एक या दो बार उसको अमीरे हज बना कर भेजा था, फ़ौज और लश्कर की सरदारी भी उस को दी थी।

अमीर मुआविया रज़ि० के इंतिक़ाल के वक़्त वह दमिश्क़ में मौजूद न था, कई दिन के बाद वापस आया और उन की क़ब्र पर जनाज़े की नमाज़ पढ़ी।

अमीर मुआविया रज़ि० ने अपनी ज़िंदगी ही में यज़ीद को अपना जानशीन नामज़द कर दिया था। आप के इंतिक़ाल के बाद तो शाम वालों ने बग़ैर किसी संकोच के यज़ीद के हाथ पर बैअत कर ली। दूसरे प्रान्तों के लोगों ने भी गवर्नरों के ज़रिए बैअत की। बाक़ी जगहों के लिए यज़ीद ने गवर्नरों को लिखा कि मेरे लिए जल्द बैअत लो।

यज़ीद के नाम पर बैअत न करने वालों में दो खास सहाबी भी थे। वह यज़ीद के खलीफ़ा बनाये जाने के तरीक़े से मुतमइन नहीं थे इन में हज़रत अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ि० और हज़रत हुसैन रज़ि० थे।

हज़रत अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ि० अमीर मुआविया रज़ि० के इंतिक़ाल के बाद मक्का मुअज़्ज़मा चले गये थे, यज़ीद के हुक्म के मुताबिक़ फ़ौज उन को गिरफ़्तार करने पहुंची, लड़ाई हुई और हज़रत अब्दुल्लाह

बिन ज़ुबैर रज़ि० जीत गये, और यज़ीदी फ़ौज का सरदार गिरफ़्तार कर लिया गया। इस तरह हज़रत इब्ने ज़ुबैर रज़ि०मक्का के हाकिम बन गये।

कूफ़ा वाले हज़रत अमीर मुआविया रज़ि० ही के ज़माने में हज़रत इमाम हुसैन रज़ि० को ख़त लिखते रहते थे और कहा करते थे कि आप कूफ़ा चले आएं, हम आपके हाथ पर बैअत करेंगे। हज़रत मुआविया रज़ि० को इन बातों की जानकारी थी, इसी लिए उन्हों ने वसीयत की थी कि कूफ़ा वाले इमाम हुसैन रज़ि० को तुम से लड़ने पर ज़रूर निकालेंगे, मगर ऐसी सूरत हो और तुम इमाम हुसैन रज़ि० पर क़ाबू पाओ, तो उनके साथ रियायत का बर्ताव करना।

हज़रत मुआविया रज़ि० के इंतिक़ाल पर यज़ीद की बैअत इमाम हुसैन ने नहीं की, यह ख़बर मिलते ही कूफ़े वालों ने इमाम हुसैन रज़ि० को लिखा कि—

'हम आप के साथ मिल कर जंग करने को तैयार हैं। आप फ़ौरन इस ख़त के देखते ही कूफ़े की ओर चल पड़िए। यहां आइए, ताकि हम गवर्नर नोमान बिन बशीर को क़त्ल कर के कूफ़ा आप के सुपुर्द कर दें। हम आप को ख़िलाफ़त का हक़दार यक़ीन करते हैं। यज़ीद तो किसी तरह भी ख़िलाफ़त का हक़दार नहीं। यह मौक़ा है, देर न कीजिए। हम यज़ीद को क़त्ल करके आपको तमाम इस्लामी दुनिया का अकेला ख़लीफ़ा बनाना चाहते हैं।

इमाम हुसैन रज़ि० के पास इसी तरह के बहुत से ख़त पहुंचे। आप ने मुस्लिम बिन अक़ील को बुलाया और फ़रमाया कि तुम मेरे नायब बन कर कूफ़ा में जाओ, और छुप कर मेरे नाम पर बैअत लेनी शुरू करो और इन लोगों को, जो बैअत में दाख़िल हों, समझाओ कि जब तक मैं वहां न पहुंचूं, हरगिज़ लड़ाई न करें।

मुस्लिम बिन अक़ील कूफ़ा में मुख़्तार बिन उबैदा के मकान पर उतरे। ज्यों-ज्यों लोगों को ख़बर होती गयी, हज़रत मुस्लिम के हाथ पर बैअत का सिलसिला शुरू हो गया।

यज़ीद ने कूफ़ा का गवर्नर फ़ौरन इब्ने ज़ियाद को मुक़र्रर किया। यह बड़ा सख़्त और ज़ालिम इंसान था। उस ने हज़रत मुस्लिम को क़त्ल करा दिया।

कूफ़े वालों के इस्‌रार और हज़रत मुस्लिम के शुरू के ख़तों की बुनियाद पर हज़रत हुसैन ने कूफ़ा चलने का प्रोग्राम बना लिया। जब लोगों

को मालूम हुआ तो हर एक ने आ-आ कर इस इरादे से रोकना चाहा समझाया कि आप का कूफ़े की तरफ़ रवाना होना खतरे से खाली नहीं। पहले अब्दुर्रहमान बिन हारिस ने आ कर अर्ज़ किया कि कूफ़े का इरादा छोड़ दें, क्यों कि वहां उबैदुल्लाह बिन ज़ियाद, इराक़ का हाकिम मौजूद है। कूफ़ा वाले लालची लोग हैं। बहुत मुम्किन है, जिन लोगों ने आप को बुलाया है, वही आप के खिलाफ़ लड़ने के लिए मैदान में निकलें। हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ि०तो मना करते-करते रो पड़े हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास ने समझाते हुए कहा, तुम्हारे वालिद ने मक्का और मदीने को छोड़ कर कूफ़ा को तर्जीह दी थी, मगर तुम ने देखा कि कूफ़ा वालों ने उन के साथ क्या सुलूक किया, यहां तक कि उन को शहीद ही करके छोड़ा, तुम्हारे भाई हसन रज़ि० को भी कूफ़ियों ने लूटा, क़त्ल करना चाहा, आखिर ज़हर दे कर मार डाला। अब तुम को हरगिज उन पर एतबार न करना चाहिए, न उन की बैअत पर भरोसा है, न उन के खत और पैग़ाम भरोसे के काबिल हैं। लेकिन हज़रत हुसैन रज़ि० ने किसी की बात न मानी। लोगों ने फिर कहा, अच्छा, अगर तुम मेरा कहना नहीं मानते, तो कम से कम औरतों और बच्चों को तो साथ न ले जाओ, क्योंकि कूफ़ा वालों का कोई एतबार नहीं है, लेकिन इसे भी उन्हों ने तस्लीम न किया।

हज़रत हुसैन रज़ि० कूफ़ा की तरफ़

आखिर ३० ज़िलहिज्जा सन ६० हि०में हज़रत इमाम हुसैन रज़ि० मय खानदान मक्का से कूफ़ा के लिए चले उसी दिन कूफ़ा में हज़रत मुस्लिम बिन अक़ील क़त्ल किए गये थे।

हाजर नामी जगह से आप ने क़ैस बिन मुस्हर के हाथ कूफ़ा वालों के पास एक खत भेजा कि हम क़रीब पहुंच गये हैं, हमारा इन्तिज़ार करो। क़ैस क़ादसिया में गिरफ़्तार कर लिए गये, फिर उन्हें छत से गिरा कर मार डाला गया। ग़रज यह कि सालबिया तक पहुंचते-पहुंचते इमाम हुसैन रज़ि० को मालूम हो गया कि हज़रत मुस्लिम शहीद कर दिए गये और कूफ़े में अब उन का कोई हामी व मददगार नहीं है। फिर भी आप आगे

बढ़ते रहे। जिस वक़्त आप करबला के मैदान में दाखिल हुए हैं, आप के साथ कुल सत्तर-अस्सी आदमी थे।

करबला का मैदान

अम्र बिन साद जो इब्ने ज़ियाद के हुक्म पर इमाम हुसैन रज़ि० को गिरफ़्तार करने निकला था, वह भी मय फ़ौज करबला पहुंच गया। इमाम हुसैन रज़ि० को क़रीब बुलाया और बोला—

'बेशक आप यज़ीद के मुक़ाबले में खिलाफ़त के ज़्यादा हक़दार हैं, लेकिन अल्लाह को यह मंज़ूर नहीं कि आप के खानदान में हुकूमत और खिलाफ़त आए, हज़रत अली और हज़रत हसन रज़ि० के हालात आप के सामने गुज़र चुके हैं, अगर आप इस सल्तनत और हुकूमत के ख्याल को छोड़ दें, तो बड़ी आसानी से आज़ाद और रिहा हो सकते हैं, नहीं तो फिर आप की जान का खतरा है और हम लोग आप की गिरफ़्तारी पर तैनात हैं।

हज़रत इमाम हुसैन रज़ि० ने फ़रमाया कि—

'मैं इस वक़्त तीन बातें पेश करता हूं। तुम इन तीन में से जिस को चाहो, मेरे लिए मंज़ूर कर लो—

१. एक तो यह कि जिस तरफ़ से मैं आया हूं, उसी तरफ़ मुझ को वापस जाने दो, ताकि मक्का मुअज़्ज़मा में पहुंच कर इबादते इलाही में लगा रहूं।

२. दूसरे यह कि मुझको किसी सीमा की तरफ़ निकल जाने दो कि वहां काफ़िरों के साथ लड़ता हुआ शहीद हो जाऊं।

३. तीसरे यह कि तुम मेरे रास्ते से हट जाओ और मुझ को सीधा यज़ीद के पास दमिश्क़ की तरफ़ जाने दो, मेरे पीछे-पीछे अपने इत्मीनान की ग़रज़ से तुम भी चल सकते हो। मैं यज़ीद के पास जा कर सीधे-सीधे उस से अपना मामला इसी तरह तै कर लूंगा, जैसा कि मेरे बड़े भाई हज़रत इमाम हसन ने अमीर मुआविया रज़ि० से तै किया था।

लेकिन अफ़सोस है कि इन में कोई बात भी यज़ीदी अफ़सरों ने तस्लीम न की और हज़रत हुसैन रज़ि० पर पानी भी बन्द कर दिया गया,

हज़रत इमाम हुसैन रज़ि० के लिए लड़ाई के अलावा कोई चारा न रहा, हज़रत हुसैन रज़ि० खूब समझ रहे थे कि अब हक़ की राह में, अल्लाह के दीन के लिए सर कटाना है, चुनांचे लड़ाई शुरू हुई और आप के खेमे के एक-एक योद्धा ने, चाहे जवान हो, अधेड़ हो, बच्चा हो, करबला के मैदान में सर कटा दिया, आखिर में हज़रत हुसैन रज़ि० ने अकेले रह जाने के बाद जिस बहादुरी और जवांमरदी के साथ दुश्मनों पर हमले किए हैं, वह अपनी मिसाल आप है, यहां तक कि कि आप ने भी अल्लाह की राह में अपना सर क़लम करा दिया।

इन्नालिल्लाहि व इन्ना इलैहि रजिऊन०

फिर हज़रत इमाम हुसैन रज़ि० का मुबारक सर और आप के घर वाले कूफ़ा में इब्ने ज़ियाद के पास भेजे गये और वहां से ये लोग यज़ीद के पास दमिश्क़ भेज दिए गये। इमामे बीमार हज़रत ज़ैनुल आबिदीन और औरतें जब यज़ीद के पास पहुंचीं और इमाम हुसैन रज़ि० का सरे मुबारक उस ने देखा, तो वह भरे दरबार में रो पड़ा और उबैदुल्लाह बिन ज़ियाद को गालियां दीं और कहा, मैं ने यह हुक्म कब दिया था कि हुसैन बिन अली रज़ि० को क़त्ल कर देना। इमाम हुसैन रज़ि० की मां मेरी मां से अच्छी थीं, उन के नाना आंहज़रत सल्ल० तमाम रसूलों से बेहतर और औलादे आदम के सरदार हैं।

इसके बाद इन क़ैदियों को आज़ादी देकर मेहमान के तौर पर अपने महल में रखा और शाही मेहमान बना कर इस क़ाफ़िले को फिर मदीना रवाना किया। यज़ीद ने इस लुटे-पिटे क़ाफ़िले की भरपूर मदद की।

मक्का व मदीना के वाक़िए

जब इमाम हुसैन रज़ि० के शहीद होने की खबर मक्का में पहुंची, तो अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ि० ने लोगों को जमा करके एक तक़रीर की और कहा कि—

'लोगो! दुनिया में इराक़ के आदमियों से बुरे कहीं के आदमी नहीं हैं, और इराक़ियों में सबसे बदतर कूफ़ी लोग हैं कि उन्होंने बार-बार खत भेजकर इसरार के साथ इमाम हुसैन रज़ि० को बुलाया और उन की खिलाफ़त के लिए बैअत की, लेकिन जब इब्ने ज़ियाद कूफ़े में आया तो

उसी के साथ हो गये और इमाम हुसैन रज़ि० को, जो नमाज़ गुज़ार, रोज़ेदार, क़ुरआन पढ़ने वाले और हर तरह खिलाफ़त के हक़दार थे, क़त्ल कर दिया और तनिक भी खुदा का डर न किया।'

यह कहकर अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ि० रो पड़े। लोगों ने कहा कि अब आप से बढ़कर खिलाफ़त का कोई हक़दार नहीं है। आप हाथ बढ़ाइए, हम आपके हाथ पर बैअत करते और आप को वक़्त का खलीफ़ा मानते हैं, चुनांचे तमाम मक्का वालों ने अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ि० के हाथ पर बैअत की। खिलाफ़त की बैअत की यह खबर यज़ीद को पहुंची तो वह बहुत परेशान हुआ। वह चाहता था कि अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ि० को क़ाबू में लाया जाए और खाना काबा की हुर्मत को भी खून-खराबे से नुक्सान न पहुंचाया जाए।

इधर अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ि० ने एलान कर दिया कि यज़ीद खिलाफ़त का हक़दार नहीं है, उससे मुसलमानों को जिहाद करना चाहिए।

यह हवा मक्के के अलावा मदीने में भी फैली और मदीना भी यज़ीद के खिलाफ़ हो गया।

बनू उमैया के लोग यह रंग देखकर मदीने से बाहर चले गये, जो बचे थे उन्हें लोगों ने गिरफ़्तार कर लिया और कोशिश की कि अली बिन हुसैन रज़ि० (इमाम ज़ैनुल आबिदीन) के हाथ पर खिलाफ़त की बैअत करें। चुनांचे सब मिल कर अली बिन हुसैन रज़ि० के पास गये उन्हों ने साफ़ इन्कार कर दिया और मदीने से बाहर एक गांव में चले गये।

अली बिन हुसैन रज़ि० के इन्कार के बावजूद मदीना में यज़ीद के खिलाफ़ जो आग भड़की थी, वह अभी बुझी नहीं थी। यज़ीद ने मुस्लिम बिन उक़्बा को एक बड़ी फ़ौज के साथ मदीने पर धावा बोलने के लिए भेज दिया। यज़ीद ने मुस्लिम को रुख़सत करते वक़्त नसीहत की कि जहां तक मुम्किन हो, नर्मी और दरगुज़र से काम लेना, मदीने वालों को सीधे रास्ते पर लाने की कोशिश करना, लेकिन जब यक़ीन हो जाए कि नर्मी और नसीहत काम नहीं आ सकती तो फिर तुझको पूरा अख्तियार देता हूं कि क़त्ल व खून में कमी न करना, मगर इस बात का ज़रूर ख्याल रखना कि अली बिन हुसैन रज़ि० को कोई तक्लीफ़ न पहुंचे।

मदीना के लिए यह इन्तिज़ाम करके उसी दिन यज़ीद ने उबैदुल्लाह बिन ज़ियाद के पास एक क़ासिद को खत देकर भेजा। खत में लिखा था कि

तू कूफ़ा से फ़ौज लेकर मक्के पर हमला कर और अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ि० के फ़ित्ने को मिटा। उबैदुल्लाह बिन ज़ियाद ने इस काम से साफ़ इन्कार कर दिया और साफ़ कह दिया कि मैं इमाम हुसैन रज़ि० के क़त्ल करने का एक काम कर चुका हूं, अब ख़ाना काबा के वीरान करने का दूसरा काम मुझ से न होगा। यह काम किसी दूसरे शख़्स को सुपुर्द करना चाहिए।

मुस्लिम बिन उक़्बा जब फ़ौज लिए हुए मदीना के क़रीब पहुंचा तो मदीना वाले अब्दुल्लाह बिन हंज़ला से, जो उस वक़्त सरदारी कर रहे थे, कहा कि बनी उमैया, जो मदीना में मौजूद हैं, उनसे क़सम लेकर और समझौता करके मदीने से बाहर कर दिया जाए। अब्दुल्लाह बिन हंज़ला ने तमाम बनी उमैया से यह समझौता करके सब को मदीने से रुख़सत कर दिया, अब्दुल मलिक बिन मरवान के अलावा कि इन्हें मदीने में रहने की आज़ादी रही।

मुस्लिम ने मालूमात करके अब्दुल मलिक से मुलाक़ात की, उनके मश्विरे हासिल किए और उसी पर अमल किया।

मुस्लिम ने पहले मदीने वालों के पास पैग़ाम भेजा और इताअत करने को कहा, साथ ही धमकी भी दी कि अगर तुम ने ऐसा किया तो लड़ाई लड़नी पड़ेगी। समझौता न हो सका, तो लड़ाई हुई और मुस्लिम बिन उक़्बा की बहादुरी और तजुर्बे से मदीनों वालों को हारना पड़ा और उनके बड़े-बड़े सरदार इस लड़ाई में काम आ गये। फिर मुस्लिम बिन उक़्बा की फ़ौज ने मदीने में वह क़त्ल व ख़ून किया है कि एक हज़ार के क़रीब आदमी मारे गये।

२७ ज़िलहिज्जा सन ६३ हि० को मुस्लिम बिन उक़्बा मदीने में जीती हुई फ़ौज लेकर दाख़िल हुआ था और उसी दिन मुहम्मद बिन अब्दुल्लाह बिन अब्बास बिन अब्दुल मुत्तलिब पैदा हुआ। यही वह मुहम्मद बिन अब्दुल्लाह है, जो मुहम्मद अबुल अब्बास सफ़ाह के नाम से मशहूर है और अब्बासियों का पहला ख़लीफ़ा है। मदीने की सरदारी में पेश-पेश मुन्ज़िर बिन ज़ुबैर को मुस्लिम ने बहुत तलाश कराया, पर वह बचकर मक्का की ओर निकल गये थे।

मदीने से फ़ारिग़ होकर मुस्लिम बिन उक़्बा अपनी फ़ौज लेकर यज़ीद के हुक्म के मुताबिक़ मक्के की ओर चला। रास्ते में अबवा के क़रीब मुस्लिम ज़्यादा बीमार हुआ और हुसैन बिन नुमैर को अपनी फ़ौज

का सरदार बनाकर मर गया।

हुसैन बिन नुमैर मक्का के क़रीब पहुंचा तो अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ि० को पैग़ाम भेजा कि इताअत करो, वरना मक्का पर हमला होगा। अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ि० ने मुक़ाबले की तैयारी की। अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ि० के भाई मुंज़िर बिन ज़ुबैर भी मदीने से मक्का आ गये थे और फ़ौज के एक हिस्से की सरदारी कर रहे थे।

मक्के वालों की बहादुरी और सख़्त मुक़ाबले की वजह से हुसैन बिन नुमैर तो (जीत) हासिल न कर सका, अलबत्ता उसने काबा पर गोले, बारूद, ईंट-पत्थर बरसाने शुरू कर दिए। उस की फ़ौज ने रूई और गंधक और राल के गोले बना-बनाकर और जला-जला कर फेंकने शुरू किए, जिससे ख़ाना काबा का ग़िलाफ़ जल गया और दीवारें स्याह हो गयीं।

यहां यज़ीदी फ़ौज ख़ाना काबा पर गोले-पत्थर बरसा रही थी और उधर १० रबीउल अव्वल को यज़ीद ने होरान नामी जगह में तीन साल और आठ माह की हुकूमत और ३८ या ३६ साल की उम्र में इंतिक़ाल किया।

यज़ीद के मरने की ख़बर पहले हज़रत अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ि० के पास पहुंची। उन्होंने ऊंची आवाज़ से शामियों से कहा कि बद-बख़्तो! तुम अब क्यों लड़ रहे हो, तुम्हारा गुमराह सरदार मर गया।

इस तरह ख़ाना काबा का घेराव ख़त्म हुआ।

यज़ीदी हुकूमत पर एक नज़र

यज़ीद की हुकूमत लगभग पौने चार साल रही। इसके दौर में मुसलमानों को कोई फ़त्ह और कामियाबी हासिल नहीं हुई, बल्कि अमीर मुआविया की बीस साल की हुकूमत व ख़िलाफ़त के बाद अन्दरूनी झगड़ों और बाहरी क़ौमों की तरफ़ से ग़ाफ़िल होने का ज़माना शुरू हो गया।

यज़ीद के दामन पर सबसे बड़ा दाग़ हज़रत इमाम हुसैन रज़ि० की शहादत का है, जिसने उसके और दूसरे ऐबों को भी नुमायां कर दिया है। हज़रत इमाम हुसैन रज़ि० ने यज़ीद की मुख़ालफ़त क्यों की, इसके लिए उनके उस ख़ुत्बे को समझ लेना काफ़ी है, जो उन्होंने बेज़ा नामी जगह पर

हुर के साथियों और अपने हमराहियों के सामने दिया था। आप ने कहा था—

'लोगो ! अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया है, जिस ने ऐसे बादशाह को देखा, जो ज़ालिम है, ख़ुदा की हराम की हुई चीज़ों को हलाल करता है, ख़ुदा के अह्द को तोड़ता है, अल्लाह के रसूल की सुन्नत की मुख़ालफ़त करता है, ख़ुदा के बन्दों पर गुनाह और ज़्यादती के साथ हुकूमत करता है और देखने वाले को उस पर अपने अमल और क़ौल पर ग़ैरत नहीं आती, तो ख़ुदा को यह हक़ है कि उस बादशाह के बजाए उस देखने वाले को जहन्नम में दाख़िल करदे तुम अच्छी तरह समझ लो कि उन लोगों ने शैतान की इताअत क़ुबूल कर ली है और रहमान की इताअत छोड़ दी है और ज़मीन पर फ़ित्ना व फ़साद फैला रखा है, अल्लाह की हदों को मुअत्तल कर दिया है और माले ग़नीमत में अपना हिस्सा ज़्यादा लेते हैं। ख़ुदा की हराम की हुई चीज़ों को हलाल और उस की हलाल की हुई चीज़ों को हराम कर दिया है, इस लिए मुझे इन बातों पर ग़ैरत आने का ज़्यादा हक़ है।'

ये थीं वे वजहें, जो हज़रत इमाम हुसैन रज़ि० को करबला तक लायीं। आप और आप के अह्ले बैत हक़ बात को ग़ालिब करने के लिए एक बातिल निज़ाम के मिटाने की कोशिश में शहीद हुए।

वैसे भी यज़ीद अमीर मुआविया रज़ि० का कोई अच्छा जानशीं नहीं था, न मज़हब से उसे ख़ास ताल्लुक़ था, न हुकूमत और सियासत ही में उस ने किसी क़ाबिलियत का मुज़ाहरा किया। वह अगर किसी क़ाबिल होता, तो सबसे पहले वह इस काम में अपनी हिम्मत और कोशिश लगाता कि लोग हज़रत अमीर मुआविया रज़ि० और हज़रत अली रज़ि० के झगड़ों को भूल जाएं, लेकिन उस ने या तो इस तरफ़ तवज्जोह कम दी या वह अपनी ना-अह्ली की वजह से कामियाब न हो सका।

यज़ीद का पहला निकाह उम्मे हाशिम बिन्त उत्बा बिन रबीआ के साथ हुआ था, जिस से दो बेटे मुआविया और ख़ालिद पैदा हुए। यज़ीद को ख़ालिद के साथ ज़्यादा मुहब्बत थी, लेकिन मुआविया को उसने अपना वली अह्द मुक़र्रर किया था।

दूसरा निकाह उस का उम्मे कुलसूम बिन्त अब्दुल्लाह बिन आमिर से हुआ जिस के पेट से अब्दुल्लाह बिन यज़ीद पैदा हुआ जो तीरंदाज़ी में

बहुत मशहूर था । इस के अलावा कुछ बेटे यज़ीद के लौंडियों के पेट से भी पैदा हुए थे ।

मुआविया बिन यज़ीद

मुआविया बिन यज़ीद की उफ़ियत अबूलैला और अबू अब्दुर्रहमान थी । मुआविया की वफ़ात के वक़्त उसकी उम्र बीस साल और कुछ महीने थी । शख्स यह बड़ा नेक और इबादत गुज़ार जवान था । शाम वालों ने यज़ीद की वफ़ात के बाद उस के हाथ पर बैअत की । हुसैन बिन नुमैर जब मक्का-मदीना होता हुआ दमिश्क़ पहुंचा है, तो मुआविया बिन यज़ीद के हाथ पर बैअत हो चुकी थी ।

मुआविया अपनी खिलाफ़त और लोगों से बैअत लेने की ख्वाहिश न रखता था, वह कुछ बीमार भी था, लेकिन इसी बीमारी की हालत में ही उस के हाथ पर बैअत की गयी । उस ने लोगों के इसरार से मजबूर होकर बैअत ली और मुश्किल से दो या तीन माह बीते थे कि उस का इंतिक़ाल हो गया ।

मुआविया इस मुद्दत में ज़िक्र के क़ाबिल कोई काम न कर सका ।

मुआविया के मरज़ ने जब तरक्क़ी की तो लोगों ने कहा कि अपने बाद किसी को खिलाफ़त के लिए नामज़द कर दो । मुआविया ने कहा कि मैं पहले ही अपने अन्दर खिलाफ़त की ताक़त नहीं पाता था, तुम लोगों ने ज़बरदस्ती मुझ को खलीफ़ा बनाया । मैं ने सोचा कि कोई शख्स उमर फ़ारूक़ की तरह मिल जाए, तो उस को खिलाफ़त सुपुर्द कर दूं, लेकिन नहीं मिला । फिर मैं ने चाहा कि जिस तरह हज़रत उमर फ़ारूक़ ने कुछ लोगों को नामज़द कर दिया था कि उन के बाद वे खलीफ़ा चुनें, इसी तरह मैं भी कुछ लोगों को नामज़द कर दूं, लेकिन मेरी निगाह में ऐसे लोग भी नहीं आए । इस लिए अब मैं इस मामले में कुछ नहीं कहता, तुम को अख्तियार है, जिस को चाहो, खलीफ़ा बनाओ, मुझ से कोई मतलब नहीं । यह कह कर मुआविया ने लोगों को बाहर निकलवा कर अपने कमरे का दरवाज़ा बन्द कर लिया और फिर जनाज़ा ही बाहर निकला ।

बसरा में इब्ने ज़ियाद की बैअत

मुआविया बिन यज़ीद की खिलाफ़त को सिर्फ़ शाम और मिस्र के लोगों ने माना था। हिजाज़ वालों ने हज़रत अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ि० के हाथ पर बैअत की थी। यज़ीद के मरने की खबर जब इराक़ में पहुंची तो उस वक़्त उबैदुल्लाह बिन ज़ियाद बसरा में था, उस ने बसरा वालों को जमा कर के कहा कि अमीरुल मोमिनीन यज़ीद का इंतिक़ाल हो गया है, अब कोई शख़्स ऐसा नहीं नज़र आता जो खिलाफ़त के कामों को चलाने की क़ाबिलियत रखता हो। मैं इसी मुल्क में पैदा हुआ और यहीं मैं ने परवरिश पायी। मेरा बाप भी इस मुल्क का हाकिम था, अब मैं भी इसी मुल्क का हाकिम हूं। आमदनी पहले से ज़्यादा है। खज़ाना पहले से ज़्यादा मौजूद है, लोगों की तंख्वाहें और वज़ीफ़े भी अब पहले से ज़्यादा हैं, फ़सादियों से मुल्क पाक व साफ़ है, तुम लोग अगर चाहो, तो अपनी खिलाफ़त अलग क़ायम कर सकते हो, क्योंकि तुम शाम वालों के मुहताज नहीं हो।

यह तक़रीर सुन कर सब ने कहा कि बहुत मुनासिब है। हम आपके हाथ पर बैअत करने को तैयार हैं। बसरे वालों से बैअत ले कर उबैदुल्लाह कूफ़े की तरफ़ गया कि वहां के लोगों से भी बैअत ले, लेकिन कूफ़ा वालों ने साफ़ इन्कार कर दिया। बसरा वालों को जब मालूम हुआ कि कूफ़ा वाले इब्ने ज़ियाद की बैअत नहीं कर रहे हैं, तो उन्हों ने भी अपनी बैअत खत्म कर दी।

इब्ने ज़ियाद मजबूर और मायूस होकर इराक़ से भागा और दमिश्क़ पहुंचा, यह दमिश्क़ में उस वक़्त पहुंचा था, जब कि मुआविया बिन यज़ीद फ़ौत हो चुका था और खलीफ़ा के चुनाव के बारे में शाम देश में झगड़ा चल रहा था।

इब्ने ज़ुबैर रज़ि० की खिलाफ़त

कूफ़ा वाले हज़रत हुसैन रज़ि० की शहादत से ज़्यादा शर्मिंदा थे,

अन्दर ही अन्दर इस का इब्ने ज़ियाद से बदला लेना चाहते थे। जब उबै-दुल्लाह बिन ज़ियाद ने कूफ़ा वालों को अपनी बैअत की तरफ़ मुतवज्जह किया तो लोगों ने इसी लिए इंकार कर दिया कि वे सुलेमान बिन सर्द की हिदायत और तज्वीज़ के मुताबिक़ इब्ने ज़ियाद से बदला लेने की तैयारियां कर रहे थे।

इब्ने ज़ियाद को साफ़ जवाब देने के बाद कूफ़ा वालों ने अम्र बिन हुर्स को, जो इब्ने ज़ियाद की तरफ़ से कूफ़ा का हाकिम था, निकाल दिया और अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ि० की खिलाफ़त को तस्लीम करलिया। अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ि० की तरफ़ से अब्दुल्लाह बिन यज़ीद अंसारी कूफ़ा के गवर्नर मुक़र्रर हो कर आ गये।

अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ि० के गवर्नर के आने से पहले ही मुख़्तार बिन अबू उबैद भी कूफ़ा पहुंच गया। रमज़ान सन ६४ का वाक़िआ है। बसरा वालों ने भी इब्ने ज़ियाद के चले जाने पर अब्दुल्लाह बिन हारिस को अपना सरदार बना लिया और फिर कूफ़े वालों की पैरवी में अपना एक वफ़्द भेज कर हज़रत इब्ने ज़ुबैर रज़ि० की खिलाफ़त को मान लिया, इस तरह तमाम इराक़ पर भी हज़रत अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ि० की हुकूमत क़ायम हो गयी।

मिस्र का हाकिम अब्दुर्रहमान बिन जह्दम था। उस ने जब मुआ-विया में यज़ीद के इंतिक़ाल की खबर सुनी तो उसने वफ़्द के ज़रिए अब्दु-ल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ि०की बैअत की। दमिश्क़ वालों ने ज़ह्हाक बिन क़ैस के हाथ पर नया खलीफ़ा बनने तक बैअत करली थी, ज़ह्हाक बिन क़ैस ने भी खिलाफ़त के लिए हज़रत अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ि० ही को खलीफ़ा बनाना मुनासिब समझा। ग़रज़ मुआविया बिन यज़ीद की वफ़ात के बाद पूरीइस्लामी दुनिया हज़रत अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ि० की खिलाफ़त को मान चुकी थी, बस बनू उमैया के लोग थे जो किसी क़ीमत पर भी हज़रत अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ि० की हुकूमत मानने को तैयार न थे।

मरवान बिन हकम

मरवान बिन हकम बिन अबिल आस बिन उमैया की पैदाइश का ज़माना सन ०२ हि०है। मां का नाम आमना बिन्ते अल्क़मा बिन सफ़वान

है। हज़रत उस्मान ग़नी रज़ि० की खिलाफ़त के ज़माने में मीर मुंशी और वज़ीर रहे।

हज़रत अमीर मुआविया रज़ि० के ज़माने में कई बार मदीने की हुकूमत हासिल रही।

मुआविया बिन यज़ीद की वफ़ात के बाद छः सात महीने तक तंहा हज़रत अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ि० ही खलीफ़ा थे। उन के सिवा और कोई शख्स बनी उमैया में से खिलाफ़त का दावेदार न था। तमाम लोगों ने हज़रत अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ि० की खिलाफ़त मान ली थी।

छः सात महीने में मरवान अपनी कोशिश में कामियाब होकर शाम देश पर क़ब्ज़ा कर बैठा, इस लिए मरवान की हैसियत तो एक बाग़ी की थी और चूंकि खिलाफ़त बनू उमैया से बिल्कुल निकल चुकी थी, इसलिए मरवान को बनू उमैया का खिलाफ़त की बुनियाद रखने वाला भी कहा जा सकता है।

खिलाफ़ते बनू उमैया का बानी

मुआविया बिन यज़ीद की वफ़ात के बाद शाम देश में भी दो गिरोह हो गये थे, एक तो बनी उमैया, जो अपने ही क़बीले की खिलाफ़त चाहते थे, दूसरे ज़ह्हाक बिन क़ैस दमिश्क़ के हाकिम, जो अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ि० की खिलाफ़त की ताईद में थे।

मरवान की साज़िश शुरू हो गयी और उबैदुल्लाह बिन ज़ियाद की कोशिश से उसके हाथ पर कुछ लोगों ने बैअत भी कर ली और लड़ाई का नया दौर शुरू हुआ।

मर्ज राहित में ज़ह्हाक बिन क़ैस से लड़ाई हुई और धोखा दे कर उन को हरा दिया गया। इस जीत के बाद यज़ीद बिन मुआविया के महल में आया, यहां आते ही उस ने इब्ने ज़ियाद के मश्विरे के मुवाफ़िक़ सब से पहले खालिद बिन यज़ीद की मां के साथ निकाह किया ताकि बनू कलब की हिमायत हासिल रहे और आगे खालिद बिन यज़ीद की वली अह्दी के डर से निजात हासिल हो सके।

इसके बाद उसने फ़लस्तीन और मिस्र की तरफ़ कूच किया और सन् ६५ हि० के शुरू में अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ि० के तमाम हामियों

को हराकर या क़त्ल कर दिया या देश से निकाल दिया।

हज़रत अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ि० ने अगर उसी वक़्त अपने हामियों की मदद की होती और अपने मुवाफ़िक़ हालात का फ़ायदा उठाया होता, तो शायद इस वक़्त तारीख़े इस्लाम का नक़्शा ही कुछ और होता। उन्हों ने अपने भाई मुसअब बिन ज़ुबैर रज़ि० को शाम मुल्क पर हमला करने की उस वक़्त हिदायत की, जबकि समय बीत चुका था और उनके हामियों की हिम्मतें शाम में पस्त हो चुकी थीं।

इसी तरह मरवान ने जोड़-तोड़ कर दूसरे और इलाक़ों से भी हज़रत अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ि० को बे-दख़ल कर दिया।

मरवान बिन हकम ने अपने बेटे अब्दुल मलिक और अब्दुल अज़ीज़ की वली अह्दी के लिए भी भरपूर कोशिश की, जोड़-तोड़ के जो तरीक़े भी अपनाए जा सकते हैं, वे सब अपनाए और ख़ालिद बिन यज़ीद के तरफ़दारों को धन-दौलत से क़ाबू में कर लिया और अब्दुल मलिक और अब्दुल अज़ीज़ की वलीअह्दी की आम बैअत ले ली।

मरवान बिन हकम की वफ़ात

यह बैअत चूंकि ख़ालिद बिन यज़ीद के ख़िलाफ़ थी और ख़ालिद बिन यज़ीद के तरफ़दारों को मरवान ने पहले ही अपनी तरफ़ मायल कर लिया था, इसलिए ख़ालिद बिन यज़ीद को बड़ा सदमा हुआ और वह कुछ न कर सका।

इस के बाद मरवान ख़ालिद बिन यज़ीद के क़त्ल की तद्बीरें करने लगा। ख़ालिद ने अपनी मां यानी मरवान की बीवी से शिकायत की कि मरवान मेरे क़त्ल पर तैयार है। उसकी मां ने कहा कि तुम बिल्कुल ख़ामोश रहो, मैं मरवान से पहले ही बदला ले लूंगी। चुनांचे उसने अपनी चार-पांच बांदियों को तैयार किया। रात को मरवान महल में आकर लेट गया। ख़ालिद की मां के मुताबिक़ औरतों ने मरवान के मुंह में कपड़ा ठूंसा कि आवाज़ भी न निकल सके और बेकार करके गला घोंट कर मार डाला। यह वाक़िआ रमज़ानुल मुबारक सन् ६५ हि० में वाक़ेअ हुआ। उसी दिन दमिश्क़ में अब्दुल मलिक के हाथ पर हाथ रख कर लोगों ने ख़िलाफ़त की बैअत की और अब्दुल मलिक ने मरवान के

बदले में खालिद की मां को क़त्ल करा दिया। मरवान बिन हकम की उम्र ६३ साल की थी और साढ़े नौ महीने हुकूमत की।

हज़रत अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ि०

आपका खानदान इस तरह है—अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर बिन अव्वाम बिन खुवैलद बिन असद बिन अब्दुल उज़्ज़ा बिन क़ुसई, आप की कुंनियत अबू खुबैब है। खुद भी सहाबी हैं और सहाबी के बेटे भी हैं। आप के वालिद ज़ुबैर बिन अव्वास रज़ि० उन दस सहाबियों में से ई, जिन्हें हुज़ूर सल्ल० ने जन्नत की खुशखबरी सुनायी है। आपकी वालिदा हज़रत अस्मा रज़ियल्लाहु तआला अन्हा हज़रत अबूबक्र रज़ि० की बेटी और हज़रत आइशा सिद्दीक़ा रज़ि० की बहन थीं। आपकी दादी हज़रत सफ़िया रज़ि० थीं, जो आंहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की फूफी थीं।

आंहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के मदीने में हिजरत कर के तशरीफ़ लाने से बीस महीने के बाद हज़रत अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ि० पैदा हुए। आप मदीना मुनव्वरा में मुहाजिरों की सब से पहली औलाद हैं, आप के पैदा होने से मुहाजिरों में ग़ैर मामूली तौर पर बहुत खुशियां मनायी गयीं, क्योंकि यहूदियों ने जब देखा कि एक मुद्दत तक मुहाजिरों के कोई औलाद मदीना में नहीं पैदा हुई, तो उन्हों ने मशहूर कर दिया था कि हम ने जादू कर दिया है। अब मुहाजिरों के यहां कोई औलाद पैदा न होगी, इसी लिए आप के पैदा होने से जिस तरह मुसलमानों को खुशी हुई उसी तरह यहूदियों को रंज व मलाल और ज़िल्लत और नदामत हासिल हुई। पैदा होने के बाद ही आप को आंहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की खिदमत में पेश किया गया। आप ने खजूर अपने मुंह में चबा कर आप को चटायी।

हज़रत अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ि० रोज़े बहुत रखते और नमाज़ें भी बहुत पढ़ते थे, कभी सारी-सारी रात क़ियाम में कभी सारी-सारी रात रुकूअ में, कभी सारी-सारी रात सज्दे में पड़े रहते थे। रिश्तेदारों का आप को बहुत ख्याल रहता था। आप बहुत बड़े बहादुर और ज़बरदस्त सिपहसालार (सेनापति) थे। आप धुन के पक्के, क़ौल के सच्चे थे। मुसीबतों के वक़्त पहाड़ की तरह अडिग खड़े रहते। आप तक़रीर बहुत अच्छी

करते, आवाज बड़ी कड़कदार थी। आप की आवाज पहाड़ों से जा कर टकराया करती थी।

उमर बिन क़ैस कहते हैं कि अब्दुल्लाह बिन जुबैर रज़ि० के पास सौ ग़ुलाम थे, जिन में से हर एक की जुबान अलग-अलग थी और अब्दुल्लाह बिन जुबैर रज़ि० उन में से हर एक के साथ उसी की जुबान में बातें किया करते थे। उन ही का कहना है जब मैं अब्दुल्लाह बिन जुबैर रज़ि० को कोई दीन का काम करते देखता तो ख्याल करता था कि उन को कभी एक लम्हे के लिए भी दुनिया याद न आती होगी।

एक दिन अब्दुल्लाह बिन जुबैर असदी हज़रत अब्दुल्लाह बिन जुबैर रज़ि० के पास आया और कहा कि अमीरुल मोमिनीन ! मैं और आप फ़्लां सिलसिले से रिश्तेदार हैं। अब्दुल्लाह बिन जुबैर रज़ि० ने कहा हां, दुरुस्त है, लेकिन अगर ग़ौर करो तो तमाम बनी आदम आपस में रिश्तेदार हैं, क्योंकि सब आदम व हव्वा की औलाद हैं। अब्दुल्लाह असदी ने कहा कि मेरे पास अब खर्च करने को कुछ नहीं रहा। अब्दुल्लाह बिन जुबैर रज़ि० ने कहा, मैं ने तुम्हारे खर्च की कोई गारंटी नहीं ली थी। अब्दुल्लाह असदी ने कहा, मेरा ऊंट सर्दी से मरा जाता है। अब्दुल्लाह बिन जुबैर रज़ि० ने कहा कि तुम उस को किसी गरम जगह पहुंचा दो और उस पर कोई गरम कपड़ा, नम्दा या कम्बल वग़ैरह डाल दो। अब्दुल्लाह असदी ने कहा कि मैं आपसे मश्विरा लेने नहीं आया था, बल्कि कुछ मांगने आया था। उस ऊंट पर लानत है, जिस ने मुझे आप तक पहुंचाया। हज़रत अब्दुल्लाह बिन जुबैर रज़ि० ने फ़रमाया, उस ऊंट के सवार पर भी तो लानत कहो।

ख़िलाफ़त इब्ने ज़ुबैर रज़ि० के अहम वाक़िए

हज़रत अब्दुल्लाह बिन जुबैर रज़ि० की हुकूमत मक्का मुअज्ज़मा में अमीर मुआविया रज़ि० की वफ़ात के बाद ही से क़ायम थी और उन्हों ने यज़ीद की हुकूमत के ज़माने में मक्के पर कभी यज़ीद की हुकूमत क़ायम नहीं होने दी। यज़ीद के मरने के बाद उन्हों ने अपनी खिलाफ़त पर बैअत की और बहुत जल्द शाम की कुछ जगहों के सिवा पूरी इस्लामी दुनिया में वह ख़लीफ़ा मान लिए गये। उस ज़माने में उन को शाम की उस हालत

का, जो उन के मुवाफ़िक़ पैदा हो चुकी थी, सही अन्दाज़ा न हो सका, वह ग़लतफ़हमी में पड़ गये, नतीजा यह हुआ कि मिस्र और फ़लस्तीन उन के क़ब्ज़े से जाते रहे और मरवान ने ख़ानदाने मरवान के लिए ख़िलाफ़त की बुनियाद रख दी।

मुख़्तार बिन उबैदा बिन सक़फ़ी कूफ़े में इमाम हुसैन रज़ि० की शहादत के बाद क़ातिलों से आप के ख़ून का बदला लेना चाहता था। अम्न क़ायम रखने के लिए कूफ़े के गवर्नर ने उसे क़ैद करके जेल में डाल दिया। उसने अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ि० को ख़त लिखा कि आप अपने गवर्नर को लिख कर मेरी रिहाई करा दीजिए, चुनांचे वह रिहा कर दिया गया। इस बात को उसने किसी से बताया नहीं था, अचनानक रिहाई देख कर उसके दोस्तों ने इसे उस की करामत समझा और उससे लोगों की अक़ीदत बढ़ने लगी। एक ताक़त हासिल कर लेने के बाद मुख़्तार ने कूफ़े पर क़ब्ज़ा कर लिया और कूफ़े के हाकिम को मार भगाया। फिर और ताक़त पहुंचने के बाद उसने आरमीनिया, आज़रबाईजान, मदाइन, हलवान पर क़ब्ज़ा करके अपनी हुकूमत क़ायम कर ली।

यही मुख़्तार सक़फ़ी है, जिस ने हुकूमत पाते ही इमाम हुसैन रज़ि० के क़ातिलों या क़त्ल में शरीक लोगों को एक-एक करके क़त्ल करा दिया।

उसी वक़्त यमामा पर नज्दा बिन आमिर ने ताक़त हासिल करके क़ब्ज़ा कर लिया। ग़रज़ यह कि अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ि० की ख़िलाफ़त के दौर में मिस्र, फ़लस्तीन और शाम का मुल्क अब्दुल मलिक बिन मरवान के क़ब्ज़े में चला गया और बनू उमैया की हुकूमत दोबारा दमिश्क़ में क़ायम हो गयी, कूफ़ा और यमामा भी हाथ से जाता रहा। सन ६५ हि० में कुछ प्रान्तों में बग़ावतें हुईं, लेकिन हज़रत अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ि० ही ख़लीफ़ा तस्लीम किए जाते रहे।

सन् ६६ हि० में बसरा में कूफ़ा के बहुत-से आदमी भाग-भाग कर पहुंच रहे थे। उस वक़्त बसरा के हाकिम मुसअब बिन ज़ुबैर रज़ि० थे, जो हज़रत अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ि० ही के भेजे हुए थे। भाग कर आने वालों ने मुसअब से मदद और अमान चाही। मुहल्लब बिन अबी सफ़रा की मदद भी मुसअब को मिल गयी। हज़रत अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ि० को इजाज़त भी मिल गयी। इजाज़त मिलने की सब से बड़ी वजह यह थी कि मुख़्तार ने कूफ़े में लोगों को भारी तायदाद में क़त्ल कर दिया था और यह भी मशहूर कर दिया था कि मेरे पास हज़रत जिब्रील आते हैं

और अल्लाह की वह्य लाते हैं और मैं नबी बनाकर भेजा गया हूं। नुबूवत की इस गवाही से घबरा कर भी लोग भागे थे हज़रत अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ि० ने इस दावे को सुनकर ज़रूरत समझी कि पहले मुख़्तार ही की जड़ काट दी जाए और देर न की जाए, इसीलिए इजाज़त दे दी।

कूफ़ा पर धावा कर दिया गया। मुख़्तार भी मुक़ाबले के लिए फ़ौज लेकर निकला। लड़ाई हुई। मुख़्तार हार गया, भाग कर कूफ़ा में शाही महल में बैठ गया। मुसअब बिन ज़ुबैर ने महल घेर लिया। मजबूर हो कर मुख़्तार ने लड़ना मंज़ूर कर लिया निकला और मारा गया।

मुख़्तार के क़त्ल के बाद इब्राहीम बिन मलिक ने, जो मूसल पर क़ाबिज़ हो गया था, उसने भी हज़रत अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ि० की इताअत मान ली।

मरवान बिन हकम के मरने के बाद अब्दुल मलिक बिन मरवान ने ख़िलाफ़त की बैअत ली थी, चुनांचे उसने इस बिखराव से फ़ायदा उठा कर साज़िशें शुरू कर दीं। उसने फ़ारस की तरफ़ अपने आदमियों को भेज कर ख़ारजियों को उम्मीदें दिलायीं और उनको बग़ावत पर तैयार किया। इधर कूफ़ा और बसरा में भी अपने आदमियों को भेज कर बनू उमैया के हिमायतियों को उभारा और मुसअब बिन ज़ुबैर के फ़ौजी सरदारों को भी ख़ुफ़िया तौर पर ख़त भेज कर बड़े-बड़े लालच देने शुरू किए।

अब्दुल मलिक अपनी पूरी तैयारियों के बाद शाम से इराक़ की तरफ़ फ़ौज लेकर चला। अब्दुल मलिक दमिश्क़ से उस वक़्त रवाना हुआ है, जबकि उसके पास कूफ़ी सरदारों के बहुत से ख़त पहुंच चुके थे कि आप को इराक़ पर फ़ौरन हमला करना चाहिए।

आख़िर अब्दुल मलिक फ़ौज लेकर चला। उधर से उसके आने की ख़बर सुनकर मुसअब बिन ज़ुबैर भी रवाना हुए। मुसअब के बड़े सरदार उस वक़्त बाहर के प्रान्तों में फ़ित्नों को दबाने में लगे हुए थे, इसलिए अधूरी और ना-मुकम्मल फ़ौज को साथ लेकर मुसअब बिन ज़ुबैर ने अब्दुल मलिक की फ़ौज का मुक़ाबला किया। मुसअब की फ़ौज ने मुसअब को धोखा दिया और इस लड़ाई में हज़रत मुसअब बिन ज़ुबैर रज़ि० शहीद कर दिए गए।

अब्दुल मलिक ने उसी मैदान में कूफ़ा की पूरी फ़ौज से अपनी

खिलाफ़त की बैअत ली, जामा मस्जिद में खुत्बा दिया, लोगों से बेहतर सुलूक का वायदा किया, इनाम व इकराम से खुश किया। फ़ारस, खुरा-सान, बसरा, मद्दाब के हाकिमों को लिखा कि हमारे नाम पर बैअत लो।

अब्दुल मलिक और हज़रत अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ि०

जब मक्का मुअज्ज़मा में हज़रत अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ि० के पास यह खबर पहुंची कि उनके भाई मुसअब बिन ज़ुबैर रज़ि० इराक़ियों की बे-वफ़ाई से क़त्ल हो गये और तमाम इराक़ पर अब्दुल मलिक बिन मरवान का क़ब्ज़ा हो गया, तो उन्होंने मक्का वालों को जमा किया और कहा—

'आप लोगों को मालूम होना चाहिए कि अल्लाह तआला उस शख्स को ज़लील नहीं करता, जो हक़ पर हो, चाहे वह अकेला ही क्यों न हो और उसकी इज़्ज़त नहीं करता, जिसका वली शैतान हो, चाहे उसके साथ बहुत-से आदमी क्यों न हों और आप लोगों को मालूम होना चाहिए कि हमारे पास इराक़ से हमको दुखी करने वाली और खुश करने वाली खबर आयी है, यानी हमारे पास मुसअब रज़ि० के क़त्ल की खबर आयी है। हम खुश इसलिए हुए हैं कि उसका क़त्ल शहादत है और हम दुखी इसलिए हैं कि दोस्त की जुदाई मुसीबत के वक़्त एक ऐसी चुभन है जिसको दोस्त का एहसास होता है। मुसअब क्या था ? वह खुदा के बन्दों में से एक बन्दा था। मेरे मददगारों में से एक मददगार था। आपको मालूम होना चाहिए कि इराक़ वाले बड़े बे-वफ़ा और मुनाफ़िक़ हैं। उन्होंने उस वफ़ा को, जो मुसअब के ज़रिए उनको हासिल थी, बहुत ही कम क़ीमत पर बेच डाला। मुसअब अगर क़त्ल हुआ तो उसके बाप, भाई और इब्ने उमर भी तो क़त्ल ही हुए थे, जो हिदायत पर थे, नेक और बुज़ुर्ग थे और खुदा की क़सम ! हम अपने बिस्तरों पर इस तरह न मरेंगे, जैसे कि अबुलआस की औलाद अपने बिस्तरों पर मर रही है। खुदा की क़सम ! इन लोगों में से कोई शख्स न कभी जाहिलियत में मारा गया

और न इस्लाम में और हम मेड़ों के ज़ख़्म खाकर तलवार के नीचे दम किया करते हैं और भाइयो ! आगाह रहो कि दुनिया उस बड़े बाद-शाह से उधार ली गयी है, जिसकी हुकूमत हमेशा रहेगी और जिसका मुल्क कभी ख़त्म न होगा। तो अगर दुनिया हमारे पास आएगी, तो हम उसको कमीने और गुमराह और ज़लील लोगों की तरह न लेंगे और अगर वह हमसे पीठ फेर कर भागेगी तो हम उस पर कमज़ोर लोगों की तरह न रोएंगे। बस मुझ को यही कहना था और मैं अपने और तुम्हारे लिए अल्लाह से मग़फ़िरत तलब करता हूं।

मक्का मुअज़्ज़मा का घेराव

इराक़ पर क़ब्ज़ा करने के बाद अब्दुल मलिक मरवान की हिम्मत और बढ़ गयी, उसने शाम के सरदारों को मक्का मुअज़्ज़मा पर हमला करने पर उभारा, लेकिन सबने इन्कार कर दिया कि ख़ाना काबा को लड़ाई का मैदान बनाने की हिम्मत नहीं। अब्दुल मलिक दमिश्क़ से कूफ़ा गया। वहां उसने हज्जाज बिन यूसुफ़ सक़फ़ी को इस काम पर तैयार किया। हज्जाज तीन हज़ार आदमियों को साथ लेकर जुमादल ऊला सन् ७२ हि० में कूफ़ा से रवाना हुआ और मदीना मुनव्वरा को छोड़ता हुआ अब्दुल मलिक की हिदायत के मुवाफ़िक़ तायफ़ में पहुंच कर क़ियाम किया, नयी कुमक आने पर फिर उसने मक्का मुअज़्ज़मा को घेरे में ले लिया।

हज्जाज ने अबू क़बीस पर तोपें लगा कर गोलाबारी और पत्थर-वर्षा शुरू कर दी। एक बड़ा पत्थर ख़ाना काबा की छत पर आ कर गिरा और छत टूट कर गिर गयी। लोग टूट-टूट कर हज्जाज की पनाह में जाने लगे। हज़रत अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ि० तंहाई महसूस करने लगे। हज़रत अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ि० ने इस सूरते हाल से अपनी मां हज़रत अस्मा रज़ि० को आगाह किया और कहा—

'मेरे पास अब कोई आदमी नहीं रहा, नाम के लिए सिर्फ़ पांच आदमी बाक़ी हैं, जो मेरा साथ देने पर अब तक तैयार हैं। लोगों ने मेरे साथ उसी तरह धोखे का बर्ताव किया, जैसा कि हुसैन बिन अली रज़ि० के साथ किया है, लेकिन उनके बेटे जब तक ज़िंदा रहे, बाप के सामने तलवार

ले कर दुश्मनों से लड़ते रहे, मेरे बेटे भी नाफ़रमान निकले, दुश्मन से मिल गये, अब हज्जाज कहता है कि तुम भी अमान में आ जाओ और जो कुछ मांगो हम देने को तैयार हैं, तो मैं आप की खिदमत में हाजिर हुआ हूं कि आप क्या हुक्म देती हैं?'

हज़रत अस्मा रज़ि० ने जवाब दिया कि—

'तुम अपने मामले को मुझ से बेहतर समझते हो, अगर तुम हक़ पर हो और हक़ की तरफ़ लोगों को बुलाते हो, तो इस काम में बराबर लगे रहो, तुम्हारे साथी भी हक़ के रास्ते में शहीद हुए और तुम भी इसी राह पर चल कर शहादत हासिल करो। अगर तुम ने दुनिया हासिल करने का क़स्द किया था, तो तुम बहुत ही ना-लायक़ आदमी हो, तुम खुद भी हलाकत में पड़े और तुमने अपने साथियों को भी हलाकत में डाला। मेरी राय यह है कि तुम अपने आप को बनू उमैया के हवाले न करो। मौत अपने वक़्त पर ज़रूर आएगी, तुम को मर्दों की तरह जीना और मर्दों की तरह मरना चाहिए। तुम्हारा यह कहना कि मैं हक़ पर था और लोगों ने मुझ को धोखा दे कर कमज़ोर कर दिया, एक ऐसी शिकायत है, जो नेक आदमियों की ज़ुबान पर नहीं आया करती।'

हज़रत अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ि० ने कहा कि—

'मुझ को इस बात का डर है कि ये लोग क़त्ल करने के बाद मेरा अंग-भंग करेंगे और फांसी पर लटकाएंगे।'

हज़रत अस्मा रज़ि० ने जवाब दिया कि—

'बेटे! बकरी जब ज़िब्ह कर डाली गयी, तो उसे इसकी क्या परवाह हो सकती है कि उस की खाल खींची जाती है, तुम जो कुछ कर रहे हो, आंख खोल कर किए जाओ और अल्लाह तआला से मदद तलब करते रहो

हज़रत अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ि० ने मां के सिर का बोसा लिया और कहा कि—

'मेरी भी यही राय थी, जो अपनी राय आप ने ज़ाहिर फ़रमायी। मुझ को दुनिया की ख्वाहिश और हुकूमत की तमन्ना बिलकुल न थी। मैंने इस काम को सिर्फ़ इसलिए अपनाया था कि अल्लाह तआला के हुक्मों की पाबन्दी नहीं की जाती थी और मना की हुई बातों से लोग बचते न थे। जब तक मेरे दम में दम है, मैं हक़ के लिए लड़ता रहूंगा। मैं ने आप से मश्विरा लेना ज़रूरी समझा था। आप की बातों ने मेरी बसीरत को बहुत कुछ बढ़ा दिया और अम्मां जान! मैं आज ज़रूर मारा जाऊंगा, तुम

ज्यादा ग़म न करना, तुम मुझ को अल्लाह तआला के सुपुर्द कर दो। मैं ने कभी किसी नाजायज़ काम का क़स्द नहीं किया और न किसी से बद-अह्दी की, न किसी पर ज़ुल्म किया, न ज़ालिम का मददगार बना, यहां तक कि अल्लाह तआला की मर्ज़ी के खिलाफ़ कोई काम नहीं किया। ऐ अल्लाह! मैं ने ये बातें फ़ख्र की राह से नहीं कहीं, बल्कि सिर्फ़ इसलिए कि मेरी मां को सुकून हो।'

हज़रत अस्मा रज़ि० बोलीं—

मुझे उम्मीद है कि अल्लाह तआला तुम को इस का बदला देगा, तुम अल्लाह तआला का नाम ले कर दुश्मनों पर हमला करो।'

बेटे को विदा करते वक़्त हज़रत अस्मा रज़ि० ने गले से लगाया, तो हाथ ज़िरह (कवच) पर पड़ा, पूछा, तुम ने यह ज़िरह किस इरादे से पहन रखी है? कहा, सिर्फ़ इत्मीनान व मज़बूती की ग़रज़ से। अस्मा रज़ि० ने कहा, इस को उतार दो और मामूली कपड़े पहने हुए दुश्मनों से लड़ो। हज़रत इब्ने ज़ुबैर रज़ि० ने वहीं ज़िरह उतार कर फेंक दी। क़मीज़ का दामन उठा कर कमर से बांधा, दोनों आस्तीनें चढ़ायीं और घर से बाहर निकल कर आए और अपने साथियों से कहा कि—

'ऐ आले ज़ुबैर रज़ि०! तुम तलवार की झंकार से खौफ़ज़दा न होना क्योंकि घाव में दवा लगाने की तक्लीफ़ ज्यादा होती है, उस तक्लीफ़ के मुक़ाबले में जो घाव पैदा होने से होती है, तुम लोग अपनी अपनी तलवारें खोल लो, जिस तरह अपने चेहरे को बचाते हो, उसी तरह उन को भी ना-हक़ खून से बचाओ, अपनी आंखें नीची कर लो, कि तलवारों की चमक से चकाचौंध न हो जाएं, हर शख्स अपने सामने पर हमलावर हो, तुम मुझे ढूंढते न फिरना और अगर मेरी तलाश ही हो तो मैं सब से आगे दुश्मनों से लड़ता हुआ मिलूंगा।'

'यह कह कर साथियों पर एक सख्त हमला किया, सफ़ों को चीरते, लोगों को मारते और गिराते हुए दुश्मनों की पिछली सफ़ों तक पहुंच गये। वह कभी एक तरफ़, कभी दूसरी तरफ़ हमला कर रहे थे, यहां तक कि तीरों की बारिश शुरू हो गयी, और मंगल के दिन, जुमादस्सानी सन् ७३ हि० को यह दुनिया का इंतिहाई बहादुर और मुत्तक़ी इंसान शहीद हुआ।

हज़रत अस्मा बिन्त अबूबक्र रज़ि० ने लाश के दफ़न करने की इजाज़त चाही, मगर उन को हज्जाज ने इस की इजाज़त न दी। अब्दुल

मलिक को जब यह हाल मालूम हुआ तो उसने हज्जाज को मलामत की और लाश को दफ़न करने की इजाज़त दी। कुछ दिनों के बाद हज़रत अस्मा रज़ि० का भी इंतिक़ाल हो गया।

ख़िलाफ़त इब्ने ज़ुबैर रज़ि० पर एक नज़र

हज़रत अमीर मुआविया रज़ि० के बाद अगर हज़रत इमाम हसन रज़ि० ज़िंदा होते, तो बहुत ज़्यादा मुम्किन था कि वे मुसलमानों के ख़लीफ़ा मान लिए जाते। यज़ीद के बाद हज़रत अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ि० से बेहतर कोई शख़्स न था, जो ख़िलाफ़त का हक़दार हो। अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ि० की ख़िलाफ़त के सही ख़िलाफ़त होने का सब से बड़ा सबूत यह है कि तमाम इस्लामी दुनिया में लोगों ने अपनी आज़ाद मर्ज़ी से उन को ख़लीफ़ा मान लिया और जहां-जहां लोगों को आज़ादी हासिल थी, किस ने उन की ख़िलाफ़त से इन्कार नहीं किया।

हज़रत अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ि० को अपनी हुकूमत के ज़माने में कोई ऐसा मौक़ा नहीं मिला कि वे लड़ाइयों और चढ़ाइयों की फ़िक्र से मुत्मइन बैठे हों, इसलिए अगर उन की हुकूमत के ज़माने में नयी जीतें और अन्दरूनी सुधार के काम हम को न नज़र आएं, तो यह कोई ताज्जुब की बात नहीं।

हज़रत अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ि० की ख़िलाफ़त के ज़माने में मुख़्तार बिन उबैदा का कूफ़ा में क़त्ल होना एक बड़ा कारनामा था।

फ़ारस के ख़ारजी फ़ित्ने को भी उन्हों ने ख़ूब दबाया और उस को सर उठाने नहीं दिया। अगर बनू उमैया के साथ अन्दरूनी लड़ाई न होती तो वह बेहतरीन ख़लीफ़ा साबित होते और इस्लामी शरीअत को दुनिया में बहुत रिवाज देते।

उन की शहादत के बाद सहाबा किराम रज़ि० की हुकूमत का ज़माना ख़त्म हो गया। वे सब में आख़िरी सहाबी थे, जिन्हों ने मुल्कों पर हुकूमत की और इबादतगुज़ार बन्दे की शक्ल में हुकूमत करने की एक शानदार मिसाल क़ायम की।

वही एक ऐसे ख़लीफ़ा थे, जिन की राजधानी मक्का मुअज़्ज़मा थी,

न इन से पहले मक्का मुअज्ज़मा कभी राजधानी बनी, न इन के बाद आज तक किसी ने मक्का मुअज्ज़मा को राजधानी बनाया।

अब्दुल मलिक बिन मरवान

अब्दुल मलिक बिन मरवान रमज़ान के महीने में सन २३ हि० में पैदा हुआ। उस की उफ़ियत अबुल वलीद थी और अबुल मुलूक के नाम से भी मशहूर है, क्यों कि उस के कई बेटे एक के बाद एक राज सिंहासन पर बैठे।

नाफ़ेअ कहते हैं कि मदीने में कोई जवान अब्दुल मलिक की तरह चुस्त व चालाक और क़ुरआन व हदीस का जानकार और इबादत गुज़ार न था।

अबुज्जन्नाद कहते हैं कि सईद बिन मुसय्यिब, अब्दुल मलिक बिन मरवान, उर्व: बिन जुबैर और क़बीसा बिन ज़ुवैब मदीना के फ़क़ीह हैं।

उबादा बिन मुसन्ना ने हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ि० से पूछा कि आप लोगों के बाद हम मस्अले किस से पूछा करें? उन्हों ने कहा, मरवान का बेटा फ़क़ीह है, इस से पूछना।

एक दिन अब्दुल मलिक हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० की ख़िदमत में हाज़िर हुआ, तो उन्हों ने फ़रमाया कि यह शख्स एक दिन अरब का बादशाह हो जाएगा।

उम्मुद्दर्दा रज़ि० ने ख़लीफ़ा होने के बाद एक दिन अब्दुल मलिक से कहा कि मैं पहले ही समझती थी कि तू एक न एक दिन बादशाह हो जाएगा। अब्दुल मलिक ने पूछा कि किस तरह? उन्होंने फ़रमाया कि मैंने तुझ से बेहतर न कोई बात करने वाला देखा, न बात सुनने वाला।

शाबी रह० कहते हैं कि मैं जिस शख्स की सोहबत में बैठा, वह मेरे इल्म का क़ायल हो गया, मगर मैं अब्दुल मलिक के इल्म व फ़ज़्ल का क़ायल हूं। मैं ने उस से जब कभी कोई हदीस बयान की तो उस में उस ने कुछ न कुछ बढ़ा दिया। और जब कभी कोई शेर पढ़ा, तो उस ने भी उस जैसे बहुत-से शेर पढ़ दिए।

सब से पहले अब्दुल मलिक ही ने काबा पर दीबाज के परदे डाले।

अब्दुल मलिक से किसी ने कहा कि अमीरुल मोमिनीन! आप पर

बुढ़ापा बहुत ही जल्द आ गया, तो उस ने कहा, कैसे न आता ? मैं हर जुमा को अपनी बेहतरीन अक़्ल लोगों पर खर्च करता हूं।

मदाइनी कहते हैं कि जब अब्दुल मलिक को अपने मरने का यक़ीन हो गया तो उस ने कहा कि जब से मैं पैदा हुआ हूं, उस वक़्त से लेकर अब तक मुझे यह आरज़ू रही कि काश ! मैं हम्माल (क़ुली) होता, फिर अपने बेटे वलीद को बुलाया और खुदा के खौफ़ की वसीयत की, आपस की मुखालफ़तों से मना किया और कहा—

'लड़ाई में काफ़ी सर गर्मी दिखाना, नेक कामों में नुमायां बनने की कोशिश करना, क्योंकि लड़ाई वक़्त से पहले मौत को नहीं बुलाती. नेक काम का बदला मिलता है, और मुसीबत में खुदा मददगार होता है सख्ती में नर्मी अपनानी चाहिए। आपस में रंजिशें न बढ़ाना क्योंकि एक तीर को चाहे तोड़ सकता है और जब बहुत से तीर जमा हो जाएं, तो कोई नहीं तोड़ सकता। ऐ वलीद ! मैं जिस मामले में तुझे खलीफ़ा करता हूं, उसमें खुदा का खलीफ़ा करता हूं. उस में खुदा का खौफ़ करना, हज्जाज का ख्याल करना, उसी ने गोया तुझ को खिलाफ़त तक पहुंचाया है, उस को दाहिना बाज़ू और अपनी तलवार समझना, वह तुझ को तेरे दुश्मनों से पनाह में रखेगा, उस के हक़ में किसी का क़ौल न सुनना और याद रखना कि तुझ को हज्जाज की ज़्यादा ज़रूरत है। हज्जाज को तेरी इतनी ज़रूरत नहीं। जब मैं मर जाऊं, तो लोगों से अपनी बैअत ले और जो शख्स इंकार करे, उस की गरदन उड़ा दे।'

अब्दुल मलिक शव्वाल ८६ हि० में ६३ साल की उम्र में मरा।

अब्दुल मलिक की खिलाफ़त के अहम वाक़िए

हज़रत अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ि० की शहादत के बाद अब्दुल मलिक ने हज्जाज को हिजाज़ का हाकिम बना दिया था। हज्जाज ने खाना काबा को ढा कर और हज़रत अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ि० के ज़माने की तामीर में से हिस्सा कम करके खाना-काबा को फिर से बनवाया हज्जाज ने मक्का और मदीना में सहाबा किराम रज़ि० पर बड़े-बड़े ज़ुल्म किए, इस लिए उसे ज़ालिम कहा जाना चाहिए।

अब्दुल मलिक बिन मरवान का एक बड़ा कारनामा यह है कि उस

के ज़माने में पहली बार मुसलमानों ने अपना सिक्का बनाया और जारी किया। अब तक शाम व अरब व मिस्र वग़ैरह में रूमियों के सिक्के चल रहे थे। इराक़ में आम तौर से ईरानियों के सिक्के जारी थे। अरब में न कोई अरब हुकूमत क़ायम हुई थी, न अरबी सिक्के मौजूद थे। अब जब कि इस्लामी हुकूमत बहुत बड़ी हो गयी थीं, किसी का ध्यान इस तरफ़ नहीं गया कि अपना सिक्का अलग जारी करें। यह अब्दुल मलिक ही था, जिस ने अरबी दीनार और दिरहम चालू किए।

कुछ और अहम वाक़िए इस तरह हैं—

☐ अब्दुल मलिक बिन मरवान ने ख़लीफ़ा होने के बाद सन ७५ हि० में पहली बार हज किया।

☐ सन ७७ हि० में हरक़ला फ़त्ह हुआ।

☐ इसी साल अब्दुल अज़ीज़ बिन मरवान ने, जो अब्दुल मलिक का भाई और मिस्र का गवर्नर था, मिस्र की जामा मस्जिद को गिरा कर नए सिरे से तामीर किया।

☐ सन ८१ हि० में क़ालक़िला रूमियों से फ़त्ह किया।

☐ सन ८२ हि० में क़िला सिनान फ़त्ह हुआ।

☐ मुफ़ज़्ज़ल बिन मोहल्लब, गवर्नर ख़ुरासान ने मूसा अब्दुल्लाह के क़त्ल से फ़ारिग़ हो कर बादग़ीस को फ़त्ह किया।

☐ सन ८४ हि० में अब्दुल्लाह बिन अब्दुल मलिक ने मसीसा रूमियों से जीता।

☐ सन ८५ हि० में अब्दुल अज़ीज़ बिन अबू हातिम बिन नोमान बाहली ने शहर अरोबील बसाया।

☐ माह जुमादल ऊला सन ८५ हि० में अब्दुल मलिक के भाई अब्दुल अज़ीज़ बिन मरवान ने मिस्र में इंतिक़ाल किया और अब्दुल मलिक ने अपने बेटे अब्दुल्लाह को उस की जगह मिस्र का गवर्नर मुक़र्रर किया।

☐ अब्दुल अज़ीज़ बिन मरवान के इंतिक़ाल के बाद अब्दुल मलिक ने अपने बेटों को वली अह्द नामज़द कर दिया और रमज़ान ८६ हि० में तमाम प्रान्तों के गवर्नरों और हाकिमों के नाम फ़रमान जारी कर दिए कि ईद के दिन लोगों से वलीद व सुलेमान की वली अह्दी के लिए बैअत ले लें। चुनांचे ईद के दिन पूरे मुल्क में वली अह्दी के लिए बैअत ली गयी।

वलीद व सुलैमान की वली अह्दी के लिए बैअत लेने के बाद अब्दुल मलिक एक महीने से ज़्यादा नहीं जिया। उस की ख़िलाफ़त का

ज़माना १२ वर्ष, ३ महीने और २३ दिन रहा। मरते वक़्त अपने बेटों को अब्दुल मलिक ने बुलाया और वसीयत की कि—

'मैं तुम को अल्लाह से डरते रहने की ताकीद करता हूं, क्योंकि अल्लाह का तक़्वा ही बेहतरीन पहनावा और बेहतरीन पनाह लेने की जगह है। तुम्हारे बड़ों को चाहिए कि छोटों से प्रेम करें और छोटों को चाहिए कि बड़ों से अदब के साथ पेश आएं। मुसलमानों की राय और मश्विरे की हमेशा क़द्र करना और मुख़ालफ़त से बचना, क्योंकि ये वही दांत हैं, जिन से तुम तोड़ते हो, अक़्लमंदों पर एहसान करो, क्योंकि वे इस के हक़दार हैं।'

इस के बाद अब्दुल मलिक का इंतिक़ाल हो गया और लोगों ने वलीद बिन अब्दुल मलिक के हाथ पर बैअत की।

अब्दुल मलिक के पन्द्रह-सोलह बेटे और कई बेटियां थीं।

उस की बीवियों में एक यज़ीद बिन मुआवियों की बेटी, एक हज़रत अली रज़ि० की और एक अब्दुल्लाह बिन जाफ़र रज़ि० की बेटी थी। वलीद और सुलैमान दोनों भाई वलादा बिन्त अब्बास के पेट से पैदा हुए थे।

वलीद बिन अब्दुल मलिक

अबुल अब्बास वलीद बिन अब्दुल मलिक बिन मरवान सन ५० हि० में पैदा हुआ और ३६ साल की उम्र में अपने बाप अब्दुल मलिक बिन मरवान की वफ़ात के बाद दमिश्क़ में ख़िलाफ़त के तख़्त पर बैठा। अब्दुल मलिक के कफ़न-दफ़न से फ़ारिग़ होने के बाद उसने जामा मस्जिद दमिश्क़ में आ कर ख़ुत्बा दिया और बयान किया कि—

'लोगो ! जिस को अल्लाह ने आगे किया, उस को कोई पीछे नहीं कर सकता और जिस को अल्लाह ने पीछे किया, उस को कोई आगे नहीं कर सकता। अल्लाह ने अब इस उम्मत का वली एक ऐसे शख़्स को बना दिया है जो मुजरिमों पर सख़्ती और हक़ वालों पर नरमी करने और शरई हदों को क़ायम रखने का इरादा रखता है और वह ख़ाना काबा के हज और सरहदों पर जिहाद यानी दीन के दुश्मनों पर हमले करते रहने का इरादा रखता है, इस काम में न वह सुस्ती करना चाहता है, न हद से आगे

बढ़ना पसन्द करता है। लोगो! तुम वक्त के खलीफ़ा की इताअत करो और मुसलमानों में मेल को क़ायम रखो। याद रखो, जो सरकशी करेगा, उस का सर तोड़ दिया जाएगा, और जो खामोश रहेगा, वह अपने मरज़ में खुद ही हलाक हो जाएगा।

वलीद ने खलीफ़ा बनने के बाद जो काम किए, उस की तफ्सील इस तरह है—

□ हज्जाज के अख्तियार और ताक़त को पहले ही की तरह क़ायम रखा, जिस की रहनुमाई में चीन व तुर्किस्तान और सिंध तक के इलाक़े जीते गये।

□ वलीद ने अपने चचेरे भाई हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ को मदीना मुनव्वरा का हाकिम मुक़र्रर किया।

□ सन ८७ हि० में वलीद ने जामा मस्जिद दमिश्क़ को फैला कर तामीर करायी और उसी साल हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ ने मदीना मुनव्वरा में मस्जिदे नबवी की फिर से तामीर करायी अज़्वाजे मुतह्हरात के हुज्रों को भी मस्जिद में शामिल कर के उस को बड़ा कर दिया।

□ वलीद ने जनता के फ़ायदे के भी बहुत से काम किए, सड़कें निकलवायीं, शहरों और क़स्बों में मदरसे खुलवाए, सराएं बनवायीं, कुएं खुदवाए, अस्पताल बनवाए, रास्ते के अम्न व अमान और मुसाफ़िरों की हिफ़ाज़त का इन्तिज़ाम किया। मदीना मुनव्वरा में पानी की परेशानी थी, वहां एक नहर लाकर मदीने वालों की इस तक्लीफ़ को दूर किया, मुहताज-खाने खुलवाये। जनता की तक्लीफ़ को दूर करने और लोगों को राहत पहुंचाने का उस को बहुत ख्याल था।

□ वलीद ने फ़क़ीरों, फ़क़ीहों और आलिमों के इतने वज़ीफ़े मुक़र्रर किए कि वे सब खुशहाल हो गये।

□ वलीद के ज़माने में इतने ज्यादा इलाक़े फ़त्ह हुए, इतनी लड़ाइयां लड़ी गयीं, इस्लामी हुकूमत का रक्बा इतना बढ़ गया, कि उस की तफ्सील के लिए खुद एक अलग किताब लिखी जानी चाहिए।

वलीद बिन अब्दुल मलिक ने १५ जुमादस्सानी सन ९६ हि०, मुताबिक़ २५ फ़रवरी सन ८१५ ई० ४५ साल कुछ महीने की उम्र में नौ साल आठ महीने खिलाफ़त करने के बाद मुल्क शाम की जगह देरमरान में वफ़ात पायी और १९ बेटे छोड़े। जब वलीद का इन्तिक़ाल हुआ है उसका भाई सुलेमान बिन अब्दुल मलिक रमला नामी जगह पर था।

सुलैमान बिन अब्दुल मलिक

सुलैमान अपने भाई वलीद से चार साल उम्र में छोटा था। वलीद की वफ़ात के बाद उसके हाथ पर जुमादस्सानी सन् ९६ हि० में ख़िलाफ़त की बैअत हुई। सुलैमान ने ख़लीफ़ा बनते ही उन लोगों से बदला लेने की ठान ली, जिन्हों ने वलीद को उस की वली अह्दी ख़त्म कर देने का मश्विरा दिया था, इसीलिए क़ुतैबा और हज्जाज से बहुत जलता था।

क़ुतैबा को उस की फ़ौज ही ने मार दिया, और सुलैमान के ख़लीफ़ा बनने से पहले ही हज्जाज का इंतिक़ाल हो गया था, हज्जाज से सुलैमान को बदला लेने का मौक़ा न मिला, तो उसने एक निहायत नेक और भले व बहादुर सिपहसालार मुहम्मद बिन क़ासिम को जेल में सता कर मरवा दिया, जो हज्जाज का भतीजा और दामाद था।

सुलैमान बिन अब्दुल मलिक बड़ा अच्छा मुक़र्रिर था, अद्ल व इंसाफ़ का शौक़ीन और जिहाद का लोभी था। हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ को सुलैमान ने अपना वज़ीर व मुशीर बनाया था।

बनी उमैया के दौर में एक बुरी रस्म जारी हो गयी थी कि वे नमाज़ आम तौर से देर करके पढ़ते थे। सुलैमान बिन अब्दुल मलिक ने इस रस्म को मिटाकर नमाज़ें अव्वल वक़्त में पढ़नी शुरू कीं।

राग और गाने से भी सुलैमान बिन अब्दुल मलिक को सख़्त नफ़रत थी, चुनांचे इसे पूरे राज्य में रोक दिया गया था।

सुलैमान बिन अब्दुल मलिक ने अपने बेटे अय्यूब को अपना वली अह्द बनाया था, लेकिन जब अय्यूब फ़ौत हुआ तो नए वली अह्द की खोज हुई। बहुत सोच-विचार के बाद तै किया कि चचेरे भाई उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ को अपना वली अह्द बनाएं, क्योंकि उन से बेहतर कोई दूसरा शख़्स नहीं है। चुनांचे उन्हीं को वली अह्द नामज़द कर दिया गया।

सुलैमान बिन अब्दुल मलिक सन ९८ हि० में दमिश्क़ से जिहाद के इरादे पर निकला और क़ुस्तुन्तुनिया की तरफ़ फ़ौज रवाना करके ख़ुद दाबिक़ नामी जगह में रुक कर इस मुहिम को कामियाब बनाने की कोशिश करता रहा, इसलिए कहा जा सकता है कि सुलैमान को जिहाद ही की हालत में मौत आयी। १० सफ़र सन ९९ हि० में जुमा के दिन

सुलैमान बिन अब्दुल मलिक का ४५ साल की उम्र में इंतिक़ाल हुआ। लगभग पौने तीन साल ख़लीफ़ा रहा।

इस दौर के कुछ कारनामे इस तरह हैं—

☐ इस ख़लीफ़ा के ज़माने में भी मुसलमानों को जीत मिलती रही।

☐ शरीअत के ख़िलाफ़ कामों का चलन बन्द हुआ।

☐ सुलैमान बिन अब्दुल मलिक का सबसे बड़ा कारनामा यह है कि उसने अपने बाद हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ को ख़लीफ़ा बनाया।

हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ रह०

अबू हफ़्स हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ बिन मरवान बिन हकम ख़ुलफ़ा-ए-राशिदीन में पांचवे ख़लीफ़ा हैं।

हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ के वालिद अब्दुल अज़ीज़ बिन मरवान मिस्र के हाकिम थे कि सन ६२ हि० में उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ पैदा हुए। उनकी वालिदा हज़रत उमर फ़ारूक़ रज़ि० की पोती यानी आसिम बिन उमर फ़ारूक़ रज़ि० की बेटी थीं। उनके वालिद अब्दुल अज़ीज़ अब्दुल मलिक बिन मरवान के बाद ख़लीफ़ा होने वाले थे, लेकिन उनका इंतिक़ाल अब्दुल मलिक के सामने हुआ, इसलिए वह ख़लीफ़ा न हो सके।

बचपन में हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ के बाप ने इनको मदीना भेज दिया था। मदीने ही में उन की तर्बियत हुई। मदीने के फ़क़ीहों की सोहबत में उनकी उम्र का शुरू का हिस्सा गुज़रा, मदीना के उलेमा ही से दीनी इल्म हासिल किया।

ज़ैद बिन अस्लम ने हज़रत अनस रज़ि० से रिवायत की है कि आंहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के बाद हमने उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ रज़ि० के अलावा और किसी शख़्स के पीछे ऐसी नमाज़ नहीं पढ़ी, जो आंहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की नमाज़ से मिलती-जुलती हो।

हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ रज़ि० ख़लीफ़ा होने से पहले निहायत तकल्लुफ़दार और क़ीमती पहनावा पहनते थे, लेकिन ख़लीफ़ा

होने के बाद उन्होंने खाने और पहनने में बिल्कुल सादगी अपना ली थी।

जब उनके वालिद अब्दुल अज़ीज़ बिन मरवान का इंतिक़ाल हुआ तो यह मदीना ही में तश्रीफ़ रखते थे। अब्दुल अज़ीज़ की वफ़ात का हाल सुनकर अब्दुल मलिक बिन मरवान ने उनको दमिश्क़ बुलाकर अपनी बेटी फ़ातिमा रह० के साथ शादी कर दी।

अब्दुल मलिक की वफ़ात के बाद जब वलीद ख़लीफ़ा हुआ तो उसने इनको मदीना मुनव्वरा का हाकिम मुक़र्रर किया। चुनांचे यह सन ८६ हि० से सन ९२ हि० तक मदीने के हाकिम रहे। कई बार अमीरे हज की हैसियत से हज किया। मदीने की गवर्नरी के ज़माने में तमाम बड़े-बड़े आलिम और फ़क़ीह आप के पास जमा रहते थे। मदीना के फ़क़ीहों की एक कौंसिल आप ने बनायी थी और उन्हीं के मश्विरे से मामले अंजाम देते थे।

हज्जाज की शिकायत पर सन ९३ हि० में वलीद ने इन्हें मदीना की गवर्नरी से हटा दिया।

जब वलीद ने इरादा किया कि अपने भाई सुलैमान को वली अह्दी से हटाकर अपने बेटे को वली अह्द बनाए तो सबसे पहले जिस शख़्स ने इसकी मुख़ालफ़त की, वह हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ ही थे, चुनांचे वलीद ने उनको क़ैद कर दिया। तीन वर्ष तक यह क़ैद में रहे। फिर किसी की सिफ़ारिश से रिहा कर दिए गए। सुलैमान बिन अब्दुल मलिक इसी लिए उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ का बहुत शुक्र गुज़ार और एहसान-मंद था। चुनांचे उसने ख़ुद ख़लीफ़ा होने के बाद उनको अपना वज़ीर आज़म बनाया और मरते वक़्त उनको ख़िलाफ़त के लिए वसीयत लिख गया।

ख़िलाफ़त

ख़लीफ़ा बनने के बाद हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ ने जो पहली तक़रीर की, वह इस तरह थी कि—

'(हम्द व सना के बाद) लोगो ! क़ुरआन शरीफ़ के बाद ऐसी कोई किताब नहीं और आंहज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के बाद कोई नबी नहीं, मैं किसी को शुरू करने वाला नहीं, बल्कि पूरा

करने वाला हूं। मैं किसी हाल में तुम से बेहतर नहीं हूं, अल-बत्ता मेरा बोझ बहुत ज्यादा है। जो शख्स ज़ालिम बादशाह से भाग जाए, वह ज़ालिम नहीं हो सकता। याद रखो कि अल्लाह के हुक्मों के खिलाफ़ किसी मख्लूक की इताअत जायज़ नहीं है।

जब आप सुलैमान बिन अब्दुल मलिक के कफ़न-दफ़न से फ़ारिग होकर वापस आ रहे थे, तो आप के गुलाम ने कहा कि आप बहुत ही गमगीन नजर आते हैं। आप ने उसको जवाब दिया कि आज इस दुनिया में अगर कोई शख्स ग़मगीन होने के क़ाबिल है, तो वह मैं हूं, मुझ पर यह बोझ क्या कम है? मैं चाहता हूं कि इससे पहले कि मेरा नामा-ए-आमाल लिखा जाए और मुझ से जवाब तलब हो, मैं हक़दार को उसका हक़ पहुंचा दूं!

आप जब खलीफ़ा बनने के बाद घर में दाखिल हुए, तो आप की दाढ़ी आंसुओं से भीगी हुई थी। आप की बीवी ने घबराकर पूछा क्यों खैरियत तो है? आप ने फ़रमाया कि खैरियत कहां है? मेरी गरदन में उम्मते मुहम्मदी का बोझ डाला गया है। नंगे, भूखे, बीमार, मज़्लूम, मुसाफ़िर, क़ैदी, बच्चे, बूढ़े, कम हैसियत, आल-बच्चेदार वग़ैरह सब का बोझ मेरे सर पर आ पड़ा है। इसी डर से रो रहा हूं कि कहीं क़ियामत में मुझ से पूछा जाए और मैं जवाब न दे सकूं।

खलीफ़ा होने के बाद आपने अपनी बीवी फ़ातिमा बिन्त अब्दुल मलिक से कहा कि तुम अपने तमाम ज़ेवर बैतुलमाल में दाखिल कर दो, वरना मैं जुदाई अख्तियार कर लूंगा, क्योंकि यह मुझको किसी तरह भी पसन्द नहीं कि तुम और तुम्हारे ज़ेवर और मैं एक घर में हूं। उनकी बीवी ने तमाम ज़ेवर, जिन में वह एक क़ीमती मोती भी था, जो अब्दुल मलिक ने अपनी बेटी को दिया था, सब मुसलमानों के लिए बैतुल माल में भिजवा दिए।

हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ ने खलीफ़ा होते ही हुक्म जारी किया था कि हज़रत अली कर्रमल्लाहु वज्हहू की शान में कोई शख्स बेजा लफ़्ज़ हरगिज़ न इस्तेमाल करे। अब तक बनू उमैया में आम तौर पर चलन था कि वे हज़रत अली रज़ि० को बुरा कहते और जुमा के खुत्बे में भी उन पर लान-तान से चूकते नहीं थे।

बनू उमैया क्यों नाराज़ हुए ?

बनू उमैया ने अपनी ख़िलाफ़त और हुकूमत के ज़माने में अच्छी-अच्छी जागीरों पर अपने हक़ से ज़्यादा क़ब्ज़ा कर लिया था, जिसमें दूसरे मुसलमानों का हक़ मारा गया था, मगर चूंकि बनू उमैया हाकिम थे, इसलिए कोई चू नहीं कर सकता था। हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ ख़लीफ़ा हुए, तो उन्होंने सबसे पहले अपनी बीवी के ज़ेवर, अपने घर से निकलवा कर बैतुलमाल में भिजवाए।

फिर आप ने बनू उमैया को जमा करके फ़रमाया कि आंहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के पास बाग़े फ़िदक था, जिसकी आमदनी से आप बनू हाशिम के बच्चों की ख़बरगीरी किया करते और उनकी बेवाओं के निकाह कर दिया करते थे। हज़रत फ़ातिमा रज़ि० ने इस बाग़ को आंहज़रत सल्ल० से मांगा था, मगर आंहज़रत सल्ल० ने देने से इन्कार कर दिया। हज़रत अबूबक्र सिद्दीक़ रज़ि० और हज़रत उमर फ़ारूक़ रज़ि० के ज़माने में वह बाग़ इसी हालत में रहा। आख़िर मरवान ने उस पर क़ब्ज़ा कर लिया। मरवान से होते हुए वह मुझे विरासत में पहुंचा है, मगर मेरी समझ में यह बात नहीं आती कि जिस चीज़ को आंहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने अपनी साहबज़ादी को देने से इन्कार कर दिया था, वह मुझ पर किस तरह हलाल हो गयी, इसलिए मैं तुम सबको गवाह करता हूं कि मैं बाग़े फ़िदक इसी हालत में छोड़ देता हूं, जैसा कि वह आंहज़रत सल्ल० के ज़माने में था। इस के बाद आपने अपने तमाम रिश्तेदारों, फिर तमाम बनू उमैया से वे तमाम जायदादें और माल व सामान वापस कराए, जो ना जायज़ तौर पर उनके क़ब्ज़े में थे।

औज़ाई रह० कहते हैं कि एक दिन आप के मकान में बनू उमैया के अक्सर सरदार बैठे हुए थे, आप ने उनसे मुख़ातब होकर फ़रमाया कि तुम्हारी यह ख़्वाहिश है कि मैं तुम्हें किसी लश्कर का सरदार और किसी इलाक़े का मालिक व हाकिम बना दूं। याद रखो, मैं इस बात को कभी नहीं मानता कि मेरे मकान का फ़र्श तुम्हारे पैरों से नापाक हो, तुम्हारी हालत बहुत ही अफ़सोसनाक है। मैं तुमको अपने दीन और मुसलमानों के ग़रज़ों का मालिक किसी तरह नहीं बना सकता था, उन्होंने

अर्ज किया कि क्या हम को रिश्तेदारी की वजह से कोई फ़ज़ीलत हासिल नहीं।

खिलाफ़ते राशिदा के बाद बनू उमैया में जम्हूरियत की शान बिल्कुल जाती रही थी और हुकूमत में खिलाफ़त नहीं बादशाही और तानाशाही का रंग पैदा हो गया था, जो क़ैसर व किसरा की हुकूमतों में पाया जाता था। हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ ने इस्लामी जम्हूरी शान को फिर वापस लाने की कोशिश फ़रमायी और हज़रत अबूबक्र रज़ि० और हज़रत उमर रज़ि० का ज़माना फिर लोगों की निगाहों में घूमने लगा।

लेकिन बनू उमैया इसे कैसे बर्दाश्त कर लेते ?

एक बार बनू उमैया ने अपनी जायदादों को बचाने के लिए यह उपाय किया कि उमर बिन अब्दुल्ल अज़ीज़ की फूफी फ़ातिमा बिन्त मरवान के पास गये और सिफ़ारिश की दर्ख्वास्त की। लेकिन वापस आने पर उन्होंने बनू उमैया से कहा कि तुमने फ़ारूक़े आज़म रज़ि० की पोती से रिश्ता किया था, इसीलिए वही फ़ारूक़ी रंग औलाद में मौजूद है।

आदर्श खलीफ़ा

हकम बिन उमर रह० कहते हैं कि मैं एक दिन उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ की खिदमत में हाज़िर था कि अस्तबल का दरोग़ा हाज़िर हुआ और अस्तबल का खर्च मांगने लगा। आप ने फ़रमाया कि तुम तमाम घोड़ों को शाम के शहरों में ले जाकर जिस क़ीमत पर मुम्किन हो, बेच कर उनकी क़ीमत अल्लाह की राह में दे दो। मेरे लिए मेरा खच्चर ही काफ़ी है।

इब्राहीम सुकूनी रह० का क़ौल है कि हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ रज़ि० फ़रमाया करते थे कि जब से मुझे यह मालूम हुआ कि झूठ बोलना ऐब है मैंने कभी झूठ नहीं बोला।

यूनुस बिन अबी शबीब कहते हैं कि मैंने उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ को खिलाफ़त से पहले देखा कि उनके पाजामे का नेफ़ा मोटापे की वजह से उनके पेट में घुसा हुआ था, लेकिन खलीफ़ा होने के बाद वह इतने दुबले हो गये थे कि उनकी एक-एक हड्डी गिनी जा सकती थी।

उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ के बेटे कहते हैं कि मुझ से अबू जाफ़र मंसूर ने पूछा कि जब उन्होंने इन्तिक़ाल किया, तो क्या आमदनी थी? मैंने कहा कि कुल चार सौ दीनार और अगर कुछ दिनों और ज़िंदा रहते तो और कम हो जाती।

मुस्लिमा बिन अब्दुल मलिक का क़ौल है कि मैं उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ की बीमारपुर्सी के लिए गया, तो देखा कि वह एक मैला कुरता पहने हुए हैं। मैंने अपनी बहन यानी उनकी बीवी से कहा कि तुम इन का कुरता क्यों बदल नहीं देतीं? उन्होंने कहा कि इनके पास दूसरा कुरता नहीं है कि इसको उतार कर उस को पहन लें।

एक दिन अपनी बीवी से कहा कि अंगूर खाने को जी चाहता है। अगर तुम्हारे पास कुछ हो, तो दो। उन्होंने कहा कि मेरे पास तो कौड़ी भी नहीं, तुम इस के बावजूद कि अमीरुल मोमिनीन हो, तुम्हारे पास इतना भी नहीं कि अंगूर लेकर खा लो? आप ने फ़रमाया कि अंगूरों की तमन्ना दिल में ले जाना बेहतर है, इस के मुक़ाबले में कि कल को दोज़ख में जंजीरों की रगड़ें खाऊं।

आप की बीवी फ़रमाती हैं कि खिलाफ़त के दिनों में आप की यह हालत रही कि बाहर से आकर सज्दे में सर रख देते और रोते-रोते इसी हालत में सो जाते। जब आंख खुलती, तो फिर रोने लगते।

वलीद बिन अबी साइब कहते हैं कि मैं ने उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ से बढ़कर किसी शख्स के दिल में खुदा का डर नहीं देखा।

सईद बिन सुवैद कहते हैं कि हज़रत उमर बिन अब्दुलअज़ीज़ जुमा की नमाज़ पढ़ाने के लिए आए तो देखा कि उनके कुरते में सामने और पीछे पैवन्द लगे हुए हैं। एक शख्स ने कहा कि अमीरुल मोमिनीन! अल्लाह-तआला ने आपको सब कुछ अता फ़रमाया है, फिर आप कपड़े क्यों नहीं बनवाते? आप थोड़ी देर तक सर झुकाए हुए कुछ सोचते रहे, फिर फ़रमाया कि खुशहाली में बीच का रास्ता और ताक़त होने हर माफ़ करना बड़ी चीज़ है।

इमाम औज़ाई रह० कहते हैं कि आप की आदत थी कि जब किसी शख्स को सज़ा देना चाहते थे, तो पहले एहतियात के तौर पर तीन दिन तक क़ैद कर रखते थे, ताकि गुस्सा और जल्दी में उसे सज़ा न दी जाए।

आप की आदत थी कि जब तक आप के पास बैठे हुए लोग हुकूमत

के मामलों में बातें करते रहते, आप बैतुलमाल का चिराग़ जलाए रखते और जब वे उठ जाते तो उसको बुझाकर अपना निजी चिराग़ जला लेते।

रजा बिन हयात कहते हैं कि एक दिन में उमर बिन अब्दुल अजीज के पास बैठा हुआ था कि चिराग़ बुझ गया। वहीं आपका गुलाम सो रहा था। मैं ने चाहा कि उसे जगा दूं। आप ने मना फ़रमा दिया। फिर मैं ने चाहा कि मैं खुद उठ कर चिराग़ जला दूं। आप ने फ़रमाया कि मेहमान को तक्लीफ़ देना मुरव्वत के खिलाफ़ है। आप खुद उठे और तेल-कुप्पा उठा कर चिराग़ में तेल डाला और उसको जलाकर फिर अपनी जगह आ बैठे और फ़रमाया कि मैं अब वही उमर बिन अब्दुल अजीज हूं, जो पहले था।

अता कहते हैं कि उमर बिन अब्दुल अजीज रह० रात के वक़्त फ़क़ीहों को जमा फ़रमाते और मौत और क़ियामत का ज़िक्र करके इतना रोते कि गोया उनके सामने कोई जनाज़ा रखा हुआ है।

हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ि० कहते हैं कि एक दिन आप ने खुत्बे में फ़रमाया कि लोगो! अपनी छिपी बातों में सुधार करो, ऊपरी बातों में खुद सुधार हो जाएगा। आखिरत के लिए अमल करो और दुनिया पर उतना ही ध्यान दो, जितनी जरूरत हो और याद रखो कि तुम्हारे बाप-दादों को मौत खा चुकी है।

हज़रत उमर बिन अब्दुल अजीज रह० फ़रमाया करते थे कि जो आदमी झगड़े, गुस्सा और लालच से दूर रहा, वह कामियाब हो गया।

किसी ने हज़रत उमर बिन अब्दुल अजीज रह० से कहा कि अगर आप अपने पर कुछ ध्यान दें और खाने-पाने में एहतियात रखें, तो बहुत अच्छा हो। आप ने फ़रमाया कि ऐ अल्लाह! अगर मैं क़ियामत के सिवा किसी और चीज से डरता हूं, तो मुझे उससे अम्न में न रखना।

एक बार आप ने अस्र बिन क़ैस सुकूनी को फ़ौज का सरदार बनाकर रवाना किया और विदा करते हुए फ़रमाया कि वहां के नेक लोगों की बात सुनना और बुरों से दरगुज़र करना, जाते ही उनका क़त्ल शुरू न कर देना और आखिर में बदनामी न उठाना, बीच का रास्ता अपनाना कि ये तुम्हारा मर्तबा (पद) न भूल जाएं और तुम्हारी बातें सुनने की तमन्ना करते रहें।

सालेह बिन जुबैर रह० कहते हैं कि कभी ऐसा इत्तिफ़ाक़ होता

कि मैं कोई बात अमीरुल मोमिनीन से कहता और वह मुझ से नाराज़ हो जाते। एक बार उन के सामने ज़िक्र हुआ कि एक किताब में लिखा है कि बादशाह की नाराज़ी से डरना चाहिए और जब बादशाह का गुस्सा उतर जाए, तब उसके सामने जाना चाहिए। आप ने यह सुनकर फ़रमाया कि सालेह! मैं तुझे इजाज़त देता हूं कि तू मेरे साथ इस की पाबन्दी न कर।

एक बार मरवान के ख़ानदान वाले हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ के दरवाज़े पर जमा हुए और आप के बेटे से कहा कि अपने बाप से जाकर कहो कि आप से पहले जितने ख़लीफ़ा होते रहे हैं, वे सब हमारे लिए कुछ जागीरें और इनाम ख़ास करते रहे हैं, लेकिन आपने ख़लीफ़ा होकर तमाम चीज़ें हराम कर दीं। आपके साहबज़ादे ने यह पैग़ाम जाकर कहा, तो आपने फ़रमाया कि उनसे जाकर कह दो कि मेरा बाप कहता है—

'अगर मैंने अपने रब की नाफ़रमानी की, तो मुझे बड़े दिन के अज़ाब का डर है।'

वफ़ात

ऊपर ज़िक्र हो चुका है कि बनू उमैया आप की पालिसी से सख़्त नाराज़ थे, क्योंकि उन की जागीरें, जायदादें और तमाम माल, जो दूसरों के हड़पे हुए हक़ थे, छिन गए थे और कोई नाजायज़ फ़ायदा वक़्त की हुकूमत से नहीं उठा सकते थे। आख़िर वे देर तक अपने इन नुक़सानों को नहीं सह सके और उन्हों ने आप के क़त्ल करने की साज़िश की।

आप को क़त्ल करना कोई मुश्किल काम भी न था, न अपनी निजी हिफ़ाज़त के लिए आप ने न कोई चौकी-पहरा क़ायम किया था, न खाने-पीने में किसी क़िस्म की एहतियात करते थे।

आप के क़त्ल करने का सब से आसान ज़रिया, जो बनी उमैया ने सोचा, वह यह था कि आप को ज़हर दे दिया जाए। चुनांचे उन्हों ने आप के ग़ुलाम को लालच दे कर अपना शरीक बनाया और उस के ज़रिए आप को ज़हर दिलवा दिया। जब आपको ज़हर दिया गया, तो आप को इसका इल्म हो गया। जब आप की तकलीफ़ बढ़ने लगी, तो लोगों ने कहा कि आप दवा क्यों नहीं करते? आपने फ़रमाया कि जिस वक़्त मुझे ज़हर दिया

गया, उस वक़्त अगर कोई मुझ से यह कहता कि तुम अपने कान की लौ को हाथ लगाने से अच्छे हो सकते हो, तो मैं अपने कान की लौ को हाथ न लगाता।

मुजाहिद रह० कहते हैं कि आप ने मुझ से पूछा कि लोग मेरे बारे में क्या कहते हैं ? मैं ने कहा कि लोगों का ख्याल यह है कि आप पर कोई जादू कराया गया है। आप ने फ़रमाया कि नहीं, मुझ पर जादू का असर नहीं है, बल्कि मुझे जिस वक़्त जहर दिया गया था, उसी वक़्त मालूम हो गया था। फिर आपने उस गुलाम को बुलाया, जिसने आप को जहर दिया था। वह आया, तो आप ने फ़रमाया कि अफ़सोस! तूने मुझे जहर दे दिया, आखिर किस लालच ने तुझ को इस काम पर तैयार किया, उसने कहा कि मुझ को एक हजार दीनार दिए गए हैं और आज़ादी का वायदा किया गया है। आपने फ़रमाया कि वह दीनार मेरे पास ले आओ, चुनांचे वह आया, आप ने उसी वक़्त वे एक हजार दीनार बैतुलमाल में दाखिल करा दिए और गुलाम को हुक्म दिया कि तू अब यहां से निकल कर कहीं भाग जा कि फिर किसी को तेरी शक्ल नजर न आए।

आप की वफ़ात २५ माह रजब सन १०१ हि० को हुई। दो वर्ष पांच महीने और चार दिन आप ने खिलाफ़त की।

आप की वफ़ात का हाल जब हजरत इमाम हसन बसरी रह० ने सुना, तो फ़रमाया कि अफ़सोस ! आज दुनिया का सब से बेहतर आदमी उठ गया।

क़तादा रह० कहते हैं कि आपने अपने बाद के खलीफ़ा यानी यजीद बिन अब्दुल मलिक को एक तहरीर लिखी, जिस में लिखा था कि—

'बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम० खुदा के बन्दे उमर बिन अब्दुल अजीज की तरफ़ से। अस्सलामु अलैकुम के बाद यजीद बिन अब्दुल मलिक को मालूम हो कि मैं उस खुदा की तारीफ़ करता हूं, जिस के सिवा कोई और खुदा नहीं। मैं तुम्हें यह बड़ी बेचैनी की हालत में लिखता हूं। मैं जानता हूं कि मुझ से मेरी हुकूमत के दौर के बारे में सवाल होने वाला है और वह सवाल करने वाला दुनिया और आखिरत का मालिक है यह मुम्किन नहीं कि मैं अपना कोई भी अमल छुपा कर रख सकूं। अगर वह मुझ से राजी हो गया, तो मेरी निजात हो जाएगी, वरना मैं तबाह हो जाऊंगा। मैं दुआ करूंगा कि वह मुझे अपनी पूरी रहमत से नवाजे और दोजख के अजाब से बचाए और मुझ से खुश हो कर जन्नत अता फ़रमाए। तुम्हें

लाज़िम है कि खुदा से डरो और जनता की रियायत करो। मेरे बाद तुम भी दुनिया में ज्यादा दिन तक न रहोगे।

बीवियां और लड़के

आप की तीन बीवियां थीं। आप ने ग्यारह बेटे छोड़े।

आप की बीवियों में फ़ातिमा बिन्त अब्दुल मलिक बिल्कुल आप ही की तरह नेक और सल्लाह वाली थीं।

आप के चहेते बेटे अब्दुल मलिक बिल्कुल बाप के नमूने पर थे। अक्सर आप कहा करते थे कि मुझ को अपने बेटे अब्दुल मलिक की वजह से नेकियों का और इबादत का चाव पैदा होता है, मगर यह बापके सामने ही फ़ौत हो गये।

हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ ने जो मीरास छोड़ी, उसकी कुल मिक़दार २१ दीनार थी। इसी में से कुछ दीनार कफ़न-दफ़न में खर्च हुए, बाक़ी बेटों, बेटियों में बांट दिए गये।

अब्दुर्रहमान बिन क़ासिम बिन मुहम्मद बिन अबीबक्र रज़ि० का बयान है कि उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ ने ग्यारह बेटे छोड़े और हिशाम बिन अब्दुल मलिक ने भी ग्यारह ही छोड़े थे। उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ के हर एक बेटे को बाप की मीरास में से एक-एक दीनार मिला और हिशाम बिन अब्दुल मलिक के बेटों में से हर एक ने बाप की मीरास में से दस-दस लाख दिरम पाए, लेकिन उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ के बेटों में से मैं ने एक को देखा कि उस ने एक दिन जिहाद के लिए सौ घोड़े दिए और हिशाम के एक बेटे को देखा कि वह लोगों से सदक़ा ले रहा है।

हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ की खिलाफ़त पर एक नज़र

□ बनू उमैया की हुकूमत ने लोगों में दुनिया परस्ती और माल व दौलत का लालच पैदा कर के आखिरत से ग़फ़लत पैदा करदी थी। हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ की कुछ दिनों की खिलाफ़त ने इन तमाम खरा-

बियों को दूर कर के मुसलमानों को फिर रूहानियत और नेकी की तरफ़ लगा दिया।

□ हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ का सबसे बड़ा कारनामा यही है कि उन्होंने इस्लामी खिलाफ़त को खिलाफ़ते राशिदा के नमूने पर क़ायम कर के हज़रत अबूबक्र रज़ि० और हज़रत उमर रज़ि० के दौर को दुनिया में फिर वापस बुला लिया।

□ इस दौर में बहुत बड़ी तायदाद ने मुसलमानों के अच्छे अख्लाक़ व अमल की गवाही पर इस्लाम क़ुबूल किया। इस्लाम क़ुबूल करने वालों की यह तायदाद दूसरे खलीफ़ों के दौर में नज़र नहीं आती।

□ आप की हुकूमत की हदें सिंध व पंजाब व बुखारा व तुर्किस्तान से ले कर मोरक्को व उन्दुलुस व फ्रांस तक फैली हुई थीं, लेकिन आप के दौर में हर जगह सुकून और अम्न व अमान था।

□ आप के दौर में सड़कें निकाली गयीं और हर-हर जगह स्कूल और अस्पताल खुले।

□ इंसाफ़ और बराबरी का बर्ताव दुनिया ने आपके बाद आज तक कभी ऐसा नहीं देखा। यही वजह थी कि आपकी वफ़ात पर न सिर्फ़ मुसलमानों के घरों में मातम हुआ, बल्कि मुसलमानों से बढ़ कर ईसाई और यहूदी सोगवार पाए गये। राहिबों (पादरियों) ने आप के मरने की खबर पा कर अपने गिरजाघरों और इबादतखानों में सर पीट लिए और कहा कि आज दुनिया से इंसाफ़ उठ गया और इंसाफ़ का क़ायम करने वाला और इंसाफ़ की हिफ़ाज़त करने वाला दुनिया से उठ गया।

□हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ ने शीया, सुन्नी, खारजी वग़ैरह के तमाम इख्तिलाफ़ों को मिटा दिया।

यज़ीद बिन अब्दुल मलिक

अबू खालिद यज़ीद बिन अब्दुल मलिक बिन मरवान अपने भाई सुलैमान बिन अब्दुल मलिक की वसीयत के मुवाफ़िक़ हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ रह० के बाद राजसिंहासन पर बैठा। बैठने के बाद उसने कहा कि जितना मैं अल्लाह का मुहताज हूं, उतना हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ भी थे, चुनांचे उसने चालीस दिन तक हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ ही

की पूरी पैरवी की।

बनू उमैया ने जब देखा कि उमर बिन अब्दुल अजीज के बाद लूट-खसोट की कोई शक्ल पैदा न हुई, तो उन्हों ने यजीद बिन अब्दुल मलिक को अपनी मंशा के मुताबिक़ नीति अपनाने पर उभारने की कोशिश की। इस क़िस्म की कोशिशें हज़रत उमर बिन अब्दुल अजीज रह० के सामने तो बेकार साबित होती रही थीं, लेकिन यजीद बिन अब्दुल मलिक ऐसा न था। वह एक ज़रा-सी कोशिश में बह गया।

कहा जाता है कि सफ़ेद दाढ़ियों वाले लोगों ने हाज़िर हो कर इस बात की गवाही दी कि वक़्त का ख़लीफ़ा जो कुछ करे, उस का हिसाब उस से न लिया जाएगा और न उस पर अज़ाब होगा। ऐसी तद्बीरों का मनचाहा नतीजा निकला। यजीद बिन अब्दुल मलिक ग़लत रास्तों पर चल निकला और पूरा देश फिर उसी लूट-खसोट और ना-इंसाफ़ी पर चल पड़ा। बग़ावतें और मन मानियां शुरू हो गयीं और ख़लीफ़ा का वक़्त फिर इन्हीं जोड़-तोड़ और साजिशी कामों में बीतने लगा।

यजीद बिन अब्दुल मलिक ने अपने बाद अपने भाई हिशाम बिन अब्दुल मलिक और उस के बाद अपने बेटे वलीद बिन यजीद को वली अह्द बना दिया था। चार साल एक माह ख़लीफ़ा रह कर २५ शाबान १०५ हि० में ३७ साल की उम्र में यजीद बिन अब्दुलमलिक का इंतिक़ाल हुआ और उस की वसीयत के मुवाफ़िक़ हिशाम बिन अब्दुल मलिक तख़्ते ख़िलाफ़त पर बैठा।

हिशाम बिन अब्दुल मलिक

अबुल वलीद हिशाम बिन अब्दुल मलिक सन ७२ हि० में पैदा हुआ इस की वालिदा आइशा बिन्त हिशाम बिन इस्माईल मख़्ज़ूमी थी।

जब यजीद बिन अब्दुल मलिक का इंतिक़ाल हुआ, तो हिशाम हम्स में था। वहीं क़ासिद यह ख़बर और यजीद की छड़ी और अंगूठी ले कर गया। हिशाम हम्स से दमिश्क़ में आया और लोगों से अपनी ख़िलाफ़त की बैअत ली।

हिशाम ने मुस्लिम बिन सईद को ख़ुरासान का हाकिम मुक़र्रर किया था। मुस्लिम ने फ़ौज ले कर तुर्कों पर चढ़ाई की और १०५ हि० के

आख़िर तक लड़ाई में फंसा रह कर अक्सर तुर्क सरदारों को हरा कर उन से ख़िराज (टैक्स) और जिज़्या वसूल किया।

सन १०६ हि० में मुस्लिम बिन सईद ने जिहाद के इरादे से बहुत बड़ी फ़ौज जमा कर ली और बुख़ारा व फ़रग़ाना की तरफ़ बाग़ियों को सज़ाएं दीं।

इस के बाद ख़ुरासान का गवर्नर असद बिन अब्दुल्लाह बने। उन्हों ने हुकूमत संभालते ही जियाले हिरात (यानी ग़ौर वग़ैरह की तरफ़ हमला किया और बहुत बड़ा इलाक़ा जीत लिया।

असद बिन अब्दुल्लाह ने कुछ ही दिनों बाद ऐसे अख़्लाक़ का प्रदर्शन करना शुरू कर दिया कि सरकारी ज़िम्मेदार भी और जनता भी उस से परेशान हो गयी, चुनांचे हिशाम ने उसे वहां से हटा दिया और उश्रुस बिन अब्दुल्लाह अस्लमी को ख़ुरासान की हुकूमत की ज़िम्मेदारी दे दी।

उश्रुस ने ख़ुरासान में पहुंच कर अपने नेक सुलूक, और अच्छे अख़्लाक़ से सब को ख़ुश कर लिया।

उश्रुस ने ११० हि० में अबुस्सैदा सालेह बिन जरीफ़ और रबीअ बिन इम्रान तमीमी को समरक़न्द व मावराउन्नह्र की तरफ़ इस ग़रज़ से रवाना किया कि वहां जा कर लोगों को इस्लाम की ख़ूबियां समझाएं और शिर्क की बुराइयों से आगाह कर के सीधे रास्ते पर लाएं, इस तरह उश्रुस ने इस्लाम की तब्लीग़ के साथ-साथ वहां उठने वाली हर दिन बग़ावत की लहर का मुस्तक़िल इन्तिज़ाम किया। नतीजा बेहतर निकला और लोग गिरोह-गिरोह कर के इस्लाम में दाख़िल होने लगे।

सन १११ हि० में हिशाम बिन अब्दुल मलिक ने उश्रुस की जगह जुनैद बिन अब्दुर्रहमान बिन उमर बिन हुर्स को ख़ुरासान का गवर्नर बनाया। जुनैद ने तुर्कों का सख़्त मुक़ाबला कर के उनकी उभरती बग़ावतों को कुचल दिया, यहां तक कि ख़ुरासान के पूरे इलाक़े में अम्न व अमान क़ायम हो गया।

जुनैद के इंतिक़ाल के बाद आसिम बिन अब्दुल्लाह बिन यज़ीद हिलाली को हिशाम ने गवर्नर मुक़र्रर किया।

हर्स बिन शुरैह

सन १०० हि० से, जब कि हजरत उमर बिन अब्दुल अजीज की खिलाफ़त का जमाना था, बनू अब्बास ने अपनी खिलाफ़त के लिए खिलाफ़ते बनू उमैया के खिलाफ़ खुफ़िया कोशिशों और साज़िशों का सिलसिला शुरू कर दिया था।

फ़ातमियों और अलवियों ने भी अब्बासियों की तरह इस क़िस्म की कोशिशों और साज़िशों का सिलसिला पहले ही से बाक़ायदा जारी कर रखा था और ये तमाम सिलसिले खुरासान ही से पल-बढ़ रहे थे। खुरासान में उज्द के नामी क़बीले का सरदार हर्स बिन शुरैह खास तौर पर अलवियों और फ़ातमियों का शैदाई था। चुनांचे सन ११६ हि० में उस ने स्याह कपड़े पहने और किताब व सुन्नत की पैरवी और इमाम रज़ा की बैअत की तरफ़ लोगों को उभारा। इस तरह काफ़ी लोग उस के गिर्द जमा होने लगे और बल्ख और मर्व पर क़ब्ज़ा कर लिया।

यह खबर सुनते ही खलीफ़ा ने आसिम को हटा कर असद बिन अब्दुल्लाह को गवर्नर बना दिया, उस ने खुरासान के शहरों को अपनी हिम्मत और बहादुरी की बुनियाद पर हर्स बिन शुरैह से छीनना शुरू किया, यहां तक कि सन ११९ हि० तक पहुंचते-पहुंचते असद बिन अब्दुल्लाह की जीतों का सिलसिला तुर्किस्तान से गुज़र कर पच्छिमी चीन तक पहुंच गया।

हिशाम बिन अब्दुल मलिक के जमाने में क़ैसर की फ़ौजों को भी बार-बार मुसलमानों ने हराया।

उन्दुलुस में भी अब्दुल्लाह बिन उक़्बा के कारनामे यूरोप के ईसाइयों और ईसाई बादशाहों को डराने-धमकाने और मुसलमानों के नाम से कंपाने के लिए काफ़ी थे। हिजाज़ व यमन में भी अम्न व अमान हो गया।

ज़ैद बिन अली रज़ि०

हुसैन बिन अली बिन अबी तालिब रज़ि० के साथ करबला में और

अब्दुल्लाह बिन जुबैर रज़ि० के साथ मक्का में बनी उमैया की हुकूमत की तरफ़ से जो व्यवहार हुआ, उस ने और उस के बाद हज्जाज वग़ैरह ने हिजाज़ और इराक़ में जिस क़िस्म की पालिसी अपनायी थी, उस ने हिजाज़ व इराक़ के अरब क़बीलों को पहले डरा कर चुप कर दिया था, उस के बाद धन का लोभ दे कर और माल व दौलत के इस्तेमाल ने यह असर पैदा किया कि लोगों के दिलों में बनी उमैया की तरफ़ से हसद का जज़्बा पैदा हो कर अन्दर ही अन्दर बनू उमैया के साथ ख़ुलूस व हमदर्दी दिलों से दूर होने लगी। धीरे-धीरे बनू हाशिम में यह ख़्याल जड़ पकड़ने लगा कि बनूउमैया की हुकूमत मिटा दी जाए और किसी तरह ख़ुद हुकूमत हासिल कर ली जाए। इस के लिए साज़िशों और ख़ुफ़िया कार्रवाइयों का सहारा लिया गया।

यह काम बनू हाशिम के दो ख़ानदानों ने एक ही वक़्त में शुरू किया। एक ख़ानदान था हज़रत अली बिन अबू तालिब बिन अब्दुल मुत्तलिब से मुताल्लिक़, दूसरा ख़ानदान था हज़रत अब्बास बिन मुत्तलिब से मुताल्लिक़।

सन १२२ हि० में हिशाम बिन अब्दुल मलिक ने जब यूसुफ़ बिन उमर सक़फ़ी को इराक़ का हाकिम मुक़र्रर किया था, उसी ज़माने में ज़ैद बिन अली बिन हुसैन बिन अली बिन अबू तालिब ने छिप-छिपा कर लोगों से बैअत लेनी शुरू की थी। इस तरह शहर कूफ़ा में ज़ैद बिन अली के हाथ पर पन्द्रह हज़ार आदमियों ने बैअत की।

हज़रत इमाम अबू हनीफ़ा रह० भी ज़ैद बिन अली रज़ि० के हामियों में थे।

यूसुफ़ बिन उमर सक़फ़ी को जब मालूम हुआ, तो उस ने इसे बग़ा-वत समझा और इसे कुचलने के लिए उस ने फ़ौज लगा दी। कूफ़ियों ने जिस तरह हुसैन बिन अली रज़ि० और मुस्अब बिन ज़ुबैर रज़ि० को धोखा दिया, उसी तरह ज़ैद बिन अली को भी धोखा दिया और वह शहीद कर दिए गये।

यूं तो ज़ैद बिन अली शहीद कर दिए गये, लेकिन उन की शहादत ने जनता में बनू उमैया से नफ़रत और बनू हाशिम से हमदर्दी का जज़्बा और उभार दिया, जिसका पूरा फ़ायदा बनू अब्बास ने उठाया।

अब्बासियों की साज़िश

अबू हाशिम अब्दुल्लाह बिन मुहम्मद बिन हनफ़िया बिन अली बिन अबू तालिब को सुलैमान बिन अब्दुल मलिक वग़ैरह ख़लीफ़ों की तरफ़ से बड़ी इज़्ज़त की जाती थी, लेकिन बनू उमैया से उनको हाशिमी होने की वजह से तास्सुब था और वह भी दिल से चाहते थे कि बनू उमैया की हुकूमत ख़त्म हो और बनू हाशिम को हुकूमत मिले।

मुहम्मद बिन अली बिन अब्दुल्लाह बिन अब्बास बिन अब्दुल-मुत्तलिब भी बनू उमैया की हुकूमत को मिटाने और बनू अब्बास की ख़िलाफ़त क़ायम करने की फ़िक्र में लगे हुए थे।

एक बार सुलैमान बिन अब्दुल मलिक के ज़माने में अबू हाशिम अब्दुल्लाह बिन मुहम्मद रह० सुलैमान बिन अब्दुल मलिक के पास दमिश्क़ गये। वहां से वापसी में वह हमीमा नामी जगह पर मुहम्मद बिन अली बिन अब्दुल्लाह बिन अब्बास के पास ठहरे। वह वहां बीमार होकर इंतिक़ाल कर गये। इंतिक़ाल से पहले उन्होंने मुहम्मद बिन अली बिन अब्दुल्लाह को वसीयत की कि तुम इस्लामी ख़िलाफ़त के हासिल करने की कोशिश करो।

इस वसीयत से मुहम्मद बिन अली ने फ़ायदा उठाया और वे तमाम लोग जो अबू हाशिम में अक़ीदत रखते थे, मुहम्मद बिन अली के हाथ पर आ-आकर छिपे तौर पर बैअत करने लगे।

इसके बाद सन १०० हि० में हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ के दौर में मुहम्मद बिन अली अब्बासी ने अपने कारिंदे इराक़ व ख़ुरासान, हिजाज़ व यमन व मिस्र वग़ैरह की तरफ़ भेजे।

कुछ दिनों के बाद उस ने अपने बारह नक़ीब (दूत) मुक़र्रर किए। उन्हें अलग-अलग दिशाओं में भेज दिए और उनको हर जगह कामियाबी भी मिली।

सन १०२ हि० या सन १०४ हि० में अबू मुहम्मद सादिक़ ख़ुरासानी वहां के कुछ असरदार लोगों को, जिन्होंने इस दावत को क़ुबूल कर लिया था, साथ लेकर मुहम्मद बिन अली के पास आया। उन्हीं दिनों में मुहम्मद बिन अली अपने लड़के को, जिस की उम्र सिर्फ़ पन्द्रह दिन थी,

लेकर आया और उन लोगों से कहा कि यही तुम्हारा सरदार होगा (यही लड़का अब्दुल्लाह सफ़ाह था)।

सन १२४ हि० में मुहम्मद बिन अली बिन अब्दुल्लाह बिन अब्बास का क़ैद की हालत में इंतिक़ाल हो गया मरते वक़्त वह अपने बेटे इब्राहीम को अपना जानशीन बना गया।

वलीद बिन यज़ीद बिन अब्दुल मलिक

यज़ीद बिन अब्दुल मलिक की वसीयत के मुवाफ़िक़ हिशाम के बाद वलीद बिन यज़ीद वली अह्द था, लेकिन हिशाम की ख़्वाहिश थी कि वलीद को हटाकर अपने बेटे को वली अह्द बनाए, मगर हुकूमत के दूसरे सरदार, चूंकि इस पर रज़ामंद न थे, इसलिए वह अपने इरादे में कामियाब न हो सका पर हिशाम और वलीद के दिलों में रंजिश ज़रूर पैदा हो गयी। आख़िर ६ रबीउस्सानी १०५ हि० में साढ़े उन्नीस साल तक ख़लीफ़ा रहने के बाद हिशाम बिन अब्दुल मलिक ने वफ़ात पायी।

अबुल अब्बास वलीद बिन यज़ीद बिन अब्दुल मलिक बिन मरवान बिन हकम सन ९० हि० में पैदा हुआ। उस की मां हज्जाज बिन यूसुफ़ सक़फ़ी की भतीजी और मुहम्मद बिन यूसुफ़ की बेटी थी। यज़ीद बिन अब्दुल मलिक की वफ़ात के वक़्त यह कम-उम्र था।

जवानी तक पहुंचते-पहुंचते यह इंतिहाई ऐश परस्त और आराम तलब हो गया था। सच तो यह है कि वलीद बिन यज़ीद की ख़िलाफ़त का दौर बनू उमैया की ख़िलाफ़त की तबाही व बर्बादी का दरवाज़ा पूरी तरह खोल देता है।

वलीद बिन यज़ीद ने ख़लीफ़ा बनते ही बदले की कार्रवाइयों से अपने ख़ानदान वालों के अक्सर लोगों को दुश्मन बना लिया।

अपनी ख़िलाफ़त के पहले ही साल यानी सन १२५ हि० में वलीद बिन यज़ीद ने अपने बेटों उस्मान व हकम के लिए वली अह्दी की बैअत करा ली कि लोगों के दिलों में बेचैनी पैदा हो गयी।

उस का चाल-चलन भी सही नहीं था। बेवक़ूफ़ी यह करता कि अपनी ग़लतियों का प्रचार भी करता, जिस से उसके लिए लोगों की हमदर्दियां भी ख़त्म हो गयीं।

यहां यह बात समझ लेने की है कि बनू उमैया के दौर में पूरी इस्लामी दुनिया को कुछ प्रान्तों (सूबे) में बांट दिया गया था। हर सूबे का एक अमीर या वायसराय या राज्यपाल मुक़र्रर होता था, उसे पूरे अख्तियार हासिल होते थे और वह खुद ही अपनी तरफ़ से अपनी विलायतों (ताल्लुक़ों या ज़िलों) में हाकिम मुक़र्रर करता था। बड़े-बड़े सूबे हिजाज़, इराक़, जज़ीरा, आरमीनिया, शाम, मिस्र, अफ़्रीक़ा उन्दुलुस, खुरासान वग़ैरह थे। हिजाज़ के सूबे में मक्का, मदीना, ताइफ़, यमन की विलायतें थीं।

कुछ इलाक़े ऐसे थे जो कभी मर्कज़ी हुकूमत के मातहत कर दिए जाते और कभी किसी प्रांत में मिला दिया जाता, जैसे यमन को कभी सूबा बना दिया जाता, कभी उसे हिजाज़ में शामिल कर दिया जाता। ऐसे ही बहुत-सी जगहें थीं।

सन १२५ हि० यानी अपनी खिलाफ़त के पहले ही साल खुरासन सूबे को इराक़ के मातहत करके खुरासन के हाकिम नस्र बिन सय्यार को गवर्नरी से वलीद ने हटा दिया। नस्र के पास एक तरफ़ वलीद का, दूसरी तरफ़ यूसुफ़ बिन उमर गवर्नर इराक़ का हुक्म पहुंचा, तुम हटाए गये, इस वाक़िए ने आपसी फूट का और सामान पैदा कर दिया। बग़ावत की एक नयी लहर दौड़ी।

फिर ज़ैद बिन अली बिन हुसैन बिन अली बिन अबी तालिब के बेटे यह्या को खामखाह क़त्ल करा के वलीद बिन यज़ीद ने अपने खिलाफ़ एक माहौल बना दिया।

दूसरी तरफ़ उसके चचेरे भाइयों ने वलीद बिन यज़ीद की इन कमज़ोरियों का फ़ायदा उठाना चाहा, आखिर उन पर भी तो ज़ुल्म हुआ था और वलीद बिन यज़ीद ने उन्हें भी तरह-तरह से सताया था। वलीद बिन यज़ीद का चचेरा भाई यज़ीद बिन वलीद बिन अब्दुल मलिक खास तौर पर वलीद के खिलाफ़ पूरा सर गर्म रहा।

यज़ीद बिन वलीद को शाही खानदान में ज़्यादा नेक और अल्लाह वाला समझा जाता था, उसने वलीद बिन यज़ीद की शरीअत के खिलाफ़ बातों की शिकायतें लोगों से बयान करनी शुरू कर दीं और बहुत जल्द लोग उस के हामी और मददगार हो गये। नतीजा यह हुआ कि सबने छिपकर यज़ीद बिन वलीद के हाथ पर बैअत की और शामी फ़ौज का बड़ा हिस्सा यज़ीद बिन वलीद के साथ हो गया।

यज़ीद बिन वलीद ने दमिश्क़ की रिहाइश छोड़ कर दमिश्क़ से थोड़े फ़ासले पर एक गांव में रहना शुरू किया और वहीं से अपने कारिंदे पूरी इस्लामी दुनिया में भेजना शुरू किए, इस तरह पूरी इस्लामी दुनिया में वलीद के खिलाफ़ और यज़ीद के मुवाफ़िक़ पब्लिक की राय बन गयी।

यज़ीद ने हर तरह इत्मीनान कर लेने के बाद २७ जुमादस्सानी १२६ हि० को जुमा के दिन राजधानी पर क़ब्ज़ा करना तै किया, चुनांचे इशा की नमाज़ के बाद दमिश्क़ में दाखिल होकर पहले तो शहर के कोतवाल को गिरफ़्तार किया, फिर सरकारी हथियार-भंडार पर क़ब्ज़ा किया। वलीद बिन यज़ीद को पहले से इन साज़िशों की खबर न थी, चुनांचे वह हैरान व परेशान हो गया और कुछ न कर कर सका। महल का दरवाज़ा बन्द करके सो गया, यहां तक कि महल ही में २८ जुमादुल उखरा सन १२६ हि० को वह एक साल तीन महीने खलीफ़ा रहने के बाद शहीद कर दिया गया और उसी दिन यज़ीद बिन वलीद खलीफ़ा बना। बनू उमैया के दर्मियान यह आपस की फूट ऐसी बढ़ी कि इससे खानदान बनू उमैया बर्बाद ही हो गया।

यज़ीद बिन वलीद बिन अब्दुल मलिक

अबू खालिद बिन वलीद बिन अब्दुल मलिक बिन मरवान बिन हकम को यज़ीदुस्सालिस (यज़ीद तृतीय) और यज़ीदुन्नाक़िस (अधूरा यज़ीद) भी कहते हैं।

यज़ीदुन्नाक़िस इसलिए कहा जाता था कि उसने लोगों के वज़ीफ़े यानी फ़ौज की तंख्वाहों को कम कर दिया था।

यज़ीद बिन वलीद ने लोगों से अपने भाई इब्राहीम बिन वलीद और इसके बाद अब्दुल अज़ीज़ बिन हज्जाज बिन अब्दुल मलिक की वली-अह्दी के लिए बैअत ली।

हम्स वालों को जब यह मालूम हुआ कि वलीद बिन यज़ीद क़त्ल हो गया है, तो उन्होंने बग़ावत की, जिसके नतीजे में हम्स के बहुत से लोग मारे गये।

यह खबर सुनकर फ़लस्तीन वालों ने भी बग़ावत की और यज़ीद बिन सुलैमान बिन अब्दुल मलिक को अपना सरदार बनाया।

उर्दुन के लोगों ने सुना तो मुहम्मद बिन अब्दुल मलिक को अपना

बादशाह बना लिया और फ़लस्तीन वालों के साथ शरीक हो गये। लेकिन सुलेमान बिन हिशाम ने इन तमाम बग़ावतों को दबा दिया।

इराक़ और ख़ुरासान के सूबों में ख़लीफ़ा के ख़िलाफ़ बग़ावतें भड़कीं, जो कभी दब जातीं, कभी उभर आतीं। यह सिलसिला भी अब तेज़ी पर था और बेचैनी फैल रही थी।

आरमीनिया में मरवान बिन मुहम्मद बिन मरवान और जज़ीरे में अब्दह बिन रिमाह ग़स्सानी हाकिम बनाए गये थे। जब वलीद बिन यज़ीद क़त्ल हुआ तो अब्दह ग़स्सानी जज़ीरे से शाम की तरफ़ चला गया। मरवान बिन मुहम्मद के बेटे अब्दुल मलिक ने जज़ीरे के सूबे को ख़ाली देख कर उस पर क़ब्ज़ा कर के जगह जगह अपने कारिंदे भेज दिए और अपने बाप मरवान बिन मुहम्मद को लिखा के यह मौक़ा बहुत ही मुनासिब है, आप वलीद के ख़ून का मुआवज़ा लेने के लिए खड़े हो जाएं। इधर हम्स व उर्दुन व फ़लस्तीन की बग़ावतों से निबटने की यज़ीद बिन वलीद को फ़ुर्सत न मिलने पायी थी कि मरवान बिन मुहम्मद की बग़ावत की ख़बर सुनी। यज़ीद ने लालच देकर उस बग़ावत पर क़ाबू पा लिया।

यज़ीद बिन वलीद अपने अख़्लाक़ व क़ाबिलियत के लिहाज़ से बुरा न था, लेकिन उसकी उम्र ने वफ़ा न की २० ज़िलहिज्जा सन १२५ हि० को कुछ दिन कम छः महीने ख़िलाफ़त करके ३५ साल की उम्र में ताऊन के मरज़ में वफ़ात पायी।

इब्राहीम बिन वलीद बिन अब्दुल मलिक

अबू इस्हाक़ इब्राहीम बिन वलीद बिन अब्दुल मलिक अपने भाई यज़ीद की वफ़ात के बाद उसकी वसीयत के मुताबिक़ ख़लीफ़ा हुआ।

अभी इब्राहीम के हाथ पर बैअत नहीं हुई थी कि यज़ीद के मरने की ख़बर मिलते ही मरवान बिन मुहम्मद बिन मरवान दमिश्क़ की तरफ़ फ़ौज लेकर चल पड़ा। क़ेसरीन को जीत कर हम्स की तरफ़ रवाना हुआ यहां तक कि हम्स को भी जीत लिया।

इब्राहीम को जब इन हालात की ख़बर मिली तो उसने सुलैमान बिन हिशाम को भारी फ़ौज देकर मुक़ाबले के लिए भेजा कि हम वलीद बिन यज़ीद के ख़ून का दावा छोड़ देते हैं, तुम उसके बेटे हकम व उस्मान

को जिन्हें वलीद ने वली अहद बनाया था, रिहा कर दो। सुलैमान बिन हिशाम ने इस मांग को ना मंजूर कर दिया। लड़ाई हुई, सुलैमान बुरी तरह हारा, मरवान ने हकम व उस्मान (वलीद बिन यजीद के लड़कों) को बैअत लोगों से ली और दमिश्क़ की तरफ़ बढ़ा।

यहां दमिश्क़ में इब्राहीम और उसके सलाहकारों ने मश्विरा किया कि हकम व उस्मान को क़त्ल कर देना चाहिए। चुनांचे ये दोनों क़ैद ही की हालत में क़त्ल कर दिए गये।

मरवान जीतता हुआ दमिश्क़ में दाखिल हुआ और इब्राहीम व सुलैमान वग़ैरह दमिश्क़ से भाग निकले।

मरवान ने हकम व उस्मान की लाशों को देखा, बहुत अफ़सोस किया। नमाज जनाजा पढ़ कर उनको दफ़्न कराया और यह सवाल लोगों के सामने पेश किया कि तुम किस को अपना खलीफ़ा बनाना चाहते हो ?

सब ने एक राय हो कर मरवान बिन मुहम्मद बिन मरवान बिन हकम के हाथ पर बैअत की।

यह सोमवार २४ सफ़र १२७ हि० की बात है।

इब्राहीम को मरवान ने पनाह दे दी और उस ने मरवान के हक़ में खुशी से खिलाफ़त से हाथ खींच लिया।

इब्राहीम की खिलाफ़त सिर्फ़ दो महीने कुछ दिन रही।

मरवान बिन मुहम्मद बिन मरवान बिन हकम

मरवान बिन मुहम्मद बनू उमैया खानदान का आखिरी खलीफ़ा है इस को लोग मरवानुल हिमार भी कहते हैं।

हिमार अरबी में सब्र करने वाले को कहते हैं. जिस ने मशक़्क़तें ज्यादा बर्दाश्त की हों, उसे भी हिमार कहते हैं। मरवान इसी लिए हिमार कहा जाने लगा कि उसकी खिलाफ़त का तमाम जमाना लड़ाइयों में गुजरा और उस ने बड़े सब्र के साथ इन हालात को झेला।

पहली शव्वाल को मरवान के पास खबर पहुंची कि हम्स वाले बग़ावत और सरकशी की पूरी तैयारी कर के बग़ावत पर तैयार हैं और हर तरफ़ से अरब क़बीले उन के पास पहुंच गये हैं।

मरवान इस खबर के सुनते ही फ़ौरन फ़ौज ले कर हम्स के लिए

रवाना हुआ। दुश्मनों को हरा दिया।

अभी मरवान हम्स ही में था कि खबर पहुंची कि यजीद बिन खालिद को ग़ोता वालों ने अपना सरदार बना कर दमिश्क़ पर हमला कर दिया और दमिश्क़ को घेर लिया। मरवान ने हम्स से दस हज़ार की फ़ौज लेकर हमला किया, ग़ोता वालों को हार का मुंह देखना पड़ा, यजीद बिन खालिद मारा गया।

साबित बिन नईम ने फ़लस्तीन वालों को जमा करके तबरिया को घेर लिया। तबरिया में उस वक़्त वलीद बिन मुआविया बिन मरवान बिन हकम हाकिम था। मरवान ने फ़ौज भेज कर फ़लस्तीन वालों का भी मुक़ाबला किया।

इन बातों से फ़ारिग़ हो कर मरवान बिन मुहम्मद ने अपने लड़कों अब्दुल्लाह और उबैदुल्लाह की वलीअह्दी की बैअत ली और हिशाम की लड़कियों से उन का निकाह कर दिया।

इस के बाद मरवान ने तदमर की तरफ़ फ़ौजकशी की, क्योंकि तद्मर वाले भी खुदमुख्तारी पर क़ायम थे। तदमर वालों को बैअत और इताअत करनी पड़ी।

इस के बाद मरवान ने यजीद बिन उमर बिन हुबैरह् को इराक़ की तरफ़ रवाना किया कि वह जह्हाक़ शैबानी खारजी को, जो कूफ़ा पर मुसल्लत हो गया था, खारिज करे और उस का साथ सुलैमान बिन हिशाम भी देने पर तैयार हो गया। सुलैमान बिन हिशाम को दबाने के लिए खुद मरवान बिन मुहम्मद फ़ौज लेकर बढ़ा, यहां तक कि सुलैमान को जबरदस्त हार हुई।

यहां से फ़ारिग़ हो कर मरवान कूफ़ा की तरफ़ जह्हाक खारजी से लड़ाई लड़ने के लिए रवाना हुआ। और वहां भी दुश्मनों को हराया।

उधर किरमनी भी किरमान में काफ़ी ताक़त पकड़ चुका था, उसने भी मुखालफ़त शुरू कर दी। खुलासा यह कि हर्स बिन शुरैह मारा गया और मर्व पर किरमानी का क़ब्ज़ा हो गया। अभी ये लड़ाइयां चल ही रही थीं कि अबू मुस्लिम खुरासानी ने इस मौक़े को बहुत ग़नीमत समझा और जोड़-तोड़ और साज़िशें कर के खुरासान सूबे पर क़ब्ज़ा कर लिया।

इन लड़ाइयों और आपसी झगड़ों में मरवान ऐसा फंसा कि उसे चैन ही न मिला कि मुल्क की तरक़्क़ी के लिए कुछ कर पाता सियासी तौर पर वह बराबर कमज़ोर होता चला गया, यहां तक कि वह मारा गया।

यह वाक़िआ २८ ज़िलहिज्जा १३२ हि०, मुताबिक़ ५ अगस्त सन ७५० ई० को हुआ और इस के साथ ख़िलाफ़त बनू उमैया का ख़ात्मा हो कर ख़िलाफ़त बनू अब्बास की शुरूआत हुई।

मरवान के क़त्ल के बाद उस के लड़के अब्दुल्लाह व उबैदुल्लाह हब्शा की तरफ़ भागे, हब्शियों ने भी उन को पनाह न दी। उबैदुल्लाह हब्शियों के हाथ से मारा गया और अब्दुल्लाह फ़लस्तीन में आ कर छिप कर रहने लगा। मेहदी की ख़िलाफ़त के ज़माने में फ़लस्तीन के गवर्नर ने गिरफ़्तार कर के इसे मेहदी के दरबार में भेज दिया और उस ने उस को क़ैद कर दिया।

मरवान बिन मुहम्मद की ख़िलाफ़त का दौर

मरवान बिन मुहम्मद बनू उमैया का आख़िरी ख़लीफ़ा है।

मरवान की ख़िलाफ़त का ज़माना कुछ कम ६ साल है। इस मुद्दत में मरवान को एक दिन भी चैन से बैठना नसीब न हुआ। उस ने अपनी पूरी मुद्दत घोड़े की पीठ पर ही गुज़ार दी।

मरवान अगर कुछ दिनों पहले ख़लीफ़ा बना होता तो बनू उमैया की ख़िलाफ़त की तबाही के दिन इतने पहले न आते, लेकिन वह जिन दिनों में ख़लीफ़ा बना, उस वक़्त इस्लामी दुनिया में बनू उमैया के ख़िलाफ़ एक फ़िज़ा तैयार हो चुकी थी, वह उस वक़्त की ख़राबियों और बनू अब्बास की साज़िशों पर ग़ालिब न आ सका।

मरवान सन ७० हि० या सन ७२ हि० में, जब कि उस का बाप मुहम्मद बिन मरवान जज़ीरे का गवर्नर था, पैदा हुआ था।

ख़िलाफ़ते बनूउमैय्या पर एक नज़र

१. हज़रत उस्मान ग़नी की ख़िलाफ़त की आख़िरी आधी मुद्दत से जो अन्दरूनी बेचैनी और ख़ुफ़िया साज़िश शुरू हुई, उन का एक नतीजा यह निकला कि हज़रत अमीर मुआविया रज़ि० ख़लीफ़ा तस्लीम किए गए और ख़िलाफ़ते बनू उमैया की बुनियाद रखी गयी। ख़िलाफ़ते बनू उमैया के शुरू ही में इस्लाम की बद-नसीबी का सब से बड़ा काम ख़िलाफ़ते बनू

उमैया की बुनियाद डालने वाले हज़रत अमीर मुआविया रज़ि० के हाथों यह अंजाम पाया कि उन्होंने अपने बाद अपने बेटे यज़ीद को वली अह्द बनाया। यह वलीअह्दी की वबा ऐसी शुरू हुई कि उस ने आज तक मुसलमानों का पीछा नहीं छोड़ा।

खानदाने बनू उमैया में हज़रत अमीर मुआविया रज़ि०, अब्दुल मलिक बिन मरवान, वलीद बिन अब्दुल मलिक, तीन खलीफ़ा अपनी मुल्की जीतों के लिए और अपनी इन्तिज़ामी क़ाबिलियतों के लिए काफ़ी मशहूर हैं। इन के बाद हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ इस खानदान में एक बिल्कुल निराले क़िस्म के खलीफ़ा थे। हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ की खिलाफ़त का ज़माना अगरचे बहुत थोड़ा है, लेकिन सच तो यह है कि उस ने उनकी खिलाफ़त के दर्जे को ऊंचा उठा दिया है और हर क़िस्म की एतराज़ और मलामत की हरकतों के बावजूद खिलाफ़ते बनू उमैया को सिर्फ़ हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ रह० की वजह से फ़ख़् करने के क़ाबिल खिलाफ़त कहा जा सकता है।

इनके बाद हिशाम बिन अब्दुल मलिक भी एक ऐसा खलीफ़ा गुज़रा है, जिसे पहले ज़िक्र किए गये तीन खलीफ़ों की फ़ेहरिस्त में शामिल किया जा सकता है।

हिशाम बिन अब्दुल मलिक के बाद पूरे दस साल भी न बीतने पाए थे कि खिलाफ़ते बनू उमैया का आलीशान महल ढह चुका था और उसकी बुनियादें भी उखाड़ कर फेंक दी गयी थीं।

जिन पांच खलीफ़ों के नाम ऊपर लिए गये हैं, उन के अलावा बाक़ी सब ऐशपरस्त, पस्त हिम्मत और अक़्ल व दिमाग़ से कोरे थे और हरगिज़ इस क़ाबिल न थे कि किसी ऐसी बड़ी हुकूमत के बादशाह हों, जैसी कि खिलाफ़ते बनू उमैया थी।

२. बनू उमैया के जुर्मों की फ़ेहरिस्त में एक यह जुर्म भी ज़िक्र के क़ाबिल है कि इस्लाम ने खानदानों और क़बीलों के फ़र्क़ और भेद-भाव को मिटा कर सब को एक ही बिरादरी और एक ही क़बीला बना दिया था। बनू उमैया ने इसे फिर ज़िंदा कर दिया। जिस चीज़ को बनू उमैया ने पैदा किया, वही उन की तबाही की वजह बन गयी।

३. बनू उमैया ने अपनी खिलाफ़त और हुकूमत को मज़बूत बनाने के लिए ज़ुल्म व सितम का कोई तरीक़ा नहीं छोड़ा और लोगों को बे-दर्दी से क़त्ल करने में झिझक नहीं दिखायी। बनू उमैया के खलीफ़ों के भय से

ज़्यादा नामी और माहिर अफ़सर और हाकिम वही थे, जो सब से ज़्यादा लोगों को बेदर्दी से क़त्ल करने वाले और सख़्ती से काम लेने वाले थे। बनू उमैया को यह पालिसी हुकूमत और इन्तिज़ाम को मज़बूत और बेहतर बनाने के लिए अपनानी पड़ी थी, लेकिन आख़िर में यही पालिसी उन की बरबादी की वजह बन गयी, क्योंकि जनता के दिलों से उन का विश्वास ख़त्म हो गया, लोगों को उन से हमदर्दी नहीं रही।

४. बनू उमैया इस में शक नहीं कि क़ुरैश के क़बीलों में एक नामी क़बीला था। इस क़बीले में अक्सर ऐसे लोग पैदा होते रहे जो अपनी तद्बीरों में सब से आगे निकल जाते थे, मगर इस का मतलब यह नहीं था कि बनू उमैया के घरों में कोई नालायक़ पैदा ही नहीं हो सकता था। अगर बनू उमैया में वली अह्दी की रस्म जारी न होती और ख़लीफ़ा का चुनाव बनू उमैया ही में होना मान लिया जाता यानी मुसलमान अपनी मर्ज़ी से बनू उमैया के किसी क़ाबिल और अह्ल शख़्स को ख़िलाफ़त के लिए चुन लिया करते, तब भी, अगरचे यह बात भी बे-इंसाफ़ी और ग़लती की थी, तब भी बनू उमैया की ख़िलाफ़त की यह हालत न होती और इस्लामी दुनिया को इतना बड़ा नुक़सान न पहुंचता, जो पहुंचा इस तरह मुम्किन था कि ख़िलाफ़ते बनू उमैया की उम्र बहुत ज़्यादा लंबी होती और वे शिकायतें जो इस ख़िलाफ़त से पैदा हुईं, शायद पैदा न होतीं।

५. ख़ुफ़िया चालों, साज़िशों और चालाकियों में बनू उमैया पूरे अरब में मशहूर थे और उन की ख़िलाफ़त इन्हीं चीज़ों का सहारा लेने का नतीजा थी, लेकिन ताज्जुब है कि इन्हीं चीज़ों के ज़रिए हाशिमियों ने उन्हें क़ब्ज़े में कर लिया, हालांकि हाशिमी इन चीज़ों में उनके सिर्फ़ चेले थे। इस की वजह इस के अलावा और कुछ न थी कि दौलत व हुकूमत के नशे ने उन्हें बद-मस्त बना दिया था और वली अह्दी की बुरी रस्म ने उनकी इस बद-मस्ती को और भी बढ़ा दिया था।

६. इन बातों के अलावा बनू उमैया की ख़िलाफ़त में कुछ ऐसी ख़ूबियां भी पायी जाती हैं, जो उन के बाद बहुत ही कम देखी गयीं और उनके जानशीनों को नसीब न हुईं, जैसे बनू उमैया ने ख़िलाफ़ते राशिदा की जीतों को बढ़ा कर पूरब व पश्चिम में दूर-दूर तक फैला दिया था। पूरब में चीन और पश्चिम में काला सागर तक उन्होंने गोया अपने ज़माने की दुनिया को अपने क़दमों में कर लिया। उन्हीं के ज़माने में समुद्रों में दूर-दूर तक फैले जज़ीरों अफ़रीक़ा के रेगिस्तानों और हिन्दुस्तान

के मैदानों तक इस्लाम फैला।

बनू उमैया की खिलाफ़त के ज़माने में इस्लामी हुकूमत ज़्यादा से ज़्यादा दुनिया में फैल चुकी थी और इस पूरी इस्लामी हुकूमत का एक ही मर्कज़ था। बनू उमैया के बाद इस्लामी मुल्क का फैलाव बहुत ही कम हुआ। बनू उमैया के बाद इस्लामी हुकूमत का मर्कज़ भी एक नहीं रहा, बल्कि एक से ज़्यादा अलग-अलग हुकूमतें क़ायम होने लगीं, जिनमें खिलाफ़ते अब्बासिया सबसे बड़ी हुकूमत थी।

७. बनू उमैया की खिलाफ़त के दौर में अरबों की हैसियत एक जीतने वाली क़ौम की रही। अरबों के अख्लाक़, अरबी ज़ुबान, अरबी तहज़ीब, अरबी रस्म व रिवाज सब पर छाए हुए थे, लेकिन बनू उमैया के बाद अजमियों और दूसरी हारी हुई क़ौमों को यह दर्जा हासिल होने लगा कि वे अरबों पर हुकूमत करें।

८. बनू उमैया के दौर में अगरचे खारजी, शीया और कुछ दूसरे गिरोह पैदा हो गये थे, लेकिन सब पर क़ुरआन और हदीस ग़ालिब था, वे क़ुरआन व सुन्नत के अलावा किसी तीसरी चीज़ को क़ाज़ी न समझते थे, लेकिन ऐसे-बहुत से फ़िरक़े मुसलमानों में पैदा होने लगे, जिन्होंने किताब व सुन्नत को पीठ पीछे डाल कर अपने पीरों, मुर्शिदों, इमामों और आलिमों की बातों की पैरवी को काफ़ी समझा, और यही वजह थी कि खिलाफ़ते बनू उमैया के ज़माने में मुसलमानों की पूरी तवज्जोह क़ुरआन मजीद और रसूलुल्लाह सल्ल० की सुन्नत पर रही। इसके बाद क़ुरआन मजीद की तरफ़ से मुसलमानों की तवज्जोह कम होनी शुरू हुई और यह नहूसत यहां तक फैली कि आज तक उसका सिलसिला मुसलमानों में जारी है।

९. खिलाफ़ते राशिदा में सबसे बड़ी कामियाबी और जीत यह समझी जाती थी कि लोग शिर्क और गुमराही से निजात पाकर तौहीद और इबादते इलाही की तरफ़ मुतवज्जह हो जाएं और इस्लाम लोगों के दिलों की धड़कन बन जाए। माल व दौलत और दुनिया की शान व शौकत की कोई क़द्र व क़ीमत न थी, लेकिन बनू उमैया की खिलाफ़त में माल व दौलत और शान व शौकत को कामियाबी समझा जाने लगा और बैतुलमाल का रुपया उन लोगों के लिए ज़्यादा खर्च होने लगा, जो खिलाफ़त व सलतनत यानी बनू उमैया के खानदान के लिए ज़्यादा फ़ायदेमंद हो सकते थे। जिन लोगों से बनू उमैया को किसी मदद या

ताईद की उम्मीद न होती थी, या जिनको खुश रखना वे अपने लिए ज़रूरी न समझते थे, उनकी तरफ़ से तवज्जोह हटा ली जाती थी और उनके हक़ उनको न मिलते थे। यह बुरी रस्म बाद की खिलाफ़त में और भी ज़्यादा तरक़्क़ी कर गयी थी।

१०. शुरू में और खिलाफ़ते राशिदा के ज़माने में मुसलमानों की ज़िंदगी बहुत सादा और उनकी ज़िंदगी की ज़रूरतें बहुत ही महदूद थीं, बनू उमैया के दौर में ऐश के सामानों का इस्तेमाल शुरू हुआ और वह सिपाहियाना अन्दाज़, जो पहले इज़्ज़त की चीज़ थी धीरे-धीरे मिटते-मिटते बिल्कुल दूर होने लगी। खूबसूरत कपड़े, शानदार मकान और शोभा बढ़ाने वाले सामान, ज़िंदगी की ज़रूरतों में दाखिल होने लगे और इसी निस्बत से मुसलमानों के अन्दर सिद्दीक़ व फ़ारूक़ और खालिद व ज़ुरार के नमूने कम दीख पड़ने लगे।

बनू उमैय्या के मुख़ालिफ़ों की कोशिश

हज़रत उस्मान रज़ि० की शहादत के बाद हाशिमियों और उमवियों में जो मुखालफ़त चली, उसका नतीजा देखने में, हज़रत अली रज़ि० के बाद हज़रत इमाम हसन रज़ि० के खिलाफ़त से हट जाने पर यह निकला कि बनू उमैया ने, बनू हाशिम पर ग़लबा पा लिया और बाज़ी ले गये। जमल और सुफ़्फ़ैन और खारजियों की लड़ाइयों के बाद खिलाफ़त का बनू उमैया में चला जाना बनू हाशिम की एक ऐसी नाकामी थी कि उनकी हिम्मतें पस्त हो चुकी थीं, लेकिन हज़रत अमीर मुआविया रज़ि० के बाद यज़ीद का खलीफ़ा मुक़र्रर होना और वलीअह्दी की रस्मका रस्म पड़ना बनू उमैया के लिए बेहद नुक़सानदेह और उनकी कमज़ोरी का सामान था, लिहाज़ा हज़रत इमाम हुसैन रज़ि० ने ज़ुरात से काम लिया और अपने हमदर्दों की नसीहतों पर अमल न कर करबला के मैदान में कूद पड़े।

हज़रत अमीर मुआविया रज़ि० के कमज़ोर जानशीन यज़ीद और यज़ीद के ग़लतकार अफ़सर इब्ने ज़ियाद ने अपनी हरकतों से चाहे बनू हाशिम की हिम्मतें पस्त कर दी हों, लेकिन बनू उमैया की लोकप्रियता (मक़्बूलियत) को धूल में मिला दिया, जिसके नतीजे में हज़रत अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ि० का वाक़िआ पेश आया।

चुनांचे अब हाशिमियों ने दूसरा तरीक़ा अपनाया।

हाशिमियों में दो ही घराने सरदार माने जाते थे—

१. एक हज़रत अली रज़ि० की औलाद और

२. दूसरी हज़रत अब्बास रज़ि० की औलाद।

हज़रत अली रज़ि० हुज़ूर सल्ल० के चचेरे भाई और दामाद थे, और हज़रत अब्बास आप सल्ल० के चचा थे।

हज़रत अली रज़ि० को चूंकि बनू उमैया के मुक़ाबले में सीधे-सीधे सामना करना पड़ा, इसलिए अलवियों में अब्बासियों की निस्बत ज़्यादा जोश था। हज़रत हुसैन रज़ि० की शहादत के बाद अलवी और फ़ातिमी ज़्यादा बदला लेने की आग में जल रहे थे।

अलवियों में दो गिरोह थे—

१. एक वह, जो इमाम हुसैन रज़ि० की औलाद को ख़िलाफ़त का हक़दार समझता था,

२. दूसरा वह, जो मुहम्मद बिन हनफ़ीया को सबसे ज़्यादा ख़िलाफ़त का हक़दार मानता था।

तीसरा गिरोह अब्बासियों का था।

सबसे ज़्यादा ताक़तवर गिरोह फ़ातिमियों या हुसैनियों का था, क्योंकि करबला के वाक़िए की वजह से उन लोगों को ज़्यादा हमदर्दी हासिल थी। दूसरे यह कि हज़रत फ़ातिमा रज़ि० की औलाद होने की वजह से भी वे ज़्यादा महबूब थे।

इनके बाद दूसरा गिरोह मुहम्मद बिन हनफ़ीया का था।

इसके बाद अब्बासियों का दर्जा था।

बाद में फ़ातिमियों के अन्दर भी दो गिरोह हो गये थे—

१. एक वह, जो ज़ैद बिन अली बिन हुसैन के तरफ़दार थे, वह ज़ैदी कहलाया

२. दूसरे वह, जिस ने इस्माईल बिन जाफ़र सादिक़ के हाथ पर बैअत की थी, वह इस्माईली के नाम से मशहूर हुआ। ये सभी तीनों गिरोह बनू उमैया के मुख़ालिफ़ और तीनों मिलकर अह्ले बैत के हमदर्द कहलाते थे।

अलवियों की कोशिशों का ज़िक्र ऊपर हो चुका है, उन्हें जब कभी मौक़ा मिला, बग़ावत करने में ज़रा भी देर न की, इसीलिए अक्सर नाकाम होते रहे।

इन तीनों गिरोहों ने अपने लिए एक ही तरीक़ा अख्तियार किया था, एक ही तीनों का प्रोग्राम था। उन का ख्याल था कि छुपे तौर पर लोगों को अपना हम-ख्याल बनाया और खुफ़िया तरीक़े से लोगों से बैअत ली जाए। इस मक़सद को पूरा करने के लिए उन्होंने अपनी मशीनरी मुल्कों में फैला दी, जो बड़े खुफ़िया तरीक़ों से अहले बैत की मुहब्बत का वाज़ कहते और बनू उमैया की हुकूमत के ऐबों और कमज़ोरियों को समझाते और अहले बैत ही को खिलाफ़त का हक़दार बताते थे। ये लोग बनू उमैया की मुखालफ़त में इस हद तक आगे बढ़ गये थे कि खारजियों से भी हमदर्दी रखने और मदद लेने देने का बर्ताव जायज़ समझते थे। लेकिन अलवियों की सबसे बड़ी कमज़ोरी उनकी जल्दबाज़ी थी, जिस से बनू उमैया को पता चल जाता और वे अपनी स्कीम में नाकाम हो जाते।

अब्बासियों ने अलवियों की इस नाकाम पालिसी का फ़ायदा उठाया और खुफ़िया काम और राज़दारी बरतने में उन्होंने ज़्यादा एहतियात किया, यहां तक कि अब्बासियों की साज़िश से उमवी खलीफ़ा आखिर तक बे-खबर रहे और इसीलिए अब्बासी अलवियों को छोड़कर कामियाबी हासिल कर सके।

अब्बासियों की एक एहतियात यह भी थी कि उन्होंने अपना मर्कज़ मदीना, मक्का, कूफ़ा, बसरा दमिश्क़ वग़ैरह में से किसी बड़े शहर को नहीं बनाया, बल्कि एक छोटे से गांव हुमीमा को अपना मर्कज़ बनाया।

अलवियों की साज़िशें ज़ाहिर हो जाती थीं, इसलिए वे बार-बार क़त्ल होते रहे, लेकि बनू अब्बास इस क़िस्म के नुक़सान से बिल्कुल बचे रहे और साज़िश की रफ़्तार बराबर आगे बढ़ती रही।

इस रफ़्तार में उस वक़्त और ताक़त पैदा हो गयी, जब मुहम्मद बिन हनफ़ीया की जमाअत पूरी की पूरी अब्बासियों के साथ हो गयी यानी अबू हाशिम बिन मुहम्मद ने अपने तमाम हक़ मुहम्मद बिन अली अब्बासी को हुमीमा में मरते वक़्त दे दिये और उन लोगों को जो अबू हाशिम की खिलाफ़त के लिए कोशिश कर रहे थे, तल्क़ीनो नसीहत की कि आगे मुहम्मद बिन अली के हुक्म के मुताबिक़ कोशिश करें और मुहम्मद बिन अली को अपना पेशवा मानें।

अब्बासियों के रहनुमा मुहम्मद बिन अली अब्बासी थे जब उनका इन्तिक़ाल १२४ हि० में हुआ तो इमाम इब्राहीम उनके जानशीन हुए। इमाम इब्राहीम ने इस साज़िशी जाल को और फैलाया और बढ़ाया।

इमाम इब्राहीम को खुश-क़िस्मती से एक ऐसा शख़्स मिल गया, जिसने आगे चल कर बहुत जल्द इस साज़िश को कामियाबी तक पहुंचाने का तमाम काम अपने ज़िम्मे ले लिये। वह शख़्स अबू मुस्लिम ख़ुरासानी था।

जब इमाम इब्राहीम की वफ़ात के बाद उनका जानशीन अब्दुल्लाह बिन सफ़्फ़ाह उनका भाई हुआ तो उस वक़्त अबू मुस्लिम की क़ाबिलियत और ताक़त आख़िरी नतीजे पैदा करने वाली थी अबू मुस्लिम ने जल्द-जल्द ख़ुरासान में ताक़त हासिल करनी शुरू की। बनू उमय्या को इस साज़िश का पता तब चला जबकि अबू मुस्लिम ख़ुरासान पर पूरी तरह क़ाबिज़ हो चुका था, इसलिए अब्बासियों को किसी नाकामी और नुक़्सान का सामना न करना पड़ा।

सन १३० हि० में अब्बासी लीडरों ने हज के मौक़े पर एक मकान में ख़ुफ़िया मीटिंग की। इस मीटिंग में अबुल अब्बास अब्दुल्लाह सफ़ाह का भाई अबू जाफ़र मंसूर भी मौजूद था और औलादे अली में से भी कुछ लोग तशरीफ़ रखते थे। अबू जाफ़र मंसूर ने बे-झिझक कहा कि हज़रत अली रज़ि० की औलाद में से किसी को ख़लीफ़ा चुन लेना चाहिए। सबने इसे पसन्द किया और सब की राय से मुहम्मद बिन अब्दुल्लाह बिन हसन बिन अली को ख़लीफ़ा बना लिया गया। इसका फ़ायदा यह हुआ कि दोनों ख़ानदान मिल कर जद्दोजेहद करने लगे। ये तमाम कोशिशें अब्बासियों ही के लिए ज़्यादा मुफ़ीद साबित हुईं।

अबू मुस्लिम ख़ुरासानी

अबू मुस्लिम का नाम इब्राहीम बिन उस्मान बिन बिशार था। यह ईरानी नस्ल का था। अस्फ़हान में पैदा हुआ था। मां-बाप ने कूफ़ा के क़रीब एक गांव में रहना शुरू कर दिया था।

जिस वक़्त अबू मुस्लिम के बाप उस्मान का इन्तिक़ाल हुआ है तो अबू मुस्लिम की उम्र सात वर्ष की थी, उसका बाप मरते वक़्त वसीयत कर गया था कि ईसा बिन मूसा सिराज उसकी परवरिश और तर्बियत करे। ईसा उसको कूफ़ा में ले आया। अबू मुस्लिम चारजामा दोज़ी का काम ईसा से सीखता था और उसी के साथ कूफ़ा में रहता था।

गवर्नर कूफ़ा यूसुफ़ बिन उमर को ईसा पर साज़िश का शुबहा हुआ और उसने ईसा बिन मूसा और उसके चचेरे भाई और चचा को क़ैद करा दिया।

अबू मुस्लिम क़ैदख़ाना ईसा बिन मूसा की वजह से अक्सर जाया करता, जहां वे तमाम क़ैदी थे, जिनको बनू उमैया की हुकूमत से नफ़रत थी या क़ैद हो जाने के बाद ज़रूर ही नफ़रत पैदा हो जानी चाहिए थी। उन ही में कुछ ऐसे क़ैदी भी थे जो वाक़ई बनू अब्बास और बनू फ़ातिमा के नक़ीद थे। इसलिए इन लोगों की बातें सुन-सुनकर अबू मुस्लिम के दिल पर असर हुआ और वह बहुत जल्द उन लोगों का हमदर्द बन गया।

क़हतबा बिन शबीब जो इमाम इब्राहीम की तरफ़ से ख़ुरासान में काम करता था और लोगों को अब्बासी ख़िलाफ़त की दावत देता था, उसे मालूम हुआ कि अबू मुस्लिम बहुत होशियार और काम का लड़का है, उसने ईसा से अबू मुस्लिम को मांग लिया। उसे इमाम इब्राहीम की ख़िदमत में पेश किया। इमाम इब्राहीम ने अबू मुस्लिम से पूछा तुम्हारा नाम क्या है? अबू मुस्लिम ने कहा कि मेरा नाम इब्राहीम बिन उस्मान बिशार है।

इमाम इब्राहीम ने कहा, नहीं, तुम्हारा नाम अब्दुर्रहमान है। चुनांचे उस दिन से अबू मुस्लिम का नाम अब्दुर्रहमान हो गया। इमाम इब्राहीम ही ने उनकी उर्फ़ियत अबू मुस्लिम रखी और क़हतबा बिन शबीब से मांग लिया।

कुछ दिनों तक अबू मुस्लिम इमाम इब्राहीम की ख़िदमत में रहा। उन्होंने उसका निकाह अपने एक मशहूर नक़ीब अबू नज्म इम्रान बिन इस्माईल की लड़की से कर दिया। अबू नज्म इम्रान बिन इस्माईल उन लोगों में से था जो अली रज़ि० के ख़ानदान को ख़लीफ़ा बनाना चाहता था। इस निकाह से यह फ़ायदा उठाना था कि अबू मुस्लिम को अली रज़ि० के चाहने वालों की हिमायत हासिल रहे और उसकी ताक़त कमज़ोर न होने पाए।

फिर इमाम इब्राहीम ने अबू मुस्लिम को ख़ुरासान की तरफ़ पूरे ख़ुरासान का ज़िम्मेदार बना कर भेज दिया। अबू मुस्लिम ने वहां पहुंच कर नक़ीबों को हर तरफ़ शहरों में फैला दिया और तमाम ख़ुरासान प्रांत में इस तहरीक को बढ़ावा देने लगा।

सन १२९ हि० में इमाम इब्राहीम ने अबू मुस्लिम को लिख भेजा

कि इस हज के मौक़े पर मुझ से आकर मिल जाओ, ताकि तुम को दावत के फैलाने के सिलसिले के मुनासिब हुक्म दिए जाएं।

चुनांचे अबू मुस्लिम और उसके दूसरे साथी इमाम से मिलने की ग़रज़ से मक्का की तरफ़ चले। क़ूमस नामी जगह पर पहुंचे तो इमाम इब्राहीम का ख़त पहुंचा, जिसमें लिखा था कि तुम तुरन्त ख़ुरासान की तरफ़ वापस जाओ और अगर ख़ुरासान से रवाना न हुए हो, तो वहीं ठहरे रहो, अपनी दावत को छुपाकर न रखो, बल्कि एलानिया दावत देनी शुरू कर दो और जिन लोगों से बैअत ले चुके हो, उनको जमा करके ताक़त का इस्तेमाल शुरू कर दो।

इस ख़त को पढ़ते ही अबू मुस्लिम तो मर्व की तरफ़ लौट गया और क़हतबा बिन शबीब माल व अस्बाब लिए हुए इमाम इब्राहीम की तरफ़ रवाना हुआ।

जब अबू मुस्लिम को एलानिया दावत और ताक़त के इस्तेमाल की इजाज़त मिली, तो यह वह ज़माना था कि ख़ुरासान में किरमानी और नस्र बिन सय्यार की लड़ाइयों का सिलसिला जारी था। अबू मुस्लिम ने अपनी जमाअत के लोगों को जमा किया और उनको लेकर किरमानी और नस्र बिन सय्यार के बीच में आ गया।

किरमानी क़त्ल हुआ तो उसका लड़का अली बिन किरमानी अबू मुस्लिम के पास आ गया और अबू मुस्लिम ने नस्र को मर्व से निकाल कर क़ब्ज़ा कर लिया, फिर कुछ दिनों वहां रहकर ख़ुरासान वापस चला आया।

इन्हीं दिनों इमाम इब्राहीम का वह ख़त जो मुस्लिम के नाम उन्होंने रवाना किया था और जिसमें लिखा था कि ख़ुरासान में अरबी भाषा बोलने वालों को ज़िंदा न छोड़ना और नस्र व किरमानी दोनों का ख़ात्मा कर देना पकड़ा गया और मरवान अल-हिमार की ख़िदमत में पेश हुआ।

यही पहला मौक़ा था कि बनू उमैया को अब्बासियों की साज़िश का हाल मालूम हुआ। इमाम इब्राहीम गिरफ़्तार हुए मरवान ने उनको क़ैद कर दिया।

अबू मुस्लिम ने ख़ुरासान में जब एलानिया दावत शुरू की तो ख़ुरासान के लोग गिरोह-गिरोह करके उसके पास आने लगे।

सन १३० हि० के शुरू होते ही अबू मुस्लिम ने अल्लाह की किताब और अल्लाह के रसूल की सुन्नत की पैरवी और अह्ले बैत की इताअत व

फ़रमाबरदारी पर लोगों से बैअत लेनी शुरू की।

किरमानी, नस्र बिन सय्यार और शैबान खारजी तीनों अबू मुस्लिम के इस बैअत लेने से नाराज़ थे, लेकिन वे इस तरह अपनी लड़ाइयों में लगे हुए थे कि अबू मुस्लिम का कुछ न बिगाड़ सके।

१३१ हि० के शुरू होते ही ये चारों ताक़तें—किरमानी, नस्र, शैबान खारजी और मुस्लिम—एक दूसरे से टकराने लगीं। आखिर अली बिन किरमानी और अबू मुस्लिम ने नस्र बिन सय्यार और शैबान खारजी को हराकर मर्व पर मुस्तक़िल क़ब्ज़ा कर लिया और अबू मुस्लिम ने मर्व के राजमहल में जाकर लोगों से बैअत ली और खुत्बा दिया।

मर्व से निकल कर अबू मुस्लिम ने दूसरे इलाक़ों पर भी क़ब्ज़ा करना शुरू कर दिया।

इसी बीच किरमानी का क़त्ल हो गया और नस्र बिन सय्यार अपनी मौत आप मर गया।

मर्व से निकल कर दूसरे इलाक़ों पर क़ब्ज़ा करते-करते यह टोली बसरा और कूफ़ा पर भी क़ब्ज़ा कर बैठी।

इन्हीं दिनों इमाम इब्राहीम की वफ़ात की खबर मिली।

इमाम इब्राहीम की वफ़ात के वक़्त हुमैमा में उनके खानदान के ये लोग मौजूद थे—

अबुल अब्बास, अब्दुल्लाह सफ़ाह, अबू जाफ़र मंसूर और अब्दुल वह्हाब। ये तीनों इमाम इब्राहीम के भाई थे। मुहम्मद बिन इब्राहीम, ईसा बिन मूसा, दाऊद, ईसा सालेह, इस्माईल, अब्दुल्लाह, अब्दुस्समद—ये लोग इमाम इब्राहीम के चचा थे।

इमाम इब्राहीम ने गिरफ़्तारी से पहले अपने भाई अबुल अब्बास अब्दुल्लाह सफ़ाह को अपना जानशीन मुक़र्रर कर दिया था और मरते वक़्त अबुल अब्बास अब्दुल्लाह सफ़ाह के लिए वसीयत की थी कि कूफ़ा में जाकर क़ियाम करें। चुनांचे इस वसीयत के मुवाफ़िक़ अबुल अब्बास अब्दुल्लाह सफ़ाह मय खानदान हुमैमा से रवाना होकर कूफ़ा में आया।

अबुल अब्बास जब कूफ़ा में पहुंचा है, तो यह वह ज़माना था कि अबू सलमा की हुकूमत क़ायम हो चुकी थी।

अबू सलमा इमाम इब्राहीम का आदमी था, लेकिन अब उस की तमाम कोशिशें औलादे अली रज़ि० को खलीफ़ा बनाने में लग रही थीं, लेकिन चूंकि अबू हाशिम बिन मुहम्मद ने वसीयत की थी कीमुहम्मद बिन

अली अब्बासी को उनकी जमाअत के तमाम आदमी अपना लीडर मानें, इसलिए वह इस आखिरी नतीजे के बारे में कोई फैसला न कर सका था।

कूफ़ा में अब दो क़िस्म के लोग थे—

१. वे जो अब्बास रज़ि० के खानदान में से किसी को खलीफ़ा बनाने की ख्वाहिश रखते थे,

२. दूसरे वे जो अबू तालिब के खानदान को खलीफ़ा बनाने के ख्वाहिशमंद थे।

लेकिन आप का रुझान खानदानी रिश्तों से हटकर कूफ़ा में मौजूद अबुल अब्बास अब्दुल्लाह सफ़ाह ही को खलीफ़ा बनाने का था। चुनांचे १२ रबीउल अव्वल को जुमा के दिन सन १३२ हि० मुताबिक ३० अक्तूबर सन ७४९ ई० को लोगों अबुल अब्बास अब्दुल्लाह सफ़ाह को उसके ठहरने की जगह से साथ लिया, गवर्नमेंट हाउस लाए और खलीफ़ा बना लिया। जामा मस्जिद में आया, खुत्बा दिया और लोगों से बैअत ली। फिर लोगों ने बैअत लेनी शुरू कर दी।

यह ज़माना पूरी इस्लामी दुनिया में बड़ा खतरनाक और नाज़ुक ज़माना था। हर जगह से लड़ने-भिड़ने और फ़साद होने की खबर मिली थी वासित में इब्ने हुबैरा पर क़ाबू पाना आसान न था, उधर मरवान बिन मुहम्मद उमवी खलीफ़ा शाम में मौजूद था, हिजाज़ में भी हलचल मची हुई थी, मिस्र की हालत भी खराब थी। उन्दुलुस में अब्बासी आन्दोलन का कोई असर न था। जज़ीरा व आरमीनिया में उमवी सरदार मौजूद थे और अब्बासियों के खिलाफ़ आन्दोलन चलाने पर तैयार हो गये थे। खुरासान भी पूरे तौर पर क़ाबू में न आ पाया था। बसरा में भी पूरी अब्बासी हुकूमत क़ायम न हो सकी थी, हज़रमौत व यमामा व यमन की भी यही हालत थी, अब्दुल्लाह सफ़ाह के खलीफ़ा होते ही अबू तालिब खानदान यानी अलवियों में हलचल पैदा हो गयी थी, लेकिन उनकी मजबूरी यह थी कि खुद उन्हीं के इमाम की ताईद अब्दुल्लाह सफ़ाह को हासिल थी। लेकिन धीरे-धीरे इन तमाम हालात पर क़ाबू पा लिया गया। इन हालात पर क़ाबू पाने में अबू मुस्लिम का बहुत बड़ा हाथ है। यही वजह है कि उस की ताक़त काफ़ी बढ़ गयी और उसने चुन-चुन कर उस शख्स को, जो उसकी मुखालफ़त कर सकता था, क़त्ल करा दिया।

बनू उमैय्या का क़त्ले आम अब्बासियों के हाथ

इस्लामी खिलाफ़त को अगर कोई क़ौम या खानदान अपनी विरासत समझे, वह सख्त ग़लती और जुल्म करता है। बनू उमैया ने अगर इस्लामी हुकूमत को अपनी ही क़ौम और खानदान में बाक़ी रखना चाहा, तो यह उनकी ग़लती थी। बनू अब्बास या बनू हाशिम अगर इसको अपना खान-दानी हक़ समझते थे, तो यह भी उनकी ग़लती और ना-इंसाफ़ी थी, लेकिन चूंकि दुनिया में आम तौर से लोग इस ग़लती के शिकार हैं, इसीलिए जो आदमी किसी लुटेरे से अपना माल वापस ले लेता है, वह अक्सर क़त्ल-खून और ज़्यादती कर बैठता है, लेकिन इस क़त्ल व खून को बनू अब्बास ने बनी उमैया के हक़ में जिस तरह सही समझा, उसकी मिसाल किसी दूसरी जगह नज़र नहीं आती।

अबू मुस्लिम और क़हतबा बिन शबीब और दूसरे अब्बासियों ने खुरासान के शहरों में जिस तरह क़त्ले आम का बाज़ार गर्म किया, उसका ज़िक्र करते भी क़लम कांप जाता है। बनू हाशिम के ज़ुल्म व सितम का हाल यह था कि अगर किसी के बारे में यह मालूम हो जाता कि यह क़बीला बनू उमैया से ताल्लुक़ रखता है, तो उसे क़त्ल कर दिया जाता, ताकि यह खानदान दुनिया से अपनी जड़ें सुखा दे।

अब्दुल्लाह बिन अली जिन दिनों फ़लस्तीन की तरफ़ था, वहां नहर अबी फ़तरस के किनारे दस्तरख्वान पर बैठा खाना खा रहा था और अस्सी-नव्वे बनू उमैया उसके साथ खाने में शरीक थे। इसी बीच शिब्ल बिन अब्दुल्लाह आ गया। उसने तुरन्त अपने शेर पढ़ने शुरू कर दिए, जिनमें बनू उमैया की बुराई और इब्राहीम के क़ैद होने का ज़िक्र करके बनू उमैया के क़त्ल पर उभारा गया था। अब्दुल्लाह बिन अली (अब्दुल्लाह बिन सफ़्फ़ाह का चचा) ने उसी वक़्त हुक्म दिया कि इन सब को क़त्ल कर दो। उसके खादिमों ने फ़ौरन क़त्ल करना शुरू कर दिया, उनमें से बहुत से ऐसे थे, जो बिल्कुल मर गये थे, कुछ ऐसे थे कि वे घायल होकर गिर पड़े थे, मगर अभी उनमें दम बाक़ी था। अब्दुल्लाह बिन

अली ने इन सब मक़्तूलों और घायलों की लाशों को बराबर लिटाकर उनके ऊपर दस्तरख्वान बिछवाया। इस दस्तरख्वान पर खाना चुना गया और अब्दुल्लाह बिन अली मय साथियों के फिर उस दस्तरख्वान पर बैठ कर खाना खाने में लग गये। ये लोग खाना खा रहे थे और उनके नीचे वे घायल जो अभी मरे नहीं थे, कराह रहे थे, यहां तक कि ये खाना खा चुके और वे सबके सब मर गये।

इसके बाद अब्दुल्लाह बिन अली बिन अब्बास ने बनू उमैया के खलीफ़ों की क़ब्रों को जाकर खुदवाया। अब्दुलमलिक की क़ब्र में से कुछ न निकला। कुछ क़ब्रों से कोई-कोई जिस्म का हिस्सा निकला, बाक़ी सब मिट्टी बन चुके थे। हिशाम बिन अब्दुल मलिक की क़ब्र खोदी गयी, तो सिर्फ़ नाक की ऊंचाई जाती रही थी, बाक़ी तमाम लाश सही सालिम निकली। अब्दुल्लाह बिन अली ने इस लाश के कोड़े लगवाए, फिर उसको सलीब पर चढ़ाया, फिर जलाकर उसकी राख हवा में उड़ा दी। अब्दुल्लाह बिन अली के भाई सुलैमान बिन अली बिन अब्दुल्लाह बिन अब्बास ने बसरा में बनू उमैया के एक गिरोह को क़त्ल करके लाशों को रास्ते में फेंकवा दिया और दफ़न करने से मना कर दिया। इन लाशों को मुद्दतों कुत्ते खाते रहे।

अब्दुल्लाह बिन अली के दूसरे भाई यानी सफ़्फ़ाह के चचा दाऊद बिन अली ने मक्का व मदीना और हिजाज़ व यमन में चुन-चुन कर एक-एक उमवी को क़त्ल कर दिया और बनू उमैया में से किसी का नाम व निशान बाक़ी न रखा।

सूबों के और शहरों के हाकिम, जो आम तौर पर अब्बासी थे अपनी-अपनी जगह इसी खोज में रहने लगे कि कहीं किसी बनू उमैया का पता चले और उसको क़त्ल किया जाए, यहां तक कि जिस तरह किसी परिंदे का शिकार करने के लिए लोग घर से निकलते हैं, इसी तरह बनू उमैया का शिकार करने के लिए रोज़ाना लोग घरों से निकलते थे।

बनू उमैया के लिए कोई मकान, कोई गांव, कोई क़स्बा, कोई शहर अम्न की जगह न रहा और वर्षों उनको खोज करके अब्बासी लोग क़त्ल करते रहे। खुरासान में अबू मुस्लिम ने यह काम और भी ज़्यादा एह-तिमाम व हिम्मत के साथ अंजाम दिया था, उसने न सिर्फ़ बनू उमैया, बल्कि उन लोगों को भी जिन्होंने कभी न कभी बनू उमैया की हिमायत या कोई खिदमत अंजाम दी थी, क़त्ल करा दिया।

बनू उमैया का एक शख्स अब्दुर्रहमान बिन मुआविया बिन हिशाम शिकार होते-होते बाल-बाल बच गया और भाग कर मिस्र व क़ीरवान होता हुआ उन्दुलुस में पहुंच गया। उन्दुलुस चूंकि अब्बासियों की दावत के असर से बड़ी हद तक पाक था और वहां बनी उमैया के हामी ज़्यादा तायदाद में मौजूद थे, इसलिए उन्दुलुस पहुंचते ही इस मुल्क पर क़ब्ज़ा हो गया और एक ऐसी सल्तनत व खिलाफ़त क़ायम करने में कामियाब हुआ, जिस को अब्बासी खलीफ़ा हमेशा रश्क की निगाहों से देखते रहे और उस उमवी हुकूमत का कुछ न बिगाड़ सके।

खिलाफ़ते अब्बासिया

अबुल अब्बास अब्दुल्लाह सफ़ाह

अबुल अब्बास अब्दुल्लाह सफ़ाह बिन मुहम्मद बिन अली बिन अब्दुल्लाह बिन अब्बास बिन अब्दुल मुत्तलिब बिन हाशिम सन १०४ हि० में, हमीमा में पैदा हुआ, वहीं परवरिश पायी, अपने भाई इमाम इब्राहीम का जानशीन हुआ। वह अपने भाई से उम्र में छोटा था।

अब्दुल्लाह सफ़ाह खूंरेज़ी, सखावत और हाज़िर जवाबी में बहुत आगे था। सफ़ाह के हाकिम भी खूंरेज़ी में माहिर थे।

सफ़ाह ने अपने चचा दाऊद को पहले कूफ़ा की हुकूमत पर मुक़र्रर किया, फिर उसको हिजाज़ व यमन व यमामा का हाकिम मुक़र्रर किया और कूफ़ा पर अपने भतीजे ईसा बिन मूसा बिन मुहम्मद को मुक़र्रर किया।

जब १३३ हि० में दाऊद का इन्तिक़ाल हो गया, तो सफ़ाह ने अपने मामूं यज़ीद बिन उबैदुल्लाह बिन अब्दुलमदान हारिसी को हिजाज़ व यमामा को और मुहम्मद बिन यज़ीद बिन उबैदुल्लाह बिन अब्दुल मदान को यमन की गवर्नरी पर मुक़र्रर किया।

सन् १३२ हि० में सुफ़ियान बिन उऐना हल्बी को बसरा का

गवर्नर बनाया गया था, सन १३३ हि० में उसको हटाकर उसकी जगह अपने चचा सुलैमान बिन अली को मुक़र्रर कर दिया और बहरैन व अमान भी उसी की हुकूमत में शामिल कर दिए।

सन १३२ हि० में सफ़ाह का चचा इस्माईल बिन अली हवाज़ का, दूसरा चचा अब्दुल्लाह बिन अली शाम का, अबू औन बिन अब्दुल मलिक बिन यज़ीद मिस्र का, अबू मुस्लिम खुरासानी खुरासान और जिबाल का गवर्नर और खालिद बिन बरमक दीवानुलखराज (माल मंत्री) था। एक दूसरे चचा को फ़ारस की हुकूमत पर भेजा और मुहम्मद बिन मूसल को मूसल की हुकूमत पर भेजा। मुहम्मद बिन मूसल को मूसल वालों ने निकाल दिया, ये लोग बनू अब्बास की हुकूमत नहीं चाहते थे। सफ़ाह ने नाराज़ होकर अपने भाई यह्या बिन मुहम्मद बिन अली को बारह हज़ार की फ़ौज दे कर रवाना किया। यह्या बिन मुहम्मद मूसल पहुंच कर राजभवन में ठहरा और मूसल के बारह बड़े आदमियों को धोखे से बुला कर क़त्ल कर दिया।

मूसली इससे बिगड़ गये और लड़ने पर तैयार हो गये। यह्या ने यह देखकर मुनादी करा दी कि जो शख्स जामा मस्जिद में चला आए, उसको अमान दी जाएगी। यह सुनकर लोग जामा मस्जिद की तरफ़ दौड़ पड़े।

जामा मस्जिद के दरवाज़ों पर यह्या ने अपने आदमियों को खड़ा कर रखा था, जो जामा मस्जिद के अन्दर जाता था, क़त्ल कर दिया जाता था। इस तरह ग्यारह हज़ार आदमी क़त्ल कर दिए गये। फिर शहर में क़त्ले आम कर दिया गया। रात हुई तो यह्या के कान में उन औरतों के रोने की आवाज़ आयी, जिनके शौहर, बाप, भाई, बेटे जुल्म से क़त्ल किए गए थे, सुबह होते ही यह्या ने हुक्म दिया कि औरतों और बच्चों को भी क़त्ल कर दिया जाए। तीन दिन तक फ़ौज को शहर वालों का खून जायज़ कर दिया गया। इस हुक्म के सुनते ही शहर में क़त्ले आम बड़ी तेज़ी से जारी हो गया।

यह्या की फ़ौज में चार हज़ार जंगी भी थे। जंगियों ने औरतों की आबरू लूटने में कोई कसर न छोड़ी। चौथे दिन यह्या घोड़े पर सवार होकर शहर की सैर के लिए निकला। एक औरत ने हिम्मत करके यह्या की बाग डोर पकड़ ली और कहा कि क्या तुम बनू हाशिम नहीं हो? क्या तुम अल्लाह के रसूल सल्ल० के चचा के लड़के नहीं हो? क्या तुम को

यह खबर नहीं है कि मुसलमान और मोमिन औरतों से जंगियों ने ज़बरदस्ती निकाह कर लिया है?

यह्या ने इसका कुछ जवाब न दिया और चला गया। अगले दिन जंगियों को तंख्वाह देने के बहाने से बुलाया। जब सब जमा हो गये तो सबके क़त्ल करने का हुक्म दे दिया।

सफ़ाह को जब इन हालात की खबर मिली तो उसने इस्माईल बिन अली को मूसल भेज दिया और यह्या को फ़ारस की हुकूमत पर तब्दील कर दिया।

सन १३४ हि० मे बुसाम बिन इब्राहीम बिन बुसाम जो खुरासान का एक नामी सरदार था, बाग़ी हो गया और मदायन पर क़ब्ज़ा कर लिया। सफ़ाह ने खाज़िम बिन खुज़ैमा को बुसाम के मुक़ाबले पर रवाना किया। खाज़िम ने बुसाम को बुरी तरह हरा दिया।

इस के बाद सफ़ाह ने खाज़िम को अमान की तरफ़ खारजियों से लड़ने के लिए भेज दिया और उन्हें ज़ेर कर लिया।

इन वाक़िओं के बाद सफ़ाह के पास खबर पहुंची कि मंसूर बिन जम्हूर ने सिंध में बग़ावत कर दी है (यह मंसूर बिन जम्हूर वही है, जो दो महीने यज़ीदुन्नाक़िस के ज़माने में इराक़ और खुरासान का गवर्नर भी रह चुका था और अब्दुल्लाह बिन मुआविया बिन जाफ़र के साथियों में था। जब अब्दुल्लाह बिन मुआविया को अस्तखर के क़रीब दाऊद बिन यज़ीद बिन उमर बिन हुबैरा और मान बिन जायदा के मुक़ाबले में मुंह की खानी पड़ी, तो मंसूर बिन जम्हूर सिंध भाग कर चला आया था और अब्दुल्लाह बिन मुआविया हिरात पहुंच कर मालिक बिन हैसम खुज़ाई, हिरात के हाकिम के हाथ से अबू मुस्लिम के हुक्म के मुताबिक़ क़त्ल हुआ था।) सफ़ाह ने अपने अफ़सर पुलिस मूसा बिन काब को सिंध की तरफ़ रवाना कर दिया और मंसूर को ज़बरदस्त हार का मुंह देखना पड़ा।

इसी साल यानी ज़िलहिज्जा १३४ हि० में सफ़ाह अंबार नामी जगह पर आया और इसी जगह को अपनी राजधानी बनाया।

इधर अबू मुस्लिम खुरासानी खिलाफ़ते अब्बासिया की बुनियाद डालने में दाहिना हाथ बनने की वजह से अपने आप को खलीफ़ा सफ़ाह का सरपरस्त समझता था। वह खलीफ़ा सफ़ाह को मश्विरे देता और सफ़ाह उसके मश्विरों पर अक्सर अमल करता, लेकिन खुरासान के मामलों

में वह सफ़ाह से इजाज़त या मश्विरा लेना ज़रूरी न समझता था। सफ़ाह और उस के ख़ानदान वालों को यह बात किसी क़ीमत पर बर्दाश्त नहीं हो सकती थी। इस लिए सफ़ाह ने दो आदमियों को उस के क़त्ल के लिए भेज दिया।

ग़रज़ हालत यह थी कि अबू मुस्लिम और सफ़ाह के दिल साफ़ नहीं हो सके थे।

अबू मुस्लिम को जब इसका शुबहा हुआ, तो उस ने भी सिर्फ़ ख़ुरासान ही पर अपने असर व इक़्तिदार को काफ़ी न समझ कर हिजाज़ व इराक़ में भी अपना असर क़ायम करने की कोशिश ज़रूरी समझी, ताकि वह अगर ज़रूरत पड़े तो अब्बासियों को कुचल सके। एक ऐसे शख़्स का, जो अब्बासी दावत को कामियाब बना चुका था, हिजाज़ व इराक़ और तमाम इस्लामी मुल्कों में अपनी क़ुबूलियत बढ़ाने के काम पर ख़ुफ़िया तरीक़े से तैयार हो जाना कोई ताज्जुब की बात न थी, लेकिन उस को यह बात याद न रही थी कि उस के मुक़ाबले पर वह ख़ानदान है, जिस में मुहम्मद बिन अली और इब्राहीम बिन मुहम्मद जैसे शख़्स यानी अब्बासी तह्रीक की बुनियाद डालने वाले पैदा हो सकते हैं और ख़िलाफ़ते बनू उमैया की बरबादी से फ़ारिग़ हो कर अभी उस पर क़ाबिज़ हुए हैं।

अबू मुस्लिम ने अगरचे सबसे ज़्यादा काम किया था, लेकिन वह इस काम में अब्बासियों का शागिर्द और अब्बासियों ही का तर्बियत किया हुआ था। ग़रज़ अबू मुस्लिम ने सफ़ाह से हज की इजाज़त तलब की। सफ़ाह ने उस को इजाज़त दे दी और लिखा कि पांच सौ आदमियों से ज़्यादा अपने साथ न लाओ। अबू मुस्लिम ने लिखा कि लोगों को मुझ से दुश्मनी है। इतने थोड़े-से आदमियों के साथ सफ़र करने में मुझ को अपनी जान का ख़तरा है। सफ़ाह ने लिखा कि ज़्यादा से ज़्यादा एक हज़ार आदमी काफ़ी हैं। ज़्यादा आदमियों के साथ होना इसलिए तक्लीफ़ की चीज़ होगी कि मक्का के सफ़र में रसद के सामान का जुटाना कठिन है।

लेकिन अबू मुस्लिम न माना और आठ हज़ार की फ़ौज ले कर आया। अल-बत्ता ख़ुरासान की सरहद पर पहुंचा तो सात हज़ार फ़ौज वहीं छोड़ दी और एक हज़ार के साथ राजधानी अंबार की तरफ़ बढ़ा।

इधर सफ़ाह ने अबू मुस्लिम के हज के सफ़र की ख़बर पाते ही तै कर लिया था कि उसे अमीरे हज नहीं बनाना है, इस के लिए उस ने अपने भाई अबू जाफ़र मंसूर को तैयार कर लिया था।

अबू मुस्लिम के राजधानी पहुंचने पर खलीफ़ा ने उस के स्वागत का भरपूर इन्तिज़ाम किया, लेकिन साथ ही यह भी बता दिया कि अगर इस साल मेरे भाई अबू जाफ़र मंसूर का इरादा हज का न होता, तो मैं तुम ही को अमीरे हज बनाता। इस तरह अबू मुस्लिम की अमीरे हज होने की ख्वाहिश पूरी होने से रह गयी।

ग़रज़ राजधानी अंबार से अबू जाफ़र मंसूर और अबू मुस्लिम दोनों साथ-साथ हज के लिए रवाना हुए। अबू मुस्लिम खुरासान से एक बड़ा खज़ाना साथ ले कर आया था। मंसूर का साथ उस को पसन्द न था, क्योंकि वह जो बहुत-से काम आज़ादाना करना चाहता था, नहीं कर सकता था, फिर भी उसने मक्का के रास्ते में हर मंज़िल पर कुंएं खुदवाए, सराएं बनवायीं, और मुसाफ़िरों के लिए आसानियां जुटाने के काम शुरू करा दिए, कपड़े बांटे, लंगरखाने जारी किए, लोगों को इनाम व इकराम दिए और अपनी सखावत व बख्शिश के ऐसे नमूने दिखाए कि लोगों के दिल उसी की तरफ़ झुक गये।

मक्का मुअज़्ज़मा में भी उस ने यही काम बड़े पैमाने पर किया, जहां हर तरफ़ के लोग मौजूद थे।

हज के दिनों के गुज़रने पर अबू जाफ़र मंसूर ने अभी चलने का इरादा भी नहीं किया था कि अबू मुस्लिम मक्का से रवाना हो गया। वह मक्का से दो मंज़िल इस तरफ़ आ गया था कि राजधानी अंबार का क़ासिद उस को मिला, जो सफ़ाह के मरने की खबर और अबू जाफ़र मंसूर के खलीफ़ा होने की खुशखबरी ले कर मंसूर के पास जा रहा था। दो दिन तक उस ने क़ासिद को अपने पास रोके रखा और फिर उसे अबू जाफ़र मंसूर के पास भेज दिया।

अबू जाफ़र मंसूर को अबू मुस्लिम के पहले ही रवाना होने का मलाल था, अब इस बात का मलाल और हुआ कि अबू मुस्लिम ने इस खबर के मिलते ही मंसूर को खिलाफ़त की मुबारकबाद नहीं भेजा, बैअत के लिए भी नहीं ठहरा, हालांकि सब से पहले उसी को बैअत करनी चाहिए थी और मंसूर के आने तक कम से कम इसी जगह ठहरना बहुत जरूरी था कि दोनों साथ-साथ सफ़र करते।

अबू जाफ़र यह खबर सुनते ही तुरन्त मक्का से रवाना हो गया, लेकिन अबू मुस्लिम उस के आगे सफ़र करता हुआ अंबार पहुंचा और उस के बाद मंसूर राजधानी में दाखिल हुआ।

अबू मुस्लिम और अबू जाफ़र को रवाना करने के बाद अबुल अब्बास अब्दुल्लाह सफ़ाह चार वर्ष आठ महीने खिलाफ़त कर के १३ ज़िलहिज्जा १३६ हि० को इन्तिक़ाल कर गया। उस के चचा ईसा ने नमाज़ पढ़ायी। अंबार में दफ़्न किया गया। उस ने मरने से पहले अपने भाई अबू जाफ़र मंसूर और उस के बाद ईसा बिन मूसा की वली अह्दी का इक़रार नामा लिख कर एक कपड़े में लपेट कर और अपने अह्ले बैत की मोहरें लगा कर ईसा के सुपुर्द कर दिया। चूंकि मंसूर मौजूद न था, इस लिए ईसा बिन मूसा ने मंसूर की खिलाफ़त के लिए लोगों से बैअत ली और इस वाक़िए की इत्तिला के लिए क़ासिद मक्का की तरफ़ रवाना किया।

सफ़ाह की ख़िलाफ़त पर एक नज़र

अब्दुल्लाह सफ़ाह ने माल व दौलत से अपनी खिलाफ़त की मज़बूती के लिए उसी तरह काम लिया, जिस तरह खिलाफ़ते बनू उमैया की बुनियाद डालने वाले हज़रत अमीर मुआविया रज़ि० ने काम लिया था। हज़रत अमीर मुआविया रज़ि० ने अपनी सखावत के ज़रिए अपने मुखालिफ़ों यानी अलवियों का मुंह बन्द कर दिया था और उन को अपना हमदर्द बना लेने में कामियाबी हासिल की थी। ऐसे ही खिलाफ़ते अब्बासिया की बुनियाद डालने वाले सफ़ाह के मुक़ाबले पर भी अलवी ही खिलाफ़त के दावेदार थे, उन्हों ने अब्बासियों के साथ मिल कर बनू उमैया को बर्बाद किया था और अब अब्बासिया खानदान में खिलाफ़त के चले जाने से वे बिल्कुल उसी तरह ना-खुश थे, जैसे कि बनू उमैया में खिलाफ़त के जाने से नाराज़ थे।

अब्दुल्लाह सफ़ाह ने भी अलवियों को हज़रत मुआविया रज़ि० की तरह बे-इंतिहा माल व दौलत देकर खामोश कर दिया। जब सफ़ाह कूफ़ा में खलीफ़ा बनाया गया, तो अब्दुल्लाह बिन हसन मुसन्ना बिन हसन बिन अली और दूसरे अलवी लोग कूफ़ा में आये और कहा कि यह क्या बात है कि खिलाफ़त जो हमारा हक़ था, उस पर तुमने क़ब्ज़ा कर लिया। यह वही अब्दुल्लाह बिन हसन मुसन्ना हैं, जिन के लड़के मुहम्मद को ज़िलहिज्जा १३१ हि० में मक्का में मज्लिस के अन्दर अब्बासियों और अलवियों ने

मिल कर खिलाफ़त के लिए चुना था और मज्लिस में हाज़िर तमाम लोगों के साथ अबू जाफ़र मंसूर ने भी मुहम्मद के हाथ पर बैअत की थी।

सफ़्फ़ाह ने अब्दुल्लाह बिन हसन मुसन्ना की ख़िदमत में दस लाख दिरम पेश कर दिए, हालांकि यह रक़म सफ़्फ़ाह के पास उस वक़्त मौजूद न थी, इब्ने मुक़रिन से क़र्ज़ ले कर दी।

इसी तरह हर एक अलवी को इनाम व इकराम से मालामाल करके रुख़्सत किया।

अब्दुल्लाह बिन हसन मुसन्ना अभी सफ़्फ़ाह के पास से रुख़्सत न हुए थे कि मरवान बिन मुहम्मद के क़त्ल होने की ख़बर मिली और बहुत से क़ीमती जवाहरात व ज़ेवरात भी मिले। इन्हें सफ़्फ़ाह ने अब्दुल्लाह बिन हसन मुसन्ना को दे दिए और अस्सी हज़ार दीनार ले कर उन ज़ेवरात को एक व्यापारी ने अब्दुल्लाह बिन हसन से ख़रीद लिए।

ग़रज़ यह कि अब्दुल्लाह सफ़्फ़ाह से इस काम में ज़रा भी कोताही होती, तो यक़ीनन अलवी तुरन्त एलानिया मुख़ालफ़त पर तैयार उठ खड़े होते, और यह अब्बासियों के लिए एक ज़बरदस्त चैलेंज होता, इस लिए अब्दुल्लाह सफ़्फ़ाह के कामों में सब से बड़ा कारनामा यही समझना चाहिए कि उस ने तमाम अलवियों को माल व दौलत दे कर ख़ामोश रखा और किसी को मुक़ाबले पर खड़ा नहीं होने दिया।

अब्दुल्लाह सफ़्फ़ाह की वफ़ात के बाद ही अलवी बग़ावत पर तैयार हो सके, लेकिन अब अब्बासी हुकूमत मज़बूत हो चुकी थी और उस की जड़ें गहराई तक पहुंच गयी थीं।

अबू जाफ़र मंसूर

अबू जाफ़र अब्दुल्लाह मंसूर बिन मुहम्मद बिन अली बिन अब्दुल्लाह बिन अब्बास बिन अब्दुल मुत्तलिब की मां सलामा बरबरीया लौंडी थी। अबू जाफ़र मंसूर सन १०५ हि० में अपने दादा की ज़िंदगी में पैदा हुआ।

मंसूर बड़ा बहादुर, सूझ-बूझ वाला इंसान था। खेल-तमाशे के पास भी न जाता था, अदब और फ़िक़ह पर गहरी नज़र थी।

अब्दुर्रहमान बिन मुआविया बिन हिशाम बिन अब्दुल मलिक उमवी

ने सन १३८ हि० में यानी मंसूर की खिलाफ़त के ज़माने में उन्दुलुस के अन्दर अपनी हुकूमत और खिलाफ़त क़ायम कर ली थी। वह भी एक बर-बरीया के पेट से पैदा हुआ था, इस लिए लोग कहते थे कि इस्लाम की हुकूमत बरबरीयों में तक़्सीम हो गयी।

इब्ने असाकिर ने लिखा है कि जब मंसूर इल्म हासिल करने में इधर-उधर फिरा करता था, एक दिन किसी मंज़िल पर उतरा तो चौकी-दार ने उस से दो दिरहम महसूल के मांगे और कहा कि जब तक महसूल न दोगे, इस मंज़िल पर ठहर न सकोगे। मंसूर ने कहा कि मैं बनू हाशिम में से हूं, मुझे माफ़ कर दो, मगर वह न माना। फिर मंसूर ने कहा कि मैं हज़रत मुहम्मद सल्ल० के चचा के बेटों में से हूं। वह फिर भी न माना। मंसूर ने कहा कि क़ुरआन शरीफ़ जानता हूं, मुझे माफ़ कर दो, उसने फिर भी न माना, मंसूर ने कहा कि आलिम फ़क़ीह और विरासत की तक़्सीम का माहिर हूं, वह फिर भी न माना, आखिर मंसूर को दो दिरहम देने ही पड़े। इसी दिन से मंसूर ने इरादा कर लिया था कि माल व दौलत जमा करना चाहिए।

मंसूर ने एक बार अपने बेटे मेहदी को नसीहत की कि बादशाह बग़ैर जनता की इताअत के बाक़ी नहीं रह सकती और जनता बग़ैर इंसाफ़ के इताअत नहीं कर सकती। सब से बेहतर आदमी वह है जो ताक़त के बावजूद माफ़ करे और सब से बेवकूफ़ वह है, जो ज़ुल्म करे, किसी मामले में बग़ैर सोचे-समझे हुक्म नहीं देना चाहिए। देखो, हमेशा नेमत का शुक्र अदा करना, ताक़त होने पर माफ़ कर देना, दिल रखने के साथ इताअत की उम्मीद रखना, जीत हासिल होने के बाद नर्मी और रहमदिली अपनाना।

अब्दुल्लाह बिन अली की बग़ावत

मंसूर के चचा अब्दुल्लाह बिन अली को अब्दुल्लाह सफ़्फ़ाह ने खुरा-सानी व शामी फ़ौज के साथ अपने मौत से पहले साइफ़ा को रवाना कर दिया था। मुहर्रम १३७ हि० में मंसूर अंबार में पहुंच कर खलीफ़ा बना था। ईसा बिन मूसा ने सफ़्फ़ाह की वफ़ात से अब्दुल्लाह बिन अली को भी खबर दी थी और लिखा था कि सफ़्फ़ाह ने अपने बाद मंसूर की खिलाफ़त के लिए वसीयत की है।

अब्दुल्लाह बिन अली ने लोगों को जमा कर के कहा कि अब्दुल्लाह सफ़ाह ने जब मुहिम हर्रान के लिए फ़ौज रवाना करनी चाही थी, तो किसी को उस तरफ़ जाने की हिम्मत न हुई, तो सफ़ाह ने कहा कि जो शख्स उस मुहिम पर जाएगा, वह मेरे बाद खलीफ़ा होगा, चुनांचे इस मुहिम पर मैं रवाना हुआ और मैं ने मरवान बिन मुहम्मद और दूसरे उमवी सरदारों को हरा कर इस मुहिम में कामियाबी हासिल की।

सब ने इस की तस्दीक़ की और अब्दुल्लाह बिन अली के हाथ पर बैअत कर ली।

अब्दुल्लाह बिन अली ने दलूक नामी जगह से लौट कर हरान नामी जगह में मुक़ातिल बिन हकीम को घेर लिया। चालीस दिन तक घेरे रहा। घेराव के दिनों में खुरासान वालों की ओर से शक में पड़कर उनमें बहुत से आदमियों का क़त्ल कर दिया और हुमीद बिन क़हतबा को हल्ब का हाकिम मुक़र्रर करके एक खत देकर रवाना किया, जो जुफ़र बिन आसिम गवर्नर हल्ब के नाम था, इस खत में लिखा था कि हुमीद को पहुंचते ही क़त्ल कर डालना। हुमीद ने रास्ते में खत खोलकर पढ़ लिया और हल्ब के बजाए इराक़ की तरफ़ चल दिया।

इधर मंसूर जब अंबार में पहुंचा है, तो अबू मुस्लिम भी वहां पहले पहुंच चुका था। अबू मुस्लिम ने मंसूर के हाथ पर बैअत की और मंसूर ने उसके साथ इज़्ज़त का और दिल रखने का बर्ताव किया।

इसी बीच खबर पहुंची कि अब्दुल्लाह बिन अली बाग़ी हो गया है। मंसूर ने अबू मुस्लिम से कहा कि मुझको अब्दुल्लाह बिन अली की तरफ़ से बहुत खतरा है। अबू मुस्लिम तो ऐसे ही कामों की खोज में रहता था, फ़ौरन तैयार हो गया, ताकि इस तरह सीधे-सीधे मंसूर पर भी अपने एहसानों का बोझ रख दिया जाए।

चुनांचे अबू मुस्लिम को अब्दुल्लाह बिन अली के दमन के लिए भेजा दिया गया।

इब्ने क़हतबा, जो अब्दुल्लाह बिन अली से नाराज़ होकर इराक़ की तरफ़ आ रहा था, वह अबू मुस्लिम से आ मिला।

अब्दुल्लाह बिन अली ने मुक़ातिल बिन हकीम को अमान दे दी और मुक़ातिल ने हरान अब्दुल्लाह बिन अली के सुपुर्द कर दिया। अब्दुल्लाह बिन अली मुक़ातिल को मय एक खत, उस्मान बिन अब्दुल आला हाकिम रक़्क़ा के पास भेजा। उस्मान ने मुक़ातिल को पहुंचते ही

क़त्ल कर दिया और उस के दोनों लड़कों को गिरफ़्तार कर लिया।

मंसूर ने अबू मुस्लिम को रवाना करने के बाद मुहम्मद बिन सूल को आज़रबाईजान से तलब करके अब्दुल्लाह बिन अली के पास धोखा देने की ग़रज़ से रवाना किया। मुहम्मद बिन सूल ने अब्दुल्लाह बिन अली के पास पहुंचकर यह कहा कि मैं ने सफ़्फ़ाह से सुना है, वह कहते थे कि मेरे बाद मेरा जानशीन मेरा चचा अब्दुल्लाह होगा।

अब्दुल्लाह बिन अली बोला, तू झूठा है, मैं ने तेरे धोखे को खूब समझ लिया है, यह कहकर उसकी गरदन उड़ा दी।

इसके बाद अब्दुल्लाह बिन अली ईरान से रवाना होकर नसीबन आकर ठहरा और खंदक़ खोदकर मोर्चा बना लिया।

मंसूर ने अबू मुस्लिम को रवाना करने से पहले हसन बिन क़हतबा, आरमीनिया के हाकिम को भी लिख दिया था कि आकर अबू मुस्लिम की खिदमत अपनाए, चुनांचे हसन बिन क़हतबा भी मूसल नामी जगह पर अबू मुस्लिम से आ मिला था।

अबू मुस्लिम मय अपनी फ़ौज जब नसीबन के क़रीब पहुंचा तो नसीबन का रुख़ छोड़ कर शाम के रास्ते पर पड़ाव डाल दिया और यह मशहूर किया, मुझ को अब्दुल्लाह बिन अली से कोई वास्ता नहीं, मैं तो शाम की गवर्नरी पर मुक़र्रर किया गया हूं, शाम को जा रहा हूं।

अब्दुल्लाह बिन अली समझ गया कि यह सिर्फ़ धोखा है। यहां तक कि दोनों तरफ़ की फ़ौजें टकरा गयीं। कई महीने तक लड़ाई होती रही। आख़िर ७ जुमादस्सानी, बुध के दिन सन १३७ हि० को अब्दुल्लाह बिन अली को अपनी हार माननी पड़ी और मुस्लिम ने जीत की खुश-खबरी मंसूर के पास भेज दी। अब्दुल्लाह बिन अली ने उस मैदान से भागकर अपने भाई सुलेमान बिन अली के पास जाकर बसरा में पनाह ली और एक मुद्दत तक वहां छिपा रहा।

अबू मुस्लिम का क़त्ल

जब अब्दुल्लाह बिन अली को हार का मुंह देखना पड़ा और अबू मुस्लिम को लूट का माल बहुत हाथ आया, तो मंसूर ने इस जीत का हाल सुन कर अपने खादिम अबू ख़सीब को लूट के माल की सूची तैयार करने

के लिए रवाना किया। अबू मुस्लिम को इस बात से सख्त गुस्सा आया कि मंसूर ने मेरा भरोसा न किया और अपना आदमी सूची तैयार करने के लिए भेज दिया।

अबू मुस्लिम की इस नाराजी व ना-खुशी की खबर जब मंसूर को पहुंची तो उस को यह चिन्ता हुई कि कहीं अबू मुस्लिम नाराज हो कर खुरासान न चला जाए, चुनांचे उस ने उसे मिस्र व शाम का गवर्नर बना कर आर्डर उसके पास भेज दिया। अबू मुस्लिम को इससे और भी ज़्यादा रंज हुआ कि मंसूर मुझ को खुरासान से हटा कर के बे-सहारा करना चाहता है, चुनांचे अबू मुस्लिम जज़ीरे से निकल कर खुरासान की तरफ़ रवाना हो गया।

यह सुन कर मंसूर अंबार से मदाइन की तरफ़ रवाना हुआ और अबू मुस्लिम को अपने पास हाज़िर होने के लिए बुलाया।

अबू मुस्लिम ने आने का इंकार कर के लिख भेजा कि मैं दूर ही से आप की इताअत करूंगा। आप के तमाम दुश्मनों को मैं ने हरा दिया है, अब जब कि आप के खतरे दूर हो गये हैं, तो आप को अब मेरी ज़रूरत भी बाक़ी नहीं रही। अगर आप मुझ को मेरे हाल पर छोड़ देंगे, तो मैं आप की इताअत से बाहर न हूंगा और अपनी बैअत पर क़ायम रहूंगा, लेकिन अगर आप मेरे पीछे पड़े तो मैं आप की बैअत खत्म कर के आप की मुखालफ़त पर तैयार हो जाऊंगा।

इस खत को पढ़ कर मंसूर ने अबू मुस्लिम को निहायत नर्मी और मुहब्बत के साथ एक खत लिखा और फिर अपने पास बुलाया।

यह खत मंसूर ने अपने आज़ाद गुलाम अबू हमीस के हाथ रवाना किया और उनको ताकीद की अबू मुस्लिम को किसी भी तरह खुशामद-बरामद कर के ले आना और अगर वह किसी तरह न माने, तो मेरे गुस्से से उसे डराना।

यह खत जब अबू मुस्लिम के पास पहुंचा तो उसने मालिक बिन हैसम से मश्विरा किया, तो उसने कहा कि तुम हरगिज़ मंसूर के पास न जाओ, वह तुम को क़त्ल कर देगा, लेकिन अबू दाऊद खालिद बिन इब्राहीम को खुरासान की गवर्नरी का लालच दे कर मंसूर ने खत के ज़रिए पहले ही इस बात पर तैयार कर लिया था कि अबू मुस्लिम को जिस तरह मुम्किन हो, मेरे पास आने पर तैयार करो। अबू दाऊद के मश्विरे से अबू मुस्लिम मंसूर के पास जाने को तैयार हो गया, मगर फिर भी उस ने इस

एहतियात को ज़रूरी समझा कि अपने वज़ीर अबू इस्हाक़ ख़ालिद बिन उस्मान को पहले मंसूर के पास भेज कर वहां के हालात की मालूमात कराए।

अबू इस्हाक़ पर अबू मुस्लिम को बहुत भरोसा था, चुनांचे अबू इस्हाक़ वहां पहुंचा, तो उस की बड़ी आवभगत की गयी, मंसूर ने अपनी मीठी-मीठी बातों से इस्हाक़ को अपनी तरफ़ मोड़ लिया और कहा कि तुम अबू मुस्लिम को ख़ुरासान जाने से रोक कर पहले मेरे पास आने पर तैयार कर दो, तो मैं तुम्हें ख़ुरासान की हुकूमत इस के बदले में दे दूंगा।

अबू इस्हाक़ यह सुनकर तैयार हो गया। वापस हो कर अबू मुस्लिम के पास आया और उस को मंसूर के पास जाने पर तैयार कर लिया, चुनांचे अबू मुस्लिम अपनी फ़ौज को हलवान में मालिक बिन हैसम की अफ़सरी में छोड़ कर तीन हज़ार फ़ौज के साथ मदाइन की तरफ़ रवाना हुआ। जब अबू मुस्लिम मदाइन के क़रीब पहुंचा, तो अबू मुस्लिम के पास मंसूर के इशारे के मुवाफ़िक़ एक शख़्स पहुंचा और मुलाक़ात करने के बाद अबू मुस्लिम से कहा कि आप मंसूर से मेरी सिफ़ारिश कर दें कि वह मुझ को कस्कर की हुकूमत दे दे, साथ ही वज़ीरे सल्तनत अबू अय्यूब से मंसूर आजकल सख़्त नाराज़ है, आप अबू अय्यूब की भी सिफ़ारिश कर दें।

अबू मुस्लिम यह सुन कर बहुत ख़ुश हुआ और उस के दिल से रहे-सहे ख़तरे सब दूर हो गये। अबू मुस्लिम दरबार में पूरी इज़्ज़त के साथ दाख़िल हुआ, और इज़्ज़त ही के साथ आराम करने चला गया। दूसरे दिन जब दरबार में आया, तो मंसूर ने परदे के पीछे आदमी बिठा रखे थे कि इशारा पाते ही उसे क़त्ल कर दें। चुनांचे अबू मुस्लिम आया। उस से ऐसी बातें पूछी गयीं कि उसे झुंझलाहट हुई, गुस्सा भी आया। मंसूर ने इशारा किया और पहले से सधे-बंधे लोग उस पर टूट पड़े और उसे क़त्ल कर दिया।

संबाद की बग़ावत

अबू मुस्लिम के क़त्ल से फ़ारिग़ होकर वैसे तो मंसूर को इत्मीनान हासिल हो चुका था लेकिन इस के बाद भी मंसूर को बड़ी मुश्किलों का सामना करना पड़ा।

अबू मुस्लिम के साथियों में एक मजूसी फ़ीरोज़ नामी, जो संबाद के नाम से मशहूर था वह मुसलमान हो कर अबू मुस्लिम की फ़ौज में शामिल था। अबू मुस्लिम के क़त्ल के बाद उस ने अबू मुस्लिम के ख़ून का मुआवज़ा तलब करने के लिए बग़ावत कर दी। संबाद ने नेशापुर और रे पर क़ब्ज़ा किया, लूट-मार मचाया और मुर्तद हो कर एलान कर दिया कि मैं ख़ाना काबा को ढाने जाता हूं।

मंसूर ने जब यह हाल सुना तो उस ने जम्हूर बिन मुरार अज्ली को उस पर क़ाबू पाने के लिए भेजा। संबाद भागा और क़त्ल कर दिया गया। तबरिस्तान के हाकिम ने संबाद को पनाह दिया, वह भी मारे डर के देलम की तरफ़ भाग गया।

इधर जम्हूर ने जब संबाद को हराया तो उस के बहुत से माल व अस्बाब और भारी-भरकम ख़ज़ाना उसके क़ब्ज़े में आ गया। इसे जम्हूर ने मंसूर के पास न भेजा और रे में जा कर क़िला बन्द हो गया और बग़ावत का एलान कर दिया।

मंसूर ने जम्हूर के मुक़ाबले पर मुहम्मद बिन अशअस को फ़ौज दे कर भेजा। जम्हूर यह सुन कर अस्फ़हान चला गया। जम्हूर ने अस्फ़हान पर और मुहम्मद बिन अशअस ने रे पर क़ब्ज़ा किया। इसके बाद मुहम्मद ने अस्फ़हान पर चढ़ाई की, जम्हूर ने मुक़ाबला किया, सख़्त लड़ाई के बाद जम्हूर हार कर आज़रबाईजान की ओर भागा, वहां वह क़त्ल कर दिया गया। यह वाक़िआ सन १३८ हि० का है।

सन १२९ हि० में मंसूर ने अपने चचा सुलैमान को बसरा की गवर्नरी से हटा कर अपने पास बुलाया और लिखा कि अब्दुल्लाह बिन अली को (जो अबू मुस्लिम से हार कर बसरा में अपने भाई सुलैमान के पास चला आया था) अमान देकर अपने साथ मेरे पास लेते आओ। जब अब्दुल्लाह बिन अली को सुलैमान ने दरबार में हाज़िर किया, तो मंसूर ने उस को क़ैद कर किया (बाद में क़त्ल करा दिया था।)

फ़िरक़ा रावंदिया

फ़िरक़ा रावंदिया को शीओं में गिना जाता है। यह हक़ीक़त में ईरान और ख़ुरासान के जाहिल लोगों का एक गिरोह था, जो रावद में

रहता था। इस को मजहब से कोई ताल्लुक न था। यह आवागमन और हुलूल (अवतार) का क़ायल था। इस का अक़ीदा था कि अल्लाह तआला ने मंसूर में हुलूल किया है। चुनांचे ये लोग खलीफ़ा मंसूर को खुदा समझ कर सरदारों का दर्शन किया करते थे और मंसूर के दर्शन करने को इबादत जानते थे।

उनका यह भी अक़ीदा था कि आदम अलै० की रूह ने उस्मान बिन नुहैक में और जिब्रील ने हैसम बिन मुआविया में हुलूल किया है। ये लोग राजधानी में आ कर अपने इन अक़ीदों का एलान व इज़्हार करने लगे, तो मंसूर ने इन में से सौ आदमियों, को गिरफ़्तार कर लिया। इन की पांच सौ की तायदाद और मौजूद थी. ये अपने इन लोगों की गिरफ़्तारी से बौखला-से गये और क़ैदखाने पर हमला कर के अपने भाइयों को क़ैद से छुड़ा लिया और फिर मंसूर के महल को घेर लिया। ताज्जुब की बात है कि वे मंसूर को खुदा कहते थे और और फिर उस खुदा की मर्ज़ी के खिलाफ़ लड़ाई भी लड़ रहे थे।

यहां यह बात ज़ेहन में रहने की है कि यज़ीद बिन हुबैरा के साथियों में मान बिन ज़ाइदा भी था, जिस की खोज मंसूर को थी, कि उसे पाए तो क़त्ल करे, जो राजधानी में ही आ कर छिपा हुआ था।

इन बद-अक़ीदा रावंदियों ने जब मंसूर के महल को घेर लिया तो खलीफ़ा मंसूर की परेशानी बढ़ गयी, उस के पास महल में कोई फ़ौज भी नहीं थी, वह तंहा महल से निकल कर बलवाइयों का करने लगा। ऐसे नाज़ुक मौक़े पर मान बिन ज़ाइदा ने खलीफ़ा की बड़ी मदद की, दुश्मनों का मुक़ाबला किया, और उन्हें मार कर भगाया, यहां तक कि पूरा शहर उन पर टूट पड़ा और उन के एक-एक आदमी को क़त्ल कर दिया।

जब मंसूर को मान बिन ज़ाइदा का यह कारनामा मालूम हुआ तो वह बहुत खुश हुआ, उस के पिछले जुर्मों को माफ़ कर दिया और काफ़ी इनाम दिया।

अब्दुल जब्बार की बग़ावत और क़त्ल

अबू दाऊद खालिद बलख का हाकिम और खुरासान का गवर्नर था। उनके सूबे में बग़ावत हो गयी और लोगों ने राजभवन को घेर लिया

अबू दाऊद मकान की छत पर इन बाग़ियों के देखने के लिए चढ़ा, पांव फिसल कर गिर पड़ा और उस की मौत हो गयी। इस के बाद उस के सरदार हिसाम ने इस बग़ावत को ख़त्म किया।

फिर मंसूर ने अब्दुल जब्बार बिन अब्दुर्रहमान को ख़ुरासान का गवर्नर बना कर भेजा।

अब्दुल जब्बार ने ख़ुरासान की हुकूमत अपने हाथ में ली और अबू दाऊद के हाकिमों को हटाना और क़त्ल कराना शुरू कर दिया। यह ख़बर मंसूर के पास पहुंची, उसने फ़ौरन अपने बेटे मेंहदी को एक भारी फ़ौज देकर रवाना किया, तेज़ क़िस्म की लड़ाई हुई, अब्दुल जब्बार हार कर भागा, लेकिन गिरफ़्तार कर लिया गया और सन १४२ हि० में फांसी के तख़्ते पर झूल गया। अब्दुल जब्बार पर फ़त्ह पाने के बाद मेंहदी ने ख़ुरासान की हुकूमत अपने हाथ में ली और १४९ हि० तक वह ख़ुरासान का गवर्नर रहा।

मूसा बिन काब सिंध का हाकिम था। इस के बाद उस का बेटा ऐनिया सिंध का हाकिम मुक़र्रर किया गया था। उस ने सिंध में मंसूर के ख़िलाफ़ बग़ावत कर दी। मंसूर को यह हाल मालूम हुआ तो वह बसरा आया और बसरा से उमर बिन हफ़्स बिन अबी सफ़रा अत्की को सिंध व हिंद की गवर्नरी देकर ऐनिया की लड़ाई पर मुक़र्रर किया। उमर बिन हफ़्स ने सिंध पहुंच कर ऐनिया के साथ लड़ाई शुरू की और आख़िर में सिंध पर क़ब्ज़ा हासिल कर लिया। यह वाक़िया सन १४२ हि० का है।

अलवियों की क़ैद और गिरफ़्तारी

ऊपर ज़िक्र हो चुका है कि मक्का में बनी उमैया की हुकूमत के आख़िरी दिनों में एक कमेटी बनी थी, उसमें ख़लीफ़ा के चुनाव का मस्अला पेश हुआ तो मंसूर ने जो उस मज्लिस में मौजूद था, मुहम्मद बिन अब्दुल्लाह बिन हसन बिन मुसन्ना बिन हसन बिन अली के हक़ में अपनी राय ज़ाहिर की थी सब ने इस राय को मान कर मुहम्मद बिन अब्दुल्लाह के हाथ पर बैअत की थी। बैअत में मंसूर भी शरीक था।

सफ़्फ़ाह ने अपनी ख़िलाफ़त के ज़माने में अलवियों को ख़ामोश रखा और इनाम व इकराम दे कर किसी क़िस्म की आवाज़ न उठाने दी।

मंसूर जब खलीफ़ा हुआ, तो उस ने सफ़ाह के ज़माने की सखावत को बाक़ी न रखा और सब से ज़्यादा मुहम्मद बिन अब्दुल्लाह की फ़िक्र में रहने लगा।

उन मुहम्मद बिन अब्दुल्लाह को, जिन के हाथ पर मंसूर ने बैअत की थी, मुहम्मद मेहदी के नाम से पुकारा जाता था।

मंसूर खलीफ़ा होने के बाद बराबर लोगों से मुहम्मद मेहदी का हाल पूछा करता रहता था। यह खोज इतनी बढ़ी कि मंसूर की तरफ़ से उन के बाप अब्दुल्लाह बिन हसन मुसन्ना को मजबूर किया गया कि बेटे को हाज़िर करो। इस सख्ती पर उन्हों ने उस को खुफ़िया रखने में और तेज़ी शुरू कर दी। आखिर मंसूर ने हिजाज़ के कोने-कोने में अपने जासूस फैला दिए और जाली खतों को लिख कर अब्दुल्लाह बिन हसन के पास भिजवाए कि किसी तरह मुहम्मद मेहदी का पता चल जाए।

मुहम्मद मेहदी और उन के भाई इब्राहीम दोनों हिजाज़ में छिपते फिरे। फिर मंसूर सिर्फ़ उन्हीं की खोज में खुद हज के बहाने मक्का पहुंचा, ये दोनों भाई हिजाज़ से बसरा भाग गये, मंसूर बसरा पहुंच गया। ये दोनों भाई उस के आने से पहले ही बसरा छोड़ चुके थे, और अदन चले गये। मंसूर बसरे से राजधानी आ गया। वे दोनों भाई अदन से सिंध चले गये। कुछ दिन सिंध में रह कर कूफ़ा में आ कर छिप गये, फिर कूफ़ा से मदीना मुनव्वरा चले आए। सन १४० हि० में मंसूर फिर हज को आया। ये दोनों भाई भी हज के लिए मक्का आए, लेकिन मंसूर अब भी पता न लगा सका,

मदीना के हाकिमों के तबादले बार-बार इसी लिए किए गए कि कोई भी हाकिम इन को खोज निकालने में कामियाब नहीं हो पा रहा था।

उन्हीं दिनों मिस्र के गवर्नर ने अली बिन मुहम्मद बिन अब्दुल्लाह बिन हसन बिन हसन बिन अली (मुहम्मद मेहदी के बेटे) को गिरफ़्तार कर के मंसूर के पास भेजा। मंसूर ने उन को क़ैद कर दिया। यह अपने बाप की तरफ़ से मिस्र में दावत व तब्लीग़ के लिए भेजे गये थे।

कुछ तामीरी काम

सफ़ाह ने अंबार को अपनी राजधानी बनाया था और कुछ दिनों के बाद अंबार ही के क़रीब अपना एक महल और सरदारों की कोठियां बन-

जायीं, यह एक छोटी-सी बस्ती अलग क़ायम हो गयी, जिस का नाम हाशमिया रखा। मंसूर हाशमिया में ही था कि खुरासानियों का हंगामा हो गया।

सन १४० हि० या १४१ हि० में मंसूर ने अपनी एक अलग राजधानी बनानी चाही और बग़दाद शहर की बुनियाद रखी गयी। बग़दाद की तामीर का काम लगभग नौ-दस वर्ष तक चलता रहा और सन १४६ हि० में वह मुकम्मल हो गया। उसी दिन से बनू अब्बास की राजधानी बग़दाद में रही।

इसी बीच इस्लामी उलेमा ने दीनी इल्मों के मुरत्तब करने का काम शुरू किया। इब्ने जुरैह रह० ने मक्का में, मालिक रह० ने शाम में, इब्ने अबी अरवीया रह० और हम्माद बिन सलमा रह० ने बसरा में, मामर रह० ने यमन में, सुफ़ियान सौरी रह० ने कूफ़ा में हदीसों के लिखने का काम शुरू किया।

इब्ने इस्हाक़ ने मग़ाज़ी पर, अबू हनीफ़ा रह० ने फ़िक़्ह पर किताबें लिखीं। लिखने और तर्तीब देने का काम यहां से शुरू हो कर आगे बराबर तरक़्क़ी करता चला गया और इस के बाद बग़दाद और क़र्तबा के दरबारों ने लिखने वालों की हिम्मतें भी खूब बढ़ायीं, इस तरह दीन की खिदमत का यह काम बराबर आगे बढ़ता गया और वक़्त की ज़रूरत पूरी करता रहा।

सय्यदों का क़त्ल

मुहम्मद मेहदी की खोज में नाकाम होने की वजह से मदीना के हाकिम रिबाह ने अलवी बुज़ुर्गों को गिरफ़्तार कर के क़ैद कर लिया था। ये लोग सन १४४ हि० के आखिरी दिनों तक मदीना में क़ैद रहे। मुहम्मद मेहदी और उन के भाई इब्राहीम तो इधर-उधर छिपते फिरे, इधर हज़रत हसन बिन अली रज़ि० की औलाद में कोई ऐसा शख्स न था, जो क़ैद न हो गया हो या अपनी जान बचाने के लिए छिपा-छिपा न फिरता हो।

सन १४४ हि० के माह ज़िल हिज्जा में मंसूर हज करने गया और मुहम्मद बिन इम्रान बिन इब्राहीम बिन तलहा और मालिक बिन अनस को यह पैग़ाम दे कर औलादे हसन रज़ि० के पास क़ैदखाने में भेजा कि

मुहम्मद व इब्राहीम दोनों भाइयों को हमारे सुपुर्द कर दो।

इन दोनों के बाप अब्दुल्लाह बिन हसन बिन मुसन्ना बिन हसन ने इन दोनों के हाल से अपनी ला-इल्मी ज़ाहिर कर ख़ुद मंसूर के पास हाज़िर होने की इजाज़त चाही।

मंसूर ने कहा कि जब तक अपने दोनों बेटों को हाज़िर न करे, मैं अब्दुल्लाह बिन हसन से मिलना नहीं चाहता। जब मंसूर हज से वापस हो कर इराक़ की तरफ़ आने लगा, तो रिबाह को हुक्म दिया कि इन क़ैदियों को हमारे पास इराक़ भेज दो। रिबाह ने इन क़ैदियों को मुहाफ़िज़ दस्ते के साथ इराक़ की तरफ़ भेज दिया। रास्ते में मुहम्मद व मेहदी दोनों भाई बद्दुओं के कपड़े में अपने बाप अब्दुल्लाह से आकर मिले और बग़ावत की इजाज़त चाही, लेकिन उन्हों ने जल्दी में काम न करने और सब्र से काम लेने की हिमायत की।

इन क़ैदियों के इराक़ चले जाने के बाद मुहम्मद मेहदी ने अपने भाई इब्राहीम को इराक़ और ख़ुरासान की तरफ़ रवाना कर दिया कि तुम वहां जा कर लोगों को दावत दो और अब्बासियों की मुख़ालफ़त पर तैयार करो। इधर मेहदी हिजाज़ में इस क़िस्म की तैयारी में लग गया। आख़िर सन १४५ हि० में अबू औन, हाकिम ख़ुरासान ने मंसूर को इत्तिला दी कि ख़ुरासान में ख़ुफ़िया साज़िश बड़ी तेज़ रफ़्तारी से तरक़्क़ी कर रही है और ख़ुरासान के लोग मेहदी की बग़ावत का इन्तिज़ार कर रहे हैं।

इस इत्तिला के मिलते ही मंसूर ने एक-एक कर के औलादे हसन रज़ि० को क़त्ल करना शुरू किया। ये सय्यद लोग बिल्कुल बे-जुर्म और बे-गुनाह थे और सिर्फ़ इस जुर्म में क़त्ल किए गये कि उन के ख़ानदान के दो शख़्स, जिन की ख़लीफ़ा को तलाश थी, वे आख़िर क़ब्ज़े में क्यों नहीं आए। मंसूर की यह संगदिली, बे मुरव्वती और क़त्ले सादात का हुक्म, जुर्म व गुनाह के एतबार से यज़ीद बिन मुआविया रज़ि० के क़त्ले हुसैन रज़ि० से बहुत बढ़-चढ़ कर नज़र आता है।

मुहम्मद मेहदी की बग़ावत

जब मंसूर ने औलादे हसन रज़ि० को क़त्ल करा दिया तो मुहम्मद मेहदी ने इस ख़बर को सुन कर ज़्यादा इन्तिज़ार मुनासिब न समझा। उन

को यक़ीन था कि लोग हमारा साथ देने को हर जगह तैयार हैं। चुनांचे उन्हों ने मदीना के दोस्तों से बग़ावत का मश्विरा किया। बग़ावत करने का फ़ैसला कर लिया गया।

शुरू में उन के साथ डेढ़ सौ आदमी थे, उन्हों ने सब से पहले क़ैद खाने की तरफ़ जा कर मुहम्मद बिन खालिद और उन के साथियों को आज़ाद किया। फिर राजभवन की तरफ़ आ कर रिबाह और उस के भाई अब्बास और इब्ने मुस्लिम बिन उक़्बा को गिरफ़्तार करके क़ैद कर लिया, इस के बाद मस्जिद की तरफ़ आए और खुत्बा दिया, जिस में मंसूर की बुरी आदतों और उस के जुर्मों का ज़िक्र कर के लोगों के साथ अद्ल व इंसाफ़ के बर्ताव का वायदा किया और उन से मदद की ख्वाहिश ज़ाहिर की।

मुहम्मद मेहदी की बग़ावत और रिबाह के क़ैद किए जाने के नौ दिन बाद मंसूर के पास खबर पहुंची, वह यह सुन कर सख्त परेशान हुआ तुरन्त कूफ़े में आया और कूफ़े से एक खत पनाह नामा के तौर पर मुहम्मद मेहदी के नाम लिख कर रवाना किया। उस खत में मंसूर ने लिखा था कि—

'मेरे और तुम्हारे दर्मियान अल्लाह और उस के रसूल सल्ल० का अह्द व मीसाक़ और ज़िम्मा है कि मैं तुम को तुम्हारे खानदान वालों को और तुम्हारे मानने वालों को जान और माल व अस्बाब की अमान देता हूं। साथ ही अब तक तुमने जो खूंरेज़ी की हो या किसी का माल ले लिया हो, इस से भी दरगुज़र करता हूं और तुम को एक लाख दिरम और देता हूं। इस के अलावा जो कोई तुम्हारी और ज़रूरत होगी, वह भी पूरी कर दी जाएगी, जिस शहर को तुम पसन्द करोगे, उसी में ठहराए जाओगे, जो लोग तुम्हारे शरीक हैं, उन को अम्न देने के बाद उन से कभी पकड़ न करूंगा। अगर तुम इन बातों के बारे में अपना इत्मीनान करना चाहो तो अपने किसी एतबार के आदमी को मेरे पास भेज कर मुझ से अह्दनामा लिखवा लो और हर तरह मुत्मइन हो जाओ।'

यह खत जब मुहम्मद मेहदी के पास पहुंचा, तो उन्होंने जवाब में लिखा कि—

हम तुम्हारे लिए वैसी ही पनाह चाहते हैं, जैसा कि तुम ने हमारे लिए पेश किया है। सच तो यह है कि हुकूमत हमारा हक़ है, तुम हमारी ही वजह से इसके दावेदार हुए और हमारे ही गिरोह वाले बनकर हुकूमत

हासिल करने को निकले और इसीलिए कामियाब हुए। हमारा बाप अली वसी और इमाम था, तुम उसकी विलायत के वारिस किस तरह हो गये, हालांकि उनकी औलाद मौजूद है......

ग़रज़ यह है कि खत व किताबत के ज़रिए ज़बरदस्त नोंक-झोंक हुई और मुहम्मद मेंहदी ने कम, मंसूर ने ज़्यादा अपने मुखालिफ़ को बुरा-भला कहा।

मुहम्मद मेंहदी ने मदीने के इन्तिज़ाम से फ़ारिग़ हो कर मुहम्मद बिन हसन बिन मुआविया बिन अब्दुल्लाह बिन जाफ़र को मक्का की तरफ़ रवाना किया। क़ासिम बिन इस्हाक़ को यमन का हाकिम बनाकर और मूसा बिन अब्दुल्लाह को शाम की हुकूमत पर मुक़र्रर करके रुख्सत किया।

मुहम्मद बिन हसन ने पहुंचते ही मक्के पर क़ब्ज़ा कर लिया।

लेकिन दूसरी तरफ़ मंसूर ने मदीना पर क़ब्ज़ा करने के लिए अपनी फ़ौज भेज दी। ज़बरदस्त लड़ाई हुई, मुहम्मद मेंहदी मारे गये और उनके शहीद होते ही बग़ावत खत्म हो गयी।

इसी तरह मुहम्मद इब्राहीम ने भी बग़ावत की और उन का भी यही हश्र हुआ और वह मारे गए।

मुख़्तलिफ़ वाक़िए

मुहम्मद मेंहदी और उनके भाई के क़त्ल से फ़ारिग़ होकर मंसूर ने बसरा की हुकूमत सालिम बिन क़ुतैबा बाहली को दी और मूसल की हुकूमत पर अपने लड़के जाफ़र को भेजा।

इमाम मालिक रह० ने मदीने में मुहम्मद मेंहदी की बैअत करने पर लोगों को उभारा था, उन को कोड़ों से पिटवाया गया। इमाम अबू हनीफ़ा रह० ने इराक़ में इब्राहीम बिन अब्दुल्लाह की हिमायत में फ़त्वा दिया था, इसलिए उन को मंसूर ने गिरफ़्तार कराकर बुलवाया और बग़दाद में ले जाकर जहां उसकी तामीर का सिलसिला जारी था, क़ैद कर दिया। इस क़ैद में ईंटों के गिनवाने की खिदमत मशक़्क़त के तौर पर उनसे ली जाती थी। यह भी रिवायत है कि मंसूर ने उनको क़ज़ा सुपुर्द करनी चाही। उन्होंने जब इंकार किया तो मंसूर ने ईंटों के

गिनने का काम उनके सुपुर्द किया। इसी हालत में सन १५० हि० तक मसरूफ़ व गिरफ़्तार रहकर फ़ौत हो गये।

उनके अलावा और उलेमा ने भी, जैसे इब्ने अज्लान और अब्दुल हमीद बिन जाफ़र वग़ैरह ने मुहम्मद मेंहदी और उनके भाई इब्राहीम की बैअत के लिए फ़त्वे दिए थे, उन सब उलेमा को भी इसी क़िस्म की सज़ाएं दी गयीं।

सन १४६ हि० में इलाक़ा खज़र के तुर्कों ने बग़ावत का झंडा बुलन्द किया और बाबुल अबवाब से आरमीनिया तक मुसलमानों को क़त्ल व ग़ारत करते हुए चले आए।

इसी साल क़बरस जज़ीरे पर मुसलमानों ने समुद्री हमला किया।

सीस्तान के इलाक़े में खारजियों ने शोरिश व बग़ावत की, तो मंसूर ने यमन की गवर्नरी से तब्दील करके मान बिन ज़ाइदा को सीस्तान की हुकूमत पर भेज दिया, वहां मान बिन ज़ाइदा ने हंगामे और फ़साद को दबाया और कुचला। सन १५१ हि० तक वहां रहा, आख़िर धोखे से उसको क़त्ल कर दिया।

मेंहदी बिन मंसूर की वली अहदी

अब्दुल्लाह सफ़ाह ने मरते वक़्त मंसूर को अपना वली अहद मुक़र्रर किया था और मंसूर के बाद ईसा बिन मूसा को वली अहद बनाया था। अब इस वसीयत के मुवाफ़िक़ मंसूर के बाद ईसा बिन मूसा ख़लीफ़ा होने वाला था।

मंसूर जब मुहम्मद मेंहदी व इब्राहीम के ख़तरों से मुतमइन हो गया और ईसा बिन मूसा की मदद का ज़्यादा मुहताज न रहा, तो उसने चाहा कि बजाए ईसा के अपने बेटे मेंहदी को वली अह्द बनाए। पहले इसका ज़िक्र ईसा से किया। ईसा ने उसको क़ुबूल व मंज़ूर करने से इंकार कर दिया। मंसूर ने ख़ालिद बिन बरमक और दूसरे ग़ैर-अरबी सरदारों को मश्विरे में शरीक करके और अपनी राय की ताईद में लेकर सन १४७ हि० में ईसा बिन मूसा को, जो सफ़ाह के ज़माने से कूफ़ा का गवर्नर चला आता था, कूफ़ा की हुकूमत से हटाकर मुहम्मद बिन सुलैमान को कूफ़ा का गवर्नर बना दिया। इस तरह ईसा को ताक़त से हटा कर

और धोखा देकर मंसूर ने लोगों से मेंहदी को वली अह्दी की बैअत ले ली।

कुछ और वाक़िए

सन १५० हि० में उस्ताद सीस ने झूठी नुबूवत का दावा किया और वह गिरफ़्तार कर लिया गया। उस वक़्त ख़ुरासान का गवर्नर मेंहदी था, वह मर्व में ठहरा हुआ था। सीस पर हमला करने वाला सरदार ख़ाज़िम बिन ख़ुज़ैमा उसी के पास ठहरा हुआ था और मंसूर के हुक्म के मुताबिक़ ही हमलावर हुआ था। इस फ़ित्ने से फ़ारिग़ होकर मेहदी मंसूर की ख़िदमत में हाज़िर हुआ। वहां उसे हुक्म दिया गया कि वह एक अलग फ़ौजी छावनी क़ायम करे। यह छावनी सन १५१ हि० में क़ायम भी हो गयी।

सन १५३ हि० में मंसूर ने हुक्म जारी किया कि मेरी पूरी जनता लम्बी टोपियां ओढ़ा करे। ये टोपियां बांस और पत्तों से बनायी जाती थी। उस ज़माने में हब्शी इन टोपियों को ओढ़ा करते थे।

सन १५४ हि० में ज़ुफ़र बिन आसिम ने रूम के इलाक़ों पर हमला किया।

सन १५५ हि० में क़ैसरे रूम ने मुसलमानों के आए दिन के हमलों से तंग आकर सुलह की दर्ख़ास्त की और जिज़या देने का इक़रार किया।

मंसूर की वफ़ात

सन १५८ हि० में मंसूर ने मक्का के हाकिम को लिखा कि सुफ़ियान सौरी और इबाद बिन बसीर को क़ैद करके भेज दो। लोगों को बड़ा डर था कि कहीं उनको क़त्ल न कर दे। हज के दिन क़रीब आ गये थे। मंसूर ने ख़ुद हज का इरादा किया। इससे मक्का वालों को और चिन्ता हुई कि यहां आकर ख़ुदा जाने किस-किस को गिरफ़्तार व क़ैद व क़त्ल करे, मगर मक्का वालों की दुआएं क़ुबूल हुईं और मंसूर मक्का तक पहुंचने से पहले इंतिक़ाल कर गया।

मंसूर ने एक हफ़्ता कम बाईस साल ख़िलाफ़त की। सात बेटे और एक बेटी छोड़ी।

ख़लीफ़ा मंसूर से किसी ने पूछा कि कोई ऐसी तमन्ना भी है जो आप की अब तक पूरी न हुई हो? मंसूर ने कहा, सिर्फ़ एक तमन्ना बाक़ी है, वह यह कि मैं एक चबूतरे पर बैठा हूं और हदीस के जानकार मेरे गिर्द बैठे हों।

दूसरे दिन जब वज़ीर काग़ज़ और मुख़्तलिफ़ मामलों की मिस्लें और क़लमदान ले कर उस के पास पहुंचे, तो उस वक़्त वह दरबारी भी मौजूद था। उस ने कहा, लीजिए, अब आप की तमन्ना पूरी हो गयी। मंसूर ने कहा, 'ये वह लोग नहीं हैं, जिन की तमन्ना की है, उन लोगों के तो कपड़े फटे हुए, पांव नंगे और बाल बढ़े हुए होते हैं और हदीस का रिवायत करना उन का काम होता है।

मंसूर ने इमाम मालिक को मुअत्ता लिखने पर तैयार किया, तो उन से इस तरह मुख़ातब हुआ कि, 'ऐ अबू अब्दुल्लाह! तुम जानते हो कि अब इस्लाम में तुम से और मुझ से ज़्यादा शरीअत का जानने वाला कोई बाक़ी नहीं रहा। मैं तो इन ख़िलाफ़त व सल्तनत के झगड़ों में मुब्तला हूं, तुम को फ़ुर्सत हासिल है, इस लिए तुम लोगों के लिए एक ऐसी किताब लिखो, जिस से वे फ़ायदा उठाएं।' इमाम मालिक कहते हैं, ख़ुदा की क़सम! मंसूर ने बातें ही नहीं कहीं, तस्नीफ़ ही सिखा दी।

अब्दुस्समद मुहम्मद ने मंसूर से कहा कि आप ने सज़ा देने पर ऐसी कमर बांधी है कि किसी को गुमान भी नहीं होता कि आप माफ़ करना भी जानते हैं। मंसूर ने जवाब दिया कि अभी तक मरवान के ख़ानदान का ख़ून सूखा नहीं और अबू तालिब के ख़ानदान की तलवारें अभी तक नंगी हैं। यह ज़माना ऐसा है कि अभी तक ख़लीफ़ों का रौब उन के दिलों में नहीं क़ायम हुआ और यह रौब उस वक़्त तक क़ायम नहीं हो सकता, जब तक वह माफ़ी का मतलब भूल न जाएं और सज़ा के लिए हर वक़्त तैयार न रहें।

अब्दुर्रहमान ज़ियाद अफ़्रीक़ी मंसूर का तालिब इल्मी के ज़माने का दोस्त था। वह एक बार मंसूर की ख़िलाफ़त के ज़माने में उससे मिलने आया। मंसूर ने पूछा कि तुम बनू उमैया के मुक़ाबले में मेरी ख़िलाफ़त को कैसा पाते हो? अब्दुर्रहमान ने कहा जिस क़दर ज़ुल्म व सितम तुम्हारे ज़माने में हुआ है, उतना बनू उमैया के ज़माने में न था। मंसूर ने कहा,

क्या करूं, मुझ को मददगार नहीं मिलते। अब्दुर्रहमान ने कहा कि उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ का क़ौल है कि अगर बादशाह नेक होगा, तो उस को नेक लोग मिलेंगे और फ़ाजिर (बुरा) होगा, तो उसके पास फ़ाजिर आएंगे।

एक बार मंसूर को मक्खियों ने बहुत तंग किया, उसने मुक़ातिल बिन सुलेमान को बुलाया और कहा कि इन मक्खियों को अल्लाह तआला ने क्यों पैदा किया है? मुक़ातिल ने कहा कि ज़ालिमों को उन के ज़रिए ज़लील करने के लिए।

अपने अख़्लाक़, आदात, आमाल और कारनामों के एतबार से मंसूर अब्बासी अब्दुल मलिक उमवी से काफ़ी मिलता-जुलता है, वह भी मरवान ख़ानदान में दूसरा ख़लीफ़ा था और मंसूर भी अब्बासी ख़ानदान का दूसरा ख़लीफ़ा था। अब्दुल मलिक ने उमवी ख़िलाफ़त को बर्बाद व फ़ना होते-होते बचा लिया, इसी तरह मंसूर ने भी मुहम्मद व इब्राहीम के मुक़ाबले में अब्बासी ख़िलाफ़त को बर्बाद होते-होते बचा लिया। अब्दुल मलिक भी आलिम व फ़क़ीह और मुहद्दिस था, इसी तरह मंसूर भी आलिम व फ़क़ीह था। अब्दुल मलिक भी कंजूस और किफ़ायत करने वाला था, इसी तरह मंसूर भी कंजूस और किफ़ायत करने वाला था। हुकूमत भी दोनों ने लगभग बराबर मुद्दत तक की। दोनों में फ़र्क़ इतना था कि मंसूर ने लोगों को अमान देने के बाद भी क़त्ल किया और बद-अह्दी की, लेकिन अब्दुल मलिक ने ऐसी हरकत कभी नहीं की।

मेंहदी बिन मंसूर

मुहम्मद मेंहदी बिन मंसूर की उफ़ियत अबू अब्दुल्लाह थी। इंदिज में सन् १२६ हि० में पैदा हुआ। उस की मां का नाम उम्मे मूसा अरवा बिन्त मंसूर अमेरी था।

मेंहदी बड़ा सख़ी दाता, सब का प्यारा, सच्चा और जनता में प्रिय ख़लीफ़ा था। उस के बाप मंसूर ने उस को बहुत से उलेमा की शागिर्दी में रखा। मेंहदी की उम्र सिर्फ़ पन्द्रह साल की थी कि मंसूर ने उस को अब्दुल जब्बार बिन अब्दुर्रहमान की बग़ावत कुचलने के लिए सन् १४१ हि० में ख़ुरासान की तरफ़ भेजा।

सन् १४४ हि० में यह ख़ुरासान से वापस आया तो मंसूर ने उसको

शादी सफ़ाह की लड़की यानी अपनी भतीजी से की।

सन १४४ हि० में ही उस को पहला वली अह्द बनाया और खुरासान के दक्खिनी और पच्छिमी हिस्से का हाकिम बना कर रे की तरफ़ रवाना किया।

सन १५३ हि० में इस को अमीरुल हज मुक़र्रर किया।

सन १५३ हि०ही में अपने बापकी वफ़ात के बाद बग़दाद में खिलाफ़त के तख्त पर बैठा।

बग़दाद में जब लोगों ने उस के हाथ पर बैअत कर ली, तो उस ने मिंबर पर चढ़ कर खुत्बा दिया कि—

'तुम लोग जिस को अमीरुल मोमिनीन कहते हो वह एक बन्दा होता है, जब उसे कोई आवाज़ देता है, तो वह जवाब देता है और जब उस को हुक्म दिया जाता है, तो वह बजा लाता है। अल्लाह तआला ही अमीरुल मोमिनीन की हिफ़ाज़त करने वाला होता है। मैं अल्लाह तआला ही से मुसलमानों की ख़िलाफ़त के काम अंजाम देने के लिए मदद तलब करता हूं, जिस तरह तुम लोग अपनी ज़ुबान से मेरी इताअत ज़ाहिर करते हो, उसी तरह दिल से भी साथ दो, ताकि दीन व दुनिया की बेहतरी के उम्मीदवार बन सको। जो शख्स तुम में इंसाफ़ फैलाए, तुम उस की कभी मुख़ालफ़त न करो। मैं तुम पर ये सख्तियां उठा दूंगा और अपनी तमाम उम्र तुम पर एहसान करने और जो तुम में मुजरिम हो, उस को सज़ा देने में लगा दूंगा।'

मेंहदी ने ख़लीफ़ा होते ही सब से पहला काम यह किया कि मंसूर के क़ैदख़ाने में जितने क़ैदी थे, सब को रिहा कर दिया, सिर्फ़ वे क़ैदी रिहा नहीं हुए, जो बाग़ी, लुटेरे या ख़ूनी थे। उन क़ैदियों में, जो रिहा हुए, याक़ूब बिन दाऊद भी था। जो क़ैदी रिहा नहीं हुए, उन में हसन बिन इब्राहीम बिन अब्दुल्लाह बिन हसन बिन हसन भी था।

हसन और याक़ूब दोनों इब्राहीम के क़त्ल के बाद बसरे से गिरफ़्तार हो कर साथ ही क़ैद हुए थे।

याक़ूब का बाप दाऊद बनी सुलैम के आज़ाद ग़ुलामों में से था। वह ख़ुरासान में नस्र बिन सय्यार का मीर मुंशी था। दाऊद के दो बेटे याक़ूब और अली थे। जब बनू अब्बास की हुकूमत हुई तो बनी सुलैम की बे-क़द्री हुई, साथ ही याक़ूब व अली की भी, जो बनू सुलैम में शामिल थे,

किसी ने बात न पूछी।

जब मुहम्मद मेंहदी और इब्राहीम ने बनू अब्बास के खिलाफ़ लोगों को दावत देनी शुरू की, तो याक़ूब इस दावत में शरीक हो गया और लोगों को मुहम्मद मेंहदी और इब्राहीम की तरफ़ मुतवज्जह करता रहा, आखिरकार हसन बिन इब्राहीम के साथ क़ैद कर दिया गया।

अब क़ैदखाने से निकल कर याक़ूब को मालूम हुआ कि हसन बिन इब्राहीम क़ैद खाने से निकल भागने की कोशिश कर रहा है। उसने इस की इत्तिला खलीफ़ा मेंहदी को दी। मेंहदी हसन को दूसरे क़ैदखाने में भिजवा दिया, मगर हसन वहां से भी भाग निकला।

मेंहदी ने याक़ूब को बुलाकर हसन के बारे में मश्विरा किया। याक़ूब ने कहा कि आप हसन को अमान अता फ़रमाएं, तो मैं उसको हाज़िर कर सकता हूं। मेंहदी ने हसन को अमान दे दी और याक़ूब ने हसन को हाज़िर कर दिया और इस बात की इजाज़त मेंहदी से हासिल कर ली कि हसन वक़्त-बेवक़्त खलीफ़ा की खिदमत में हाज़िर होता रहेगा। चुनांचे हसन मेंहदी की खिदमत में हाज़िर होता रहा और नौबत यहां तक पहुंची कि मेंहदी ने हसन को अपना दीनी भाई बनाकर एक लाख दिरहम उसे दे दिए।

कुछ ही दिनों के बाद मेंहदी ने अपने वज़ीर अबू अब्दुल्लाह को जो वली अह्दी के ज़माने से ही उस का वज़ीर चला आता था, हटा करके याक़ूब बिन दाऊद को अपना वज़ीर बना लिया।

याक़ूब और हसन के साथ मेंहदी के इस व्यवहार ने उसके दुश्मनों के दिलों में भी उसकी मुहब्बत बिठा दी।

खिलाफ़ते अब्बासिया का सबसे ज़्यादा खतरा मुहम्मद मेंहदी और इब्राहीम की जमाअत के लोगों से था, जो यह्या बिन ज़ैद की जमाअत के साथ मिलकर अब्बासी खिलाफ़त को खत्म करना चाहते थे। मेंहदी ने याक़ूब को वज़ीर बनाकर इन तमाम खतरों का दरवाज़ा बन्द कर दिया क्योंकि याक़ूब इन दोनों जमाअतों से ताल्लुक रखता था। उसने इन लोगों को हुकूमत में ओहदे दे देकर मुखालफ़त से रोके रखा और उनकी मुखालफ़त के जोश को कम कर दिया।

———

हकीम मक़न्अ

मेंहदी की खिलाफ़त के पहले ही साल यानी सन १५६ हि० में मर्व का एक बाशिंदा हकीम मक़न्अ जिसने सोने का एक चेहरा बनाकर अपने चेहरे पर लगाया था, खुदाई का दावेदार हुआ। उसका अक़ीदा था, अल्लाह तआला ने आदम को पैदा करके उसके जिस्म में खुद हुलूल किया, उसके बाद नूह में, फिर अबू मुस्लिम और हाशिम में, इस तरह यह अव-तार का क़ायल था और कहता था कि मेरे अन्दर खुदा की रूह है यानी मुझ में खुदा ने अवतार लिया है।

उसका यह अक़ीदा हक़ीक़त में वही था जो रावन्द इलाक़े के लोगों का था और जिन्होंने मंसूर के ज़माने में हाशिमियों के अन्दर बिगाड़ पैदा कर दिया था। ये सब लोग अबू मुस्लिम की जमाअत के लोग थे।

हकीम मक़न्अ का यह भी अक़ीदा था कि यह्या बिन ज़ैद मारे नहीं गये, बल्कि छिप गये हैं और किसी वक़्त अपना बदला लेने के लिए ज़ाहिर होंगे और दुश्मनों को हलाक करेंगे।

हकीम मक़न्अ ने अपने इस अक़ीदे का धूम-धाम से प्रचार किया और उसका साथ देने लगे।

मेंहदी को जब यह खबर पहुंची, तो उसने जिब्रील बिन यह्या को इस बग़ावत को कुचलने के लिए भेजा, मक़न्अ का क़िला घेर लिया गया। मक़न्अ को जब अपनी नाकामी का यक़ीन हो गया तो उसने आग जला-कर अपने तमाम घर वालों को आग में धक्का देकर जला दिया, फिर आप भी आग में कूद पड़ा और मर गया।

मुसलमानों ने क़िले में दाखिल होकर मक़न्अ की लाश आग से निकाल कर उसका सर काट कर मेंहदी के पास रवाना किया।

हादी बिन मेंहदी की वली अहदी

यह पहले कहा जा चुका है मंसूर ने ईसा बिन मूसा को, जो मंसूर के बाद वली अह्द था, उसे वली अह्दी से हटाकर अपने बेटे मेंहदी को

पहला वली अह्द बना दिया था। मेंहदी के बाद ईसा बिन मूसा वली अह्द बनाया गया था।

लेकिन मेंहदी को उसकी खिलाफ़त के पहले ही साल में उसके हमदर्दों और सलाहकारों ने उकसाया कि ईसा बिन मूसा की जगह आप अपने बेटे हादी को वली अह्द बनाएं। मेंहदी ने ईसा को अपने पास बग़दाद में तलब किया। ईसा अपने इंकार पर जमा रहा। बहुत तदबीरें कीं कि ईसा आ जाए लेकिन ईसा ने आने से इंकार कर दिया। आखिर मेंहदी ने दो फ़ौजी सरदारों को ईसा के लाने पर मुक़र्रर किया। मजबूर होकर ईसा बग़दाद में आया और मुहम्मद बिन सुलैमान के मकान पर उतरा। मेंहदी के दरबार में आता जाता रहा, पर बिल्कुल खामोश जाता, खामोश रहता और खामोश चला आता. आखिरकार मेंहदी ने उसे भारी रक़म और जायदाद देकर उसको वली अह्दी खत्म करने पर तैयार कर लिया और हादी बिन मेंहदी की वली अह्दी की बैअत सब से ले ली।

सन १६० हि० के ज़ीक़ादा के महीने में मेंहदी ने हज की तैयारी की। अपने बेटे हादी को बग़दाद में अपना नायब बनाकर छोड़ा। हादी के मामूं यज़ीद बिन मंसूर को हादी के साथ मुक़र्रर किया। दूसरे बेटे हारून को मय कुछ खानदान वालों के हादी का साथ देने पर लगाया और मय वज़ीर याक़ूब बिन दाऊद बिन तह्मान के मक्का मुअज़्ज़मा की तरफ़ रवाना हुआ।

मक्का में पहुंचकर खाना काबा के पुराने तमाम ग़िलाफ़ों को जो तह-ब-तह चढ़े हुए थे, उतरवा दिया, एक नया क़ीमती ग़िलाफ़ चढ़ाया। डेढ़ लाख ग़रीबों को कपड़े बंटवाए, मस्जिदे नबवी को बड़ा कराया। वापसी में अन्सार के पांच सौ खानदान अपने साथ इराक़ में लाया, उनको वहां आबाद करके जागीरें दी और वज़ीफ़े मुक़र्रर किए और अपनी हिफ़ाज़त पर उनको लगाया। मक्का के रास्ते में मकान बनवाए। हर मकान में हौज़ और कुएं भी बनवाए।

खलीफ़ा मंसूर अब्बासी के जमाने में उन्दुलुस में बनू उमैया के खानदान की हुकूमत क़ायम होकर एक अलग इस्लामी हुकूमत का दूसरा मर्कज़ बन गया था, यह इस दौर में भी बहाल रहा। तफ्सील आगे पढ़िए।

रूम की लड़ाई

सन १६३ हि० मे मेंहदी ने खुरासान और दूसरे प्रांतों से सेना बुलायी और रूमियों पर जिहाद की गरज से पहली रजब १६३ हि० को बगदाद से कूच किया। ३ जुमादस्सानी यानी एक दिन पहले मेंहदी के चचा ईसा बिन अली का इंतिक़ाल हो गया था। बगदाद में हादी को अपनी नायबी में छोड़ा और अपने दूसरे बेटे हारून को अपने साथ लिया।

रूमियों पर चढ़ाई करने की वजह यह थी कि सन १६२ हि० में रूमियों ने इस्लामी शहरों पर चढ़ाई कर के कुछ शहरों को वीरान कर दिया था, इसलिए खलीफ़ा मेंहदी ने खुद उस तरफ़ कूच किया।

मेंहदी हलब में पहुंचकर ठहर गया और हारून को फ़ौज और फ़ौजी सरदारों के साथ आगे रवाना किया। हारून ने आगे बढ़ कर रूमियों के क़िले को घेर लिया और एक-एक करके कई क़िले जीत लिए। हारून तमाम इलाक़ों को जीतकर वापस हुआ।

फिर मेंहदी हारून को लेकर बैतुल मक़दिस की ज़ियारत को गया। मस्जिदे अक़्सा में नमाज़ पढ़ी, फिर बगदाद को वापस चला आया।

मेंहदी ने जब हारून को आज़रबाईजान और आरमीनिया का गवर्नर बनाया था, तो हसन बिन साबित को उसका वज़ीरे माल और यह्या बिन खालिद बिन बरमक को उसका वज़ीर खारजा (विदेश मन्त्री) मुक़र्रर किया था, इसी साल यानी १६३ हि० में खालिद बिन बरमक का इंतिक़ाल हुआ।

सन १६४ हि० में अब्दुल कबीर बिन अब्दुर्रहमान ने रूमियों पर चढ़ाई की थी, लेकिन वह बिला मुक़ाबला वापस चला आया। इस वाक़िए से वह रौब जो १६३ हि० की हमलावरी से रूमियों पर क़ायम हुआ था, खत्म हो गया मेंहदी ने सुना तो अब्दुल कबीर को क़ैद कर दिया और सन १६५ हि० में अपने बेटे हारून को रूम के जिहाद पर रवाना किया।

हारून लगभग एक लाख फ़ौज लेकर रूमियों पर हमलावर हुआ और उन्हें बराबर हराता, क़त्ल करता, उनके शहरों को तबाह करता

क़ुस्तुन्तुनया पहुंच गया। वहां के रूमी ज़िम्मेदार ने समझौता कर लिया।

सन १६६ ई० में ख़लीफ़ा मेंहदी ने अपने बेटे हारून को हादी के बाद वली अह्द मुक़र्रर किया और लोगों से हारून की वली अह्दी के लिए बैअत ली और हारून को रशीद का ख़िताब दिया।

इसी साल मेंहदी ने बग़दाद से मक्का और यमन तक खच्चरों और ऊंटों की डाक बिठाया, ताकि हर दिन इन जगहों से सूचनाएं बराबर मिलती रहें और वहां सरकारी आर्डर बराबर पहुंचते रहें।

इसी साल मेंहदी ने अबू यूसुफ़ को बसरा का क़ाज़ी मुक़र्रर किया।

मेंहदी की वफ़ात

हादी सन १६८ हि० में जरजान में ठहरा हुआ था कि मेंहदी उससे मिलने निकला। रास्ते में मास ब जान नामी जगह पर पहुंचा था कि २२ मुहर्रम सन १६९ हि० मुताबिक़ अगस्त सन ७८५ ई० में इंतिक़ाल किया। हारून रशीद इस सफ़र में बाप के साथ था, उस ने जनाज़े की नमाज़ पढ़ायी और भाई के पास जरजान में बाप के वफ़ात की ख़बर भेजी। बीसदिन के बाद हादी जरजान से रवाना होकर बग़दाद पहुंचा और तख़्ते ख़िलाफ़त पर बैठ कर हाजिब रबीअ को अपना वज़ीर बना लिया। रबीअ कुछ दिनों के बाद फ़ौत हो गया।

ख़लीफ़ा मेंहदी अब्बासियों में निहायत नेक, परहेज़गार, सख़ी, ख़ुशदिल बहादुर और नेक दिल ख़लीफ़ा था। उसने अपने बाप के ज़माने की उन ख़ूंरेज़ियों को देखा था जो अलवियों की हुई थीं। वह इन ख़ूंरेज़ियों को अच्छा नहीं समझता था। ख़लीफ़ा मेंहदी ने अपनी हुकूमत के ज़माने में अपने हुक्म से किसी हाशिमी को क़त्ल नहीं कराया।

मेंहदी को अल्लाह के रसूल की पैरवी का बहुत ख़्याल था। वह इबादत भी बहुत करता था। उसके दरबार में हर शख़्स बिला रोक-टोक जा सकता था। हुकूमत के कामों में निहायत मुस्तैद और होशियार था। वह अपने गुलामों और नौकरों की मिज़ाजपुर्सी के लिए भी चला जाता था। कभी-कभी उस पर लोगों ने क़ाज़ी की अदालत में दावे दायर किए और वह क़ाज़ी की अदालत के हुक्मनामे की तामील में मुक़द्दमे के एक फ़रीक़ की हैसियत से क़ाज़ी की अदालत में हाज़िर हुआ और अदालत

के फ़ैसले को अपने ऊपर तामील कराया।

उसके जमाने के मशहूर आलिम शरीक उसके पास आए। मेंहदी ने कहा कि आप को तीन बातों में से एक जरूर माननी पड़ेगी, या तो क़ाज़ी का ओहदा क़ुबूल करें या मेरे लड़के को पढ़ाएं या मेरे साथ खाना खाएं। क़ाज़ी शरीक ने सोच कर कहा कि इन सब में खाना खाना सबसे ज़्यादा आसान है, चुनांचे दस्तरख्वान पर क़िस्म-क़िस्म के खाने चुने गये। जब खाने से फ़ारिग़ हो गये तो शाही बावर्ची ने कहा कि बस अब आप फंस गये, चुनांचे ऐसा ही हुआ। उन्होंने क़ाज़ी का ओहदा भी क़ुबूल किया और मेंहदी के लड़कों को भी पढ़ाया।

मेंहदी जब कभी बसरे में आया, तो पांचों वक़्त की नमाज़ जामा मस्जिद में पढ़ाया करता।

हादी बिन मेंहदी

हादी बिन मेंहदी बिन मंसूर सन १४७ हि० में रेनामी जगह पर खेज़रान के पेट से पैदा हुआ। खेज़रान बरबर की रहने वाली मेंहदी की एक लौंडी थी। जब उसके पेट से हादी और हारून पैदा हुए, तो मेंहदी ने उसको आज़ाद करके उसके साथ १५९ हि० में निकाह कर लिया था।

हादी ने ज़िन्दीक़ों की खूब खबर ली, साथ ही हुसैन बिन अली बिन हसन ने जब मदीना में बग़ावत कर दी, उसको कुचल कर वहां अम्न क़ायम किया।

हादी हारून से मिलने मूसल के इलाक़े की तरफ़ गया था कि वापसी में बीमार पड़ गया और तीन दिन बीमार रहकर इतवार की रात में १४ रबीउल अव्वल सन १७० हि० मुताबिक़ ७६० ई० में सवा वर्ष हुकूमत करके वफ़ात पायी।

हादी सखी, खुशदिल होने के साथ-साथ कुछ ज़ुल्म पसंद भी था। हुकूमत के कामों से बे-परवाह न था। उस की उम्र बहुत कम और खिला-फ़त का ज़माना बहुत थोड़ा था, इसलिए उस के अख्लाक़ का इज़्हार न हो सका।

अबू जाफ़र हारून रशीद बिन मेंहदी

अबू जाफ़र हारून रशीद बिन मेंहदी बिन मंसूर बिन मुहम्मद बिन अली बिन अब्दुल्लाह बिन अब्बास १४८ हि० में रे में खीजरान के पेट से पैदा हुआ। हारून रशीद १४ रबीउल अव्वल सन १७० हि० को अपने भाई के मरने पर खलीफ़ा बना। उसी रात उसका बेटा मामून पैदा हुआ। यह अजीब संयोग है कि एक ही रात में एक खलीफ़ा फ़ौत हुआ, दूसरा तख़्त पर बैठा और तीसरा खलीफ़ा पैदा हुआ। हारून रशीद की उर्फ़ियत पहले अबू मूसा थी, लेकिन बाद में अबू जाफ़र हो गयी। हारून रशीद लम्बे क़द का, ख़ूबसूरत आदमी था।

हारून रशीद ने तख़्त पर बैठते ही यह्या बिन खालिद बिन बरमक को वज़ीरे आज़म (प्रधान मंत्री) बनाया।

हारून रशीद के बेटे मामून रशीद की पैदाइश का ज़िक्र तो ऊपर आ चुका है कि वह हारून रशीद तख़्त पर बैठते वक़्त सन १७० हि० में पैदा हुआ था, मगर मामून रशीद मराजिल नामी उम्मे वलद के पेट से पैदा हुआ था, जो मजूसी नस्ल की थी। उसी साल उसका दूसरा बेटा मुहम्मद अमीन उसकी बीवी जुबैदा खातून बिन्त जाफ़र बिन मंसूर के पेट से पैदा हुआ था। चूंकि अमीन हाशिमिया के पेट से पैदा हुआ, था, इसलिए सन १७५ हि० में, जबकि अमीन की उम्र सिर्फ़ पांच साल की थी, हारून रशीद ने लोगों से अमीन की वली अह्दी की बैअत ली।

इसी बीच कुछ फ़ित्ने और बग़ावतें शुरू हो गयीं, जिन पर क़ाबू पा लिया गया।

मामून की वली अहदी

हारून रशीद ने अपने बेटे अमीन को १७५ हि० में वली अह्द बनाया था। उस वक़्त अमीन और मामून दोनों की उम्रें पांच-पांच साल की थी। इतनी छोटी उम्र में आज तक किसी खलीफ़ा ने कोई वली अह्द नहीं बनाया था। अब हारून ने सन १८२ हि० में अपने बेटे मामून

बिन मराजिल को, जबकि उस की उम्र बारह साल की थी, अमीन के बाद वली अह्द बनाया, यानी लोगों से इस बात की बैअत ली कि अमीन के बाद मामून खलीफ़ा बनेगा।

मामून का असल नाम अब्दुल्लाह और अमीन का असल नाम मुहम्मद था। जब मुहम्मद को सन १७५ हि० में वली अह्द बनाया था, तो उसको अमीन का खिताब दिया था और अब जब अब्दुल्लाह को वली अह्द न० २ मुक़र्रर किया तो उसको मामून का खिताब दिया।

इस बीच फिर कुछ इलाकों में छुट-फुट बग़ावतें और हंगामे हुए, जिन पर हारून ने अपनी मुस्तैदी, तेज़ी और बहादुरी की वजह से क़ाबू पा लिया।

मोतमिन की वली अहदी

सन १८६ हि० में खलीफ़ा हारून रशीद ने अपने तीसरे बेटे क़ासिम को भी वली अह्द बनाया, यानी लोगों से इस बात की बैअत ली कि मामून के बाद क़ासिम खलीफ़ा बनेगा। इसी मौक़े पर क़ासिम को मोतमिन का खिताब दिया, लेकिन मोतमिन को खलीफ़ा न० ३ बनाते हुए बैअत में यह शर्त रख दी कि अगर मोतमिन लायक़ हो तो मामून का जानशीन बनेगा, वरना मामून को यह अख्तियार हासिल होगा कि वह उसे हटाकर किसी दूसरे को वली अहद बनाए।

वली अहद न० १ यानी अमीन को इराक़, शाम और अरब के मुल्कों की हुकूमत सुपुर्द की। मामून को पूरबी हिस्से दिए। मोतमिन को जज़ीरा सग़ूर और अकासिम के प्रान्तों की हुकूमत अता की। फिर अमीन से एक अहद नामा लिखवाया, जिसका मज़मून यह था कि मैं मामून के साथ किए गये वायदों को निभाऊंगा। इसी तरह मामून से एक अहद नामा लिखवाया, जिसका मज़मून यह था कि मैं अमीन के साथ वायदा वफ़ा करूंगा। इन अहद नामों पर बड़े उलेमा, बुज़ुर्ग, सरदार, दरबारी, मक्का-मदीना के बड़े लोगों के दस्तखत कराकर खाना-काबा में लटका दिया। जो-जो मुल्क जिस-जिस बेटे को दिया था, उसी पर उनको क़नाअत करने और किसी दूसरे भाई का मुल्क न लेने का भी इक़रार लिया गया था, सिर्फ़ खिलाफ़त में तर्तीब रखी थी।

खलीफ़ा हारून रशीद को हज करने का बहुत ही शौक़ था, वह किसी बड़ी मजबूरी के बग़ैर हज को न छोड़ता। उसका नियम था कि एक साल कुफ़्फ़ार पर जिहाद करता और एक साल हज के लिए जाता। किसी खलीफ़ा ने इतने हज नहीं किए, जितने कि हारून रशीद ने किए हैं, मगर १८६ हि० का हज इसलिए खास तौर से ज़िक्र के क़ाबिल है कि उसी हज के मौक़े पर खाना-काबा पर वह अहद नामा लटकाया गया है, जिसका ज़िक्र ऊपर हो चुका है और उसी हज से फ़ारिग़ होकर हारून रशीद ने बरामका खानदान की ताक़त को तोड़ा है।

बरमक और उनका अन्त

खलीफ़ा हारून रशीद की खिलाफ़त के हालात बयान करते हुए इस वक़्त हम सन १८७ हि० तक पहुंच गये हैं। इस साल के शुरू में हारून रशीद ने अपने वज़ीर जाफ़र बरमकी को क़त्ल कराया और उसके भाई फ़ज़्ल और बाप यह्या को क़ैद कर दिया।

फ़ारसी में लफ़्ज़ बरमग़ पुराने ईरानी मज़हब के मठाधीशों के लिए बोला जाता था। सन ३१ हि० में मुसलमान फ़तहमंदों की बाढ़ मर्व की तरफ़ से बढ़ती, मैदानों को समेटती और पहाड़ों को लपेटती हुई बल्ख तक पहुंची, यहां के लोगों में भी इन्क़िलाब आया और इस्लाम क़ुबूल कर लिया। बरमग़ों ने इस्लाम नहीं क़ुबूल किया। इन्हीं बरमग़ों को अरबी में बरमक कहते हैं।

सन ८६ हि० में जब क़ुतैबा बिन मुस्लिम गवर्नर खुरासान ने बल्ख पर चढ़ाई की, तो वहां से कुछ लौंडियां गिरफ़्तार होकर आयीं। उनमें से बरमक की बीवी भी थी, जो क़ुतैबा बिन मुस्लिम के भाई अब्दुल्लाह मुस्लिम के हिस्से में आयी थी। कुछ दिनों के बाद जब बल्ख वालों से समझौता हो गया, तो ये तमाम लौंडियां और क़ैदी वापस किए गये, चुनांचे अब्दुल्लाह बिन मुस्लिम को भी यह औरत वापस करनी पड़ी। यह उस वक़्त अब्दुल्लाह से हामिला थी। बरमक के यहां पहुंच कर उस औरत के पेट से लड़का पैदा हुआ। यही लड़का जाफ़र बरमकी का दादा था, जिसका नाम खालिद था।

सन १६४ हि० में इमाम इब्राहीम ने अबू मुस्लिम खुरासानी को

जब खुरासान का जिम्मेदार बनाकर भेजा, तो उस ने खालिद बिन बरमक को, जबकि उस की उम्र चालीस साल की थी, अपनी जमाअत में शामिल किया। आगे चलकर इसी खालिद बिन बरमक को अब्दुल्लाह बिन सफ़ाह पहले अब्बासी खलीफ़ा ने अपना वज़ीर बनाया।

सफ़ाह के बाद मंसूर अब्बासी तख्त पर बैठा, तो उसने भी खालिद को वज़ीर बनाए रखा, लेकिन अबू मुस्लिम के क़त्ल के बाद उसे हटा दिया गया। लेकिन चूंकि वह अबू मुस्लिम का होनहार तथा लायक़ शागिर्द था, इस लिए अबू मुस्लिम की होशियारी, जेहन और गहराई भी उसे खूब मिली थी, बल्कि अबू मुस्लिम के क़त्ल के बाद तो वह और गहरा हो गया था, यहां तक कि मंसूर जैसे चौकस रहने वाले खलीफ़ा से भी अपने असली रंग को छिपाने में कामियाब हो गया।

खालिद मंसूर के बेटे मेहदी का हाउस-मास्टर भी रहा।

मेंहदी के खलीफ़ा बनने और मंसूर के मरने के बाद तक खालिद ज़िंदा रहा। मेहदी की खिलाफ़त के दौर में यानी सन १६३ हि॰ में लगभग ७७ साल की उम्र में खालिद का इंतिक़ाल हुआ। इंतिक़ाल के वक़्त उसके बेटे यह्या की उम्र ४५ या ५० के लगभग होगी। उसने भी होश संभालते ही अपने बाप का रंग अख्तियार कर लिया था।

खालिद बिन बरमक ने सबसे बड़ा काम और निहायत गहरी तद्बीर यह की थी कि सन १६१ हि॰ में मेहदी को मश्विरा दिया कि वली अह्द हारून रशीद का हाउस मास्टर यह्या को बना दिया जाए। मेहदी चूंकि खुद खालिद की हाउस मास्टरी में रह चुका था, इस लिए उसने अपने बेटे को खालिद के बेटे की हाउस मास्टरी में रखना कुछ ग़लत न समझा। वैसे भी चाल चल कर खालिद ने हारून और यह्या के बेटे फ़ज़्ल को दूध शरीक भाई बना कर तीसरी पीढ़ी तक अपने असर व रसूख की जड़ें मज़बूत कर ली थीं।

यह्या बिन खालिद ने हारून को पढ़ाना शुरू किया और इस हद तक उस की तालीम व तर्बियत कर दी कि हारून खलीफ़ा बनने के बाद भी यह्या को अदब के साथ 'बाप' ही कहा करता था और उस के सामने बे-तकल्लुफ़ी से बातें करते हुए भी शर्माता था।

खलीफ़ा हादी पर यह्या का कोई असर न था, लेकिन यह्या ही ने वे तद्बीरें अपनायीं कि हादी की सगी मां खीज़रान अपने बेटे हादी की दुश्मन बन कर उस की जान की प्यासी हो गयी और यह्या व खीज़रान

ने मिल कर जल्दी ही उस का तमाम करवा दिया। हारून को खलीफ़ा बनाने के लिए यह्या का कोशिश करना ज़ाहिर है कि खुद अपनी ही ज़ात के लिए कोशिश करना था। हारून ने खलीफ़ा होते ही, जैसा कि उम्मीद थी, यह्या बिन खालिद को वज़ीरे आज़म (प्रधान मन्त्री) बना दिया।

यह्या ने जहां दिल लगा कर खिलाफ़त के कामों को अंजाम दिया, वहीं उस ने इस को भी ध्यान में रखा कि हारून की आज़ाद मर्ज़ी और दिली ख्वाहिश में कहीं भी यह्या का अख्तियार रुकावट न बनने पाए, लेकिन गैर-महसूस पर उसने अपने खानदान वालों, अपने भाइयों, भतीजों और अपने ख्याल के ईरानियों को ज़िम्मेदारी के ओह्दे, गवर्नरी और फ़ौजों की सरदारी वगैरह पर मुक़र्रर करना और लगाना शुरू कर दिया।

हारून पर यह्या का जादू चल ही रहा था कि सन १७४ हि० में उस ने यह्या के बेटे फ़ज़्ल को उस का नायब बना दिया। फ़ज़्ल को हारून ने सन १७७ हि० में खुरासान व तबरस्तान रे व हमदान का गवर्नर भी बना दिया था। फ़ज़्ल बिन यह्या को हारून ने अपने बेटे अमीन का हाउस मास्टर भी बनाया था।

सन १७६ हि० में हारून ने उस को खुरासान से बुला कर मुस्तक़िल वज़ीर आज़म बना दिया।

यह्या का दूसरा बेटा जाफ़र हारून रशीद का बहुत बे-तकल्लुफ़ दोस्त था। हारून उसको हर वक़्त अपने साथ रखता था। सन १७६ हि० में जाफ़र को शाही महलों की दारोगाई के अलावा मिस्र की गवर्नरी भी मिली हुई थी। सन १८० हि० में हारून ने जाफ़र को खुरासान की गवर्नरी दी। फिर कुछ दिनों के बाद जाफ़र को वज़ीरे आज़म बना दिया गया।

इन तमाम बातों से अच्छी तरह अन्दाज़ा किया जा सकता है कि इस खानदान ने हारून के चारों तरफ़ कितना ज़बरदस्त जाल बुन दिया था।

बाद में जब हारून को धीरे-धीरे इन बरमकों के असर व रसूख का अन्दाज़ा हुआ और उन के कारनामे अब्बासी हुकूमत के लिए खतरनाक महसूस किए जाने लगे, तो बात ज़्यादा बिगड़ने से पहले ही हारून ने उन पर गहरी चोट की और उन से पूरी तरह निजात हासिल कर ली।

———

हारून के दौर के बाक़ी हालात

हारून रशीद के दौर का जिक्र करते हुए हम सन १८७ हि०तक पहुंच गये हैं। बरामका को उन के अंजाम तक पहुंचाने के बाद खलीफ़ा हारून रशीद ने अपने बेटे मोतमिन को आसिम प्रांत की ओर रवाना किया और रूमियों को जबरदस्त हार हुई।

इसी साल सन १८७ हि०में हजरत इब्राहीम अदहम ने वफ़ात पायी

हारून रशीद खुद दूसरी क़िस्म की बगावत को कुचलने के लिए बराबर इधर-उधर गया, यहां तक कि सन १९३ हि० में खलीफ़ा जरजान में पहुंचा। जरजान में पहुंच कर खलीफ़ा सख्त बीमार हो गया। खलीफ़ा ने जरजान में फ़ौज के सरदारों के सामने यह एलान किया कि मेरे साथ इस वक्त जितनी फ़ौज और सामान है, यह पूरा मुल्क खुरासान और यह सब सामान मामून से मुतालिक रहेगा।

फिर वह जरजान से तौस गया। तौस पहुंच कर बीमारी इतनी आगे बढ़ गयी कि वह बिस्तार से उठने के क़ाबिल न रहा। जिस मकान में वह ठहरा हुआ था, उसी मकान के एक कोने में अपनी क़ब्र खोदने का हुक्म दिया। जब क़ब्र खुद गयी, तो कुछ हाफ़िजों ने क़ब्र में उतर कर खत्मे क़ुरआन किया। हारून ने अपनी चारपाई क़ब्र के किनारे बिछवा ली और चारपाई पर पड़े-पड़े क़ब्र को देखता रहा। इसी हालत में ३ जुमादस्सानी सन १९३ हि० मुताबिक़ २४ मार्च ८०८ ई० रात के वक़्त इन्तिक़ाल किया। उस के बेटे सालेह ने जनाजे की नमाज पढ़ायी। २३ साल ढाई महीने हारून रशीद ने खिलाफ़त की, तौस में उस की क़ब्र मौजूद है।

हारून रशीद की ख़िलाफ़त पर एक नज़र

हारून रशीद का निकाह जुबैदा बिन्त जाफ़र बिन मंसूर से हुआ था। जुबैदा की उफ़ियत उम्मे जाफ़र थी। मुहम्मद अमीन उसी के पेट से पैदा हुआ था। हारून रशीद के कुल १४ बेटे थे, जिन में अमीन, मामून, मोतमिन, मोतसिम चार ज्यादा मशहूर हैं। मोतसिम पढ़ा-लिखा न था,

इसी लिए वली मह्दी के क़ाबिल उस को हारून ने नहीं समझा, मगर वह ख़लीफ़ा हुआ और उसी की औलाद से बहुत से अब्बासी ख़लीफ़ा हुए और उसी से हारून रशीद की नस्ल चली।

हारून रशीद ने मरते वक़्त जिस तरह बहुत-से बेटे छोड़े, उसी तरह बेटियां भी बहुत-सी छोड़ी थीं, जो सब कनीज़ों के पेट से पैदा हुई थीं।

☐ हारून रशीद को अब्बासी ख़ानदान का चमकता सूरज समझना चाहिए। उसी के ज़माने में अब्बासी ख़िलाफ़त बहुत मज़बूत हुई। आले अबी तालिब और दूसरे साज़िशी गिरोहों की हिम्मतें पस्त हो चुकी थीं।

☐ उस को इल्म व फ़ज़्ल का बेहद शौक़ और मज़हब की पाबन्दी का बहुत ख़्याल था।

☐ ज़िंदीक़ों के फ़ित्ने की उसके दौर में बिल्कुल जड़ कट चुकी थी।

☐ रूम और यूनान की शानदार ईसाई हुकूमतें उसके मातहत थीं।

☐ हारून रशीद ने मरते वक़्त ख़ज़ाने में नव्वे करोड़ दीनार छोड़े थे।

☐ उन्दुलुस और मोरक्को के अलावा वह पूरी इस्लामी दुनिया का ख़लीफ़ा था।

☐ हारून ही के ज़माने में लिखने-पढ़ने का काम तेज़ी से बढ़ा और इल्म अपने कमाल को पहुंचा।

☐ हारून रशीद के ज़माने में यहूदी और ईसाई उलेमा की भी क़द्र और इज़्ज़त हुई। ईसाइयों को हारून ने फ़ौजी सरदारियां भी दीं और अपने दरबार में भी जगह दी।

☐ उस के ज़माने में हिन्दुस्तान के उलेमा भी गवर्नर सिंध की मारफ़त और सीधे-सीधे ख़ुद भी बग़दाद में पहुंचे और वहां उन की ख़ूब इज़्ज़त की गयी।

☐ इब्रानी ज़ुबान की किताबों के तर्जुमे हुए, इल्म व फ़न के हर हिस्से में तरक़्क़ी हुई, शायरी और संगीत की चर्चा भी शुरू हुई, कहानियों के लिखने की रस्म भी इसी दौर में शुरू हुई।

☐ हारून रशीद बहादुर और योद्धा था। वह बड़ी ख़ुशदिली और ख़ुशी के साथ घोड़े की ज़ीन पर महीने और बरस लगा देता था, लेकिन जब सूफ़ियों की मज्लिस में बैठता तो एक सन्यासी सूफ़ी नज़र आता था। जब फ़क़ीहों की मज्लिस में होता, तो वह ऊंचे दर्जे का फ़क़ीह और जब हदीस के माहिरों की सोहबत में होता था, तो ऊंचे दर्जे का

माहिरे हदीस साबित होता, सिर्फ़ बिदीओं और बा-मजहबों का वह जरूर दुश्मन था। बाक़ी ग़ैर-मज़हब वालों के साथ उसका बर्ताव रवादारी का था।

☐ हज, जिहाद और खैरात तीन चीज़ों का उसको बहुत शौक़ था।

☐ वह दिल का बहुत नर्म था। जब कोई शख्स उसको नसीहत करता और दोजख से डराता तो वह फूट-फूट कर रोने लगता।

☐ एक दिन इब्ने सिमाक हारून के पास बैठे हुए थे। हारून को प्यास लगी। उसने पानी तलब किया, पानी आया और हारून ने पीना चाहा तो इब्ने सिमाक ने कहा कि अमीरुल मोमिनीन! ज़रा ठहर जाइए हारून रशीद ने कहा, फ़रमाइए! इब्ने सिमाक ने कहा कि अगर प्यास की तेज़ी में पानी आप को न मिले, तो एक प्याला पानी आप कितने तक खरीद लेंगे? हारून रशीद ने कहा, आधी हुकूमत देकर मोल ले लूं। इब्ने सिमाक ने कहा कि अब आप पी लीजिए। जब हारून रशीद पानी पी चुका तो इब्ने सिमाक ने कहा कि अमीरुल मोमिनीन! अगर यह पानी आप के पेट में रह जाए और न निकले तो उसके निकलवाने में कहां तक खर्च कर सकते हैं? हारून रशीद ने कहा कि ज़रूरत पड़े तो मैं आधी हुकूमत दे डालूं। इब्ने सिमाक ने कहा कि बस आप समझ लीजिए कि आप का तमाम मुल्क एक प्याला पानी और पेशाब की क़ीमत रखता है। आप को इस पर ज्यादा घमंड न होना चाहिए। हारून रशीद यह सुनकर रो पड़ा और बहुत देर तक रोता रहा।

☐ एक बार हारून रशीद ने एक बुज़ुर्ग से कहा कि आप मुझे नसीहत कीजिए। उन्होंने कहा कि अगर आप का कोई दरबारी ऐसा हो, जो डर दिलाता रहे और उसका नतीजा बेहतर हो, तो वह उस दरबारी से बेहतर है जो आप को डर से आज़ाद कर दे, मगर नतीजा उसका बुरा हो, हारून रशीद ने कहा, तनिक खोल कर बयान कीजिए ताकि अच्छी तरह समझ में आ जाए। उन्हों ने कहा कि अगर कोई शख्स आप से यह कहे कि क़ियामत के दिन जनता के बारे में पूछा जाने वाला है, आप खुदा से डरते रहिए, तो वह शख्स उससे बेहतर है, जो यह कहे कि आप नबी सल्ल० के खानदानी लोग हैं और नबी सल्ल० से रिश्तेदारी की वजह से आप के तमाम गुनाह माफ़ हो चुके हैं। यह सुनकर हारून रशीद ऐसा रोया कि पास बैठने वालों को उस पर रहम आने लगा।

क़ाज़ी फ़ाज़िल कहते हैं कि दो बादशाहों के सिवा कोई ऐसा नहीं

हुआ, जिसने पढ़ाई के ज़माने में सफ़र किया हो। एक तो हारून रशीद कि उस ने अपने बेटों अमीन व मामून को साथ लेकर मुअत्ता इमाम मलिक रह० के सुनने के लिए सफ़र किया। चुनांचे जिस कापी में उसने पढ़ा था, वह मिस्र के बादशाहों के पास मौजूद है। दूसरा सुलतान सलाहुद्दीन अय्यूबी, जो मुअत्ता इमाम मालिक के सुनने की ग़रज़ से स्कन्दरिया गया था।

हारून रशीद चौगान खेलता और तीर व कमान से निशानाबाज़ी करता था। हारून रशीद की उम्र वफ़ात के वक़्त ४५ साल के क़रीब थी।

अमीन रशीद बिन हारून रशीद

मुहम्मद अमीन बिन हारून बिन मेंहदी बिन मंसूर अब्बासी जुबैदा ख़ातून के पेट से पैदा हुआ था। अमीन व मामून दोनों एक ही उम्र के थे। हारून रशीद ने अपने बाद अमीन को ख़िलाफ़त के तख़्त का वारिस मुक़र्रर किया था, लेकिन साथ ही मामून को ख़ुरासान वग़ैरह पूर्वी हिस्सों का मुस्तक़िल हाकिम बनाकर अमीन को वसीयत की थी कि मामून को ख़ुरासान की हुकूमत से हटायेगा नहीं और मामून को नसीहत की थी कि अमीन की इताअत से इन्कार न करे।

तौस में जब हारून रशीद का इन्तिक़ाल हुआ है, तो मामून मर्व में था और अमीन बग़दाद में। सालेह हारून रशीद के साथ था। हारून की वफ़ात के अगले दिन यानी ४ जुमादस्सानी १९३ हि० को तौस में हारून की फ़ौज और मौजूद सरदारों ने अमीन की ख़िलाफ़त पर सालेह के सामने बैअत की और बग़दाद में अमीन को तुरन्त दूत भेजकर सूचना दे दी, मुबारकबाद भी पेश की और ख़िलाफ़त की मुहर, छड़ी और चादर भेज दी।

अमीन ने जामा मस्जिद में जाकर लोगों के सामने ख़ुत्बा दिया ख़लीफ़ा हारून रशीद की वफ़ात का हाल सुनाया और लोगों से बैअत ली।

जुबैदा ख़ातून रक़्क़ा शहर में उस वक़्त ठहरी हुई थीं और ख़िलाफ़त का ख़ज़ाना उन्हीं के पास था। इस ख़बर को सुनकर रक़्क़ा से बग़-

दाद की तरफ़ सब शाही खज़ाना रवाना हुई। उनके आने की खबर सुन कर अमीन ने अंबार में उन का स्वागत किया और इज़्ज़त व एहतिराम के साथ बग़दाद में लाया।

मामून ने मर्व में बाप के मरने की खबर सुनी तो अमीरों और सरदारों को जो वहां मौजूद थे, जमा किया और अपने लिए मशविरा तलब किया कि मुझको अब क्या करना चाहिए। बग़दाद से रवाना होकर बरआन तक मामून और ये तमाम सरदार भी हारून रशीद के साथ थे। इस सफ़र में फ़ज़्ल बिन सह्ल ने सिपहसालारों और सरदारों का मामून की तरफ़ झुकाव बढ़ाने की कोशिश की थी और बहुत से सरदारों ने वायदा किया था कि हम मामून की तरफ़दारी में हिस्सा लेंगे।

लेकिन फ़ज़्ल बिन रबीअ अमीन का तरफ़दार था।

अब हारून की वफ़ात के बाद फ़ज़्ल बिन रबीअ की कोशिश से सब के सब जो तौस में मौजूद थे, अमीन की बैअत करके बग़दाद की तरफ़ चल पड़े और यह बात ज़रा भी ध्यान में न रही कि हारून की वसीयत के मुताबिक़ हमको मामून की खिदमत में हाज़िर होना चाहिए था, क्योंकि तमाम फ़ौज और सामान का मालिक मामून है।

सरदार जो मामून के पास थे, हारून की वसीयत के मुताबिक़ पूर्वी हिस्सों पर उस की हुकूमत की ताईद में थे।

इनमें से कुछ ने यह मशविरा दिया कि फ़ज़्ल बिन रबीअ अभी रास्ते में है, यहां से फ़ौज भेजकर उसको मर्व की तरफ़ वापस लाया जाए, मगर फ़ज़्ल बिन सह्ल ने उस की मुखालफ़त की और कहा कि अगर इस तरह इन लोगों को वापस लाया गया तो डर है कि वे धोखा देंगे और नुक़सान की वजह बनेंगे, हां मुनासिब यह है कि उन लोगों के पास, जिन्होंने फ़रमांबरदारी का इक़रार करके मदद और हमदर्दी के वायदे किए थे, पैग़ाम भेजा जाए और उनको हारून रशीद की वसीयत और उनके वायदे याद दिलाए जाएं, चुनांचे दो क़ासिद रवाना हुए। वे जब फ़ज़्ल वग़ैरह के पास पहुंचे, तो उन्हों ने सबको अपना दुश्मन पाया। कुछ ने एलानिया मामून को गाली भी दी। ये दोनों क़ासिद मुश्किल से अपनी जान बचाकर वापस आए और जो हालात अपनी आंखों से देखे थे, सुनाए।

मामून को यक़ीन था कि मुझको पूर्वी हिस्सों पर क़ाबिज़ न रहने दिया जाएगा, इसलिए वह चिन्ता में था, इधर फ़ज़्ल बिन सह्ल ने इस

बात का बेड़ा उठाया कि मामून को ख़लीफ़ा बना कर रहूंगा।

सच तो यह है कि अमीन की मां हाशिमिया थी और वह अरबों की हिमायत अपने साथ रखता था। मामून की मां इरानी नस्ल की थी, इसलिए ईरानी व खुरासानी लोग मामून के साथ थे। अमीन बग़दाद में अरबों के अन्दर मौजूद था और मामून अपने हामियों यानी ईरानियों के अन्दर मर्व में था।

ग़रज़ यह कि मामून व अमीन के दिल साफ़ न थे और इन दोनों के आस-पास ऐसे सरदार जमा थे जो दो गिरोहों में बंटे हुए थे और एक गिरोह दूसरे गिरोह का मुखालिफ़ था और अब दोनों गुट एक दूसरे से ज़ोर आज़माई के लिए तुल गया।

अगर ख़लीफ़ा अमीन दूरंदेशी से काम लेता तो मामून रशीद ही को लोग मुजरिम कहते और उसे कामियाबी भी हासिल न होती लेकिन उसके सलाहकार अच्छे न थे, उन्होंने मश्विरे सही नहीं दिए, यहां तक कि अमीन के कामों को देखकर आम तौर पर लोगों में यह ख्याल तेज़ी से फैला कि अमीन रशीद हारून रशीद के तख्त को संभालने की क़ाबिलियत नहीं रखता।

उसकी पहली ग़लती यह थी कि अपने भाई क़ासिम यानी मोतमिन को जज़ीरे की हुकूमत से हटाकर उसके पास क़न्सरीन व अवासिम का सूबा बाक़ी रखा और जज़ीरे की हुकूमत पर अपनी तरफ़ से खुज़ैमा बिन ख़ाज़िम को मुक़र्रर करके भेजा।

इसी साल यानी अपनी खिलाफ़त के शुरू ही में उसने फ़ज़्ल बिन रबीअ के मश्विरे से अपने बेटे को मूसा बिन अमीन को बजाए मामून के वली अहद बनाना चाहा और मामून को खुद मुखालफ़त का मौक़ा दे दिया।

जिस ज़माने में हारून रशीद खुरासान को जा रहा था, तो उस ने यह एलान कर दिया था कि यह फ़ौज और तमाम सामान मामून रशीद के पास खुरासान में रहेगा और मामून ही उस का मालिक है, लेकिन फ़ज़्ल बिन रबीअ तमाम सामान और तमाम फ़ौज को जो हारून की वफ़ात के वक़्त तौस में मौजूद थी, ले कर बग़दाद की तरफ़ चल दिया और इस तरह मामून को बहुत कमज़ोर कर गया, इस लिए कि फ़ज़्ल बिन रबीअ को यह ख़तरा हुआ कि अगर अमीन के बाद मामून ख़लीफ़ा हो गया और तो वह ज़रूर मेरे साथ बुरा सुलूक करेगा। इस लिए उस ने यह कोशिश की कि

मामून को वली अह्दी से हटा दिया जाए।

यही ख़तरा अली बिन ईसा, पिछले गवर्नर ख़ुरासान को भी अपने बारे में था, इस लिए उसने भी फ़ज़्ल बिन रबीअ के इस मश्विरे की ताईद की और अमीन को मामून के हटाने पर तैयार कर लिया। मगर ख़ुज़ैमा बिन ख़ाज़िम के सामने जब यह मस्अला पेश किया गया तो उसने इस राय की सख़्त मुख़ालफ़त की और ख़लीफ़ा को उससे उस वक़्त रोक दिया।

ये ख़बरें मामून के पास भी पहुंचती थीं, मगर उसने इन के बारे में ख़ामोशी अपनायी और नतीजे का इन्तिज़ार करता रहा।

दोनों भाइयों के आपसी तनाव का असर यह पड़ा कि जहां-जहां भी फ़सादी लोग मौजूद थे, बग़ावत पर उतर आए और इस्लामी हुकूमत को सख़्त ख़तरा पैदा हो गया।

अमीन व मामून का मुक़ाबला

सन १९४ हि० के आख़िरी दिनों में अमीन ने मामून को वली अह्दी से हटा दिया। इस के बाद अमीन ने यही नहीं किया कि अपने बेटे को मामून की जगह वली अह्द बनाया, बल्कि अपने भाई मोतमिन को भी हटा कर उस की जगह अपने दूसरे बेटे अब्दुल्लाह को वली अह्द बनाया और ख़ुत्बों में मूसा और अब्दुल्लाह का नाम लिया जाने लगा। अब लड़ाई और ज़ोर-आज़माई के लिए अमीन व मामून को किसी चीज़ के इन्तिज़ार की ज़रूरत न थी। मुल्क के क़बीले और सरदार दोनों ख़ेमों में अलग-अलग बट गये और लड़ाई छिड़ गयी।

इस लड़ाई में ख़लीफ़ा अमीन को हार का मुंह देखना पड़ा। महल पर मामून की फ़ौजों ने हमला कर दिया और अमीन गिरफ़्तार करके उसे क़स्रे मंसूर में क़ैद कर दिया और मामून की ख़िलाफ़त की लोगों से बैअत ले ली, अमीन जिस वक़्त गिरफ़्तार हुआ है, उस वक़्त वह सिर्फ़ एक पाजामा पहने हुए था, सर पर पगड़ी और कंधों पर एक फटा कपड़ा था।

फिर अमीन को क़ैदख़ाने ही में क़त्ल कर दिया गया। अमीन के दोनों लड़कों मूसा और अब्दुल्लाह को मामून के पास भेज दिया गया और ज़ुबैदा ख़ातून, अमीन की मां को देश से निकाल दिया गया।

ख़िलाफ़ते अमीन पर एक नज़र

ख़लीफ़ा अमीन ने २७ या २८ वर्ष की उम्र पायी, चार वर्ष और साढ़े सात महीने ख़िलाफ़त की। यह पूरा ज़माना फ़ित्ने और फ़साद में गुज़रा। हज़ारों मुसलमानों का ख़ून बे-वजह बहाया गया। अमीन की ख़िलाफ़त का ज़माना इस्लामी दुनिया के लिए मुसीबत और नहूसत का ज़माना था।

फ़ज़्ल बिन रबीअ जो उस का वज़ीरे आज़म था, अब्बासी ख़ानदान के लिए अच्छा वज़ीर साबित न हुआ। यही अमीन और मामून दोनों भाइयों के लड़ाने की वजह बना था।

हारून रशीद ने अमीन को इस लिए अपना जानशीन चुना था कि वह ख़ालिस हाशिमी और अरबी होने की वजह से, बाप की उस पालिसी को, जो उसने उम्र के आख़िरी हिस्से में अपनायी थी कि ईरानियों के ज़ोर को तोड़ दिया जाए, कामियाब बना सकेगा, मगर इस पालिसी के कामियाब बनाने के लिए अमीन का दिल व दिमाग़ मुनासिब न था और हारून को इस का अन्दाज़ा ख़ूब अच्छी तरह था—

ख़लीफ़ा मामून रशीद

मामून रशीद बिन हारून रशीद का असल नाम अब्दुल्लाह था। बाप ने मामून का ख़िताब दिया, उर्फ़ियत अबुल अब्बास थी। जुमा के दिन सन १७० हि० के रबीउल अव्वल में पैदा हुआ। जिस रात मामून रशीद पैदा हुआ, उसी रात हादी का इन्तिक़ाल हुआ। उस की मां का नाम मराजिल था, जो मजूसी नस्ल की लौंडी थी और चिल्ले ही में मर गयी थी।

बारह वर्ष की उम्र में जबकि मामून अपनी तेज़ी मुस्तैदी और क़ाबिलियत, ज़हानत की वजह से हर फ़न में अच्छी नज़र पैदा कर चुका था, जाफ़र बरमकी की हाउस मास्टरी के सुपुर्द किया गया। उसी साल यानी सन १८२ हि० में उसको हारून ने अमीन के बाद वली अह्द मुकर्रर किया।

अगरचे जुमादस्सानी सन १९३ हि० से, जब कि हारून रशीद का इन्तिक़ाल हुआ था, मामून रशीद खुरासान वग़ैरह पूरबी हिस्सों का खुद मुख्तार हाकिम था, लेकिन उस की खिलाफ़त का ज़माना मुहर्रम सन १९८ हि० से, जब कि अमीन क़त्ल किया गया, शुरू होता है।

जब मामून को अमीन के क़त्ल किए जाने का हाल मालूम हुआ और बग़दाद में उस की फ़ौज को ग़लबा हासिल हुआ और बग़दाद वालों ने मामून को खलीफ़ा तस्लीम कर लिया तो मामून ने अपने वज़ीर फ़ज़्ल बिन सह्ल के सगे भाई हसन बिन सह्ल को जिबाले फ़ारस, अह्वाज़, बसरा, कूफ़ा, हिजाज़, यमन वग़ैरह नए जीते गये मुल्कों की हुकूमत अता कर के बग़दाद की तरफ़ रवाना किया। हर्समा बिन अय्युन और ताहिर बिन हुसैन ने यह तमाम इलाक़ा फ़त्ह कर लिया था और इन्हीं हर दो फ़ौजी सरदारों की बहादुरी से यहां तक नौबत पहुंची थी कि मामून को बग़दाद वालों ने खलीफ़ा तस्लीम किया और अमीन क़त्ल कर दिया गया।

ताहिर, जिसने सबसे ज्यादा नुमायां काम अंजाम दिया था, इस बात की उम्मीद करता था कि उस को इन नए जीते गये इलाक़ों की हुकूमत मिलेगी, मगर उम्मीद के खिलाफ़ हसन बिन सह्ल को यह हुकूमत मिली और ताहिर बिन हुसैन को हसन बिन सह्ल ने जज़ीरा व शाम व मूसल का गवर्नर मुक़र्रर कर के नस्र बिन शीश बिन अक़ील के मुक़ाबले पर रवाना किया, जिस ने अमीन की बैअत को पूरा करने की नीयत कर ली थी और बड़ी फ़ौज जमा कर ली थी और इराक़ के शहरों पर क़ब्ज़ा कर लिया था।

हसन बिन सह्ल के हाकिम मुक़र्रर होकर आने से लोगों को यक़ीन हो गया कि फ़ज़्ल बिन सह्ल मामून पर पूरी तरह छाया हुआ है, और हर तरफ़ ईरानियों ही का दौर दौरा होगा। अरब सरदारों को यह सोच कर बड़ा खतरा महसूस होने लगा और उन में आम तौर पर बे-दिली फैल गयी। साथ ही यह भी यक़ीन हो गया कि मामून अब फ़ज़्ल बिन सह्ल की ख्वाहिश के मुवाफ़िक़ मर्व ही को राजधानी बनाएगा और बग़दाद में न आएगा।

अरब सरदारों का यह खतरा मुख्तलिफ़ बग़ावतों की शक्ल में ज़ाहिर हुआ, खास तौर पर हिजाज़ व यमन में तो पूरी बेचैनी फैल गयी, अलवियों ने अब्बासी खिलाफ़त के खिलाफ़ एक मुहिम चला दी।

हर्समा बिन अअ्युन का क़त्ल

फ़ज़्ल बिन सह्ल ने हारून रशीद की वफ़ात के बाद मामून की खूब हिम्मत बंधायी थी और उसी ने अमीन के मुक़ाबले के लिए पूरी तैयारी की थी। मामून ने उस को अपना वज़ीरे आज़म बना दिया था। ईरानी मामून की तरफ़ इसलिए झुकाव रखते थे कि उस की मां ईरानी नस्ल की थी। उस ने जाफ़र से तर्बियत पायी थी। उसने ईरानियों का चौथाई टैक्स माफ़ कर दिया था। इस लिए फ़ज़्ल को अपनी वज़ारत और खलीफ़ा पर क़ाबू पाने के लिए हर क़िस्म की आसानी हासिल थी। उसने खलीफ़ा को इस बात पर तैयार कर लिया था कि मर्व ही को अपनी राजधानी बनाए, जो खुरासान की राजधानी थी। यहां अरब सरदारों का कोई ज़ोर नहीं चल सकता था। अगर मामून रशीद बग़दाद चला जाता तो फ़ज़्ल बिन सह्ल का यह ज़ोर क़ायम नहीं रह सकता था।

फ़ज़्ल बिन सह्ल ने अपने भाई मुह्सिन बिन सह्ल को इराक़ व हिजाज़ वग़ैरह का हाकिम व वाइसराय बना कर अरब वालों का ज़ोर कम करने का सामान कम कर दिया था।

हर्समा और ताहिर दो ज़बरदस्त सरदार थे, जिन्हों ने मामून की खिलाफ़त क़ायम करने के लिए बड़े-बड़े जंगी कारनामे दिखाए थे।

ताहिर को यह महसूस हो चुका था कि अमीन के क़त्ल करने में उसने मामून की उस मुहब्बत को जो भाई को भाई के साथ होती है, सदमा पहुंचाया है, इसीलिए उसको उसके जीते हुए इलाक़े की हुकूमत न मिली वह यह भी समझ गया था कि फ़ज़्ल बिन सह्ल की पकड़ खलीफ़ा पर इतनी ज़बरदस्त है कि उस फंदे को तोड़ कर, खलीफ़ा को बग़दाद लाना आसान नहीं है। उसने महसूस किया कि वह तो ग़ैर अरबियों का ज़ोर तोड़ने और मामून को मर्व से बग़दाद की तरफ़ लाने के लिए कोई कोशिश व हरकत नहीं कर सकता, सिर्फ़ हर्समा बिन अअ्युन ही यह जुरात कर सकता है कि वह खलीफ़ा तक अरबों के जज़्बात पहुंचाए। उसको यह बात भी मालूम हो चुकी थी कि खलीफ़ा को कोई खत या कोई पैग़ाम फ़ज़्ल से होकर ही पहुंचेगा।

इस्लामी तारीख़ की यह सब से पहली मिसाल थी कि खलीफ़ा

को उसके वज़ीर ने नज़रबंद कर दिया था और ख़लीफ़ा शायद अपने आप को नज़रबंद नहीं समझता था। हर्समा को पूरी बात बतायी गयी।

उसने इरादा कर लिया कि ख़ुद दरबार में हाज़िर हो कर तमाम हालात से ख़लीफ़ा को ख़बरदार करेगा।

फ़ज़्ल बिन सह्ल भाग गया।

उसने ख़लीफ़ा की तरफ़ से यह हुक्म जारी करा दिया कि तुम रास्ते ही से शाम व हिजाज़ की तरफ़ चले जाओ, वहां तुम्हारी सख़्त ज़रूरत है। हमारे पास ख़ुरासान में आने की अभी ज़रूरत नहीं।

हर्समा तो समझ गया कि मुझे रोका गया, इसलिए वह अपनी ख़िदमतों के भरोसे आगे बढ़ता रहा। मर्व पहुंचने पर उसे ख़्याल हुआ कि शायद फ़ज़्ल मुझे ख़लीफ़ा से न मिलने दे और ख़लीफ़ा को मालूम ही न हो, इसलिए उसने शहर में दाख़िल होते ही नक़्क़ारा बजाने का हुक्म दे दिया, ताकि ख़लीफ़ा को मालूम हो जाए कि कोई बड़ा सरदार शहर में दाख़िल हो रहा है।

उधर जब फ़ज़्ल को मालूम हुआ कि हर्समा ने हुक्म माना नहीं और बराबर मर्व की तरफ़ बढ़ता चला आ रहा है और मेरी शिकायत ख़लीफ़ा से कर सकता है, उसने ख़लीफ़ा मामून रशीद को पहले ही जड़ दिया कि अबुस्सराया को हर्समा ने बग़ावत पर उकसाया था। आप ने उसको शाम की तरफ़ जाने का हुक्म दिया, लेकिन सरकश बन कर वहां नहीं गया, बल्कि मर्व की तरफ़ बढ़ता चला आ रहा है।

इन बातों से मामून को बहुत गुस्सा आया और जैसे ही हर्समा दरबार में दाख़िल हुआ, उसने जवाब तलब किया कि हुक्म क्यों नहीं माना? उसने उसी गुस्से में उसकी बे-इज़्ज़ती करके दरबार से निकलवा कर जेलख़ाने में भिजवा दिया।

फ़ज़्ल बिन सह्ल को अच्छा मौक़ा मिल गया। उसने जेल में क़त्ल करा दिया और ख़लीफ़ा को बता दिया कि वह जेल में मर गया।

बग़दाद में हंगामा

हर्समा जब मर्व के जेलख़ाने में क़त्ल कर दिया गया और बग़दाद वालों को मालूम हुआ, तो वहां ग़म व गुस्से की लहर दौड़ गयी। हर एक

की ज़ुबान पर यही लफ़्ज़ दौड़ गये कि फ़ज़्ल बिन सह्ल ने ख़लीफ़ा और ख़िलाफ़त पर क़ब्ज़ा कर लिया है और वह चूंकि मजूसी ख़ानदान का है, इसलिए अरब वालों को अब ज़िल्लतें उठानी पड़ेंगी। चुनांचे बग़दाद में बग़ावत की लहर उठ खड़ी हुई और हंगामों का सिलसिला शुरू हो गया।

इधर ये हंगामे हो रहे थे, उधर मर्व में मामून रशीद बिल्कुल बे-ख़बर और मुतमइन था, क्योंकि फ़ज़्ल बिन सह्ल ने उसके पास बिना किसी रुकावट के सीधे ख़बर पहुंचने का कोई ज़रिया बाक़ी नहीं रखा था।

इमाम अली रज़ा की वली अहदी

मामून रशीद अगरचे फ़ज़्ल बिन सह्ल की वजह से हुकूमत के हालात से बिल्कुल बे-ख़बर था और फ़ज़्ल बिन सह्ल, जिस तरह चाहता था, हुकूमत का इन्तिज़ाम चला रहा था, मगर साथ ही उसको यह महसूस नहीं होने पाया था कि मैं नज़र बन्दों की तरह ज़िंदगी बसर कर रहा हूं।

मामून को शुरू ही से सय्यदों और अह्ले बैत के साथ बड़ी मुहब्बत व अक़ीदत थी।

मामून ने सन २०० हि० में आले अब्बास के अक्सर लोगों को अपने पास मर्व में तलब किया और महीनों अपना मेहमान रखा, आख़िर अली रज़ा बिन मूसा काज़िम की तरफ़ ज़ेहन गया और वह अपनी क़ाबिलियत को देखते हुए था भी इसी क़ाबिल चुनांचे मामून रशीद ने बिला तकल्लुफ़ अपनी लड़की की शादी अली रज़ा से कर दी और सन २०१ हि० के रमज़ान के महीने में अली रज़ा बिन मूसा काज़िम बिन जाफ़र सादिक़ को अपना वली अह्द मुक़र्रर करके मोतमिन अपने भाई को जो हारून रशीद की वसीयत के मुताबिक़ मामून का वली अह्द था, वली अह्दी से हटा दिया।

इसके बाद मामून ने स्याह कपड़ा जो अब्बासियों का चलन था, छोड़ करके हरा कपड़ा जो अलवियों का चलन था, पहनना शुरू किया, इसी चलन को तमाम दरबारियों ने अपना लिया और इसी का हुक्म पूरे मुल्क में भेज दिया गया।

इस हुक्म का बग़दाद में पहुंचना था कि वहां एक बार और मुल्क में हलचल मच गयी, वहां के लोगों को यक़ीन हो गया कि फ़ज़्ल बिन सह्ल ने

खिलाफ़त अब्बासियों से निकाल कर अलवियों के अन्दर पहुंचाने में कामियाबी हासिल कर ली। अब्बासी खानदानों को यह बात कैसे पसंद आती। वे जानते थे कि अब्बासियों से खिलाफ़त के निकालने और अलवियों में पहुंचाने की कोशिश सबसे पहले अबू मुस्लिम ने की थी। फिर यही कोशिश बरमकी खानदान ने की, जो मजूसी नस्ल का था, मगर वह खानदान नाकाम रहा। अब एक और मजूसी नस्ल के आदमी ने इस कोशिश में कामियाबी हासिल कर ली। अली रज़ा की वली अह्दी अलवियों की बरतरी और मजूसियों की कामियाबी समझी जाने लगी।

इब्राहीम बिन मेंहदी की खिलाफ़त

२५ ज़िल हिज्जा सन २०१ हि० को अब्बासियों ने इब्राहीम बिन मेंहदी को खिलाफ़त के लिए चुनकर खुफ़िया तौर पर उसके हाथ पर बैअत की और पहली मुहर्रम सन २०२ हि० को एलानिया तमाम बग़दाद वालों ने बैअत करके इब्राहीम बिन मेंहदी को खलीफ़ा बनाया और मामून को खिलाफ़त से अलग कर दिया।

इब्राहीम ने खलीफ़ा बनते ही बग़दाद व सवाद पर क़ब्ज़ा करके मदायन की तरफ़ बढ़ना शुरू कर दिया। कई बार, बहुत सी जगहों पर लड़ाइयों का सिलसिला शुरू हुआ, जोड़-तोड़ का दौर चला, हंगामों ने नया रुख लिया और सन २०२ हि० में शुरू होने वाला यह हंगामा सन २०३ हि० में दबा दिया गया। इस तरह १७ ज़िलहिज्जा सन् २०३ हि० में इब्राहीम बिन मेंहदी की खिलाफ़त खत्म हो गयी।

फ़ज़्ल बिन सहल का क़त्ल

बग़दाद और इराक़ वग़ैरह के इलाक़ों में मामून के खिलाफ़ फ़ज़्ल बिन सह्ल की वजह से एक फ़िज़ा बनती जा रहीथी और वह था कि किसी वाक़िए से खलीफ़ा को आगाह करने की उसने ज़रूरत ही न समझी।

इराक़ के लोगों ने यह तै कर लिया था कि हर क़ीमत पर फ़ज़्ल और उसके चेलों की हरकतों से खलीफ़ा को आगाह किया जाएगा। वे

नाम पर बेलकर मर्व पहुंचे, खलीफ़ा तक बात पहुंचाने के लिए अली रज़ा बिन मूसा काज़िम, खिलाफ़त के वली अह्द को चुना, पूरी बात बतायी, समझायी, यहां तक कि वह खलीफ़ा को पूरी बात बताने पर तैयार हो गये। चुनांचे उन्होंने खलीफ़ा को एक-एक बात तफ़्सील के साथ बता दी और यह भी सफ़ाई से बता दिया कि आप की खिलाफ़त खतरे में है और आप ने जो मुझको वली अह्द बनाया है उससे भी बनू अब्बास और उनके हिमायती नाराज़ हैं।

इन तमाम बातों को सुनकर मामून चौंक पड़ा। उस ने उसी वक़्त यह तै कर लिया कि इस बला से अब हर क़ीमत पर निजात पानी है। चुनांचे उसने कुछ लोगों को उसके क़त्ल पर लगा दिया और उन्होंने उसे क़त्ल भी कर दिया, यह अलग बात है कि बाद में उन्हें भी सज़ा के तौर पर अपनी जानों से हाथ धोना पड़ा। फ़ज़्ल बिन सह्ल सराख़स नामी जगह पर २ शाबान सन २०२ हि० में क़त्ल किया गया था।

सन २०३ हि० में ५५ साल की उम्र में इमाम अली रज़ा का भी इन्तिक़ाल हो गया।

१३ जुमादस्सानी सन २१८ हि० को रूम के सफ़र से वापसी पर नहर बज़न्दून के किनारे मामून को बुखार हो गया और यहीं १८ रजब सन २२८ हि० में जुमेरात को खलीफ़ा मामून का भी इन्तिक़ाल हो गया।

मरने के पहले अपने सरदारों और उलेमा को अपने सामने वसीयत की और अपने कफ़न-दफ़न के बारे में हिदायतें कीं अपने मरने के बाद लोगों के रोने और हाय-वाय करने से मना किया, फिर अपने भाई अबू इस्हाक़ मोतसिम को, जिसको हुकूमत का वली अह्द बना चुका था, बुलाकर नसीहतें कीं और हुकूमत चलाने के उसूल सिखाए, फिर क़ुरआन करीम की आयतें पढ़ता रहा, इसके बाद जान निकल गयी।

मामून ने ४८ साल की उम्र पायी और साढ़े बीस साल हुकूमत की।

सूबों और मुल्कों की आज़ादी

बनू उमैया के खलीफ़ा जब तक हुकूमत करते रहे, पूरी इस्लामी दुनिया का एक ही मर्कज़ रहा और दमिश्क़ को राजधानी की हैसियत

हासिल की।

बनू उमैया की ख़िलाफ़त के वारिस अब्बासी हुए तो अब्दुल्लाह बिन सफ़ाह पहला अब्बासी ख़लीफ़ा सन् १३२ हि० में पूरी इस्लामी दुनिया का ख़लीफ़ा तस्लीम किया गया। लेकिन सिर्फ़ ६ साल के बाद यानी सन् १३८ हि० में उन्दुलुस का मुल्क अब्बासी ख़िलाफ़त से अलग हो गया और वहां बनू उमैया की एक अलग हुकूमत क़ायम हो गयी।

सन १७२ हि० में मराक़श (मोरक्को) के अन्दर एक और आज़ाद हुकूमत क़ायम हो गयी, जो सल्तनते इदरीसिया के नाम से मशहूर है।

कुछ दिनों के बाद यानी सन् १८४ हि० में ट्युनिस और अलजीरिया का इलाक़ा, जिसको अफ़्रीक़ा का प्रान्त कहा जाता था, अब्बासी हुकूमत की मातहती में नाम करने के लिए रह गया। सन् २०५ हि० में मामून रशीद ने ताहिर बिन हुसैन को ख़ुरासान की गवर्नरी पर मुक़र्रर किया। उसी तारीख़ से ताहिर के ख़ानदान की हुकूमत ख़ुरासान में रही। यह हुकूमत अब्बासी हुकूमत की मातहती में नाम के लिए थी।

सन् २१३ हि० में मुहम्मद बिन इब्राहीम ज़ियादी को यमन की हुकूमत सुपुर्द की गयी और उसके बाद यमन की हुकूमत उसी के ख़ानदान में रही। यमन भी ख़ुरासान और अफ़्रीक़ा की तरह आज़ाद हो गया। ग़रज़ मामून रशीद के ज़माने तक इस्लामी दुनिया में पांच आज़ाद हुकूमतों की बुनियाद पड़ चुकी थी।

अख़्लाक़ और आदतें

ख़लीफ़ा मामून रशीद तमाम ख़ानदान बनू अब्बास में हुकूमत, इन्तिज़ाम, अक़्ल और बहादुरी में सबसे बढ़ कर था। वह ख़ुद कहा करता था कि अमीर मुआविया रज़ि० को अम्र बिन आस रज़ि० की और अब्दुल मलिक को हज्जाज की ज़रूरत थी, मगर मुझ को किसी की ज़रूरत नहीं है।

क़ुरआन शरीफ़ के पढ़ने का भी उसको बहुत शौक़ था। कुछ रमज़ानों में तो उसने हर दिन क़ुरआन शरीफ़ ख़त्म किया है।

मामून के दारुल 'मुनाज़रा' में जब हर अक़ीदे और हर मज़हब के लोगों को आज़ादी के साथ बात-चीत करने का मौक़ा मिला और इल्मी

बहसें आज़ादी के साथ होने लगीं, तो उसकी तवज्जोह बे-नतीजा फ़लसफ़ों की तरफ़ ज़्यादा हुई, इसका नतीजा यह हुआ कि 'ख़ल्क़े क़ुरआन' का मस्-अला, जो बिल्कुल ग़ैर ज़रूरी और तवज्जोह न दिए जाने के क़ाबिल मस्अला था, बहस का उन्वान बन गया और मामून 'ख़ल्क़े क़ुरआन' का क़ायल होकर उन लोगों पर जो 'ख़ल्क़े क़ुरआन' के क़ायल न थे, उन पर ज़ुल्म के पहाड़ तोड़ने लगा। इस सख़्ती का नतीजा यह हुआ कि मुख़ा-लिफ़ अक़ीदे के उलेमा ने और भी ज़्यादा सख़्ती से मुख़ालफ़त शुरू कर दी और उलेमा को एक लम्बे अर्से तक बड़ी-ही तक्लीफ़ बर्दाश्त करनी पड़ी।

अबू मुहम्मद यज़ीदी का बयान है कि मैं मामून को बचपन में पढ़ाया करता था। एक बार नौकरों ने मुझ से शिकायत कि जब तुम चले जाते हो, तो यह नौकरों को मारता-पीटता और शोख़ी करता है, मैंने उसको सात क़ुमचियां मारीं। मामून रोता और आंसू पोंछता जाता था।

इतने में वज़ीरे आज़म जाफ़र बरमकी आ गया। मैं उठकर बाहर चला गया। जाफ़र मामून से बात-चीत करके और उसको हंसा कर चला गया। मैं फिर मामून के पास आया और कहा कि मैं तो इतनी देर डरता ही रहा कि कहीं तुम जाफ़र से शिकायत न कर दो। मामून ने कहा, जाफ़र तो क्या मैं अपने बाप से भी आप की शिकायत नहीं कर सकता, क्योंकि आपने तो मेरे ही फ़ायदे के लिए मुझको मारा था।

यह्या-बिन अक्सम कहते हैं कि एक बार मैं मामून रशीद के कमरे में सो रहा था। मामून भी क़रीब पड़ा सो रहा था। मामून ने मुझको जगा कर कहा कि देखना, मेरे पांव के क़रीब कोई चीज़ है? मैंने कहा कि कुछ नहीं है, लेकिन मामून को इत्मीनान नहीं हुआ। उसने नौकरों को आवाज़ दी। उन्होंने शमा जलाकर रोशनी में देखा तो मालूम हुआ कि उसके बिछौने के नीचे एक सांप बैठा है। मैंने मामून से कहा कि आप के कमालों के साथ आप को ग़ैब का जानकार भी कहना चाहिए। मामून ने कहा, अल्लाह की पनाह! यह आप क्या कहते हैं? बात सिर्फ़ यह थी कि मैंने अभी ख़्वाब में देखा है कि कोई शख़्स मुझ से कहता है कि अपने आपको नंगी तलवार से बचाओ। मेरी तुरन्त आंख खुल गयी और मैंने सोचा कि कोई हादसा क़रीब ही होने वाला है, सब से क़रीब बिछौना ही था, इसलिए मैंने बिछौने को देखा और सांप निकला।

मुहम्मद बिन मंसूर का क़ौल है कि मामून कहा करता था कि

शरीफ़ आदमी की एक निशानी यह है कि अपने आप से बरतर के ज़ुल्म सहे और अपने आप से कमतर पर ज़ुल्म न करे।

सईद बिन मुस्लिम कहते हैं कि मामून ने एक बार कहा कि अगर मुजरिमों को यह मालूम हो जाए कि मैं माफ़ करने को कितना पसन्द करता हूं, तो उन से डर निकल जाए और उनके दिल खुश हो जाएं।

एक मुजरिम से मामून ने कहा कि अल्लाह की क़सम! मैं तुझको क़त्ल कर डालूंगा। उसने कहा कि आप ज़रा बरदाश्त को काम में लाएं नर्मी करना भी आधी माफ़ी है। मामून ने कहा, अब तो मैं क़सम खा चुका। उसने कहा कि अगर आप खुदा के सामने क़सम तोड़ने वाले की हैसियत से पेश हों, तो उससे लाख दर्जा बेहतर है कि एक खूनी की हैसियत से पेश हों यह सुनकर मामून ने उसका क़ुसूर माफ़ कर दिया।

अब्दुस्सलाम बिन सलाह कहते हैं कि एक दिन मैं मामून केकमरे में सोया चिराग़ बुझने लगा। देखा तो मशालची सो रहा है। मामून खुद उठा और चिराग़ की बत्ती ठीक करके लेट गया और कहने लगा कि अक्सर ऐसा होता कि मैं गुस्लखाने में होता हूं और ये खिदमतगार मुझको गालियां देते हैं और तरह-तरह की तोहमतें लगाते रहते हैं। ये समझते हैं कि मैंने सुना नहीं, लेकिन मैं सुनता हूं और माफ़ करता रहता हूं और कभी यह भी ज़ाहिर नहीं करता कि मैं ने तुम्हारी बातें सुनी हैं।

एक दिन मामून रशीद दजले की सैर कर रहा था। एक परदा पड़ा हुआ था। उसके दूसरी तरफ़ किनारे पर मल्लाह बैठे हुए थे, जिन को मामून की मौजूदगी का इल्म न था। उनमें से एक ने कहा कि मामून यह समझता होगा कि मेरे दिल में उसकी क़द्र है, मगर वह इतना नहीं समझता कि जो शख्स अपने भाई का क़ातिल हो, उसकी ज़रा भी क़द्र मेरे दिल में नहीं हो सकती। मामून मुस्करा कर कहने लगा कि यारों! तुम ही कोई तद्बीर बताओ कि इस बड़े आदमी के दिल में मेरी क़द्र हो जाए।

यह्या बिन अक्सम का बयान है कि मैं मामून के कमरे में लेटा हुआ था, अभी सोया न था कि मामून को खांसी उठी। उसने अपनी क़मीज़ के दामन से अपना मुंह दबा लिया, ताकि कोई जाग न उठे।

मामून कहा करता था कि बादशाह की खुशामद पसन्दी बहुत ही बुरी है, उससे भी बुरी क़ाज़ियों की तंगदिली है, जबकि वह मामला समझने से पहले ही वाक़िफ़ हो। इससे भी बदतर दीन के मामलों में

फ़क़ीहों की कम अक़्ली है, इससे भी बदतर मालदार लोगों की कंजूसी, बूढ़े आदमियों का मज़ाक़ करना, जवानों का सुस्ती करना और लड़ाई में कमज़ोरी दिखाना है।

अली बिन अब्दुर्रहीम मरवरदी कहते हैं कि मामून का कहना है कि वह आदमी अपनी जान का दुश्मन है, जो ऐसे शख़्स के क़रीब होने का ख़्वाहिशमंद हो, जो उससे दूरी इख़्तियार करना चाहता है और ऐसे आदमी की ख़ातिर बात करे जो उस का एहतराम न करता हो और ऐसे शख़्स की तारीफ़ करने में ख़ुश हो जो उसे जानता ही न हो।

हुदया बिन ख़ालिद कहते हैं कि मैं एक दिन मामून के साथ खाना खाने में शरीक था। जब दस्तरख़्वान उठाया गया, तो मैं फ़र्श पर से खाने के रेज़े (कण) चुनकर खाने लगा। मामून ने पूछा क्या तुम्हारा पेट नहीं भरा है? मैंने कहा, पेट तो भर गया है, लेकिन हदीस शरीफ़ में आया है कि जो शख़्स दस्तरख़्वान उठाने से पहले बचे हुए रेज़े उठा कर खाए, वह तंगी में भी अम्न से रहेगा। मामून ने यह सुनकर मुझे एक हज़ार दीनार अता किए।

एक बार हारून रशीद हज करने के बाद कूफ़ा में आया और वहां के हदीस के माहिरों को बुला भेजा। तमाम लोग हाज़िर हो गये, मगर अब्दुल्लाह बिन इदरीस और ईसा बिन यूनुस ने हाज़िरी से इन्कार कर दिया। हारून रशीद ने अपने बेटों अमीन व मामून को उनकी ख़िदमत में भेजा। ये दोनों जब अब्दुल्लाह बिन इदरीस के पास गये, तो उन्होंने अमीन को ख़िताब करके सौ हदीसें पढ़ दीं। मामून भी बैठा हुआ सुनता रहा। जब वह ख़ामोश हुए तो मामून ने कहा, अगर आप इजाज़त दें, तो मैं इन हदीसों को सुना दूं चुनांचे उन्होंने इजाज़त दी और मामून ने बिला कुछ घटाए-बढ़ाए तमाम हदीसें सुना दीं।

इब्ने इदरीस मामून का हाफ़िज़ा देखकर हैरान रह गये। मामून रशीद ने एक बार ज़िक्र किया कि मैं किसी आदमी के जवाब में ऐसा बन्द नहीं हुआ जैसा एक बार कूफ़ा वालों ने मुझको लाजवाब कर दिया। बात यह थी कि उन्हों ने आकर कूफ़ा के हाकिम की शिकायत की। मैंने कहा कि तुम लोग झूठ बोलते हो। वह हाकिम बड़ा इंसाफ़ वाला है। उन्होंने कहा कि, बेशक हम झूठे और अमीरुल मोमिनीन सच्चे हैं, लेकिन उस हाकिम के इंसाफ़ के लिए हमारा शहर ही क्यों मख़्सूस किया गया है, उस को किसी दूसरे शहर में भेज दीजिए, ताकि वह शहर भी

उसके इंसाफ़ से वैसा ही फ़ायदा उठाए, जैसा हमारा शहर उठा चुका है। मजबूर होकर मुझे कहना ही पड़ा, अच्छा आओ मैंने उसे हटा दिया।

यह्या बिन अक्सम का क़ौल है कि मैं एक रात मामून रशीद के कमरे में सोया। आधी रात के वक़्त मुझे प्यास लगी। मामून अपने बिस्तर से उठा और पानी लाया और मुझे पिलाया। मैंने कहा, आपने किसी ख़ादिम को आवाज़ क्यों न दी? मामून ने कहा कि मेरे बाप ने अपने बाप से और उन्होंने अपने दादा से और उन्होंने उक़्बा बिन आमिर से सुना है कि हज़रत मुहम्मद सल्ल० ने फ़रमाया है कि क़ौम का सरदार उसका ख़ादिम होता है।

ख़लीफ़ा मामून रशीद के कामों और कारनामों में सब से ज़्यादा तारीफ़ के क़ाबिल काम यह है कि उस ने वली अह्द बनाने में बड़ी नेक नीयती का सबूत दिया और बाप की मुहब्बत छायी नहीं रही, जैसा कि उससे पहले के ख़लीफ़ा ग़लती करते रहे हैं और इस्लामी हुकूमत के लिए वली अह्दी के मुताल्लिक़ विरासत की लानत को मज़बूत बनाते रहे हैं। मामून रशीद ने इमाम अली रज़ा को अपना वली अह्द बनाकर अब्बासी ख़ानदान को बिल्कुल महरूम रख कर निहायत आज़ादी के साथ एक बेहतरीन शख़्स का चुनाव उसी नमूने पर किया था, जैसा कि सिद्दीक़े अक्बर ने हज़रत उमर फ़ारूक़ को अपना वली अह्द बनाया था।

इमाम अली रज़ा की वफ़ात ने मामून की इस ख़्वाहिश को पूरा न होने दिया। इसके बाद उसने अपने ख़ानदान में से अपने भाई अबू इस्हाक़ मोतसिम को वली अह्द बनाया और अपने बेटे अब्बास को, जो हर हुकूमत व ख़िलाफ़त की क़ाबिलियत रखता था, महरूम रखा। मोतसिम चूंकि अब्बास से भी ज़्यादा हुकूमत व सलतनत की काबिलियत रखता था, इसलिए उसने मोतसिम ही को चुना और अपने बेटे की क़तई परवा न की। मामून के पहले के ख़लीफ़ों ने एक नयी रस्म यह डाली थी कि एक नहीं दो-दो वली अह्दों को चुना जाए। मामून अगर उनकी बात मानता तो मोतसिम के बाद अपने बेटे अब्बास को नामज़द कर सकता था और इस तरह उसको इत्मीनान हो सकता था कि मोतसिम के बाद मेरा बेटा ख़लीफ़ा होगा, लेकिन उस ने इस नामाक़ूल हरकत को भी पसन्द नहीं किया। इस मामले में मामून रशीद की जितनी तारीफ़ की जाए, वह बहुत कम है।

मोतसिम बिल्लाह

अबू इस्हाक़ मोतसिम बिन हारून रशीद सन् १८० हि० में, जबकि खलीफ़ा हारून रशीद खुद रूमी शहरों की तरफ़ गया था, जबतरा नामी जगह पर पैदा हुआ था। हारून रशीद इससे बहुत मुहब्बत करता था। वह अपनी औलाद में जब कोई चीज तक़सीम करता, तो सबसे ज्यादा हिस्सा मोतसिम को दिया करता था। मोतसिम पढ़ा-लिखा बिल्कुल न था, हारून ने बहुतेरी कोशिश की, लेकिन उसने पढ़ के न दिया। वैसे पढ़े-लिखे लोगों की सोहबत में उठने-बैठने की वजह से उसकी जानकारी बहुत थी।

मोतसिम बहुत बहादुर और पहलवान था, वह फ़ौज को अच्छी तरह कमांड कर लेता था। मोतसिम अक्सर अपनी दो उंगलियों से आदमी के पहुंचे की हड्डी दबाकर तोड़ डाला करता था।

मस्अला 'खल्क़ कुरआन' के खब्त में वह अपने भाई मामून की तरह मुब्तला था। जिस तरह मामून ने उलेमा को इस मस्अले के बारे में तक्लीफ़ें पहुंचाई इसी तरह मोतसिम बिल्लाह अब्बासी ने भी उलैमा को तंग किया। हज़रत इमाम अहमद बिन हंबल को इसी खलीफ़ा ने इस मस्अले में ज्यादा से ज्यादा तक्लीफ़ें पहुचाईं।

मामून रशीद की खिलाफ़त के दौर में मोतसिम बिल्लाह शाम व मिस्र का गवर्नर था मामून रशीद ने जब रूमी इलाक़ों पर चढ़ाई की तो मोतसिम बिल्लाह ने अपनी बहदुरी के खूब-खूब जौहर दिखाए, इसी लिए मामून रशीद ने खुश होकर उसको अपना वली अह्द बनाया और अपने बेटे अब्बास को महरूम रखा।

मोतसिम बिल्लाह की खिलाफ़त की बैअत मामून की वफ़ात के दूसरे दिन १९ रजब सन् २१८ हि०, मुताबिक़ १० अगस्त सन् ८३३ ई० तरतूम नामी जगह पर हुई।

मोतसिम के वज़ीरे आज़म का नाम फ़ज़्ल बिन मरवान था।

———

कुछ अहम वाक़िए

☐ मुहम्मद बिन क़ासिम बिन अली बिन उमर बिन अली बिन हुसैन बिन अली बिन अबी तालिब ने खुरासान में खुफ़िया तरीक़े से बैअत लेकर अच्छी-भली ताक़त पैदा कर ली, तो बग़ावत कर दी। कई लड़ाई हुई और हर लड़ाई में मुहम्मद बिन क़ासिम की हार होती, यहां तक कि वह गिरफ़्तार हो गये। आठ महीने बाद ईदुल फ़ित्र के मौक़े पर वह मौक़ा पाकर क़ैद से निकल भागे और किसी को खबर न हुई।

☐ अब्बासी खलीफ़ों ने ईरानी फ़ौजियों पर ज्यादा भरोसा किया था। खलीफ़ा मोतसिम ने तुर्की गुलाम खरीद कर उनकी एक भारी फ़ौज तैयार कर ली। उसने फ़रग़ाना और उश्रूसना के इलाक़ों से तुर्कों को भर्ती कराया ये फ़ौजी इतनी बड़ी तायदाद में भर्ती किए गये कि तुर्की फ़ौज ईरानी फ़ौज के मुक़ाबले में बन गयी। अरबी क़बीले कम होते होते सिर्फ़ मिस्र व यमन के क़बीले की फ़ौज में बाक़ी रह गये थे। खलीफ़ा ने तमाम अरबी नस्ल दस्तों को मिलाकर एक फ़ौज अलग तैयार की और उसका नाम मुग़ारबा नहीं रखा।

खुरासानी फ़ौज को फ़राग़ना की दी गयी रियायतों का एहसास ज्यादा हुआ। चूंकि यह फ़ौज मोतसिम ने बड़े शौक़ से तैयार की थी, इसलिए हर क़िस्म की रियायतें भी उसे हासिल थीं, उसकी वर्दी क़ीमती और खूबसूरत थी, उसके घोड़े भी अच्छे थे, उनकी तंख्वाहें भी ज्यादा थीं, वज़ीफ़े भी ज्यादा थे, इसलिए खुरासानियों ने बग़दाद में उनसे लड़ाई-झगड़े भी शुरू कर दिए।

मोतसिम बिल्लाह ने यह रंग देखकर बग़दाद से नब्बे मील के फ़ासले पर दजला के किनारे नहर क़ातून के पास फ़राग़ना फ़ौज की छावनी क़ायम की, वहीं अपने रहने के लिए एक महल बनवाया, फ़ौज के लिए मकान बनवाए, बाज़ार व जामा मस्जिद वग़ैरह तमाम ज़रूरी बनवाकर और तुर्कों को आबाद करके खुद भी उस नये आबाद शहर में चला गया। इस शहर का नाम सामरा रखा गया, इस की तामीर २२० हि० में हुई और इसी साल सामरा ही को राजधानी बना दिया गया, इस तरह खिलाफ़त और खलीफ़ा पर अब तुर्कों का अमल दखल ज़्यादा

बढ़ गया।

☐ सन् २२० हि० में ही मुहम्मद बिन अली रज़ा बिन मूसा बिन काज़िम फ़ौत होकर बग़दाद में दफ़न किए गये।

☐ वज़ीरे आज़म फ़ज़्ल बिन मरवान की बद-दयानती की शिकायतें ख़लीफ़ा के कानों में पहुंचीं, तो उसने जांच करायी, दस लाख दीनार का ग़बन साबित हो गया। फ़ज़्ल बिन मरवान को गिरफ़्तार कर लिया गया और फ़ज़्ल की जगह मुहम्मद बिन अब्दुल मलिक को वज़ीरे आज़म मुक़र्रर किया, यह इब्ने ज़य्यात के नाम से मशहूर है।

☐ मोतसिम ही के ज़माने में बाबक ख़ुर्रमी जैसे योद्धा को अबू सईद सिपहसालार ने, जिसे मोतसिम ने मुक़र्रर किया था, हराया, इसका पूरे इलाक़े पर असर पड़ा और उस का असर आज़रबाईजान के इलाक़े से ख़त्म हो गया।

☐ मोतसिम के सिपाहसालारों में हैदर बिन काउस नामी सबसे बड़ा सिपहसालार था और यह तुर्क था। इस सिपहसालार ने अबू सईद की भरपूर मदद की और बाबक को जड़-बुनियाद से उखाड़ फेंका।

☐ बाबक ने घिर जाने के बाद क़ैसरे रूम से मदद भी मांगी थी। क़ैसरे रूम पर चढ़ाई की गयी और अमूरिया के मज़बूत क़िले को जीत लिया गया।

☐ अजीफ़ और हैदर (इफ़्शीन) दोनों तुर्क सरदारों में एक दूसरे के ख़िलाफ़ जलन पायी जाती थी। जब हैदर की इज़्ज़त ख़लीफ़ा की नज़र में बढ़ गयी तो अजीफ़ ने इसमें अपनी बे-इज़्ज़ती महसूस की और वह ख़लीफ़ा के ख़िलाफ़ मंसूबे बनाने लगा। उस ने मामून के बेटे अब्बास को भड़काया और बग़ावत पर आमादा कर लिया। ख़लीफ़ा मोतसिम को इसका पता चला तो उसने अब्बास, अजीफ़ और उनके दूसरे साथियों को चुन-चुन कर मरवा दिया।

सन् २२४ हि० में तबरस्तान के हाकिम ने बग़ावत की जो हैदर इफ़शीन की एक साज़िश थी। अब्दुल्लाह बिन ताहिर ने यह बग़ावत दबा दी और ख़लीफ़ा मोतसिम को हैदर इफ़शीन की इस साज़िश का पता भी दे दिया।

☐ हैदर इफ़्शीन ही के इशारे पर कुर्दिस्तान में भी बग़ावत हुई जिसे ख़लीफ़ा मोतसिम ने अपनी मुस्तैदी से कुचलवा दिया।

☐ आरमीनिया और आज़रबाईजान में भी बग़ावत ने सर उठाने

की कोशिश की, लेकिन सर उठने से पहले ही उसे कुचल दिया गया। यह भी हैदर इफ़्शीन ही की शरारत का नतीजा था।

□ ये बहुत-से वाक़िए जब ख़लीफ़ा को मालूम हुए तो उसे यक़ीन हो गया कि हैदर इफ़्शीन को सर पर चढ़ाने से उसमें सरकशी के बीज पनपने लगे हैं। इफ़्शीन ने भी महसूस कर लिया कि ख़लीफ़ा उससे अब ख़ुश नहीं है, वह राजधानी से इलाक़े में जाना चाहता था, जहां या तो सुकून की ज़िंदगी गुज़ारता या बाक़ायदा ताक़त जमा कर बग़ावत ही कर देता। ख़लीफ़ा को इस बात का भी पता चला गया और उसे गिरफ़्तार कर लिया, मुक़दमा हुआ, सज़ा हुई और उसे सूली की सज़ा दे दी गयी। यह वाक़िआ माह शाबान सन् २२६ हि० का है।

□ जब उसे हर तरफ़ से इत्मीनान हो गया, तो उन्दुलुस की तरफ़ रुख़ किया, जहां बनू उमैया की हुकूमत क़ायम थी। इसी दौरान ख़बर पहुंची कि अबू हर्ब यमानी ने, जो फ़लस्तीन में ठहरा हुआ था और अपने आप को बनू उमैया ख़ानदान का बताता था, अपने चारों तरफ़ एक लाख आदमी जमा कर लिए हैं और बग़ावत करना चाहता है।

अभी इस बग़ावत को कुचलने का इन्तिज़ाम हो ही रहा था कि सन् २२७ हि० में ३० रबीउल अव्वल को ख़लीफ़ा मोतसिम बिल्लाह ने वफ़ात पायी ख़लीफ़ा मोतसिम बिल्लाह के बाद उसका बेटा वासिक़ बिल्लाह अब्बासी ख़लीफ़ा बना और लोगों ने उसके हाथ पर बैअत की। मोतसिम के जनाज़े की नमाज़ वासिक़ बिल्लाह ने पढ़ायी और सामरा में दफ़न किया।

मोतसिम की ख़िलाफ़त पर एक नज़र

ख़लीफ़ा मोतसिम चूंकि ख़ुद पढ़ा-लिखा न था, इसके दौर में कोई इल्मी सरगर्मी न बढ़ी। मोतसिम को मुल्कों को जीतने और लड़ाइयां लड़ने का ज़्यादा शौक़ था। उसके ज़माने में रूम के इलाक़े जीते गये और काबुल और सीस्तान वग़ैरह इलाक़ों पर इस्लामी झंडा लहराया गया।

मोतसिम को इमारत बनाने का भी शौक़ था। एक हज़ार दीनार रोज़ाना उसके बावर्चीख़ाने का ख़र्च था।

मोतसिम को तुर्की ग़ुलामों के ख़रीदने और उनकी तायदाद बढ़ाने

का खास शौक़ था। उसने अपने खास-खास तुर्की गुलामों को बड़ी-बड़ी सिपहसालारियां सुपुर्द कर रखी थीं। उस के जमाने में तुर्कों ने बहुत तरक़्क़ी की और बहुत जल्द होसले वाले बनकर अपना हौसला दिखाने लगे। देखने में मोतसिम ने तुर्की फ़ौजों को बढ़ाने और तुर्कों को तरक़्क़ी देने में खुरासानियों का जोर घटाना चाहा था, जो इससे पहले अरबों के जोर को घटा और मिटा चुके थे, लेकिन बाद में यही तुर्क खिलाफ़ते अब्बासिया की बर्बादी की वजह बन गये। मोतसिम से यह ग़लती हुई कि उसने एक तीसरी क़ौम को ज़िंदा और ताक़तवर बनाया, हालांकि उसको चाहिए था कि वह अरबों को किसी क़दर सहारा देकर फिर खुरासानियों का मुक़ाबला करने वाले बना देता, लेकिन चूंकि उसके बाप-दादा शुरू ही से अरबों को अपना दुश्मन समझते थे इसलिए उसकी हिम्मत न हुई कि वह अपने खानदान की इस परंपरा को तोड़ देता।

तुर्कों को इतनी ताक़त पहुंचाने के बाद इन नव-मुस्लिम तुर्कों ने देखा कि खिलाफ़ते इस्लामिया की सबसे बड़ी जबरदस्त फ़ौज हम ही हैं तो वे बाद में खिलाफ़ते इस्लामिया का तख्ता उलट देने के सपने देखने लगे। खलीफ़ा मोतसिम अगरचे जाहिल था, मगर सूझ-बूझ रखता था, उसने तुर्कों को फ़ौज में भर्ती करने और ताक़तवर बनाने की राजनीति अपनायी थी, उसकी खराबी को दूर करने और खतरों को मिटा देने की उसमें पूरी क़ाबिलियत भी मौजूद थी। इसीलिए उसके सामने तुर्कों के हाथों से इस्लामी हुकूमत को कोई नुक़्सान नहीं पहुंच सका। अगर उसके जानशीन भी ऐसी ही सूझ-बूझ रखते या मोतसिम को ज्यादा मुद्दत तक खिलाफ़त व हुकूमत का मौक़ा मिलता, तो ये खराबियां जो बाद में पैदा हुईं न हो पातीं।

मोतसिम एक ऐसा खलीफ़ा था, जिस के साथ आठ की अदद खास ताल्लुक़ रखती है। वह सन् १८० हि० में पैदा हुआ, २१८ हि० में खलीफ़ा बना। मोतसिम खिलाफ़ते अब्बासिया का आठवां खलीफ़ा है। उसने ४८ साल की उम्र पायी। आठ लड़के और आठ लड़कियां छोड़ीं। उसने आठ वर्ष आठ महीने और आठ दिन खिलाफ़त की। उस ने आठ महल तामीर कराए। आठ बड़ी-बड़ी लड़ाइयां जीतीं। आठ बादशाह उसके दरबार में हाज़िर किए गये। आठ बड़े-बड़े दुश्मनों को उस ने क़त्ल कराया। आठ लाख दीनार, आठ लाख दिरहम, आठ हजार घोड़े, आठ

हज़ार गुलाम, आठ हज़ार लौंडियां उसने तर्के में छोड़ीं। रबीउल अव्वल के आठ दिन बाक़ी थे कि इन्तिक़ाल हो गया।

वासिक़ बिल्लाह

वासिक़ बिल्लाह बिन मोतसिम बिल्लाह बिन हारून रशीद की उर्फ़ियत अबू जाफ़र या अबुल क़ासिम थी। उसका असल नाम हारून था। यह २० शव्वाल सन् १९६ हि० में पैदा हुआ था। इसको इसके बाप मोतसिम बिल्लाह ने अपना वली अह्द बनाया था। मोतसिम की वफ़ात के बाद खिलाफ़त के तख्त पर बैठा। यह बहुत खूबसूरत गोरा-चिट्टा था, दाढ़ी घनी और खूबसूरत थी। यह बहुत बड़ा शायर और कलाकार था। अपने इसी इल्म व फ़ज़्ल से यह मामून से कम न था। इसीलिए इसको मामून सग़ीर (छोटा मामून) या मामून सानी (मामून द्वितीय) कहते थे।

मस्अला खल्क़ कुरआन के सिलसिले में यह भी अपने बाप की तरह खब्ती था। इस मामले में यह इस हद तक आगे बढ़ गया था कि अक्सर बड़े-बड़े उलेमा को सवाब समझ कर क़त्ल करा दिया।

आखिर उम्र में एक ऐसा वाक़िआ पेश आया कि मस्अला खल्के क़ुरआन के बारे में उसने अपनी तेज़ी कम या बिल्कुल खत्म कर दी। वह वाक़िआ यह था कि अबू अब्दुर्रहमान अब्दुल्लाह बिन मुहम्मद अज़वी, जो इमाम अबू दाऊद और नसई के उस्ताद थे, इस मस्अले में खलीफ़ा का साथ न देने की वजह से गिरफ़्तार कर लिये गये और दरबार में पेश हुए। वहां क़ाज़ी अहमद बिन अबी दाऊद, जो इस मस्अले की हिमायत में था मौजूद था उससे अब्दुर्रहमान ने सवाल किया कि तुम पहले मुझको यह बता दो कि प्यारे नबी सल्ल० को भी इसकी जानकारी थी या नहीं कि क़ुरआन मख्लूक़ है ?

क़ाज़ी अहमद ने कहा कि हां आंहज़रत सल्ल० को इसकी जानकारी थी।

अबू अब्दुर्रहमान ने फिर पूछा कि आंहज़रत सल्ल० ने लोगों को इस अक़ीदे की तालीम दी या नहीं ? क़ाज़ी अहमद ने कहा कि हज़रत मुहम्मद सल्ल० ने तो इसके बारे में कोई हुक्म नहीं फ़रमाया।

अबू अब्दुर्रहमान ने कहा कि जिस अक़ीदे की हज़रत मुहम्मद सल्ल० ने लोगों को तालीम नहीं दी और इल्म रखने के बाद भी लोगों को इसके मानने पर मजबूर नहीं किया, तुम उसके बारे में लोगों की ख़ामोशी को काफ़ी क्यों नहीं समझते ? और उनको क्यों इसके मानने पर मजबूर करते हो ?

यह सुनते ही वासिक़ बिल्लाह चौंक पड़ा और दरबार से उठ कर अन्दर चला गया और चारपाई पर लेट कर बार-बार यह कहता रहा कि जिस मामले में आंहज़रत सल्ल० ने ख़ामोशी अपनायी, हम उसमें सख़्ती कर रहे हैं।

फिर उसने हुक्म दिया कि अबू अब्दुर्रहमान को आज़ाद कर दो उसके वतन में आराम से पहुंचा दो और तीन सौ दीनार सुर्ख़ इनाम के तौर पर देदो।

इस दौर के कुछ अहम वाक़िए

☐ ख़लीफ़ा मोतसिम की वफ़ात की ख़बर मिलते ही दमिश्क़ ने बग़ावत वालों की राह अख़्तियार कर ली थी। वासिक़ बिल्लाह ने ख़बर मिलते ही रजा बिन अय्यूब को हुक्म दिया कि वह फ़ौरन इस बग़ावत को कुचले, चुनांचे वह अपनी फ़ौज लेकर दमिश्क़ पहुंचा। ज़बर-दस्त लड़ाई हुई और बग़ावत पर कन्ट्रोल पा लिया गया।

☐ वासिक़ बिल्लाह के दौर में अरबों पर तुर्कों का क़ब्ज़ा इस तरह बढ़ा कि हिजाज़ के क़बीलों में बेचैनी फैल गयी, तुर्कों ने उनके साथ बेहद ज़ुल्म किया और उन्होंने अरबों को ख़ूब अच्छी तरह ज़लील व रुसवा किया।

☐ शहर बग़दाद में अहमद बिन नस्र ने, जो ख़ल्क़े क़ुरआन का मुख़ालिफ़ था, शाबान सन् २३१ हि० को ख़िलाफ़ते अब्बासिया के ख़िलाफ़ बग़ावत कर दी। बग़दाद की पुलिस ने बड़ी मुस्तैदी दिखायी और उसे गिरफ़्तार कर लिया। फिर वासिक़ ने नस्र को अपने हाथ से क़त्ल किया।

☐ वासिक़ बिल्लाह के ज़माने में भी रूमियों से छेड़-छाड़ जारी रही। ख़लीफ़ा हारून रशीद के ज़माने में दो बार ईसाई और मुसलमान

क़ैदियों का तबादला हो चुका था और अब १० मुहर्रम २२१ हि० को तीसरी बार वासिक़ बिल्लाह के दौर में यह तबादला हुआ।

वासिक़ बिल्लाह की वफ़ात

वासिक़ बिल्लाह इस्तिस्क़ा के मरज़ में मुब्तला हुआ। उसके पूरे जिस्म पर वरम आ गया था। इलाज के लिए उसे तनूर में बिठाया गया, इससे मरज़ में कुछ कमी महसूस हुई। अगले दिन तनूर को कुछ ज़्यादा गर्म किया गया और पहले दिन के मुक़ाबले में ज़्यादा देर तक तनूर में बैठा रहा, जिसकी वजह से बुख़ार हो गया। तनूर से निकाल कर जब उसे रखा गया, तो उसी वक़्त उसकी जान निकल चुकी थी।

वासिक़ बिल्लाह के इंतिक़ाल के बाद उसके भाई जाफ़र बिन मोतसिम को ख़लीफ़ा बनाया गया और मुतवक्किल अलल्लाह का ख़िताब दिया गया। बैअत लेने के बाद सबसे पहले उसने वासिक़ की नमाज़े जनाज़ा पढ़ायी और दफ़न करने का हुक्म दिया।

वासिक़ बिल्लाह पांच वर्ष नौ महीने ख़लीफ़ा रहा। और ३६ वर्ष चार महीने की उम्र में १४ ज़िल हिज्जा सन् ३३२ हि० को बुध के दिन इन्तिक़ाल हुआ।

मुतवक्किल अलल्लाह

मुतवक्किल अलल्लाह बिन मोतसिम बिल्लाह बिन हारून रशीद का असल नाम जाफ़र और उफ़ियत अबुल फ़ज़ल थी। वह सन् २०७ हि० में पैदा हुआ था।

ख़लीफ़ा बनने के ठीक एक महीने के बाद उस ने मुहम्मद अब्दुल मलिक बिन ज़य्यात को वज़ीरे आज़म के ओहदे से हटा दिया और उसे क़ैद कर लिया गया। इसी हालत में सन् २३३ हि० की १५ रबीउल-अव्वल को आख़िरकार उसका इन्तिक़ाल हो गया।

सन् २३५ हि० में आज़रबाईजान में बग़ावत हो गयी और इस पर जल्द ही क़ाबू पा लिया गया। इस के बाद इसी साल ख़लीफ़ा

मुतवक्किल ने अपने बेटों मुहम्मद, तलहा और इब्राहीम को वली अह्दी के लिए लोगों से बैअत ली और यह तै किया कि मेरे बाद पहले मुहम्मद तख़्त व ताज का मालिक होगा, इस के बाद तलहा तख़्त पर बैठेगा, इसके बाद इब्राहीम ख़लीफ़ा बनेगा। मुहम्मद को मुस्तन्सिर का और तलहा को मोतज़ का ख़िताब दिया गया।

इसी साल यानी २३५ हि० में ख़लीफ़ा मुतवक्किल ने फ़ौज की वर्दी तब्दील की और कम्बलों के जुब्बे पहना कर बजाए पेटी के डोरी बांधने का हुक्म दिया।

मुतवक्किल का क़त्ल

ख़लीफ़ा मुतवक्किल ने अपने बेटे मुन्तसिर को पहला वली अह्द मुक़र्रर किया था। मुस्तन्सिर पर शीइयत ग़ालिब थी और वह वासिक़ और मोतसिम का अक़ीदा रखता था, लेकिन शरीअत का पाबन्द था, उलेमा की बड़ी क़द्र करता था और ख़ल्क़े क़ुरआन के मस्अले का सख़्त मुख़ालिफ़ था, शिर्क व बिदअत को मिटाने का पक्का इरादा कर चुका था बाप-बेटे में अक़ीदे का यह इख़्तिलाफ़ खिंचाव की वजह बना।

मुतवक्किल ने इरादा किया कि मुन्तसिर की जगह पर अपने दूसरे बेटे मोतज़ को पहला वली अह्द बना दे। ऐसा देख कर मुन्तसिर अपने बाप मुतवक्किल का दुश्मन हो गया।

इस से कुछ दिनों पहले मुतवक्किल ने कुछ तुर्क सरदारों से नाराज़ हो कर उन की जागीरें ज़ब्त कर ली थीं। वे सब मुन्तसिर से मिल गये और ख़लीफ़ा के क़त्ल की साज़िश तैयार कर ली।

एक दिन रात को मुस्तन्सिर और तमाम दरबारी एक-एक कर के जब उठ आए और ख़लीफ़ा अकेला मय फ़त्ह बिन ख़ाक़ान रह० गया तो क़ातिल पीछे से घुसे और ख़लीफ़ा और फ़त्ह बिन ख़ाक़ान दोनों को क़त्ल कर दिया। इन दोनों लाशों को वहीं छोड़ कर क़ातिल अपनी ख़ून भरी तलवारें लिए हुए रात ही को मुस्तन्सिर के पास पहुंचे और ख़िलाफ़त की मुबारकबाद दी। उसी वक़्त मुस्तन्सिर ने लोगों से बैअत ली।

यह वाक़िआ ४ शव्वाल सन् २४७ हि० का है।

ख़लीफ़ा मुतवक्किल चालीस साल की उम्र में चौदह वर्ष दस महीने तीन दिन ख़िलाफ़त कर के मक़्तूल हुआ।

मुतवक्किल के कुछ ज़रूरी हालात और अख़्लाक़

मुतवक्किल ने ख़लीफ़ा बनते ही सुन्नत को ज़िन्दा करने का बेड़ा उठाया था। सन् २३४ हि० में हदीस के तमाम माहिरों को राजधानी सामरा में बुलाया, और उन की बड़ी आवभगत की।

इस से पहले वासिक़ और मोतसिम के दौर में हदीस के माहिर एलानिया दर्स नहीं दे सकते थे, हदीसें नहीं बयान कर सकते थे। मुतवक्किल ने हुक्म दे दिया कि हदीस के माहिर लोग एलानिया दर्स दें और हदीसें बयान करें। मुतवक्किल की इन्हीं नीतियों से मुसलमान बहुत ही ख़ुश थे। मुतवक्किल ने क़ब्रपरस्ती ख़त्म करा दी। शीया उसके दुश्मन हो गये, इसलिए कि इमाम हुसैन रज़ि० की क़ब्र पर शिर्क की जो रस्में लोगों ने शुरू कर दी थीं, उनको उसने रुकवा दिया था।

मुतवक्किल बहुत सख़ी था। शायरों को उसने इतना इनाम दिया कि अब तक किसी ख़लीफ़ा ने इतना इनाम न दिया था।

मुतवक्किल के मक़्तूल होने के बाद किसी ने उसको सपने में देखा और पूछा, ख़ुदा ने आप के साथ कैसा बर्ताव किया? मुतवक्किल ने जवाब दिया कि मैंने जो थोड़ा बहुत सुन्नत को ज़िंदा करने काम किया है, उसके बदले में उसने मुझको बख़्श दिया।

एक बार मुतवक्किल ने उलेमा को अपने यहां तलब किया, जिनमें अहमद बिन मादल भी थे। जब सब उलेमा जमा हो गये तो उस जगह मुतवक्किल भी आया उसको आता हुआ देखकर सब उलेमा अदब से खड़े हो गये, मगर एक अहमद बिन मादल बैठे रहे और खड़े नहीं हुए। मुतवक्किल ने अपने वज़ीर उबैदुल्लाह से पूछा कि क्या इस शख़्स ने बैअत नहीं की है? उबैदुल्लाह ने कहा, बैअत तो की है, मगर उनको कम नज़र आता है। अहमद बिन मादल ने तुरन्त कहा कि मेरी आंखों में कोई नुक़सान नहीं है, मगर आप को अज़ाबे इलाही से बचाना चाहता हूं,

क्योंकि हदीस शरीफ़ में आया है कि जो शख्स लोगों से यह उम्मीद रखे कि वे उसके अदब में खड़े हों, तो वह अपना ठिकाना जहन्नम में बना ले।

मुतवक्किल यह सुनकर अहमद बिन मादल के बराबर आ बैठा।

यज़ीद महलबी कहते हैं कि एक दिन मुझसे मुतवक्किल ने कहा कि ख़लीफ़ा लोग सिर्फ़ अपना रौब बनाए रखने के लिए जनता पर सख़्ती करते थे, मगर मैं जनता के साथ इस लिए नर्मी का बर्ताव करता हूं कि वह राज़ी-ख़ुशी और खुले दिल के साथ मेरी ख़िलाफ़त को क़बूल कर मेरी इताअत करें। ख़लीफ़ा मुतवक्किल अलल्लाह शाफ़ई था और यह सबसे पहला ख़लीफ़ा था, जिसने शाफ़ई मज़हब अख़्तियार किया था।

मुस्तन्सिर बिल्लाह

मुस्तन्सिर बिल्लाह बिन मुतवक्किल अलल्लाह बिन मोतसिम बिल्लाह बिन हारून रशीद का असल नाम मुहम्मद और उफ़ियत अबू जाफ़र या अब्दुल्लाह थी। सन् २२३ हि० में सामरा नामी जगह पर पैदा हुआ। अपने मुतवक्किल को क़त्ल करा कर ४ शव्वाल सन् २४७ हि० को ख़लीफ़ा बना। अपने दोनों भाइयों मोतज़ और मोइद को, जो उसके बाप मुतवक्किल के वली अह्द मुक़र्रर किए हुए थे, वलीअह्दी से हटाया।

तुर्क दरबारे ख़िलाफ़त पर क़ाबू पाए हुए थे और हर दिन उन की ताक़त बढ़ रही थी, मुस्तन्सिर को तुर्कों ने ही ख़िलाफ़त के तख़्त पर बिठाया था, इस लिए वे और भी ज़्यादा आज़ादी के साथ हावी होते गये। मुन्तन्सिर यह देख कर कि तुर्कों की ताक़त हद से ज़्यादा बढ़ती जाती है और किसी दिन ये मेरी तबाही की वजह बनेंगे, उन की ताक़त और इक्तिदार के मिटाने पर मुस्तैद हो गया।

उस ने अपनी ख़िलाफ़त की छोटी-सी मुद्दत में भी शीयों पर बड़े एहसान किए। हज़रत हुसैन रज़ि० की क़ब्र पर लोगों को ज़ियारत के लिए आने की इजाज़त दे दी और अलवियों को हर क़िस्म की आज़ादी दे दी।

तुर्कों का ज़ोर देख कर जब उन का ज़ोर कम की तरफ़ मुतवज्जह हुआ तो तुर्क इसलिए कि ख़लीफ़ा मुस्तन्सिर अक़्लमंद भी था और बहादुर भी, उस से डरे और समझे कि वह अपनें इरादे में ज़रूर कामियाब हो जाएगा, इस लिए उन्होंने उसके डाक्टर इब्ने तैफ़ूर को तीस हज़ार दीनार

रिश्वत दी कि ज़हर में बुझे नश्तर से उस का फ़स्द खोले। चुनांचे ज़हर में बुझे नश्तर से उस की फ़स्द डाक्टर ने किसी बीमारी का इलाज करने के लिए खोल दी।

५ रबीउल आख़र सन २४८ हि० को छः महीने से भी कम ख़िलाफ़त कर के फ़ौत हुआ। मरते वक़्त कहता था कि ऐ मेरी मां! मुझ से दीन व दुनिया दोनों जाते रहे। मैं अपने बाप की मौत की वजह बना हूं और अब मैं उसके पीछे जाता हूं। किसरा ख़ानदान में एक आदमी शेरवेह नामी ने अपने बाप को क़त्ल किया था, वह भी छः महीने से ज़्यादा ज़िंदा न रहा था।

मुस्तईन बिल्लाह

मुस्तईन बिल्लाह बिन मोतसिम बिल्लाह बिन हारून रशीद का असल नाम अहमद और उफ़ियत अबुल अब्बास थी। ख़ूबसूरत गोरे रंग का आदमी था, चेहरे पर चेचक का दाग़ और तोतला था, २२१ हि० में पैदा हुआ था। जब मुस्तन्सिर फ़ौत हो गया तो सरदार जमा हुए कि अब किस को ख़लीफ़ा बनाया जाए। मुतवक्किल के बेटों में मोतज़ और मोईद मौजूद थे, लेकिन तुर्कों को उन की तरफ़ से ख़तरा था और तुर्कों ही ने उन को वली अह्दी से हटा भी दिया था, इस लिए मोतसिम बिल्लाह के बेटे अहमद को तख़्त पर बिठाया गया और मुस्तईन बिल्लाह उस का ख़िताब तजवीज़ हुआ। ६ रबीउल आख़िर सन २४८ हि० को तख़्त पर बैठा।

मुस्तईन के दौर में तुर्कों और ख़ुरासानियों की आपसी रस्साकशी ने मुस्तईन की पोज़ीशन कमज़ोर कर दी, तुर्कों ने मोतज़ को अपना ख़लीफ़ा चुन लिया, मुस्तईन और मोतज़ की फ़ौजों में ज़बरदस्त लड़ाई हुई। आख़िर ६ मुहर्रम सन् २५२ हि० में मुस्तईन बिल्लाह ने मोतज़ बिल्लाह के पास एक तह्रीर भेज दी, जिस में मोतज़ बिल्लाह की ख़िलाफ़त को तस्लीम कर के ख़ुद ख़िलाफ़त से अलग होना ज़ाहिर किया था। ख़लीफ़ा मोतज़ ने बग़दाद में दाख़िल हो कर ख़लीफ़ा मुस्तईन को वासित की तरफ़ नज़रबन्द कर के भेज दिया। वहां मुस्तईन नौ महीने तक एक अमीर की हिरासत में रहा, फिर सामरा में वापस चला आया और ३ शव्वाल २५२

हि० को खलीफ़ा मोतज के इशारे से क़त्ल किया गया।

मोतज़ बिल्लाह

मोतज बिल्लाह मुतवक्किल बिन अलल्लाह बिन मोतसिम बिल्लाह बिन हारून रशीद सन २३२ हि० में सामरा में पैदा हुआ। मुहर्रम २५१ हि० में खलीफ़ा बनाया गया।

मोतज जब खलीफ़ा बना है तो उसकी उम्र १६ साल की थी।

मोतज को चूंकि तुर्कों ने बिठाया था, इसलिए वह तुर्कों से बिल्कुल ही घिरा हुआ था और उस पर उन्हीं का हुक्म चल रहा था।

रजब महीने में सन २५२ हि० में खलीफ़ा मोतज ने अपने भाई मोईद को वली अह्दी से हटा दिया और जेलखाने भेज कर क़त्ल करा दिया।

इसी साल फ़ौज के तुर्कों और अरबों में फ़साद हुआ, खूब लड़ाइयां चलीं, अरबों का साथ बग़दाद वालों ने दिया, मगर तुर्कों ने धोखे से अरबों और उन के सरदारों को क़त्ल कर दिया या वतन छोड़ने पर मजबूर कर दिया।

इसी साल खलीफ़ा मोतज ने हुसैन बिन अबी दवारिब को चीफ़ जस्टिस मुक़र्रर किया।

चूंकि खिलाफ़त का रोब अब उठ चुका था, इस लिए जगह-जगह सूबेदारों ने अपने आप को खुद मुख्तार समझना शुरू कर दिया और खारजियों और अलवियों ने बग़ावत शुरू कर दी। मुसावर बिन अब्दुल्लाह बिन मुसावर बुजली खारजी ने मूसल सूबे पर क़ब्ज़ा कर के अपनी खुद मुख्तारी का एलान किया और जो सरदार खलीफ़ा की तरफ़ से उस के मुक़ाबले को गया, उसे हरा कर भगा दिया।

इसी तरह अहमद बिन तोलोन मिस्र की हुकूमत पर खूब मज़बूती से क़ायम हो गयी और फिर उस की औलाद वारिस की हैसियत से मिस्र पर पर क़ायम रही। उन्हों ने अपना सिक्का भी मिस्र में चला दिया, ग़रज़ २५३ हि०से मिस्र को भी खिलाफ़ते अब्बासिया से अलग ही समझना चाहिए या कम से कम यह समझना चाहिए कि २५३ हि० से मिस्र में तोलोनियों की हुकूमत की शुरूआत हुई।

ऐसे ही याक़ूब बिन लैस सफ़्फ़ार और उस का भाई सजिस्तान में तांबे और पीतल के बर्तनों की दुकानें करते थे, चूंकि उस ज़माने में खिला-फ़त के कमज़ोर हो जाने की वजह से जगह-जगह बग़ावतें और सरकशियां ज़ाहिर हो रही थीं, इस लिए खारजियों ने भी बग़ावत की, अलवियों ने भी बग़ावत की। याक़ूब बिन लैस अलवियों के साथ शामिल हो गया, यहां तक कि उस ने होशियारी और बहादुरी दिखा कर संजिस्तान पर अपना पूरा क़ब्ज़ा कर लिया। २५५ हि० में उसने शीराज़ पर भी क़ब्ज़ा कर लिया। यहां सफ़्फ़ारियों की एक मुस्तक़िल हुकूमत क़ायम हो गयी, जो ताहिरिया हुकूमत से बिल्कुल अलग थी।

मोतज़ बिल्लाह की मौत

खलीफ़ा मोतज़ तुर्क सरदारों के क़ब्ज़े में था, वे जो चाहते थे करते थे। खज़ाना बिल्कुल खाली हो गया था, बड़े-बड़े सरदारों ने खज़ाने पर खुद क़ब्ज़ा कर लिया था। फ़ौज के आदमी खलीफ़ा पर अपने वज़ीफ़ों का तक़ाज़ा करते थे, खलीफ़ा सख्त मजबूर था। आखिर एक दिन तुर्कों ने अमीरुल मोमिनीन के दरवाज़े पर जमा हो कर खूब शोर व गुल मचाया और मांग की कि हम को कुछ दिलवाइए, वरना हम सालेह बिन वसीफ़ को जो आजकल आप पर क़ब्ज़ा किए हुए है, क़त्ल कर डालेंगे।

सालेह बिन वसीफ़ एक तुर्क सरदार था। खलीफ़ा उस से बहुत ही डरता था। इस हंगामे को देख कर मोतज़ अपनी मां के पास गया कि कुछ माल हो तो इस हंगामे को दबाइूं। उस ने देने से इंकार कर दिया।

इधर तुर्कों ने सालेह बिन वसीफ़ और दूसरे सरदारों को अपना शरीक बना लिया और वे सब हथियारों से लैस हो कर आए और शाही महल को घेर लिया, मोतज़ को बुलाया। खलीफ़ा मोतज़ ने कहला भेजा कि मैंने दवा पी है, बीमार और बहुत कमज़ोर हूं, बाहर नहीं आ सकता।

यह सुन कर तुर्क महल में ज़बरदस्ती घुस गये और खलीफ़ा मोतज़ की टांग पकड़ कर घसीटते हुए बाहर लाए, उस को मारा, गालियां दीं, और मकान के सेहन में नंगे सर धूप में खड़ा कर दिया, फिर हर एक शख्स जो गुज़रता था, उस के मुंह पर तमांचा मारता था, यहां तक कि जब खलीफ़ा की बे-इज़्ज़ती हद से आगे बढ़ गयी तो उस से कहा कि अपनी

खिलाफ़त से हट जाओ। मोतज़ ने उस से इन्कार कर दिया, तो तमाम सरदार और दरबारी बुलाए गए, एक तहरीर तैयार हुई, उस पर सब ने दस्तखत किए, यहां तक कि मोतज़ को हटा कर उसे एक तहखाने में बन्द कर दिया गया, वहीं उस का दम निकल गया।

यह वाक़िया रजब महीने २५५ हि० का है और मोतज़ की मौत ८ शव्वाल २५५ हि० को हुई।

इस के बाद लोगों ने बग़दाद से मोतज़ के चचेरे भाई मुहम्मद बिन वासिक़ को बुला कर तख्त पर बिठाया और मुह्तदी बिल्लाह का खिताब दिया। खलीफ़ा मोतज़ की मां अपने बेटे की गिरफ़्तारी और बे-हुर्मती का हाल देख कर एक सुरंग के रास्ते भाग गयी और सामरा में किसी जगह छिप गयी थी। जब मोह्तदी खलीफ़ा हो गया, तो उस के वज़ीर ने उस के माल व दौलत का पता लगाया तो उस के पास से एक करोड़ तीन लाख दीनार और उस से बहुत ज़्यादा के जवाहरात निकले, हालांकि पचास हज़ार दीनार मोतज़ मांगता था और इतने ही में फ़ौज का हंगामा खत्म हो सकता था। सालेह ने उस की मां के तमाम माल व अस्बाब पर क़ब्ज़ा कर के कहा कि इस कम-बख्त औरत ने पचास हज़ार दीनार के एवज़ अपने बेटे को क़त्ल करा दिया, हालांकि इस के क़ब्ज़े में करोड़ों दीनार थे। इस के बाद सालेह ने मां को मक्का की तरफ़ भेज दिया, वह मोतमद के तख्त पर बैठने तक मक्का में रही, फिर सामरा में चली आयी और सन २६४ हि० में मर गयी।

मुहतदी बिल्लाह

मुह्तदी बिल्लाह बिन वासिक़ बिल्लाह बिन मोतसिम बिल्लाह बिन हारून रशीद का असल नाम मुहम्मद और उफ़ियत अबू इस्हाक़ थी। २१८ हि० में पैदा हुआ ३७ साल की उम्र में २६ रजब सन० २५५ हि० में तख्त पर बैठा। गेहुवां रंग, दुबला-पतला खूबसूरत, इबादत गुज़ार, इंसाफ़ पसन्द और बहादुर आदमी था। अल्लाह के हुक्मों को रिवाज देने की बड़ी कोशिश करता था। तख्त पर बैठने के वक़्त से मक़्तूल होने तक बराबर रोज़ा रखता रहा, मगर उस को कोई मददगार न मिला। उस ने ऐसा खराब दौर पाया कि खिलाफ़ते इस्लामिया की इज़्ज़त व विक़ार को

दोबारा वापस लाना बहुत कठिन था।

हाशिम बिन क़ासिम कहते हैं कि रमज़ान में शाम के वक़्त मुह्तदी के पास बैठा था। जब मैं चलने लगा तो मोह्तदी ने कहा, बैठ जाओ, मैं बैठ गया। फिर हमने इफ़्तार किया, नमाज़ पढ़ी और मोह्तदी ने खाना तलब किया तो एक बेद की डलिया में खाना आया। उस में पतली-पतली रोटियां थीं। एक प्याली में थोड़ा-सा नमक, दूसरी में सिरका और तीसरे बरतन में ज़ैतून का तेल था। मुझ से भी खाने को कहा। मैं ने खाना शुरू किया। और दिल में सोचा कि खाना अभी आता होगा, इस लिए बहुत धीरे-धीरे खाना शुरू किया। मुह्तदी ने मेरी तरफ़ देख कर कहा, क्या तुम्हारा रोज़ा न था? फिर पूछा कि क्या कल रोज़ा न रखोगे? मैंने कहा, रमज़ान का महीना है, रोज़ा क्यों न रखूंगा? कहा, फिर अच्छी तरह खाओ और यह उम्मीद न रखो कि और खाना आता होगा, क्योंकि इस के सिवा और खाना हमारे यहां नहीं है।

मैं ने ताज्जुब से कहा कि अमीरुल मोमिनीन! यह क्या मामला है? अल्लाह तआला ने आप को तमाम नेमतें दे रखी हैं। मुह्तदी ने कहा, 'हां, यह सच है, पर मैं ने विचार किया तो बनू उमैया में हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ को पाया कि वह कम खाने और जनता को राहत पहुंचाने की चिन्ता से बहुत ही कमज़ोर हो गये थे। फिर मैं ने अपने खानदान पर ग़ौर किया तो मुझ को बड़ी शर्म आयी कि हम लोग बनी हाशिम हो कर उन की तरह भी न हों। इसीलिए मैं ने यह तरीक़ा अपनाया जो तुम देख रहे हो।'

मोह्तदी ने खेल-तमाशे को सख़्ती से रोक दिया था, गाने-बजाने को हराम क़रार दिया था, अपने कर्मचारियों को ज़ुल्म करने से सख़्ती से मना किया था। दफ़्तर के मामलों में सख़्ती से काम लेता था, ख़ुद हर दिन इजलास करता, दरबारे आम में मुक़दमों का फ़ैसला करता, मुंशियों को अपने सामने बिठा कर हिसाब-किताब करता था।

मुह्तदी बिल्लाह को भी तुर्कों ही ने ख़िलाफ़त पर बिठाया था। सालेह बिन वसीफ़ ने, जो तुर्कों में सब से ज़्यादा ताक़तवर हो रहा था, मुह्तदी बिल्लाह को तख़्त पर बिठाने के बाद ही अहमद बिन इस्राईल, ज़ैद बिन मोतज़ बिल्लाह अबू नूह को गिरफ़्तार कर के क़त्ल कर दिया और उनके माल व अस्बाब को ज़ब्त कर लिया। फिर हसन बिन मुख़ल्लद को भी गिरफ़्तार कर के उन का माल व अस्बाब ज़ब्त कर लिया।

ख़लीफ़ा मुह्तदी बिल्लाह को जब इन हालात की इत्तिला हुई, तो बहुत दुख हुआ और कहा कि इन लोगों के लिए क़ैद ही की मुसीबत क्या कम थी, जो इन को ना-हक़ क़त्ल किया गया।

इसके बाद ख़लीफ़ा मुह्तदी बिल्लाह ने सामरा से तमाम लौंडियों और नचनियों को निकलवा दिया, महल के दरिंदे और कुत्ते निकाल दिए गए। वज़ीरे आज़म सुलैमान बिन वह्ब को बनाया, लेकिन सालेह बिन वसीफ़ ने अपनी चालों से सुलेमान बिन वह्ब को अपने क़ाबू में कर लिया और ख़ुद हुकूमत करने लगा। मोतज़ के अलग किए जाने और मुह्तदी की तख़्तनशीनी के वक़्त मूसा बिन बग़ा राजधानी में मौजूद न था। वह रे की तरफ़ गया हुआ था। उसे जब यह तब्दीली मालूम हुई तो वह मोतज़ के ख़ून का बदला लेने के लिए राजधानी आया।

सालेह मूसा की ख़बर सुन कर छिप गया।

मूसा ख़लीफ़ा के पास अन्दर गया। उस ने आते ही ख़लीफ़ा को गिरफ़्तार करके और एक ख़च्चर पर सवार करा कर क़ैदख़ाने में ले जाना चाहा। मुह्तदी ने कहा कि मूसा ख़ुदा से डर, आख़िर तेरी नीयत क्या है? मूसा ने कहा, मेरी नीयत सही है, आप सालेह की तरफ़दारी छोड़ दीजिए, इस के बाद उस ने बैअत कर ली।

फिर सालेह का पता लगा कर उस ने उसे क़त्ल करा दिया और उस का सर नेज़े पर रख कर शहर में घुमाता फिरा। मुह्तदी को यह बात बहुत नागवार गुज़री मगर तुर्कों की ताक़त के मुक़ाबले ख़लीफ़ा कुछ न कर सकता था, बहरहाल बात बिगड़ती चली गयी और तुर्कों ने ख़लीफ़ा को घेर लिया और मार डाला।

यह हादसा १४ रजब २५६ हि० को हुआ।

ख़लीफ़ा मुह्तदी बिल्लाह ने पन्द्रह दिन कम एक साल ख़िलाफ़त की और ३८ साल की उम्र में क़त्ल किया गया। इस के बाद तुर्कों ने अबुल अब्बास अहमद बिन मुतवक्किल को तख़्त पर बिठाया, उस के हाथ पर बैअत की और मोतमद अलल्लाह का लक़ब तज्वीज़ किया।

मोतमद अलल्लाह

मोतमद अलल्लाह बिन मुतवक्किल अलल्लाह बिन मोतसिम

बिल्लाह बिन हारून रशीद सन् २२१ हि० में एक रूमी बांदी क़तमान के पेट से पैदा हुआ था। खलीफ़ा मोतमद ने उबैदुल्लाह बिन यह्या बिन खाक़ान को मंत्री का ओहदा दिया था। यह उबैदुल्लाह सन् २६३ हि० में घोड़े से गिर कर मरा और फिर मुहम्मद बिन मुखल्लद मंत्री बना।

अलवियों की बग़ावत

सन् २५६ हि० में इब्राहीम बिन मुहम्मद बिन यह्या बिन अब्दुल्लाह बिन मुहम्मद बिन हनफ़िया बिन अली बिन अबी तालिब, जो इब्ने सूफ़ी के नाम से मशहूर हुए थे, उन्होंने मिस्र में और अली बिन ज़ैद अलवी ने कूफ़ा में अब्बासियों के खिलाफ़ बग़ावत की।

इब्ने सूफ़ी को मिस्र में कई हंगामों और लड़ाइयों के बाद नाकामी का मुंह देखना पड़ा। मक्का भाग कर चला आया, लेकिन वहां गिरफ़्तार कर लिया गया और इसे मिस्र भेजा गया। फिर रिहा हुआ और मदीना आकर यहीं वफ़ात पायी।

अली बिन ज़ैद ने कूफ़ा में बग़ावत कर के वहां के हाकिम को मार भगाया और क़ब्ज़ा कर लिया। खलीफ़ा ने केजूर नामी सरदार को भेजा, अली बिन ज़ैद हारा, गिरफ़्तार कर लिया गया।

हुसैन बिन ज़ैद अलवी ने रे पर क़ब्ज़ा कर लिया और मूसा बिन बग़ा उस के मुक़ाबले को खड़ा हुआ।

अली नामी एक शख्स ने अपने आप को अलवी ज़ाहिर कर के बहुत सी जगहों पर फ़ित्ना पैदा करने की कोशिश की। यह अलवी न था, आखिर बग़दाद में उसने कुछ गुलामों को अपने साथ मिलाया और उन को साथ लेकर बसरा गया, वहां पहुंच कर उस ने एलान किया कि जो ज़ंगी गुलाम मेरे पास चला आएगा, वह आज़ाद है। इस एलान को सुन कर ज़ंगी गुलामों की एक भीड़ उस के चारों तरफ़ जमा हो गयी, यहां तक कि ज़ंगियों की एक फ़ौज तैयार हो गयी, उसने बसरा पर क़ब्ज़ा कर लिया, बसरा के अलावा एला व अह्वाज़ पर भी उन का क़ब्ज़ा हो गया। बार-बार तुर्की सरदार फ़ौज ले-ले कर आते और हर बार हार-हार कर वापस गये, आखिर सईद बिन सालेह ने ज़ंगियों को हरा कर बसरा से निकाला, मगर ज़ंगियों ने १५ शव्वाल २५७ हि० को तलवार के बल पर बसरा

पर क़ब्ज़ा हासिल कर के उसमें आग लगा दी, बड़ी-बड़ी इमारतें जल गयीं, लूट-मार का बाज़ार गर्म कर दिया, जो सामने आया, क़त्ल किया गया।

ख़लीफ़ा ने फिर फ़ौज भेजी। कई बार हारने के बाद मूफ़िक़ ने ज़ंगियों को हराया, लेकिन इस हार के बाद यह न समझा जाए कि ज़ंगियों का फ़ित्ना ख़त्म हो गया। उन्होंने फिर ताक़त जमा कर के क़त्ल व ग़ारत का बाज़ार गर्म किया और सन् २७० हि० तक इसी तरह बसरा और इराक़ के अक्सर हिस्सों पर क़ाबिज़ रहे।

मूसल की बग़ावत

मोतमद ने मूसल की गवर्नरी पर एक तुर्क सरदार असातगीन को मुक़र्रर फ़रमाया। तुर्कों ने मूसल वालों पर ज़ुल्म व ज़्यादती शुरू की। नतीजा यह हुआ कि मूसल वालों ने यह्या बिन सुलैमान को अपना अमीर व हाकिम बना लिया और तुर्कों को मार कर निकाल दिया।

ख़लीफ़ा को इस बग़ावत का हाल मालूम हुआ, तुर्कों की फ़ौज भेजी गयी, सख़्त लड़ाइयां हुईं मगर अंजाम यह हुआ कि ख़लीफ़ा की फ़ौज यानी तुर्कों को नाकामी हुई और मूसल में यह्या बिन सुलैमान की हुकूमत क़ायम हो गयी।

यह वाक़िआ सन् २६० हि० और २६१ हि० का है। इसी साल याक़ूब सफ़्फ़ार ने पूरे फ़ारस प्रांत पर क़ब्ज़ा कर लिया। ख़ुरासान पहले ही उस के क़ब्ज़े में आ चुका था।

सामानी ख़ानदान की हुकूमत

सामानी ख़ानदान का हाल तो तफ़्सील से आगे आएगा लेकिन तर्तीब के लिहाज़ से यहां उसका थोड़ा ज़िक्र ज़रूरी मालूम होता है।

असद बिन सामान ख़ुरासान के एक नामी और इज़्ज़तदार ख़ानदान का शख़्स था। उस के चार बेटे थे—१. नूह, २. अहमद, ३. यह्या, ४. इलयास।

मामून के ज़माने में ये सभी मर्व में रहते थे। फिर मामून ने इन चारों भाइयों को अच्छे-अच्छे ओहदों पर मुक़र्रर किया। इनके मरने के बाद इनके बेटों को ये ओहदे दिए गये। नस्र अहमद का बड़ा लड़का था, जिसे बाप के इन्तिक़ाल के बाद समरकंद का हाकिम बनाया गया था।

लेकिन ख़ुरासान के क़ब्ज़े से निकल जाने और याक़ूब सफ़्फ़ार के क़ब्ज़े में चले जाने की वजह से ख़लीफ़ा ने मुनासिब समझा कि कम से कम इलाक़ा मवराउन्नह्र ही पर हमारी सरदारी क़ायम रहे, इसलिए सीधे ख़लीफ़ा ने नस्र को गवर्नर बना दिया और लिखा कि याक़ूब सफ़्फ़ार से इस मुल्क की हिफ़ाज़त करो। नस्र ने अपने भाई इस्माईल को बुख़ारा की सरदारी दे दी और ख़ुद समरकंद में हुकूमत करता रहा।

वली अहदी की बैअत

२६१ हि० के शव्वाल के महीने में ख़लीफ़ा मोतमद ने एक दरबारे आम किया और दरबार के तमाम मेंबरों के सामने इस बात का एलान किया कि मेरे बाद मेरा बेटा जाफ़र वली अह्द है लेकिन अगर मेरी वफ़ात तक जाफ़र बालिग़ न हो, तो फिर मेरा भाई अहमद मूफ़िक़ ख़िलाफ़त का हक़दार होगा और उस के बाद जाफ़र ख़िलाफ़त का हक़दार समझा जाएगा।

जाफ़र को मुफ़व्विज़ अलल्लाह का ख़िताब दिया गया और अफ़रीक़ा, मिस्र, शाम, जज़ीरा, मूसल, आरमीनिया को हुकूमत दी गयी। मूसा बिन बग़ा को उसका नायब मुक़र्रर किया गया। मूफ़िक़ को नासिरुद्दीनिल्लाह अल-मूफ़िक़ का ख़िताब देकर पूर्वी इलाक़े बग़दाद, कूफ़ा, तरीक़े मक्का, यमन, कस्कर, अह्वाज़, फ़ारस, अस्फ़हान, रे, ज़ंजान और सिंध की हुकूमत अता की।

इन दोनों वली अह्दों के लिए दो सफ़ेद झंडे बनाए गए।

वली अह्दी की इस बैअत के बाद ख़लीफ़ा मोतमद ने अपने भाई मूफ़िक़ को ज़ंगियों का दमन करने पर लगाया।

———

ज़ंगियों की जड़ कटी

ज़ंगियों की बार-बार बग़ावत और लड़ाई में सरकारी फ़ौज का बार-बार हारना कोई मामूली बात न थी। लगभग दस साल हो गये थे कि ज़ंगी बराबर शाही फ़ौज और नामी सरदारों को नीचा दिखा रहे थे और शहरों के अम्न को ग़ारत कर चुके थे। एक-एक ज़ंगी ने दस-दस पन्द्रह-पन्द्रह अलवी व हाशिमी औरतें अपने क़ब्ज़े में रख छोड़ी थीं। और ख़बीस नामी उनके सरदार मिंबरों पर चढ़ कर ख़ुलफ़ा-ए-राशिदीन अह्ले बैत और पाक बीवियां सबको गालियां देते थे। बहबूद ने ग़ैब की बातें जानने का दावा किया था, रिसालत का भी दावेदार था, ये सब लगभग एक करोड़ मुसलमानों को क़त्ल कर चुके थे। तुर्कों की बहादुरी के घमंड को भी उन्होंने ख़ाक में मिला दिया था। तुर्क उनके नाम से कांपते थे।

आख़िर ख़लीफ़ा मोतमद के भाई मूफ़िक़ ने अपने बेटे अबुल अब्बास मोतज़िद को ज़ंगियों से लड़ने पर २६६ हि० के रबीउस्सानी के महीने में मुक़र्रर किया। वासित के क़रीब एक सख़्त लड़ाई के बाद ज़ंगियों को ज़बरदस्त हार हुई। इसके बाद तो ज़ंगी बराबर ही हारते ही रहे, यहां तक कि चार साल तक लगातार लड़ते रहने के बाद सन २७० में ज़ंगियों का सरदार ख़बीस मारा गया और फ़ित्ना पूरी तरह कुचल दिया गया।

मूफ़िक़ की वफ़ात

ख़लीफ़ा मोतमद बिल्लाह नाम का ख़लीफ़ा रह गया था, उस का भाई मूफ़िक़ अपनी बहादुरी और अक़्लमंदी की वजह से हुकूमत की तमाम बातों पर हावी और क़ाबिज़ हो गया था और यों समझना चाहिए की मूफ़िक़ ही ख़िलाफ़त कर रहा था, अगरचे वह बाक़ायदा ख़लीफ़ा न था, सिर्फ़ अमीरुल उमरा था।

जैसा कि पहले लिखा जा चुका है कि इस से पहले तुर्क सरदार

दरबारे खिलाफ़त पर क़ाबिज़ रहते थे और एक ज़माने से स्याह व सफ़ेद के मालिक चले आते थे। मूफ़िक़ ने क़ाबू पा कर इन तुर्क सरदारों का ज़ोर तोड़ दिया।

चूंकि मूफ़िक़ ने ज़ंगियों का ज़ोर तोड़ कर उन को नेस्त व नाबूद कर दिया था, इस लिए उस की और उस के बेटे मोतज़िद की क़ुबूलियत मुसलमानों में बहुत बढ़ गयी थी। तुर्क सरदार ज़ंगियों के मुक़ाबले में हमेशा नाकाम रहे हैं, इस लिए उन को भी मूफ़िक़ की मुखालफ़त का हौसला न रहा था।

मगर चूंकि हुकूमत की चूल-चूल पहले ही ढीली हो चुकी थी और आब व हवा बिगड़ चुकी थी, इसलिए इतना अराजकता का बाज़ार ज़्यादा ज़्यादा गर्म होता चला गया और उन सरकश ताक़तों को जो अर्से से परवरिश पा रही थीं और अब अपनी-अपनी जगह खुद-मुख्तारी का एलान करती हुई उठ खड़ी हुई थीं, दबाया न जा सका, फिर भी मूफ़िक़ का वजूद राजधानी में बहुत ग़नीमत था और किसी को इतनी हिम्मत न हो सकी थी कि खुद खलीफ़ा की सरदारी से इंकार कर सके या खुत्बे में खलीफ़ा का नाम न ले।

मूफ़िक़ जब फ़ारस और अस्फ़हान से बग़दाद वापस आया, तो बीमार हो गया। बहुत इलाज किया, लेकिन आराम न हुआ। २२ सफ़र सन २७८ हि० को फ़ौत हो कर रसाफ़ा में दफ़न हुआ, मगरचे खलीफ़ा मोतमद मौजूद था, पर उस की हैसियत एक क़ैदी से ज़्यादा न थी, असल खलीफ़ा मूफ़िक़ ही था। अब मूफ़िक़ के मरने के बाद दरबारियों ने ज़ोर डाला कि अबुल अब्बास मोतज़िद को मूफ़िक़ की जगह वली अह्द बनाया जाए इसलिए और खलीफ़ा मोतमद ने मोतज़िद की वली अह्दी का एलान कर के मोतज़िद को मूफ़िक़ का क़ायम मक़ाम बना दिया।

मोतज़िद चूंकि खूब तजुर्बेकार और बहादुर शख्स था, इस लिए वह हुकूमत के तमाम मामलों पर हावी हो गया और खलीफ़ा मोतमद फिर अपनी इसी हालत में मजबूर व मुअत्तल रहा।

क़रामता

२७८ हि० में कूफ़ा की धरती पर एक आदमी हमदान नामी उर्फ़

क़रामता ने एक नया धर्म जारी किया। यह एक कट्टर शीया था। उस का अक़ीदा था कि इमाम सिर्फ़ सात हैं—१. इमाम हुसैन रज़ि०. २. अली ज़ैनुल आबिदीन, ३. बाक़र बिन अली, ५. जाफ़र सादिक़ ५. इस्माईल बिन जाफ़र, ६. मुहम्मद बिन इस्माईल, ७. उबैदुल्लाह बिन मुहम्मद ! अपने आपको वह उबैदुल्लाह बिन मुहम्मद बिन इस्माईल का नायब कहता था, हालांकि उबैदुल्लाह नामी कोई बेटा मुहम्मद बिन इस्माईल का नहीं था, मुहम्मद बिन हनफ़ीया बिन अली बिन अबी तालिब को वह रसूल कहता था, बैतुल मक़्दिस को क़िबला क़रार दिया था, दिन-रात में सिर्फ़ दो नमाज़ें रखी थीं यानी दो रक्अत सूरज निकलने से पहले और दो रक्अत सूरज डूबने के बाद। वह कहता था कि कुछ सूरतें मुहम्मद बिन हनफ़ीया पर नाज़िल हुई हैं। जुमा के बजाए दोशंबा के दिन हफ़्ते में वह बरकत वाला दिन समझता था और उस दिन कोई काम न करता था। साल भर में दो रोज़े फ़र्ज़ समझता था। नबीज़ को हराम और शराब को हलाल कहता था। पाकी के नहान को ग़ैर-ज़रूरी समझता था। कुछ जानवरों को उसने हलाल और कुछ को हराम क़रार दिया था। जो शख़्स क़रामता का मुख़ालिफ़ हो, उस का क़त्ल करना वाजिब ठहराया था, अपना लक़ब उस ने क़ाइम बिल हक़ रखा था।

उसके इन अक़ीदों की वजह से कूफ़ा के हाकिम ने उसको गिरफ़्तार कर के जेलख़ाना भिजवा दिया।

इत्तिफ़ाक़ की बात कि पहरेदारों की ग़फ़लत से वह जेलख़ाने से निकल भागा। उस के मानने वालों ने मशहूर कर दिया कि क़रामता को जेलख़ाना आने-जाने से कोई रोक नहीं सकता। ग़रज़ धीरे-धीरे उस का मज़हब दूर-दूर तक फैलता गया और काफ़ी लोग उस के पीछे हो गये।

ख़लीफ़ा मोतमद की वफ़ात

ख़लीफ़ा मोतमद अलल्लाह बिन मुतवक्किल अलल्लाह ने २०१ जब सन २०६ हि० में वफ़ात पायी। मुसामरा में दफ़्न किया गया। मोतसिम बिल्लाह बिन हारून रशीद के वक़्त से अब्बासी ख़लीफ़ों की राजधानी सामरा में चला आया था। मोतमद अल्लाह ने सामरा को छोड़ कर बग़दाद में रहना अख़्तियार किया और फिर बग़दाद ही राजधानी हो गया।

सामरा को छोड़ने और बग़दाद को राजधानी बनाने का ही नतीजा था कि तुर्क सरदार जो ख़िलाफ़त और दरबार पर हावी और मुसल्लत थे, उन का ज़ोर यकायक टूट गया। राजधानी की तब्दीली भी मोतमद के भाई मूफ़िक़ की अक़्ल व तदबीर का नतीजा थी।

मोतमद के ज़माने में हुकूमत और सूबों की ताक़तें बिल्कुल कमज़ोर हो चुकी थीं। सरदारों में फूट, दुश्मनी, और एक दूसरे की मुख़ालफ़त ख़ूब ज़ोरों पर थी, लोगों के दिलों से ख़लीफ़ा का रौब बिल्कुल मिट चुका था, जहां जिस को मौक़ा मिला, उस ने मुल्क दबा लिया, सूबेदारों ने टैक्स भेजना बन्द कर दिया, कोई क़ानून पूरे मुल्क में लागू न रहा। हर आदमी ने जिस मुल्क पर क़ब्ज़ा किया, अपना ही क़ानून जारी किया।

प्रजा पर बड़े ज़ुल्म होने लगे। बनू सामान ने मावराउन्नहर पर, बनू सफ़ार ने सजिस्तान व किरमान, ख़ुरासान और फ़ारस देश पर हसन बिन ज़ैद ने तबस्तान व जरजान पर ज़ंगियों ने बसरा व एला व वासित पर ख़ारजियों ने मूसल व जज़ीरा पर, इब्ने तोलोन ने मिस्र व शाम पर, इब्ने ग़लब ने अफ़्रीक़ा पर क़ब्ज़ा कर के अपनी-अपनी हुकूमत क़ायम कर ली थी। ख़लीफ़ा की हुकूमत और सरदारी का सिर्फ़ यह निशान था कि सब जुमा के ख़ुत्बों में ख़लीफ़ा का नाम लेते थे, बाक़ी कोई हुक्म ख़लीफ़ा का नहीं माना जाता था।

इसी ज़माने में हदीस के मशहूर नामी इमामों ने जैसे इमाम बुख़ारी इमाम मुस्लिम, अबू दाऊद, तिर्मिज़ी, इब्ने माजा ने वफ़ात पायी।

अब्बासी ख़िलाफ़त पर एक नज़र

अब्बासी ख़ानदान की हुकूमत व ख़िलाफ़त को अब तक डेढ़ सौ वर्ष गुज़र चुके हैं। इस ख़िलाफ़त की शान व शौकत और तरक़्क़ी का ज़माना पूरे सौ साल तक रहा और मोतसिम बिल्लाह की वफ़ात यानी २७७ हि० से गिरावट शुरू हो गयी और पूरी ख़िलाफ़त पर जैसे बुढ़ापा आ गया हो। मुतवक्किल अलल्लाह के क़त्ल होने पर अचानक उस के अंग-अंग ढीले पड़ गये और उस पर इस तरह बुढ़ापा छा गया कि पिछली तरक़्क़ी के वापस आने की कोई उम्मीद ही न रही।

मोतसिम के जानशीनों में अगर हारून और मामून का दिल व

दिमाग़ रखने वाले कुछ लोग होते तो अब्बासी ख़िलाफ़त चमक सकती थी, मगर मोतसिम के जानशीनों की कमज़ोरी का इलाज किसी से मुम्किन न हुआ।

जब मोतसिम के बाद ख़ुद राजधानी में हंगामों और बद-तमीज़ियों का तूफ़ान शुरू हुआ तो ख़िलाफ़त की राजधानी का असर तमाम प्रान्तों पर हुआ और जहां जो हाकिम या गवर्नर था, वह अपनी आज़ादी और हुकूमत का एलान कर बैठा।

मुतवक्किल के बाद ही अगर मूफ़िक़ तख़्त पर बैठ जाता तो मुम्किन था कि वह हालात को संभाल लेता, मगर मूफ़िक़ को ख़लीफ़ा की हैसियत से काम करने का मौक़ा न मिला और उस के बेटे मोतज़िद को, जो अपने बाप ही की तरह हौसलामंद और हिम्मत वाला था, उस वक़्त ख़िलाफ़त मिली जब मरज़ ला-इलाज हो चुका था।

मोतज़िद बिल्लाह

मोतज़िद बिल्लाह बिन मूफ़िक़ बिल्लाह बिन मुतवक्किल अलल्लाह बिन मोतसिम बिल्लाह बिन हारून रशीद का असल नाम अहमद और उफ़ियत अबुल अब्बास थी। रबीउल अव्वल सन २४३ हि० में पैदा हुआ और अपने चचा मोतमद बिल्लाह के बाद रजब २७९ हि० में तख़्त पर बैठा। ख़ूबसूरत, बहादुर और अक़्लमंद था, मगर ज़रूरत होती तो सख़्ती से काम लेने और ख़ून बहाने से भी न झिझकता।

मामून के ज़माने से फ़लासफ़ी का चर्चा बहुत बढ़ गया था, मोतज़िद ने फ़लासफ़ी और मुनाज़रे की किताबों को छपने-छपाने से रोक दिया था, उस ने टैक्सों में भी कमी कर दी थी, इंसाफ़ का शौक़ीन था, जनता पर से ज़ुल्म व सितम को दूर करने की कोशिश करता था।

मजूसी नस्ल के लोगों की ज़्यादती ने बग़दाद में नव-रोज़ के दिन ईद मनाने और आग जलाने की रस्म भी जारी कर दी थी, मोतज़िद ने इस मजूसी रस्म को हुक्म दे कर बन्द कर दिया।

मोतज़िद ने ख़िलाफ़ते अब्बासिया का बहुत नाज़ुक और ख़राब दौर पाया था, पर उस ने बहुत कोशिश की कि ख़िलाफ़ते अब्बासिया की ख़राब हालत ठीक हो जाए, चुनांचे इस की वजह से कुछ-कुछ तरक़्क़ी के

निशान भी दिखायी देने लगे, पर उस के जानशीनों में यह क़ाबिलियत न थी कि तरक़्क़ी की रफ़्तार को क़ायम रख सकते।

सन २८९ हि० में ख़लीफ़ा मोतज़िद बिल्लाह औरतों से ज़्यादा सोहबत करने की वजह से बीमार हो गया, बहुत से मरज़ों ने उसे घेर लिया। आख़िरी वक़्तों में एक डाक्टर उस को नाड़ी देख रहा था कि मोतज़िद ने उस के एक लात मारी, उधर डाक्टर गिरते ही मर गया, इधर मोतज़िद की जान निकल गयी। मोतज़िद की वफ़ात माह रबी उस्सानी के आख़िर सन २८९ हि० में हुई।

मुक्तफ़ी बिल्लाह

मुक्तफ़ी बिल्लाह बिन मोतज़िद बिल्लाह बिन मूफ़िक़ बिल्लाह बिन मुतवक्किल अलल्लाह बिन मोतसिम बिल्लाह बिन हारून रशीद का असल नाम अली और उफ़ियत अबू मुहम्मद थी।

मुक्तफ़ी इंसाफ़ पसन्द, खुशदिल और खूबसूरत आदमी था।

कुछ वाक़िए

□ सूबा बहरैन में क़रामता ने क़ब्ज़ा कर लिया था, इस के बाद वे कूफ़ा में आ गये, मगर वहां मुंह की खायी। दमिश्क़ में पहुंच कर वहां के हाकिम का घेराव कर लिया। ख़लीफ़ा मुक्तफ़ी बिल्लाह ने उन्हें कुचलने के लिए मुहम्मद बिन सुलैमान को बड़ी फ़ौज दे कर भेजा, क़रामता का सरदार गिरफ़्तार हुआ, फिर क़त्ल कर दिया गया। बहुत से क़रामता मारे गये। यहां तो यह फ़ित्ना दूर हुआ, लेकिन फिर इन के बचे-खुचे लोगों ने यमन में आ कर फ़ित्ना पैदा कर दिया।

□ सन २९२ हि० में कुर्दों ने मूसल में बग़ावत कर दी। ख़लीफ़ा ने अबुल हैजा को मुक़र्रर किया कि वे उन्हें क़ाबू में करें, अबुल हैजा ने कुर्दों को तो क़ाबू में किया, लेकिन ३०१ हि० में उसने खुद बग़ावत कर दी, फिर इसे भी क़ैद कर लिया गया।

□ सन २९१ हि० में रूमियों ने एक लाख फ़ौज से इस्लामी शहरों

पर हमला किया, मगर इस हमले में उन को कोई कामियाबी हासिल न हुई, सरहदी सरदारों ने मार कर भगाया।

□ २९३ हि०में एक नया हमलावर गिरोह पैदा हुआ यानी तुर्कों ने जो माव राउन्नहर के उत्तरी पहाड़ों और जंगलों में रहते थे, मावराउन्नहर पर हमला किया, हमलावरों की तयदाद बहुत थी, लेकिन उनके इस हमले को नाकाम बना दिया गया।

□ माह जुमादल ऊला सन २९५ हि० में साढ़े छः वर्ष हुकूमत कर के मुक्तफ़ी बिल्लाह बग़दाद में फ़ौत हो कर मुहम्मद बिन ताहिर के मकान में दफ़्न हुआ। वफ़ात से पहले अपने भाई जाफ़र को वली अह्द बनाया था। मुक्तफ़ी ने मरते वक़्त बैतुलमाल में डेढ़ करोड़ दीनार छोड़े, जाफ़र बिन मोतज़िद की उम्र उस वक़्त तेरह बरस की थी। उस ने तख़्त पर बैठ कर अपना लक़ब मुक़्तदिर बिल्लाह तज्वीज़ किया।

मुक़्तदिर बिल्लाह

मुक़्तदिर बिल्लाह बिन मोतज़िद बिल्लाह का असल नाम जाफ़र और उर्फ़ियत अबुल फ़ज़्ल थी, २८२ हि० में पैदा हुआ था।

जिस साल मुक़्तदिर बिल्लाह ख़लीफ़ा हुआ, यानी २९६ हि० में, उबैदुल्लाह मेहदी की बैअत अफ़रीक़ा में हुई और उबैदी शीमी इमामी हुकूमत की शुरूआत हुई और अग़ालबा हुकूमत का ख़ात्मा हुआ। ख़लीफ़ा की फ़ौज से लड़ाई हुई, फ़ौज हार गयी।

सन् ३०१ हि० में मुक़्तदिर ने अपने चार साला बेटे अबुल अब्बास को जो क़ाहिर बिल्लाह के बाद राज़ी बिल्लाह के लक़ब से तख़्त पर बैठा, अपना वली अह्द बनाया और मिस्र व मग़रिब की गवर्नरी उस के नाम कर के मूनिस ख़ादिम को उस की नायबी में मिस्र की तरफ़ रवाना किया।

इसी साल क़ैसर रूम ने मुक़्तदिर बिल्लाह से सुलह की और दोस्ती व मुहब्बत के ताल्लुक़ात क़ायम करने के लिए अपने दूत बग़दाद को रवाना किए, जिनके स्वागत में बड़ी शान व शौकत को ज़ाहिर किया गया।

सन् ३०८ हि० में उबैदी लश्कर ने मिस्र के एक हिस्से पर क़ब्ज़ा कर लिया।

———

मुक़्तदिर का हटाया जाना और बहाली

सन् ३१७ हि० में मूनिस ने मुक़्तदिर को अलग कर दिया। बात यह थी कि मुक़्तदिर मूनिस के बजाए हारून बिन ग़रीब को अर्ज़ बेगी यानी हाजिब बनाना चाहता था। मूनिस को इसका हाल मालूम हुआ तो फ़ौज और बहुत से सरदारों को साथ लेकर ख़िलाफ़त-महल पर चढ़ आया और मुक़्तदिर को गिरफ़्तार कर के मुहम्मद बिन मोतज़िद को क़ाहिर बिल्लाह के लक़ब से तख़्त पर बिठा दिया। सब ने उसके हाथ पर ख़िलाफ़त की बैअत कर ली और हाकिमों को इत्तिला दे दी गयी।

अगले-दिन फ़ौज ने आकर इनाम की मांग की। इस मांग के पूरा होने में देर हुई, तो लोगों ने शोर मचा दिया और मुक़्तदिर की खोज में मूनिस के घर गये। वहां से मुक़्तदिर को कंधों पर उठा कर ख़िलाफ़त-महल में ले आए, फिर उसके सामने क़ाहिर बिल्लाह को पकड़ कर ले आए। फिर हाकिमों के पास सूचना भेज दी गयी कि मुक़्तदिर बिल्लाह पहले की तरह ख़लीफ़ा है। मुक़्तदिर ने लोगों को इनाम व इकराम देकर खुश किया। क़ाहिर बिल्लाह को छोड़ दिया गया।

क़रामता का ज़िक्र मक्का में

क़रामता की हुकूमत बहरैन में मज़बूत व मुस्तक़िल हो चुकी थी। क़रामता का सरदार अबू ताहिर था, मगर ख़ुत्बे में ये लोग अब्दुल्लाह मेंहदी अफ़रीक़ा के हाकिम का नाम लेते और उस को अपना ख़लीफ़ा मानते थे। सन् ३१८ हि० में अबू ताहिर क़रामती फ़ौज लेकर मक्का मुअज्ज़मा की तरफ़ गया। यह हज का ज़माना था। बग़दाद से मंसूर दैलमी अमीरे हुज्जाज बनकर रवाना हुआ था। वह ८ ज़िल हिज्जा को ख़ैरियत के साथ मक्का पहुंच गया। ९ ज़िल हिज्जा को अबू ताहिर पहुंचा और मक्का में आते ही हाजियों को क़त्ल करना शुरू कर दिया, सब का माल व अस्बाब लूट लिया।

ख़ाना काबा के अन्दर भी लोगों को क़त्ल करने से बाज़ न रहा,

मक़्तूलों की लाशें चाहे ज़मज़म में डाल दीं, हजरे अस्वद को गुर्ज़ मार कर तोड़ दिया और काबे की दीवार से जुदा करके ग्यारह दिन तक यों ही पड़ा रहने दिया, खाना काबा का दरवाज़ा तोड़ डाला।

अबू ताहिर ने ग्यारह दिन तक मक्का के लोगों को खूब लूटा, हजरे अस्वद को ऊंट पर लाद कर हिज्र (बहरैन की राजधानी) की तरफ़ ले चला। मक्का से हिज्र तक हजरे अस्वद के नीचे चालीस ऊंट हलाक हुए। बीस वर्ष तक हजरे अस्वद क़रामता के क़ब्ज़े में रहा। पचास हज़ार दीनार इसके एवज़ क़रामता को देने मंज़ूर किए, लेकिन उन्होंने नहीं दिया।

आखिर मुतीउल्लाह की खिलाफ़त के ज़माने में हजरे अस्वद उनसे वापस लेकर खाना काबा में लगा दिया गया। वापसी के वक़्त हिज्र से मक्का तक उसको सिर्फ़ एक ऊंट ले आया गया था, इस ज़ुल्म व ज़्यादती का हाल उबैदुल्लाह हाकिम अफ़रीक़ा को मालूम हुआ तो उसने अबू ताहिर को बड़ी लानत-मलामत का ख़त लिखा और मक्के वालों के माल व अस्बाब को वापस कर देने की ताकीद की। अबू ताहिर ने कुछ हिस्सा मक्का वालों को माल व अस्बाब का वापस कर दिया, मगर हजरे अस्वद को वापस नहीं किया, वह ३३९ हि० में वापस मक्का आकर अपनी जगह लगाया गया।

मुक़्तदिर बिल्लाह का क़त्ल

मूनिस खादिम ने ३२० हि० के सफ़र महीने में मूसल पर क़ब्ज़ा कर लिया। मूनिस खादिम के जोड़-तोड़ और साज़िशों से बग़दाद, शाम और मिस्र की फ़ौजें भी मूनिस के पास चली आयीं। पूरी तैयारी के बाद बग़दाद पर भी चढ़ाई कर दी गयी।

लड़ाई शुरू हुई। मुक़्तदिर खिलाफ़त-महल से निकल एक टीले पर खड़ा था और आगे फ़ौज लड़ रही थी। बग़दाद वाले हार गये। दुश्मन के तीर से मुक़्तदिर घायल हुआ, घोड़े से गिरा और मर गया।

यह वाक़िआ बुध के दिन २९ शव्वाल को सन् ३२० हि० में हुआ। मूनिस ने अबू मंसूर मुहम्मद बिन मोतज़िद को तख़्त पर बिठा कर क़ाहिर बिल्लाह के लक़ब से मशहूर किया। मुक़्तदिर की मां को

गिरफ़्तार करके उस से रुपया तलब किया गया और इतना पिटवाया कि वह मर गयी। इसी तरह लोगों को ज़बरदस्ती पकड़-पकड़ कर रुपया हासिल किया।

क़ाहिर बिल्लाह

क़ाहिर बिल्लाह बिन मोतज़िद बिल्लाह बिन मूफ़िक़ बिल्लाह बिन मुतवक्किल फ़िल्ला नामी बांदी से पैदा हुआ था, इसका नाम मुहम्मद और उर्फ़ियत अबू मंसूर थी।

बोया दैलमी ख़ानदान की शुरूआत

चूंकि अब बोया ख़ानदान के लोगों का ज़िक्र अब्बासी ख़लीफ़ों के हालात में बार-बार आने वाला है, इसलिए मुनासिब है कि इस जगह इस ख़ानदान की कुछ तफ़्सील दे दी जाए।

उतरुश यानी हसन बिन अली बिन हुसैन बिन अली ज़ैनुल आबदीन का ज़िक्र ऊपर आ चुका है कि मुहम्मद बिन ज़ैद अलवी के मक़्तूल होने के बाद उतरुश ने दैलम में जाकर लोगों को इस्लाम की दावत दी और तेरह वर्ष तक बराबर दैलम व तबरस्तान में इस्लाम की तब्लीग़ में मसरूफ़ रह कर उस इलाक़े के लोगों को मुसलमान बनाया।

सन् ३०१ हि० में उतरुश ने दैलम वालों की एक फ़ौज तैयार करके तबरस्तान पर हमला किया और तबरस्तान को जीत लिया।

उतरुश के बाद उसका दामाद हसन बिन क़ासिम और उसकी औलाद तबरस्तान, जरजान, सीरिया, आमर और उस्तुराबाद पर क़ाबिज़ हो गयी, मगर इन सब के फ़ौजी सरदार व सिपाहसालार दैलमी लोग थे।

मरदावीह भी मशहूर सरदार था, जिसने दैलम के माकान बिन कानी से बग़ावत कर दी थी।

अबू शुजाअ बोया दैलमी एक बड़ा ग़रीब मछेरा था, जो मछली पकड़ कर अपनी रोज़ी-रोटी चलाता था। एक दिन उसने सपना देखा

कि मैं पेशाब करने बैठा हूं और मेरी पेशाबगाह से आग का एक शोला निकला, जिसने फैल कर दुनिया को रोशन कर दिया। इस सपने का फल यह निकाला गया कि उस की औलाद बादशाह होगी और जहां तक उस शोले की रोशनी गयी है, वहां तक उसकी रोशनी होगी।

इसके बाद बोया मछेरे के तीन बेटे हुए, जिनके नाम अली, हसन अहमद थे। चूंकि बाद में इन तीनों भाइयों ने बड़ी तरक़्क़ी की और इमादुद्दौला, मुइज्जुद्दौला के नाम से हुकूमत और इज़्ज़त वाले हुए।

माकान बिन कानी ने जब दैलम वालों को अपनी फ़ौज में भरती किया तो बोया के तीनों बेटे भी उसकी फ़ौज में भरती हो गये। जब माकान को नाकामी हुई और उस का काम बिगड़ गया तो उसके बहुत से आदमी जुदा हो-होकर मरदावीह के पास चले आए। मरदावीह ने उन लोगों को हाथों हाथ लिया। उन्हीं लोगों में बोया के तीनों बेटे भी शामिल थे। उन्होंने अपनी ख़िदमत गुज़ारी, मुस्तैदी और होशियारी से मरदावीह की ख़िदमत में रसूख हासिल कर लिया और मरदावीह ने अली बिन बोया को कर्ख़ की हुकूमत पर मुक़र्रर करके रवाना किया। अली बिन बोया के साथ उसके दोनों छोटे भाई हसन और अहमद भी रवाना हुए। उन दिनों मरदावीह की ओर से रे में उसका भाई दशमगीर हुकूमत कर रहा था। अली बिन बोया जब रे पहुंचा तो उस के वज़ीर अमीद को खच्चर, नज़राने के तौर पर पेश किया, उस के बाद कर्ख़ की तरफ़ चला और वहां जाकर हुकूमत करने लगा।

मरदावीह को जब इस नज़राने की इत्तिला मिली तो उसे शुबहा गुज़रा कि माकान के पास से आए हुए सरदार, जिनको अच्छे-अच्छे ओहदे और शहरों की हुकूमत सुपुर्द कर दी गयी थी, आपस में कोई साज़िश करके तक्लीफ़ की वजह न बनें, चुनांचे उसने अपने भाई को लिखा कि माकान के पास से आए हुए सरदारों को गिरफ़्तार कर लिया जाए, चुनांचे कुछ तो गिरफ़्तार कर लिए गये, मगर अली बिन बोया को फ़साद के डर से गिरफ़्तार करने की कोशिश नहीं की गयी।

अली बिन बोया ने कर्ख़ के पास के कई क़िलों को जीत लिया, उनमें से जो माल हाथ आया, वह फ़ौजियों में तक़्सीम कर दिया। इससे सिपाहियों को उसके साथ मुहब्बत हो गयी और उसका रौब बढ़ गया।

सन् ३२१ हि० में मरदावीह ने उन सरदारों को जो रे में नज़रबंद थे, रिहा कर दिया ये सब कर्ख़ अली बिन बोया के पास चले गये। उसने

उनकी बहुत आवभगत की थी।

मरदावीह को जब मालूम हुआ कि तमाम दैलमियों का जमाव अली बिन बोया के पास हो गया है, तो उसने लिखा कि उन तमाम सरदारों को जो रिहा होकर गये हैं, हमारे पास वापस भेज दो।

अली बिन बोया ने ऐसा करने से साफ़ मना कर दिया और नामी सरदार शेरज़ाद के साथ अस्फ़हान पर हमले की तैयारी करने लगा।

एक दिन ऐसा भी आया कि उसने अस्फ़हान पर चढ़ाई कर दी और उसे जीत लिया। यह खबर सुन कर मरदावीह को बड़ी चिन्ता हुई, क्योंकि अली बिन बोया की ताक़त बहुत तरक़्क़ी कर चुकी थी। धीरे-धीरे अली बिन बोया ने सब को हराकर पूरे फ़ारस सूबे पर क़ब्ज़ा कर लिया। उसे कई ख़ज़ाने भी हाथ लगे, इसलिए उस ने पूरी कामियाबी और फैलाव के साथ हुकूमत शुरू की।

क़ाहिर हटा दिया गया

लगभग डेढ़ साल हुकूमत करने के बाद ६ जुमादस्सानी सन ३२२ हि० में फ़ौज के बलवाइयों ने उसको गिरफ़्तार कर लिया और अबुल अब्बास मुहम्मद बिन मुक्तदिर को तख़्त पर बिठा कर राज़ी बिल्लाह के लक़ब से मशहूर किया।

राज़ी बिल्लाह ने तख़्त पर बैठते ही क़ाहिर बिल्लाह को अंधा करा दिया।

अली बिन मुहम्मद ख़ुरासानी का कहना है कि एक दिन क़ाहिर बिल्लाह नेज़ा लिए हुए मेरे पास आया और कहा कि हर एक अब्बासी ख़लीफ़ा की आदतें मुझ से बयान करो। मैंने कहा सफ़्फ़ाह ख़ूंरेज़ी में जल्दी किया करता था। उसके अफ़सर भी उसी के क़दम से क़दम मिलाकर चलते थे, बहादुर आदमी था और माल जमा करने वाला।

मंसूर ने सबसे पहले आले अब्बास और आले अबी तालिब के बीच फूट पैदा किया और मेल न होने दिया। सब से पहले उस ने नजूमियों को क़रीब किया, सुरयानी और अजमी किताबें जैसे अक़्लीदस, कलीलादम्ना और यूनानी किताबें तर्जुमा करायीं।

मेंहदी बड़ा सख़ी-दाता, इंसाफ़ पसन्द आदमी था। उसके बाप ने

बहुत कुछ ज़बरदस्ती लोगों से छीना था, उसने ज़िंदीक़ों को क़त्ल कराया, मस्जिदुल हराम, मस्जिदे मदीना और मस्जिदे अक़्सा को तामीर कराया।

हादी सख़्त और घमंडी था और उसके अफ़सर उसी की पैरवी करते थे।

हारून रशीद ने जिहाद और हज किए। मदीना के रास्ते में मकान और हौज़ बनवाए, तर्सूस, मसीसा, अर-अश वग़ैरह आबाद किए, आम लोगों को बाक़ी एहसानों के बोझ से लादा, खलीफ़ों में सबसे पहले उसी ने चौगान खेला, निशाने बाज़ियां कीं और शतरंज खेली।

अमीन सखी था, मगर लज़्ज़तों में पड़ गया।

मामून नुजूम व फ़लसफ़ा से मुतास्सिर हो गया, सखी दाता था।

मोतसिम भी उसी तरीक़े पर चला, मगर उसको घोड़े पर दौड़ लगाने का शौक़ था। लड़ाइयां खूब लड़ीं और मुल्क भी खूब जीते।

वासिक़ अपने बाप के तरीक़े पर चला।

मुतवक्किल मामून, मोतसिम और वासिक़ के बिल्कुल खिलाफ़ चला। उन के अक़ीदों से भी उस ने मुखालफ़त की, हदीस के सुनने का हुक्म दिया, लोग उस से आम तौर से खुश रहे।

ग़रज़ इसी तरह वह और खलीफ़ों का हाल पूछता जाता था और मैं बयान करता जाता था, सब कुछ सुन कर खुश हुआ और चला गया।

राज़ी बिल्लाह

राज़ी बिल्लाह बिन मुक्तदिर बिल्लाह का नाम मुहम्मद और उक़्नियत अबुल अब्बास थी। सन २९७ हि० में पैदा हुआ। क़ाहिर के हटाए जाने के बाद जुमादस्सानी सन ३२२ हि० में तख़्त पर बैठा। यह जेलखाने से ला कर तख़्त पर बिठाया गया था।

इस ने अली बिन मुक़ला को वज़ीरे आज़म बनाया।

मुहम्मद बिन याक़ूत को गिरफ़्तार कर के क़ैद कर दिया। याक़ूत इन दिनों वासित में था। वह फ़ौज सजा कर के अली बिन बोया के मुक़ाबले पर गया, पर हार गया। इसी साल उबैदुल्लाह मेंहदी मजूसी, अफ़रीक़ा का हाकिम पचीस साल हुकूमत करने के बाद फ़ौत हुआ और उस की जगह उस का बेटा अबुल क़ासिम बिअम्रिल्लाह के लक़ब से तख़्त पर

बैठा।

मरदावीह ने एक बड़ी हुकूमत क़ायम कर के अपनी बादशाही का दावा कर दिया था। उसने अपने लिए सोने का एक तख़्त बनवाया, सिपह-सालारों और सरदारों के लिए चांदी की कुर्सियां तैयार करायीं, किसरा की तरह सजा-सजाया ताज सर पर रखा और अपने को शहंशाह कहलवाना पसन्द किया, फिर इराक़ व बग़दाद पर हमला करने की तैयारी की और कहा कि मैं फ़ारस के किसरा के महलों को नए सिरे से तामीर कराऊंगा और अरबों की हुकूमत नेस्त व नाबूद करके नए सिरे से मजूसियों की हुकूमत क़ायम करूंगा।

उस की इस क़िस्म की घमंड भरी बातें उस के कुछ सरदारों को नागवार गुज़रीं और लोगों ने सन ३२३ हि० में उसको अस्फ़हान के बाहर क़त्ल कर डाला।

सूबों की हालत

ख़लीफ़ा राज़ी बिल्लाह की हुकूमत बग़दाद और उस के आस-पास के इलाक़ों के अलावा और कहीं न थी, न किसी सूबे से टैक्स आता था। हर जगह आज़ाद हुकूमतें क़ायम हो गयी थीं, जिन लोगों ने टैक्स देने का वायदा किया था, वे भी अपने वायदों को पूरा करना ज़रूरी नहीं समझते थे।

☐ बसरा पर मुहम्मद बिन राइक़ का क़ब्ज़ा था।

☐ ख़ोज़िस्तान और अह्वाज़ पर अबू अब्दुल्लाह बुरैदी का क़ब्ज़ा था,

☐ फ़ारस की हुकूमत अली बिन बोया (जो इमादुद्दौला के नाम से मशहूर हो गया था) के क़ब्ज़े में थी।

☐ किरमान में अबू अली मुहम्मद बिन इल्यास हाकिम थे।

☐ रे, अस्फ़हान और जबल के सूबों में हसन बिन बोया (रुक्नुद्दौला) और दशमगीर (मरदावीह का भाई) एक दूसरे के ख़िलाफ़ लड़ाई में लगे हुए थे।

☐ मूसल, दयारे बक्र, दयारे मिस्र, दयारे रबीआ बनी हमदान के क़ब्ज़े में थे।

☐ [मिस्र व शाम पर मुहम्मद बिन तग़्ज का क़ब्ज़ा था।

☐ मावराउन्नहर और ख़ुरासान के कुछ हिस्सों पर बनी सामान हाकिम थे।

☐ तबरिस्तान के सूबे पर देलमी सरदार क़ाबिज़ व हाकिम थे।

☐ उन्दुलुस व मराक़श व अफ़रीक़ा में तो पहले से आज़ाद हुकूमतें क़ायम थीं।

राज़ी बिल्लाह की वफ़ात

माह रबीउलअव्वल ३२६ हि० में कुछ महीने कम सात साल तख़्त-नशीं रह कर ख़लीफ़ा राज़ी बिल्लाह ने वफ़ात पायी। यह्कुम जो उस वक़्त तक ख़लीफ़ा पर पूरी तरह हावी हो चुका था, उस ने अपने मीर मुंशी को जो बग़दाद में वज़ीरे आज़म का काम कर रहा था, को लिख भेजा और हिदायत की कि इब्राहीम बिन मोतज़िद बिल्लाह को मुत्तक़ी लिल्लाह के लक़ब से २६ रबीउल अव्वल ३२६ हि० को तख़्ते ख़िलाफ़त पर बिठा दिया।

ख़लीफ़ा राज़ी बिल्लाह की ख़िलाफ़त के दौर में मुहम्मद बिन अली समग़ानी ने, जो इब्ने अबिल ग़राक़र के नाम से मशहूर था, ख़ुदाई का दावा किया। बहुत से लोग उस के मानने वाले पैदा हो गये, मगर राज़ी बिल्लाह की ख़िलाफ़त के पहले ही साल उस को पकड़ कर क़त्ल कर दिया गया। उस के साथी, जिन्होंने तौबा न की, उन्हें भी क़त्ल कर दिया गया।

इसी साल क़रामता ने बग़दाद और मक्का में ऐसी लूट-मार मचायी कि बग़दाद वाले हज न कर सके और ३२७ हि० तक हज का इरादा कोई बग़दाद वाला न कर सका।

सन ३२७ हि० में अबू ताहिर क़रामती ने हाजियों पर हर ऊंट पर पांच दीनार टैक्स क़ायम किया और लोगों को हज की इजाज़त दी। यह पहला मौक़ा था कि हाजियों को हज करने का महसूल अदा करना पड़ा। बग़दाद वालों ने इत्मीनान से यह टैक्स अदा कर के हज अदा किया।

राज़ी आख़िरी ख़लीफ़ा था, जिस ने ख़ुत्बा जुमा लोगों को सुनाया, इस के बाद आम तौर पर ख़लीफ़ों ने यह काम भी दूसरों के सुपुर्द कर दिया।

मुत्तक़ी लिल्लाह

मुत्तक़ी लिल्लाह बिन मोतज़िद बिल्लाह बिन मुफ़िक़ बिन मुतवक्किल सन २९५ हि० में पैदा हुआ और सन ३२९ हि० में ३४ साल की उम्र में खलीफ़ा बनाया गया।

२६ रजब सन ३२९ हि० में यह्कुम कुर्दों के हाथों मारा गया।

बग़ावतें बढ़ती रहीं, मर्कज़ कमज़ोर हो गया, खलीफ़ा की कोई क़ीमत रही नहीं, राजधानी में भी उस के लिए अमान पाना मुश्किल हो गया। आखिर ३३२ हि० तक वह बनी हमदान में रहा। आखिर मुहर्रम ३३३ हि० को बग़दाद की तरफ़ रवाना हुआ। तोज़ोन ने सनदिया में स्वागत किया और अपने खेमे में ठहराया। अगले दिन खलीफ़ा की आंखों में गर्म सलाइयां फिरवा कर अंधा कर दिया।

इसके बाद अबुल क़ासिम अब्दुल्लाह बिन खलीफ़ा मुक्तफ़ी बिल्लाह को बुला कर उस के हाथ पर सरदारों ने बैअत की और उसे मुस्तक्फ़ी बिल्लाह का लक़ब दिया।

सब से आखिर में खलीफ़ा मुत्तक़ी को दरबार में पेश किया गया। उस ने भी खलीफ़ा मुस्तक्फ़ी की बैअत की। मुत्तक़ी को जज़ीरा में क़ैद कर दिया गया। पचीस वर्ष इसी मुसीबत में गिरफ़्तार रह कर ३५७ हि० में फ़ौत हुआ जब क़ाहिर बिल्लाह को मुत्तक़ी को अंधा बनाने की खबर पहुंची तो बहुत खुश हुआ और कहने लगा कि अब हम दो तो अंधे हो गये, तीसरे की कसर है। अजीब इत्तिफ़ाक़ था कि कुछ ही दिनों के बाद मुस्तक्फ़ी का भी यही हश्र हुआ।

मुस्तक्फ़ी बिल्लाह

अबुल क़ासिम अब्दुल्लाह मुस्तक्फ़ी बिल्लाह बिन मुक्तफ़ी बिल्लाह सन २९२ हि० में पैदा हुआ था, सफ़र ३३३ हि० को इकतालीस साल की उम्र में तख्त पर बैठा। अबुल क़ासिम फ़ज़्ल बिन मुक़्तदिर बिल्लाह भी खिलाफ़त का दावेदार था। वह छिप गया, मुस्तक्फ़ी ने उस को बहुत

खोजवाया, मगर यह हाथ न आया और मुस्तक्फ़ी के दौर में छिपा ही रहा मुस्तक्फ़ी जब उसकी खोज में कामियाब न हुआ, तो उसका मकान गिरवा दिया।

खलीफ़ा मुस्तक्फ़ी के तख़्त नशीन होते ही तोज़ोन फ़ौत हो गया। मुस्तक्फ़ी ने अबू जाफ़र बिन शेरज़ाद को अमीरुल उमरा का खिताब दिया इब्ने शेरज़ाद ने तमाम इन्तिज़ाम अपने हाथ में ले कर बे-दरेग़ रुपया खर्च करना शुरू किया। खज़ाना खाली हो गया, तमाम इन्तिज़ाम खराब हो गया और कुछ ही दिनों के बाद बग़दाद में चोरियों और डाकाज़नियों की बहुतात ने यहां तक नौबत पहुंचा दी कि लोग शहर छोड़-छोड़ कर भागने लगे।

चेतावनी

जैसा कि कहा जा चुका है कि इस्लामी हुकूमत की सरहदें तो बराबर बढ़ती रहीं, लेकिन अब्बासी हुकूमत व खिलाफ़त की हदें सिमट कर बग़दाद शहर तक आ गयी थीं और सच तो यह है कि जब से अमीरुल उमरा (गवर्नर जनरल) का ओहदा ईजाद हुआ, और जो पूरी हुकूमत संभालता था, उस वक़्त से खलीफ़ा की हुकूमत तो अब बग़दाद में भी सही तौर पर बाक़ी नहीं रही थी।

लेकिन अब मुइज़्ज़ुद्दौला अहमद बिन बोया मज़ेरा हवाज़ से आकर बग़दाद और खलीफ़ा पर छा जाता है, उस को मलिक का खिलाफ़ मिलता है और इस के बाद एक के बाद एक मलिक होने लगते हैं।

मुइज़्ज़ुद्दौला ने खलीफ़ा को नज़रबंद कर के एक बा-इज़्ज़त क़ैदी की हैसियत से रखा और शहर बग़दाद में जो असर और इक्तिदार खलीफ़ा को हासिल था, वह भी छीन लिया।

खलीफ़ा का काम सिर्फ़ यह रह गया था कि जब कोई दूत बाहर से आए तो उसे खलीफ़ा के दरबार में हाज़िर किया जाए और खलीफ़ा की खूब नुमाइश कर उस से मनमाना काम लिया जाए जैसे किसी को खिताब देना, किसी को सनद देना, यह सब खलीफ़ा के हाथ से होता था, लेकिन खलीफ़ा के अख्तियार से नहीं होता था। अख्तियार हर एक काम में मलिक ही का होता था।

बोया ख़ानदान की हुकूमत

ख़ानदान बोया का हाल ऊपर गुज़र चुका है कि बोया के तीनों बेटे अली, हसन, अहमद हुकूमत व सरदारी हासिल कर चुके हैं। अली (इमादुद्दौला) फ़ारस पर क़ब्ज़ा किए हुए था, हसन (रुक्नुद्दौला) को इस्फ़हान व तबरिस्तान की तरफ़ हुकूमत व सरदारी हासिल थी, अहमद (मुइज़्ज़ुद्दौला) अह्वाज़ पर क़ाबिज़ था। जब इब्ने शेरज़ाद की अमीरुल-उमराई में बग़दाद के अन्दर फ़ित्ना व फ़साद हो गया तो मुइज़्ज़ुद्दौला ने, जो बग़दाद से ज़्यादा क़रीब था, बग़दाद पर हमला किया।

शेरज़ाद भाग कर बनू हमदान के पास मूसल चला गया और मुइज़्ज़ुद्दौला ने बग़दाद पर आसानी से क़ब्ज़ा कर लिया ख़लीफ़ा मुस्तक्फ़ी की ख़िदमत में हाज़िर हुआ। उस ने मुइज़्ज़ुद्दौला को मलिक का ख़िताब दिया। मुइज़्ज़ुद्दौला ने अपने नाम के सिक्के चलवाए और बग़दाद पर पूरे क़ह्र व ग़लबा के साथ हुकूमत करने लगा।

कुछ दिनों के बाद मुइज़्ज़ुद्दौला को मालूम हुआ कि ख़लीफ़ा मुस्तक्फ़ी उस के ख़िलाफ़ कोई साज़िश कर रहा है. उन्हीं दिनों में ख़ुरासान का हाकिम का दूत आया और उसके आने पर एक दरबारे आम लगाया गया, मुइज़्ज़ुद्दौला ने भरे दरबार में दो दैलामियों को इशारा किया, वे आगे बढ़े ख़लीफ़ा ने समझा कि हाथ चूमने को बढ़े हैं, अपना हाथ आगे बढ़ा दिया। दैलमियों ने वही हाथ पकड़ कर ख़लीफ़ा को तख़्त से नीचे खींच कर डाल दिया और गिरफ़्तार कर लिया और किसी की मजाल न थी कि उफ़ कर सके।

मुइज़्ज़ुद्दौला उसी वक़्त सवार हो कर अपने मकान पर आया और दैलमी ख़लीफ़ा को खींचते और बे-इज़्ज़त करते हुए मुइज़्ज़ुद्दौला के सामने लाए, उसकी आंखें निकाल कर क़ैद कर दिया। यह वाक़िआ माह जुमादस्सानी सन ३४४ हि० का है। ख़लीफ़ा मुस्तक्फ़ी ने एक वर्ष चार महीने नाम की ख़िलाफ़त की और सन ४३८ हि० में क़ैद की हालत ही में फ़ौत हुआ।

मुतीउल्लाह

मुइज्जुद्दौला बिन बोया दैलमी का सब से छोटा बेटा था। शीइयत उस पर ग़ालिब थी, लेकिन इसके बावजूद उसने किसी अलवी को खलीफ़ा बनाने के बजाए अबुल क़ासिम फ़ज़्ल बिन मुक्तदिर को तलब किया और मुतीउल्लाह के लक़ब से तख्त पर बिठा कर बैअत की रस्म अदा की और सौ दीनार रोज़ाना उस की तंख्वाह मुक़र्रर कर दी।

मुतीउल्लाह सन २६१ हि० में पैदा हुआ था और जुमादस्सानी सन ३३४ हि० में तख्त पर बैठा।

मुइज्जुद्दौला ने १८ ज़िलहिज्जा ३५१ हि०को बग़दाद में ईद मनाने का हुक्म दिया और इस ईद का नाम 'ईदे ग़दीर' रखा, खूब ढोल बजाए गए और खुशियां मनायी गयीं। इसी तारीख़ को यानी १८ ज़िलहिज्जा सन ३५ हि० को हज़रत उसमान ग़नी रज़ियल्लाहु तआला अन्हु, चूंकि शहीद हुए थे, इसलिए उस दिन शीयों के लिए ग़दीर की ईद मनाने का दिन तज्वीज़ किया गया।

अहमद बिन बोया दैलमी यानी मुइज्जुद्दौला की इस ईजाद को जो ३५१ हि० में हुई, शीयों ने यहां तक रिवाज दिया कि आजकल के शीयों का यह अक़ीदा बन गया है कि ईदे ग़दीर का मर्तबा ईदुल अज़्हा से भी ज़्यादा बुलंद है।

ताज़ियादारी की ईजाद

सन ३५२ हि० के शुरू होने पर इब्ने बोया ने हुक्म दिया कि १० मुहर्रम को हज़रत इमाम हुसैन रज़ि० की शहादत के ग़म में तमाम दुकानें बन्द कर दी जाएं। खरीद व फ़रोख्त बिल्कुल बन्द रहे, शहर व देहात के तमाम लोग मातमी लिबास पहनें और एलानिया नौहा करें, औरतें अपने बाल खोले हुए, चेहरों को स्याह किए हुए कपड़ों को फाड़ते हुए सड़कों और बाज़ारों में मर्सिए पढ़ती, मुंह नोचती और छातियां पीटती हुई निकलें।

शीयों ने इसको खुशी के साथ पूरा किया, मगर अह्ले सुन्नत खामोश और चुप रहे, क्योंकि शीयों की हुकूमत थी।

अगले साल ३५५ हि० में फिर इसी हुक्म को दोहराया गया और सुन्नियों को भी इस के पूरा करने का हुक्म दिया गया। अह्ले सुन्नत इस जिल्लत को बर्दाश्त न कर सके, चुनांचे शीया-सुन्नियों में दंगा हो गया। बहुत खून बहे, यहां तक कि शीयों ने फ़ैसला कर लिया कि वे अब हर साल यह रस्म मनाएंगे।

मुइज़्ज़ुद्दौला की वफ़ात

अमान पर क़रामता का क़ब्ज़ा था। सन ३५५ हि० में मुइज्ज़ुद्दौला ने अमान पर दरिया के रास्ते से फ़ौज से हमला किया और ६ ज़िलहिज्जा सन ३५५ हि० को अमान पर क़ब्ज़ा कर लिया और क़रामता को वहां से भगा दिया। अमान हो कर वासित आया, यहां आ कर बीमार हुआ, फिर बग़दाद आया। बग़दाद में पहुंच कर इलाज किया, लेकिन आराम न हुआ, बाईस साल हुकूमत कर के रबीउल आखर सन ३५६ हि० में फ़ौत हुआ।

इज़्ज़ुद्दौला की हुकूमत

मुइज्ज़ुद्दौला ने मरते वक़्त अपने बेटे बख़्तियार को अपना वलीअह्द बनाया था। वह मुइज्ज़ुद्दौला के बाद इज्ज़ुद्दौला का खिताब खलीफ़ा से हासिल करके हुकूमत करने लगा।

इज्ज़ुद्दौला ने अबुल फ़ज़्ल अब्बास बिन हुसैन शीराज़ी को अपना वज़ीर बनाया। ३६२ हि० में इज्ज़ुद्दौला ने अबुल फ़ज़्ल अब्बास को वज़ीरी से हटा कर मुहम्मद बिन बक़ीया को वज़ीर बना दिया।

सुबुक्तगीन एक मशहूर तुर्क सरदार था। उसने ज़ीक़ादा सन ३६२ हि० में इज्ज़ुद्दौला के खानदान वालों को क़ैद कर के वासित भेज दिया। अब बग़दाद में सुबुक्तगीन की हुकूमत क़ायम हो गई, जो सुन्नी हुकूमत थी। शीयों को बग़दाद से निकाल दिया गया। इसके बाद खलीफ़ा मुतीउल्लाह को इस बात पर मजबूर किया गया कि अपने आपको खिलाफ़त से हटा ले,

चुनांचे माह ज़ीक़ादा सन ३६३ हि० में खलीफ़ा मुतीअ ने अपने आप को हटा लिया और उसके बेटे अब्दुल करीम को ताइउन लिल्लाह के लक़ब से तख्त पर बिठाया गया।

खलीफ़ा मुतीअ ने साढ़े २६ साल नाम की खिलाफ़त की।

खिलाफ़त से अलग होने के बाद मुतीउल्लाह का खिताब शेखुल फ़ाज़िल था। मुतीउल्लाह ने मुहर्रम सन ३६२ हि० में वासित में वफ़ात पायी।

ताइउन लिल्लाह

अबूबक्र अब्दुल करीम ताइउनलिल्लाह बिन मुतीउल्लाह ३१८ हि० में पैदा हुआ और ४५ साल की उम्र में बुध के दिन २३ ज़ीक़ादा को तख्त पर बैठा। सुबुक्तगीन को नस्रुद्दौला का खिताब अता किया और बजाए इज्ज़ुद्दौला के सुलतान बनाया।

यह पहले ही बात आ चुकी है कि सुबुक्तगीन ने जब बग़दाद पर क़ब्ज़ा किया, उस वक़्त इज्ज़ुद्दौला अह्वाज में था। सुबुक्तगीन ने इज्ज़ु-द्दौला की मां और भाइयों को वासित भेज दिया था। यह खबर सुन कर इज्ज़ुद्दौला अपनी मां से मिलने वासित आया और अपने चचा हसन बिन बोया (रुक्नुद्दौला) को सुबुक्तगीन और तुर्कों के खिलाफ़ मदद भेजने को लिखा। उस ने अपने बेटे अज़्दुद्दौला को मदद के लिए फ़ौज ले कर भेज दिया।

सुबुक्तगीन और खलीफ़ा दोनों बाहर गये हुए थे। वासित के क़रीब पहुंच कर इन दोनों का इन्तिक़ाल हो गया। तुर्कों ने उफ़्तगीन को अपना सरदार बना लिया।

फिर क्या था, इज्ज़ुद्दौला और अज़्दुद्दौला दोनों ने मिल कर बग़दाद को घेर लिया, फिर सन ३६४ हि० में क़ब्ज़ा भी कर लिया। फिर अज़्दु-द्दौला ने तुर्कों से पत्र-व्यवहार कर के रजब सन ३६४ हि०में खलीफ़ा ताइ-उन लिल्लाह को बग़दाद वापस बुला लिया, जो उफ़्तगीन के साथ बग़दाद से भाग गया था और खिलाफ़त-महल में बिठा कर बैअत की और इज्ज़ुद्दौला को गिरफ़्तार कर के खुद हुकूमत करने लगा, लेकिन बाद में उसे क़ैद से निकाल कर इराक़ की हुकूमत सुपुर्द की और यह इक़रार लिया कि

इराक़ में खुत्बा अज़्दुद्दौला के नाम का पढ़ा जाएगा।

उफ़्तगीन इन वाक़िओं के बाद दमिश्क़ की ओर गया और वहां मुइज़्ज़ उबैदी के हाकिम को निकाल कर खुद दमिश्क़ पर क़ब्ज़ा कर लिया दमिश्क़ वाले उफ़्तगीन की हुकूमत से खुश हुए, क्योंकि वहां राफ़िज़ी अपने अक़ीदों को ज़बरदस्ती लोगों से मनवाते थे और तंग करते थे। उफ़्तगीन के पहुंचने से उन को निजात मिली। उफ़्तगीन ने बजाए उबैदी सुलतान के ताइउन के नाम का खुत्बा जारी किया। यह वाक़िआ शाबान सन ३६४ हि० का है।

अज़्दुद्दौला की हुकूमत

३६६ हि० में रुक्नुद्दौला का इंतिक़ाल हो गया। इस के बाद अज़्दुद्दौला बाप का जानशीन हुआ। उस ने बग़दाद के साथ-साथ बसरा पर भी क़ब्ज़ा किया, जहां इज़्ज़ुद्दौला ने गड़बड़ फैलाना शुरू कर दिया था। यह वाक़िआ आख़िर सन ३६६ हि० का है। सन ३६७ हि० के शुरू होने पर अज़्दुद्दौला ने अपने बाप के वज़ीर अबुल फ़त्ह बिन अमीद को जो इज़्ज़ुद्दौला का हिमायती हो गया था, पकड़ कर अंधा कर दिया और क़ैद में डाल दिया।

इज़्ज़ुद्दौला ने अपने अम्द को जो अज़्दुद्दौला का हिमायती हो गया था, अंधा कर दिया और मूसल व शाम की तरफ़ चला गया, वहां से मूसल के हाकिम अबू तग़लब को अपना हमदर्द बना कर और फ़ौज लेकर बग़दाद पर हमलावर हुआ।

इज़्ज़ुद्दौला को अज़्दुद्दौला ने लड़ाई में गिरफ़्तार कर के क़त्ल कर दिया और अबू तग़लब का पीछा कर के मूसल व जज़ीरे पर क़ब्ज़ा कर लिया।

सन ३७२ हि० में अज़्दुद्दौला ने अपनी हुकूमत के पांच बरस छः महीने बिताने के बाद वफ़ात पायी और उस का बेटा काकेजार गद्दी पर बैठा, वह सम्सामुद्दौला के नाम से मशहूर हुआ।

समसामुद्दौला, शर्फ़ुद्दौला, बहाउद्दौला की हुकूमतें

समसामुद्दौला के कई भाई थे, उन में एक शर्फ़ुद्दौला भी था। उसने समसामुद्दौला के ख़िलाफ़ बग़ावत कर के फ़ारस पर क़ब्ज़ा कर लिया।

सन ३७५ हि० में शर्फ़ुद्दौला ने बग़दाद पर हमला किया। रमज़ान ३७६ हि० में शर्फ़ुद्दौला ने समसामुद्दौला को गिरफ़्तार कर के बग़दाद पर क़ब्ज़ा किया।

ख़लीफ़ा ताइउन लिल्लाह ने शर्फ़ुद्दौला को कामियाबी पर मुबारकबाद दी। समसामुद्दौला को फ़ारस भेज दिया गया, वहां पहुंच कर समसामुद्दौला आज़ाद कर दिया गया।

शर्फ़ुद्दौला बिन अज़्दुद्दौला दो वर्ष आठ महीने की हुकूमत के बाद सन ३७९ हि० में इंतिक़ाल कर गया।

शर्फ़ुद्दौला की वफ़ात के बाद उस का भाई बहाउद्दौला हुकूमत पर बैठा।

सन ३८० हि० में बहाउद्दौला ने अपने भतीजे अबू अली बिन शर्फ़ुद्दौला को, जो फ़ारस में हुकूमत कर रहा था, धोखे से बुला कर क़त्ल कर डाला और ख़ुद फ़ारस की तरफ़ रवाना हुआ कि वहां के ख़ज़ानों पर क़ब्ज़ा करे। चुनांचे वहां पहुंचा और फ़ारस पर क़ब्ज़ा किया। इसी बीच समसामुद्दौला ने जो फ़ारस में मौजूद था, अपने पास लोगों को जमा कर के मुल्क पर क़ब्ज़ा करना शुरू किया। आख़िर नौबत यहां तक पहुंची कि बहाउद्दौला को समसामुद्दौला के साथ इस शर्त पर सुलह करनी पड़ी कि फ़ारस पर समसामुद्दौला का क़ब्ज़ा रहे। इस समझौते से फ़ारिग़ हो कर बहाउद्दौला बग़दाद की तरफ़ आया।

सन ३८१ हि० में ख़लीफ़ा के ख़िलाफ़ दैलमियों की शिकायत पर बहाउद्दौला ने उसे ख़िलाफ़त छोड़ने पर मजबूर किया और अबुल अब्बास अहमद बिन इस्हाक़ बिन मुक़्तदिर को बुला कर क़ादिर बिल्लाह के लक़ब से ख़लीफ़ा बनाया।

क़ादिर बिल्लाह

क़ादिर बिल्लाह की पैदाइश ३३६ हि० में हुई थी। १२ रमज़ान सन् ३८१ हि० में तख़्त पर बैठा। यह बड़ा मज़हबी आदमी था, इस की फ़िक़्ह पर अच्छी नज़र थी।

३८३ हि० में बहाउद्दौला ने समसामुद्दौला को हराने के लिए बड़ी फ़ौज भेजी, लेकिन उसे हार का मुंह देखना पड़ा।

३८४ हि० में फिर फ़ौज भेजी गयी, लड़ाइयों का सिलसिला चला, आख़िर ज़िल हिज्जा ३८८ हि० में नौ वर्ष फ़ारस पर हुकूमत करने के बाद समसामुद्दौला गिरफ़्तार हुआ और क़त्ल कर दिया गया। फ़ारस पर बहाउद्दौला का क़ब्ज़ा हो गया। ३८६ हि० में बहाउद्दौला ख़ुद फ़ारस गया और इराक़ की हुकूमत अबू जाफ़र हज्जाज बिन हर्मुज को सुपुर्द करके बग़दाद को छोड़ दिया।

ख़लीफ़ा क़ादिर बिल्लाह ने अबू जाफ़र को अमीदुद्दौला का ख़िताब दिया।

इसी साल यानी ३८६ हि० में सामानी ख़ानदान के क़ब्ज़े से मावराउन्नह्‌र का भी तमाम इलाक़ा निकल गया और उस ख़ानदान का ख़ात्मा हो गया। सामानी ख़ानदान के आधे पर बनो सुबुक्तगीन ने क़ब्ज़ा कर लिया और बाक़ी आधे पर तुर्कों का क़ब्ज़ा हो गया।

सन् ३६० हि० में बहाउद्दौला का इन्तिक़ाल हुआ और उस की जगह उसका बेटा सुलतानुद्दौला हुकूमत करने लगा। यह लक़ब था, जो ख़लीफ़ा क़ादिर बिल्लाह से मिला था।

मुशर्रफ़ुद्दौला और जलालुद्दौला

सुलतानुद्दौला ने अपने भाई मुशर्रफ़ुद्दौला को इराक़ का गवर्नर बना दिया था। उसने इराक़ में सुलतानुद्दौला को ख़ुत्बे से हटाकर अपने नाम का ख़ुत्बा पढ़वाना शुरू किया और सुलतानुद्दौला के नाम को निकाल दिया।

यह वाक़िआ सन् ४११ हि० में वाक़िअ हुआ।

मुशर्रफ़ुद्दौला की हुकूमत को जब सब दैलमी सरदारों ने, जो इराक़ में मौजूद थे, मंज़ूर कर लिया, तो सुलतानुद्दौला ने अपने बेटे अबू कालिजार को फ़ौज देकर रवाना किया। अबू कालीजार ने अहवाज पर क़ब्ज़ा कर लिया। कुछ लड़ाइयों के बाद सन् ४११ हि० में यह फ़ैसला हुआ कि इराक़ में मुशर्रफ़ुद्दौला की हुकूमत रहे और फ़ारस सुलतानुद्दौला के क़ब्ज़े में रहे।

माह रबीउल अव्वल सन् ४१६ हि० में मुशर्रफ़ुद्दौला ने अपनी हुकूमत के पांचवे साल वफ़ात पायी और उसकी जगह उसका भाई अबू ताहिर जलालुद्दीन, बसरा के हाकिम को उसकी गद्दी मिली।

मुशर्रफ़ुद्दौला की वफ़ात के बाद बग़दाद में जलालुद्दौला के नाम का ख़ुत्बा पढ़ा गया। जलालुद्दौला बसरा से रवाना होकर बजाए बग़दाद आने के वासित चला गया, इस पर बग़दाद वालों ने उस का नाम ख़ुत्बे से ख़ारिज करके उस के भतीजे अबू कालीजार बिन सुलतानुद्दौला का नाम ख़ुत्बे में दाख़िल कर दिया।

उस वक़्त अबू कालीजार भी बग़दाद में मौजूद नहीं था। यह सुन कर जलालुद्दौला वासित से बग़दाद की तरफ़ रवाना हुआ। बग़दाद की फ़ौजों ने उसको बग़दाद में दाख़िल नहीं होने दिया और हराकर वापस कर दिया। जलालुद्दौला फिर लौट कर बसरा चला गया।

अबू कालीजार अब तक वापस नहीं आया था। बग़दाद वालों को ख़तरे महसूस होने लगे, सरदारों ने आपस में मश्विरा किया, चुनांचे जलालुद्दौला ही को दोबारा बुलाने की बात तै हो गयी। उसका नाम ख़ुत्बों में शामिल कर लिया गया।

सन् ४१९ हि० में तुर्कों ने जलालुद्दौला के ख़िलाफ़ बग़ावत की, मगर ख़लीफ़ा क़ादिर बिल्लाह ने दर्मियान में पड़कर सुलह-सफ़ाई करा दी।

इसके बाद अबू कालीजार ने इराक़ पर हमला किया। जलालुद्दौला ने उसके मुक़ाबले पर फ़ौजें रवाना कीं। इस तरह लड़ाइयों का सिलसिला जारी रहा। दोनों एक दूसरे से लड़ते रहे। अभी यह सिलसिला ख़त्म न होने पाया था कि ख़लीफ़ा क़ादिर बिल्लाह ने सन् ४३२ हि० में इन्तिक़ाल किया और उस की जगह उस का बेटा अबू जाफ़र अब्दुल्लाह क़ाइम बिअम्रिल्लाह के लक़ब से ख़िलाफ़त के तख़्त पर बैठा।

क़ाईम बिअम्रिल्लाह

अबू जाफ़र अब्दुल्लाह क़ाइम बिअम्रिल्लाह बिन क़ादिर बिल्लाह १५ ज़ीक़ादा ३९१ हि० में पैदा हुआ। खूबसूरत, इबादत गुज़ार, साबिर, अदीब, खुशखत, सखी, सदक़ा देने वाला, एहसान करने वाला शख्स था।

४२६ हि० में जलालुद्दौला ने खलीफ़ा क़ाइम बिअम्रिल्लाह से दर्ख्वास्त की कि मुझ को 'मलिकुल मुल्क' का खिताब दिया जाए, चुनांचे खलीफ़ा ने इस मांग को तस्लीम करके उसे यह खिताब दे दिया।

४३१ हि० में अबू कालीजार ने बसरा पर चढ़ाई करके वहां के हाकिम को बे-दखल करके क़ब्ज़ा कर लिया और अपने बेटे इज़्ज़ुल मुलूक को बसरा की हुकूमत सुपुर्द करके खुद अहवाज़ की तरफ़ चला गया। उसी साल तुग़रल बेग सलजूक़ी ने खुरासान में सुल्तान मसऊद बिन सुबुक्तगीन के सिपहसालार को हराया और नेशापुर पर क़ब्ज़ा कर के सुलताने आज़म के लक़ब से मशहूर हुआ।

इसी साल तुग़रल बेग और जलालुद्दौला के बीच समझौता नामा लिखा गया।

शाबान सन् ४३५ हि० में जलालुद्दौला ने वफ़ात पायी और लोगों ने उसके बेटे अबू मंसूर मलिकुल अज़ीज़ को जलालुद्दौला का क़ायम मुक़ाम बनाया। उस की हरकतों से फ़ौज में बद-दिली पैदा हुई, इस मौक़े से फ़ायदा उठाकर अबू कालीजार ने फ़ौज के बहुत-से सरदारों को पटाना शुरू किया, यहां तक कि उसके नाम का खुत्बा पढ़ा जाने लगा।

सफ़र ४३६ हि० में वह बग़दाद में दाखिल हुआ और खलीफ़ा ने उसको मुहीयुद्दीन का खिताब दिया।

४३६ हि० में अबू कालीजार मुहीयुद्दीन बिन सुलतानुद्दौला बिन बहाउद्दौला बिन अज़्दुद्दौला बिन रुक्नुद्दौला बिन दैलमी ने सुलतान तुग़रल बेग से अपनी बेटी का निकाह करके उससे समझौता कर लिया।

अबू कालीजार सवा चार वर्ष हुकूमत करके सन् ४४४ हि० में फ़ौत हुआ। उसकी जगह उसका बेटा अबू नस्र फ़ीरोज़ बग़दाद गद्दी पर

बैठा और 'मलिकुर्रहीम' अपना लक़ब रखा।

मलिकुर्रहीम का ज़माना फ़सादों और झगड़ों की भेंट चढ़ गया। सुलतान तुग़रल बेग की ताक़त भी इस बीच बढ़ गयी थी। उसने बग़दाद पर क़ब्ज़ा करके ख़लीफ़ा को अपने असर में कर लिया।

बोया ख़ानदान की हुकूमत पर एक नज़र

बोया मछेरे के असर का ज़िक्र हो चुका है। इसी के बेटों, पोतों ने खिलाफ़त पर क़ाबिज़ हो कर खिलाफ़त की इज़्ज़त को ख़ाक में मिला दिया। सौ वर्ष से ज़्यादा मुद्दत तक ये लोग बग़दाद के ख़लीफ़ा और इराक़ व फ़ारस पर क़ब्ज़ा किए रहे।

ये लोग शीया थे, इसलिए सुन्नियों को बड़ी तक्लीफ़ें पहुंचायीं, शीया होने के बावजूद अलवियों को ग़ालिब नहीं होने दिया, इन सब पर मजूसियत ग़ालिब थी। इन्होंने अब्बासी हुकूमत को मिटाकर अपनी क़ौम और ख़ानदान की हुकूमत क़ायम करने की कोशिश की।

इस ख़ानदान का सबसे बड़ा कारनामा यह है कि इस ने शीयों और सुन्नियों को सौ साल तक लड़ाने में कामियाबी हासिल की और ऐसी-ऐसी बिद्अतें चालू कीं कि जिन की लानत में आज भी मुसलमान गिरफ़्तार हैं। इनकी हुकूमत के सौ-सवा सौ साल बद-नज़्मी लूट-मार और फ़ित्ना व फ़साद से भरे हुए हैं, इसलिए बोया ख़ानदान कोई मुबारक ख़ानदान नहीं कहा जा सकता। इन लोगों ने मुसलमानों के रोब व विक़ार और इस्लामी हुकूमत की अज़मत को बर्बाद करने में सबसे ज़्यादा काम किया और कोई ऐसी यादगार न छोड़ी, जिस पर आज मुसलमान फ़ख़्र कर सकें।

बहरहाल ४४७ हि० में इस ख़ानदान की हुकूमत का ख़ात्मा हो गया और उसकी जगह सलजूक़ी हुकूमत क़ाइम बिअम्रिल्लाह की खिलाफ़त के दौर में क़ायम हो गयी। सलजूक़ी क़बीला शीया न था, सुन्नी था।

सन् ४५१ हि० में सुलतान तुग़रल बेग ने बसासेरी को, जब कि वह कूफ़ा में पहुंच कर क़त्ल व ग़ारतगरी में लगा हुआ था, हमला

करके गिरफ़्तार व क़त्ल किया और उसका सर काट कर बग़दाद भेज दिया।

मुहर्रम ४५२ हि० में सुलतान तुग़रल बेग ने बग़दाद के इन्तिज़ाम से फ़ारिग़ होकर वासित की तरफ़ कूच किया।

४५३ हि० में सुलतान तुग़रल बेग ने अपनी बीवी के फ़ौत होने पर ख़लीफ़ा को पैग़ाम दिया कि अपनी बेटी से मेरा निकाह कर दे। उसने इसे मान लिया और ४५४ हि० में तबरेज़ की क़ौम में ख़लीफ़ा की बेटी और तुग़रल बेग का निकाह हो गया।

१५ शाबान ४६७ हि० को ख़लीफ़ा ने फ़स्द खुलवायी, ख़ून जारी हो गया, इतना ख़ून निकला कि ज़िंदगी की उम्मीद ख़त्म हो गयी। अबुल क़ासिम अब्दुल्लाह बिन जख़ीरतुद्दीन मुहम्मद बिन क़ाइम बिअम्रिल्लाह की वली अह्दी की बैअत ली गयी।

दूसरे दिन ख़लीफ़ा का इन्तिक़ाल हुआ। अबुल क़ासिम 'मुक़्तदी बिअम्रिल्लाह' के लक़ब से ख़लीफ़ा बना।

ख़लीफ़ा क़ाइम बिअम्रिल्लाह की ख़िलाफ़त ४५ साल रही।

मुक़्तदी बिअम्रिल्लाह

अबुल क़ासिम अब्दुल्लाह मुक़्तदी बिअम्रिल्लाह बिन मुहम्मद बिन क़ाइम बिअम्रिल्लाह अर्ग़वान नामी लौंडी के पेट से पैदा हुआ था। १९ साल तीन माह की उम्र में तख़्त पर बैठा।

ख़लीफ़ा बनते ही खेल-तमाशे और गाने-बजाने को बन्द कराने का हुक्म निकाल दिया। इसके ज़माने में ख़िलाफ़त के रौब व इक़्तिदार ने तरक़्क़ी की। यह ख़लीफ़ा परहेज़गार, दीनदार और हिम्मत वाला था। शाबान ४६७ हि० में तख़्त पर बैठा।

५ मुहर्रम ४८७ हि० को ख़लीफ़ा मुक़्तदी बिअम्रिल्लाह ने यकायक वफ़ात पायी। ख़लीफ़ा मुक़्तदी की वफ़ात के बाद उसका बेटा अबुल अब्बास अहमद तख़्त पर बैठा और मुस्तज़्हिर बिल्लाह लक़ब अख़्तियार किया।

मुस्तज़िहर बिल्लाह

अबुल अब्बास अहमद मुस्तज़िहर बिल्लाह बिन मुक़्तदी बिल्लाह शव्वाल ४७० हि० में पैदा हुआ और अपने बाप के बाद सोलह साल की उम्र में तख़्त पर बैठा। मुक़्तदी वफ़ात के वक़्त बरकियारक़ बग़दाद में मौजूद था। उसने खुशी-खुशी मुस्तज़िहर बिल्लाह की बैअत की।

सुलतान बरकियारक़ और उस के भाई सुलतान मुहम्मद के दर्मियान लड़ाइयों का सिलसिला बराबर जारी रहा। कभी बग़दाद में एक की हुकूमत होती, कभी दूसरे की, कभी समझौता हो जाता और फिर तुरन्त ही लड़ाई होने लगती। जुमादल ऊला सन ४९७ हि० में दोनों भाइयों के बीच एक समझौता हुआ और दोनों के बीच देश बांट दिए गये, साथ ही यह शर्त भी दोनों ने मंज़ूर कर ली कि दोनों के क़ब्ज़ा किए देशों में दोनों के नाम का ख़ुत्बा पढ़ा जाए। इस समझौते के मुताबिक़ बग़दाद की हुकूमत सुलतान बरकियारक़ के पास रही। इस समझौते के कुछ दिनों तक बरकियारक़ अस्फ़हान में ठहरा रहा, वहां से बग़दाद की ओर आ रहा था कि रास्ते में यज्द गुंद नामी जगह पर बीमार होकर रबीउस्सानी ४९८ हि० में इन्तिक़ाल किया। मरते वक़्त उसने अपने बेटे मलिक शाह बिन बरकियारक़ को वली अह्द और अमीर अयाज़ को उसका हाउस मास्टर बनाया।

मलिक शाह की उम्र उस वक़्त सिर्फ़ पांच साल की थी। बरकियारक़ के जनाज़े को अस्फ़हान में ले जाकर दफ़्न किया गया।

अमीर अयाज़ मलिक शाह को लेकर १५ रबीउस्सानी सन ४९८ हि० में बग़दाद में दाख़िल हुआ। ख़लीफ़ा ने मलिक शाह को वे तमाम ख़िताब, जो उसके दादा मलिक शाह बिन अरसलां को हासिल थे, अता किए और उसके नाम का ख़ुत्बा बग़दाद में पढ़ा गया।

इसके बाद सुलतान मुहम्मद ने मूसल पर क़ब्ज़ा करके बग़दाद का रुख़ किया, सन ५०१ हि० में वहां दाख़िल हुआ, अमीर अयाज़ को क़त्ल किया और अपने नाम का ख़ुत्बा पढ़वाया।

५११ हि० में सुलतान मुहम्मद बीमार हुआ, मरज़ लम्बा खिंच

गया, आख़िर ज़िलहिज्जा ५११ हि० में सुलतान मुहम्मद बिन मलिक शाह ने वफ़ात पायी और उसका बेटा सुलतान महमूद बाप की जगह तख़्त पर बैठा।

१५ रबीउल आख़र सन ५१२ हि० को ख़लीफ़ा मुस्तज़्हिर बिल्लाह ने चौबीस साल तीन महीने ख़िलाफ़त करने के बाद वफ़ात पायी और उसका बेटा अबू मंसूर फ़ज़्ल तख़्त पर बैठा और अपना लक़ब मुस्तर्शिद बिल्लाह रखा।

मुस्तर्शिद बिल्लाह

मुस्तर्शिद बिल्लाह बिन मुस्तज़्हिर बिल्लाह रबीउल अव्वल सन ४८५ हि० में पैदा हुआ और २७ साल की उम्र में अपने बाप के बाद सन ५१२ हि० में १५ रबीउल आख़र में तख़्त पर बैठा।

५२५ हि० के शव्वाल महीने में सुलतान महमूद ने इंतिक़ाल किया, उसकी जगह उसका बेटा दाऊद तख़्त पर बैठा।

१६ ज़ीक़ाद ५२६ हि० को ख़लीफ़ा मुस्तर्शिद बिल्लाह को बातनी फ़िर्के के लोगों ने क़त्ल कर डाला औरउसके बाद ख़लीफ़ा मुस्तर्शिद काबेटा अबू जाफ़र मंसूर तख़्त पर बैठा और उसने अपना लक़ब राशिद बिल्लाह मुक़र्रर किया।

राशिद बिल्लाह

राशिद बिल्लाह बिन मुस्तर्शिद बिल्लाह सन ५०० हि० में पैदा हुआ था। राशिद बिल्लाह ने लोगों से माल व दौलत के लेने में किसी क़दर ज़ुल्म व ज़्यादती से काम लिया। सुलतान मसऊद ने जब यह सुना तो क़ाज़ी से फ़त्वा लेकर उसे हटा दिया और उसके चचा मुहम्मद बिन मुस्तज़्हिर को तख़्त पर बिठाया।

१६ रमज़ान ५३२ हि० को कुछ अजमियों ने राशिद बिल्लाह को छुरों से घोंप कर क़त्ल कर डाला।

मुक्तज़ी लिअम्रिल्लाह

अबू अब्दुल्लाह मुहम्मद मुक्तज़ी लिअम्रिल्लाह बिन मुस्तज़्हिर बिल्लाह १२ रबीउल अव्वल सन ४७९ हि० को एक हब्शी बांदी के पेट से पैदा हुआ और १२ ज़िलहिज्जा सन ५३० हि० को खलीफ़ा बना।

मुक्तज़ी लिअम्रिल्लाह की खास बात यह थी कि उसने अपने आप को सलजूकी सुलतानों के इक्तिदार से आज़ाद करके इराक़ व बग़दाद पर आज़ादी के साथ हुकूमत की और इसी लिए वह अब्बासी खलीफ़ों के आखिरी कमज़ोर खलीफ़ों में एक नामी और ताक़तवर खलीफ़ा समझा जाता है।

दैलमी और सलजूक़ी

दैलमी यानी बोया के खानदान ने ताक़त हासिल करके अब्बासी खानदान के खलीफ़ों की इज़्ज़त को बर्बाद किया और अपनी हुकूमत के दौर में इस्लामी खिलाफ़त को सख्त नुक़सान पहुंचाया। उन लोगों के ज़माने में शीयों-सुन्नियों के हंगामे भी बरपा रहे और मुसलमानों की ताक़त बराबर कमज़ोर होती रही।

इनके बाद जब सलजूक़ियों ने उनकी जगह ली और वे इक्तिदार में आए तो खिलाफ़त और खलीफ़ों की इज़्ज़त व ताज़ीम ने तरक़्क़ी की। सलजूक़ियों ने अब्बासी खानदान के साथ अक़ीदतमंदी का बर्ताव किया।

सलजूक़ियों की ताक़त बोया खानदान से कहीं ज़्यादा थी। सलजूक़ी सुलतानों ने कुल मिलाकर खलीफ़ा से गद्दारी व बे-वफ़ाई का बर्ताव नहीं किया। सलजूक़ियों के ज़माने में मुसलमानों की बर्बाद ताक़त व अज़्मत फिर वापस आयी। सल्जूक़ी थे भी सलाहियत वाले, वे दीनदार भी थे। आखिर ज़माने में आपस की लड़ाई और खानाजंगी ने सलजूक़ी हुकूमत का खात्मा कर दिया। बहरहाल खलीफ़ा मुक्तज़ी के ज़माने में सलजूक़ियों का भी खात्मा हो गया। अगरचे सलजूक़ी सरदार इसके बाद

एक मुद्दत तक छोटे-छोटे हिस्सों पर हुकूमत करते दीख पड़ते हैं, मगर नायबे सलतनत और सरपरस्त होने की हैसियत से वे अपना दौर खत्म कर चुके।

मुस्तन्जिद बिल्लाह

मुस्तन्जिद बिल्लाह बिन मुक्तज़ी लिअम्रिल्लाह रबीउस्सानी सन ५१० हि० में पैदा हुआ, ५४७ हि० में वली अह्द बनाया गया और अपने बाप की वफ़ात के बाद रबीउल अव्वल सन ५५५ हि० में खलीफ़ा बना। ५५६ हि० में तुर्कमानों, कुर्दों और अर्बों ने एक के बाद एक बग़ावत कर दी। एक ओर खलीफ़ा मुस्तन्जिद ने इन बग़ावतों को खत्म किया, इसी तरह और दूसरी बग़ावतें हुईं, जिन्हें खलीफ़ा ने कुचल दिया।

इसी दौर में शाम और मिस्र दोनों मुल्कों की इस्लामी ताक़त मिल कर ईसाइयों के हमलों पर मुतवज्जह रही, ये दोनों अपने पुराने आक़ा सुलतान नूरुद्दीन महमूद के भी वफ़ादार थे।

इस तरह खलीफ़ा का इक्तिदार व रौब पूरे तौर पर क़ायम हो गया यह ज़माना अम्न व अमान और इराक़ व शाम व मिस्र के मुसलमानों के लिए इत्मीनान का ज़माना था।

९ रबी उस्सानी सन ५६६ हि० में खलीफ़ा मुस्तन्जिद बिल्लाह ने बीमार हो कर वफ़ात पायी।

इसी खलीफ़ा के ज़माने में हज़रत सैयद शेख अब्दुल क़ादिर जीलानी रह० ने वफ़ात पायी।

मुस्तन्जिद के बाद लोगों ने उस के बेटे अबू मुहम्मद हसन को खिलाफ़त के तख्त पर बिठा कर मुस्तज़ी बिअम्रिल्लाह का लक़ब दिया।

मुस्तज़ी बिअम्रिल्लाह

मुस्तज़ी बिअम्रिल्लाह बिन मुस्तन्जिद बिल्लाह ५३६ हि० में पैदा हुआ। उस ने तख्त पर बैठते ही अद्ल व इंसाफ़ क़ायम किया। जनता के

तमाम टैक्स माफ़ कर दिए।

इसके तख्त पर बैठने के पहले ही साल में मिस्र के अंदर उबैदियों की हुकूमत का खात्मा हो गया। जब सलाहुद्दीन यूसुफ़ उबैदियों के आखिरी हाकिम आज़िदुद्दीन लिल्लाह का वज़ीरे आज़म बना, तो उसने मिस्र में फैली तमाम बद-अम्नियों को खत्म करने के हर क़िस्म के इन्तिज़ाम किये और पूरे तौर पर हर एक मुहक्मे को अपने हाथ में ले कर हुकूमत करने लगा।

नूरुद्दीन महमूद ज़ंगी, शाम के हाकिम ने ५६६ के आखिरी दिनों में सुलतान सलाउद्दीन को लिखा कि मिस्र में खलीफ़ा मुस्तज़ी बिअम्रिल्लाह अब्बासी के नाम का खुत्बा जारी करो और मुहर्रम सन २६७ हि० की शुरू की तारीखों में आशूरा के दिन से पहले जो जुमा आया, खलीफ़ा मुस्तज़ी बिअम्रिल्लाह के नाम का खुत्बा पढ़ा गया, मगर मिस्र में किसी ने इस की मुखालफ़त नहीं की, बल्कि पसन्द किया। इस खबर के मिलते ही खलीफ़ा ने नूरुद्दीन को मिस्र, शाम, जज़ीरा, मूसल, दयारे बक्र, खल्लात, बिलादे रूम, सवादे इराक़ का हाकिम बना दिया और नूरुद्दीन ने सलाहुद्दीन को मिस्र का हाकिम और बादशाह नामज़द किया। जिस तरह सलाहुद्दीन नूरुद्दीन का फ़रमांबरदार था, उसी तरह नूरुद्दीन खलीफ़ा बग़दाद का फ़रमांबरदार रहा।

यह सूरत देख खलीफ़ा मुस्तज़ी से तमाम बादशाह डरने लगे और दूर-दूर तक उस के नाम का खुत्बा पढा जाने लगा। किसी को खलीफ़ा की मुखालफ़त की हिम्मत न रही।

ज़ीक़ाद सन ५७५ हि० में खलीफ़ा मुस्तज़ी बिअम्रिल्लाह साढ़े नौ बरस खिलाफ़त करने के बाद फ़ौत हुआ। वज़ीर ज़हीरुद्दीन बिन अता ने उसके बेटे अबुल अब्बास अहमद को खलीफ़ा बनाया। उस ने नासिरुदीनिल्लाह का लक़ब अख्तियार किया।

नासिरु दीनिल्लाह

नासिरुदीनिल्लाह बिन मुस्तज़ी बिअम्रिल्लाह १० रजब सन ५५३ हि०में पैदा हुआ और ज़ीक़ादा सन ५७५ हि०में अपने बाप की जगह तख्त-

नशीन हुआ। बहुत होशियार, दूर तक सोचने वाला और मुस्तैद खलीफ़ा था।

खलीफ़ा नासिरुद्दीनिल्लाह का सब से बड़ा कारनामा यह है कि उस ने सलजूक़ी सुलतानों की जड़ें उखाड़ दीं और बग़दाद में बने उन के महलों की बुनियादें खोद कर गिरा दिया, साथ ही हमदान, रे, इस्फ़हान वग़ैरह कुछ सूबों पर से सलजूक़ी असरात खत्म कर दिये।

६१६ हि० में क़बीला तातार ने जो लगभग इलाक़ा चीन के पहाड़ों में रहता था, बग़ावत किया, इन लोगों का वतन तुर्किस्तान से छः महीने की दूरी पर था। इस क़बीले के सरदार का नाम चंगेज खां था, जो तुर्कों के क़बीले तमर्जी से ताल्लुक़ रखता था। चंगेज़खां ने तुर्किस्तान व मावरा-उन्नहर पर चढ़ाई की और तुर्कों ने खता से उन मुल्कों को छीन कर खुद क़ब्ज़ा कर लिया।

इस के बाद खुरासान व बिलादे जबल पर भी क़ब्ज़ा कर लिया।

रमज़ान के आखिर में सन ६२२ हि० में ४७ साल की खिलाफ़त के बाद खलीफ़ा नासिरुद्दीनिल्लाह ने वफ़ात पायी।

नासिरुद्दीनिल्लाह ने अपने जासूस तमाम मुल्कों और शहरों में फैला रखे थे, वह लोगों के मामूली कामों और बातों का भी इल्म रखने की कोशिश किया करता था। सियासी चालें चलना खूब जानता था, मुल्क में उस का रौब खूब क़ायम हो गया था, मगर जनता उस से खुश न थी और उस की सख्तियों और सख्त सज़ाओं से शिकायत रखती थी।

इसी खलीफ़ा के ज़माने में सन ५८३ हि० में सुलतान सलाहुद्दीन ने रूमियों के बहुत से शहर फ़त्ह किए। बैतुल मक़्दिस भी ९१ साल के बाद मुसलमानों के क़ब्ज़े में आया।

सन ५८९ हि० में सुलतान सलाहुद्दीन यूसुफ़, बैतुल मक़्दिस के फ़ातेह ने वफ़ात पायी।

इसी खलीफ़ा के अह्द में अबुल फ़र्ह बिन जौज़ी, इमाम फ़ख्रुद्दीन राज़ी, नज्मुद्दीन कुबरा, क़ाज़ी खां साहिबे अल-फ़तावा, साहिबे हिदाया वग़ैरह ने वफ़ात पायी।

खलीफ़ा नासिरुद्दीनिल्लाह के बाद उस का बेटा अबू नस्र मुहम्मद तख्त पर बैठा और उस ने अपना लक़ब ज़ाहिर बिअम्रिल्लाह अख्तियार किया।

ज़ाहिर बिअम्रिल्लाह

ज़ाहिर बिअम्रिल्लाह बिन नासिर सन ५७१ हि० में पैदा हुआ। ५२ साल की उम्र में अपने बाप के बाद पहली शव्वाल सन ६२२ हि० को तख़्त पर बैठा।

उस ने तख़्त पर बैठते ही अदल व इंसाफ़ पर खास तवज्जोह फ़रमायी। जनता को आराम पहुंचाया, टैक्स माफ़ कर दिए, लोगों की जायदादें, जो पहले खलीफ़ों ने ज़ब्त की थीं, सब वापस करदीं, क़र्ज़ वालों के क़र्ज़े खुद अदा कर देता था।

इस खलीफ़ा का कहना था कि मैं ने शाम के वक़्त दुकान खोली है, मुझे नेकियां कर लेने दो।

एक बार खलीफ़ा खज़ाने की तरफ़ निकल आया। एक गुलाम ने कहा कि यह खज़ाना आपके वालिद के ज़माने में भरा रहता था। खलीफ़ा ने कहा, मुझे ऐसा कोई उपाय नहीं मालूम कि यह फिर भर जाए, मुझ को तो खज़ाना खाली ही करना आता है, खज़ाने का जमा करना तो सौदागरों का काम है।

इस खलीफ़ा का ज़माना हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ के ज़माने से मिलता-जुलता है, मुल्क में भी अम्न व अमान रहा और जनता भी उस के दिए अदल व इंसाफ़ से बहुत खुश रही, मगर उस की उम्र ने वफ़ा न की, सिर्फ़ साढ़े नौ महीने खिलाफ़त कर के १५ रजब सन ६२३ हि० को फ़ौत हुआ।

उस की वफ़ात के बाद उसका बेटा अबू जाफ़र मंसूर तख़्त पर बैठा और अपना लक़ब मुस्तन्सिर बिल्लाह तज्वीज़ किया।

अबू जाफ़र मुस्तन्सिर बिल्लाह

मुस्तन्सिर बिल्लाह बिन ज़ाहिर बिअम्रिल्लाह ५८८ हि० में पैदा हुआ और अपने बाप की वफ़ात के बाद ६ रजब ६२३ हि० में तख़्त पर बैठा।

यह खलीफ़ा अख्लाक़ में अपने बाप जैसा ही था, अद्ल व इंसाफ़ के क़ायम रखने में अपने बाप की तरह कोशिश की।

दीन व मज़हब की पाबन्दी का इस को खास तौर पर शौक़ था। बग़दाद में उस ने एक मदरसा मुस्तन्सरिया बनाया और बड़े-बड़े उलेमा पढ़ाने पर मुक़र्रर किए इस मदरसे की तामीर का काम ६२५ हि० में शुरू हो कर ६३१ हि० में खत्म हुआ। इस मदरसे में एक लाइब्रेरी क़ायम की, जिस में एक सौ साठ ऊंटों पर लाद कर बहुत उम्दा-उम्दा किताबें दाखिल की गयीं।

६२८ हि० में मलिक अशरफ़ ने दारुल हदीस अशरफ़िया की बुनियाद रखी। ६३० हि० में वह पूरा हुआ।

सन ६३४ हि० में अलाउद्दीन के बाद बिन क़ल्ज अर्सलान बिन सुलेमान बिन क़तलमश बिन इस्राईल बिन सल्जूक़, जो ऐशिया-ए कोचक के बड़े हिस्से पर क़ब्ज़ा किए हुए था, फ़ौत हुआ और उस का बेटा ग़यासुद्दीन, केखसरू तख्त पर बैठा। ६३१ हि० में तातारियों ने ग़यासुद्दीन केखसरू पर चढ़ाई कर के उसे हरा दिया और उस ने तातारियों की इताअत क़ुबूल करके टैक्स देना मंज़ूर कर लिया। इस तरह रूमी सलजूक़ियों की दो सदी की हुकूमत का खात्मा एशियाए कोचक में हो गया।

खलीफ़ा मुस्तन्सिर ने मुल्क के इन्तिज़ाम और अद्ल व इंसाफ़ के क़ायम करने की बहुत कोशिश की, मगर चूंकि तुर्कों और तातारियों ने एक-एक कर के सूबों और रियासतों पर क़ब्ज़ा करना शुरू कर दिया और जल्द-जल्द एक के बाद दूसरा मुल्क उन के क़ब्ज़े में आता गया, इस लिए खलीफ़ा की आमदनी कम हो गयी।

सन ६४१ हि० में खलीफ़ा मुस्तन्सिर फ़ौत हुआ।

मुस्तासिम बिल्लाह

मुस्तासिम बिल्लाह बिन मुस्तन्सिर बिल्लाह सन ५९० हि० में पैदा हुआ और अपने बाप मुस्तन्सिर के बाद तख्त पर बैठा। यह खलीफ़ा कम-हिम्मत और कम-अक्ल था, अगरचे दीनदार और नेक था, मगर सूझ-बूझ की कमी की वजह से अपना वज़ीर एक कट्टर शीया मुईदुद्दीन अलक़मी को बनाया।

अलक़मी ने वज़ीर बनते ही ख़लीफ़ा को कठपुतली की तरह अपने हाथ में ले लिया। अलक़मी ने शीयों को आगे बढ़ाना शुरू किया, उन्हें हर क़िस्म की रियायतें दीं, बैलमियों की ख़िद्मतों को ख़िदा किया। साथ ही अलक़मी की यह कोशिश भी रही कि बग़दाद में अब्बासियों का नाम व निशान मिटाकर अलवियों की ख़िलाफ़त क़ायम की जाए। इस तरह शीयों का ज़ुल्म बराबर बढ़ने लगा।

ख़लीफ़ा के बेटे अबूबक्र ने शीयों की इन बढ़ती ज़्यादतियों को रोकने के लिए ख़ुद बग़दाद के मुहल्ला कर्ख़ पर हमला किया, जो बिल्कुल शीयों की आबादी थी और अलक़मी को भी बुरा-भला कहा, इससे अल-क़मी को मलाल हुआ और ख़लीफ़ा से शिकायत की, मगर ख़लीफ़ा ने बेटे का ख़्याल किया और अबूबक्र को सज़ा न दी। बस क्या था, अलक़मी को गद्दारी का मौक़ा मिल गया। उसने चंगेज़ ख़ां के पोते हलाकू ख़ां से, जो तातारियों का सबसे बड़ा सरदार और ख़ुरासान वग़ैरह देशों का बादशाह था, पत्र-व्यवहार शुरू किया, हलाकू ख़ां को बग़दाद पर चढ़ाई के लिए तैयार किया, यहां तक कि वह बग़दाद पर एक भारी फ़ौज लेकर आ पहुंचा।

जब इस फ़ौज के क़रीब पहुंचने की ख़बर मोतसिम बिल्लाह ने सुनी तो फ़त्हुद्दीन दाऊद और मुजाहिदीन ऐबक को दस हज़ार सवारों के साथ रवाना किया। मुग़ल तातारी हार गये, फ़ौज में भगदड़ मच गयी, लेकिन इनकी थोड़ी सी चूक से उस तातारी फ़ौज ने फिर पलट कर हमला कर दिया, इस बार ख़लीफ़ा की फ़ौज की जीत हार में बदल गयी। बग़-दाद घेर लिया गया। शहर वालों ने मुक़ाबला किया और पचास दिन तक तातारियों को शहर में नहीं घुसने दिया। शहर के शीयों ने हलाकू ख़ां की फ़ौज में जा-जाकर अम्न हासिल किया और शहर के हालात की ख़बर दी।

वज़ीर अलक़मी शहर के अन्दर ही रहा और बराबर हलाकू ख़ां के पास ख़बरें भेजता रहा। चूंकि वज़ीर को शहर वालों से हमदर्दी न थी, इसलिए शहर वाले दम-ब-दम कमज़ोर और परेशान होते गये। आख़िर वज़ीर अलक़मी पहले शहर से निकल कर हलाकू ख़ां से मिला और सिर्फ़ अपने लिए अम्न तलब करके वापस आया और ख़लीफ़ा से कहा कि मैंने आप के लिए भी अम्न हासिल किया है। आप हलाकू ख़ां के पास चलें, वह आप को इराक़ पर वैसे ही क़ाबिज़ बनाए रखेगा, जैसा

कि ग़यासुद्दीन केखसरू को तातारियों ने उसके मुल्क पर हाकिम बनाए रखा है।

खलीफ़ा मय अपने बेटे के शहर से निकल कर हलाकू खां के पास पहुंचा। हलाकू खां ने खलीफ़ा को देखकर कहा कि अपने सरदारों और शहर के उलेमा वग़ैरह को भी आप बुलवाएं। खलीफ़ा को हलाकू खां ने फ़ौज में रोके रखा। खलीफ़ा का हुक्म सुनकर तमाम सरदार और उलेमा बाहर आ गये। हलाकू खां ने इन सब को एक-एक कर के क़त्ल कर दिया।

इसके बाद हलाकू ने खलीफ़ा से कहा कि तुम शहर में पैग़ाम भेज दो कि शहर वाले हथियार रखकर शहर से बाहर आ जाएं। मुस्तासिम ने यह पैग़ाम भी भेज दिया। शहर वाले खाली हाथ बाहर निकले और तातारियों ने उन को क़त्ल करना शुरू किया। शहर के तमाम सवार और प्यादे और शरीफ़ लोग खीरे-ककड़ी की तरह कई लाख की तायदाद में क़त्ल कर दिए गए।

फिर तातारी लोग शहर में घुस पड़े। औरतें और बच्चे अपने सरों पर क़ुरआन मजीद रख-रख कर घरों से निकले, मगर तातारियों की तलवार से कोई भी न बच सका। हलाकू खां ने अपनी फ़ौज को क़त्ले आम का हुक्म दे दिया था।

अगले रोज़, जुमा के दिन, ९ सफ़र सन् ६५६ हि० को हलाकू खां खलीफ़ा मुस्तासिम को साथ लिए हुए बग़दाद में दाखिल हुआ खिलाफ़त-महल में दाखिल होकर मीटिंग की, खलीफ़ा को सामने बुलवाया और कहा कि हम तुम्हारे मेहमान हैं, हमारे लिए कुछ हाज़िर करो। खलीफ़ा पर इतना डर छाया हुआ था कि वह कुंजियों को न पहचान सका, आखिर खज़ाने के ताले तोड़े गये, दो हज़ार निहायत नफ़ीस पोशाकें, हज़ार दीनार और सोने के ज़ेवर हलाकू के सामने पेश किए गए।

उसने कहा, ये चीज़ें तुम न भी देते, तब भी हमारी ही थीं। यह कहकर अपने दरबारियों में सबको तक़्सीम कर दिया और कहा कि उन खज़ानों का पता बताओ, जिन का हाल किसी को मालूम नहीं कि वे कहां दफ़्न हैं।

खलीफ़ा ने तुरन्त उन खज़ानों का पता बताया। ज़मीन खोदकर देखा गया तो जवाहरात और अशर्फ़ियों की थैलियों से भरे हुए हौज़

निकले।

हलाकू खां की फ़ौज के हाथों बग़दाद और बग़दाद के आस-पास के इलाक़ों में एक करोड़ छः लाख मुसलमान मक़्तूल हुए और ये तमाम नज़ारे ख़लीफ़ा मोतसिम को देखने पड़े।

हलाकू खां ने ख़लीफ़ा को बे-खाना-पीना नज़रबंद रखा, ख़लीफ़ा को भूख लगी और खाना मांगा तो हलाकू खां ने हुक्म दिया कि एक तश्त जवाहरात को भरकर सामने ले जाओ और कहो कि इसे खाओ। ख़लीफ़ा ने कहा, मैं इनको कैसे खा सकता हूं ?

हलाकू खां ने कहला भेजा कि जिस चीज़ को तुम खा नहीं सकते उसको अपनी और लाखों मुसलमानों की जान बचाने के लिए क्यों न खर्च किया और सिपाहियों को क्यों न दिया कि वे तुम्हारी तरफ़ से लड़ते और तुम्हारा मौरूसी मुल्क बचाते और हमारी दखलंदाज़ी से बचे रहते। इसके बाद हलाकू खां ने मुस्तासिम को नमदे में लपेट कर लातों से कुचलवाया, यहां तक कि उसका दम निकल गया।

इसके बाद हलाकू खां ने शाही लाइब्रेरी की तरफ़ रुख किया, इसकी तमाम किताबें दजला में फेंक दीं, जिससे दजला में एक बांध सा बंध गया। तमाम शाही महलों को लूटने के बाद उन्हें ढा दिया गया। ग़रज़ इन तातारियों के हाथों यह मुसलमानों की खूंरेज़ी और बर्बादी एक बहुत बड़ी क़ियामत थी और उस पूरी तबाही की वजह अलक़मी था, जो चाहता था कि खिलाफ़त अलवी खानदान में चली जाए और मैं उसका वज़ीर आज़म बना दिया जाऊं।

लेकिन हलाकू खां ने उसके सपने को पूरा न किया और उसने इराक़ में अपने हाकिम मुक़र्रर कर दिये। आखिर इस नाकामी के सदमे से वह बहुत जल्द मर गया।

ख़लीफ़ा मोतसिम के बाद दुनिया में साढ़े तीन साल तक कोई ख़लीफ़ा न रहा। इस के बाद रजब ६५६ हि० में मोतसिम बिल्लाह के चचा अबुल क़ासिम अहमद के हाथ खिलाफ़त की बैअत हुई।

अब्बासी ख़लीफ़ा मिस्र में

सुलतान सलाहुद्दीन बिन अय्यूब ने उबैदी सरकार के बाद मिस्र

में अय्यूबी सरकार की बुनियाद डाली थी। सन् ६४८ हि० तक मिस्र, शाम और हिजाज़ की हुकूमत सुलतान सलाहुद्दीन के खानदान में रही। सुलतान सलाहुद्दीन चूंकि कुर्द थे, इसलिए अय्यूबी सरकार को कुर्दी सरकार भी कहते हैं।

अय्यूबी हुकूमत का सातवां बादशाह 'मलिकुस्सालेह' था, जो सुलतान अय्यूबी के भाई का पड़पोता था।

उसने अपने खानदानी दुश्मनों से बचाव के लिए क़ाफ़ पर्वत के इलाक़े यानी सरकेशिया प्रान्त के बारह हज़ार गुलाम खरीद कर अपनी हिफ़ाज़त के लिए एक नयी पैदल फ़ौज तैयार कर ली, जब से इस फ़ौज ने फ्रांस की फ़ौज को हराकर बादशाह को क़ैद कर लिया था, उस वक़्त से इसकी अहमियत बहुत बढ़ गयी थी।

धीरे-धीरे गुलामों की यह फ़ौज काफ़ी ताक़त पकड़ गयी, और जब अय्यूबी हुकूमत का ज़ोर घटने लगा तो ये हुकूमत के प्रोग्रामों में भी दखल देने लगे, आखिर ६५३ हि० में गुलामों ने अपनी जमाअत में से एक अज़ीज़ुद्दीन ऐबक सालिही को 'मलिकुल मुइज्ज' के लक़ब से तख्तनशीन किया और मिस्र में अय्यूबी हुकूमत का खात्मा कर गुलामों की हुकूमत शुरू हुई।

सन् ६५५ हि० में मलिकुल मुइज्ज के बाद उसका नव-उम्र बेटा अली तख्त पर बैठा और उसका लक़ब 'मलिकुल मंसूर' रखा गया।

सन् ६५७ हि० में उलेमा से फ़त्वा लेकर मलिकुल मंसूर को इसलिए हटाया गया कि अभी बच्चा था, उस की जगह अमीर सैफ़ुद्दीन तख्तनशीन हुआ और मलिकुल मुज़फ़्फ़र उसका खिताब तज्वीज़ हुआ।

मलिकुल मुज़फ़्फ़र ने जब यह सुना कि मुग़ल यानी तातारी फ़ौजों ने बग़दाद व इराक़ और खुरासान व फ़ारस व आज़रबाईजान व जज़ीरा व मूसल वग़ैरह को बर्बाद व पामाल करने के बाद अपनी पूरी ताक़त से शाम के इलाक़े को बर्बाद और खाक स्याह बनाना शुरू कर दिया है तो वह अपनी फ़ौज लेकर आगे बढ़ा और तातारियों की भारी फ़ौज को ऐसी ज़बरदस्त हार हुई कि आज तक मुग़लों को ऐसी ज़िल्लत भरी हार का मुंह नहीं देखना पड़ा था।

मलिकुल मुज़फ़्फ़र के बाद रुक्नुद्दीन बबरस तख्त पर बैठा और अपना लक़ब मलिकुज्ज़ाहिर तज्वीज़ किया।

मलिकुज्ज़ाहिर के तख्तनशीन होने के बाद उसे मालूम हुआ कि

अब्बासी खानदान के पैंतीसवें आखिरी खलीफ़ा मोतसिम बिल्लाह का चचा अबुल क़ासिम अहमद, जो बग़दाद में अर्से से क़ैद था, बग़दाद की बर्बादी और मोतसिम के क़त्ल होने के वक़्त किसी तरह क़ैदखाने से निकल कर और छिपकर भाग निकला और वह शाम देश की किसी जगह पर छिपा हुआ है, चनांचे मलिकुज्ज़ाहिर ने दस इज़्ज़तदार अरबों का एक वफ़्द मिस्र से अबुल क़ासिम अहमद बिन ज़ाहिर बिअम्रिल्लाह अब्बासी की खोज में भेजा।

ये लोग अबुल क़ासिम को साथ लेकर मिस्र पहुंचे। मलिकुज्ज़ाहिर ने स्वागत किया और १३ रजब ६५९ हि० में खिलाफ़त की बैअत उसके हाथ पर की और मुन्तन्सिर बिल्लाह का लक़ब तज्वीज़ किया। उसके नाम का खुत्बा पढ़वाया। खलीफ़ा ने मलिकुज्ज़ाहिर को नायबे सलतनत मुक़र्रर किया।

मलिकुज्ज़ाहिर ने खलीफ़ा के वास्ते खिदमतगार, खज़ानची, आब-दार, और ज़रूरी अह्लकार मुक़र्रर फ़रमा दिया और मिस्र के खज़ाने का एक हिस्सा खलीफ़ा के लिए खास कर दिया।

अब्बासी खलीफ़ों का यह सिलसिला उस वक़्त तक चला, जब तक मिस्र में गुलामों की हुकूमत रही।

सन ९२२ हि० में गुलामों के आखिरी बादशाह तूमानबे को सुलतान सलीम उस्मानी के मुक़ाबले में हार का मुंह देखना पड़ा और मिस्र का मुल्क उस्मानी हुकूमत के मुल्कों में शामिल हुआ और मिस्र में भी अब्बासी हुकूमत का सिलसिला खत्म हुआ।

मिस्र में अब्बासी खलीफ़ों की हालत इसी क़िस्म की थी जैसे आज-कल पीरों की गद्दियां नज़र आती हैं। नाम के लिए तो ये खलीफ़ा कह-लाते और अपना वली अह्द भी मुक़र्रर करते थे। उन की तंख्वाहें बंधी होतीं, उन्हें कहीं आने-जाने की इजाज़त नहीं होती थी, न किसी शख्स को उन से मिलने दिया जाता था। उन की हैसियत सियासी शाही क़ैदी जैसी थी, उन को खलीफ़ा कहा तो जाता था, लेकिन खिलाफ़त का जो मक़सद और जो मतलब है, इन खलीफ़ों को उस से दूर-दूर तक का भी ताल्लुक़ न था।

सुलतान सलीम उस्मानी ने मिस्र पर क़ब्ज़ा करने के बाद मिस्र के अब्बासी खलीफ़ा मुहम्मद नामी पर भी क़ब्ज़ा किया, जो मिस्र के खलीफ़ों के सिलसिले में अठारवां और आखिरी खलीफ़ा था। इस खलीफ़ा के पास

जो अलम (झंडा) और जुब्बा, खिलाफ़त के निशान के तौर पर मौजूद था, वह सुलतान सलीम ने उस को रजामंद कर के ले लिया और मिस्र से चलते वक़्त उस आख़िरी अब्बासी ख़लीफ़ा को भी अपने साथ ही ले गया।

इस अब्बासी ख़लीफ़ा ने सुलतान सलीम को ख़िलाफ़त के मामले में अपना जानशीन बना दिया और इस तरह ६२२ हि० में अब्बासियों की वह खिलाफ़त जो सफ़ाह से शुरू हो कर अब आठ सौ वर्ष के बाद नाम की रह गयी थी, ख़त्म हुई और उस्मानी ख़ानदान में जो उस ज़माने में ख़िला-फ़त का सब से ज्यादा हक़दार था, शुरू हुई।

अब्बासी ख़ानदान में ३७ ख़लीफ़ा बग़दाद व इराक़ में हुए और अठारह मिस्र में, जिन की कुल तायदाद ५५ होती है।

उमवी और अब्बासी ख़िलाफ़त का फ़र्क़

उमवी ख़िलाफ़त के दौर में अरबों में जोश था, दीन को फैलाने का जज़्बा था, क़ुरआन मजीद और सुन्नते रसूल सल्ल० से उन्हें बे-हद लगाव था, उस के क़ानून पर चलना और चलाना वे बहुत ज़रूरी समझते थे।

उस वक़्त भी मुसलमान आपस में लड़ते थे, मगर उन लड़ाइयों और चढ़ाइयों के बावजूद अरब व शाम व मिस्र व इराक़ वग़ैरह इस्लामी मुल्कों में बाशिंदों की आम ज़िंदगी और अम्न क़ायम करने के लिए किसी पेचीदा हुकूमत का क़ानून न चाहती थी। ख़लीफ़ा अहम मामलों में मश्विरे लेता था, मगर मश्विरे लेने के लिए मजबूर भी नहीं था। ख़लीफ़ा को बे-मांगे भी मश्विरे दिए जाते थे और कभी-कभी उस को वह मंज़ूर भी करने पड़ते थे।

हुकूमत में आम तौर पर अरबी सादगी मौजूद थी। मामूली बद्दू भी ख़लीफ़ा तक पहुंच सकता था।

ख़लीफ़ा सूबों और विलायतों की हुकूमत पर अपने नायब मुक़र्रर कर के भेजता था और उन को उस सूबे या ज़िले में पूरे अख़्तियार हासिल हैं।

ख़लीफ़ा जिस तरह पूरी इस्लामी दुनिया का हाकिम होता था, वैसे ही तमाम इस्लामी दुनिया का वह सिपहसालारे आज़म भी होता था।

सूबों और विलायतों के हाकिम अपने सूबे के बादशाह भी होते थे और सिपहसालार भी, वही मजहबी पेशवा और नमाजों के इमाम होते थे और वही चीफ़ जस्टिस भी। कभी-कभी सूबों में एक गवर्नर मुक़र्रर होता था और उस के साथ ही दूसरा क़ाजी या चीफ़ जज खिलाफ़त के दरबार से मुक़र्रर होता था।

गवर्नर का काम मुल्क में इन्तिजाम क़ायम रखना, फ़ौज से चढ़ाई करना, दुश्मन का मुक़ाबला करने के लिए तैयार रहना, जनता की हिफ़ाजत करना और देश का टैक्स वसूल कर के खजाने में जमा करना होता था, और क़ाजी का काम शरई हदों को जारी करना, झगड़ों का फ़ैसला करना और शरई हुक्मों की पाबन्दी करना होता था।

क़ाजी गवर्नर का ताबेअ होता था। कभी-कभी गवर्नर और क़ाजी के अलावा तहसीलदार भी खिलाफ़त के दरबार ही से अलग मुक़र्रर होता था, जिस के मुताल्लिक़ तमाम माली इन्तिजाम होता था। इस हालत में गवर्नर सिर्फ़ फ़ौजों का सिपहसालार होता था।

ग़रज बनू उमैया की खिलाफ़त में सादगी ज्यादा थी। शरई क़ानून से तमाम कठिनाइयों को दूर किया जाता और जनता अदल व इंसाफ़ की वजह से बहुत खुशहाल थी, न रियाया से कोई नामुनासिब टैक्स या महसूल लिया जाता था, न हुकूमत को मुल्क के इन्तिजाम के लिए ज्यादा रुपया खर्च करना पड़ता था।

खलीफ़ा तमाम इस्लामी दुनिया का रूहानी पेशवा समझा जाता था, और दुनिया का शहंशाह भी, इस लिए मुल्क में अम्न व अमान के क़ायम रखने में बड़ी आसानी होती थी, कोई बा-क़ायदा वजीरी का ओहदा न था और जरूरत के वक़्त हर शख्स वजीरी के काम अंजाम दे सकता था।

अब्बासी खिलाफ़त में अरबों के सिवा ईरानियों और तुर्कों को भी जीतने वाली क़ौम के हक़ मिलने लगे और धीरे-धीरे हारने वाली क़ौम का हक़्दार अरबों से भी बढ़ गया, इस लिए मुल्की इन्तिजाम में पेचेदगी वाक़ेअ हुई। अगर अरब, ईरानी और तुर्क सब को इस्लामी हुक्मों के मुवाफ़िक़ बराबर दर्जे में रखा जाता और सादगी और खूबी हुकूमत के इन्तिजाम में नुमायां होती, तो इस अंजाम को न पहुंचना होता, मगर बद-क़िस्मती से ऐसी शक्लें पैदा होती रहीं कि इन क़ौमों में मुखालफ़त और दुश्मनी तरक़्क़ी करती रही, जिस की बड़ी वजह यह थी कि ईरानियों को

अरबों पर फ़ज़ीलत दी गयी और ईरानी व सासानी समाज को खिलाफ़त-दरबार ने अख्तियार करके अरबों की सादगी को हिक़ारत के साथ रद्द कर दिया। और इसी का यह नतीजा हुआ कि इस्लामी खिलाफ़त को ऐसी पेचीदगियों में फंसना पड़ा, जिस से उसका एतबार व इक्तिदार धीरे-धीरे कम होते-होते फ़ना हो गया।

अब्बासी खिलाफ़त से अलग इस्लामी हुकूमतें

अब्बासियों की हुकूमत से पहले बनू उमैया तमाम इस्लामी दुनिया पर हुकूमत करते थे और खिलाफ़त का मर्कज़ एक ही था, लेकिन अब्बासी दौर के शुरू ही में उन्दुलुस का मुल्क जुदा हो गया और वहां एक अलग हुकूमत क़ायम हुई, जिसका कोई ताल्लुक़ अब्बासी खलीफ़ों से न था, इसके बाद 'मोरक्को' इसके बाद अफ़्रीक़ीया और इसी तरह एक के बाद दूसरी हुकूमतें अलग क़ायम हो गयीं। इस जगह मुनासिब मालूम होता है कि मज़्मूनों और वाक़िओं को ज़ेहन में बिठाने के लिए दूसरे हुक्मरानों का एक हल्का-सा खाका पेश कर दिया जाए।

हस्पानिया

हस्पानिया को मुसलमानों ने फ़त्ह करके सन् ९२ हि० में अपनी हुकूमत क़ायम कर ली थी और यह मुल्क बनू उमैया के खलीफ़ों का एक सूबा (प्रांत) बन गया था। सन् १३८ हि० तक वहां उमवी खलीफ़ों की तरफ़ से और सूबों की तरह अमीर और गवर्नर मुक़र्रर होकर आते और हुकूमत करते रहे।

जब अब्बासियों ने उमवी हुकूमत को बर्बाद कर दिया और खुद क़ब्ज़ा कर लिया, तो उमवियों के दसवें खलीफ़ा हिशाम का पोता अब्दुर्रहमान किसी न किसी तरह अब्बासियों से बचकर उन्दुलुस पहुंच गया और सन् १३८ हि० में वहां पहुंच कर अपनी हुकूमत क़ायम कर ली। अब्बासी फ़ौज ने हमला किया तो उसको भी हराया और उन्दुलुस में

शहर क़र्तबा को राजधानी बनाकर अपनी शानदार हुकूमत की शुरूआत की। यह हुकूमत उसके ख़ानदान में ४२२ हि० तक रही।

इन उन्दुलुसी ख़लीफ़ों की शान, ताक़त और बड़ाई ने तमाम यूरोप को हैरानी में डाल दिया था। उनके कारनामे बनू अब्बास के कारनामों से ज़्यादा दिलचस्प और सबक़ भरे रहे।

४२२ हि० में उन्दुलुस में बिखराव शुरू हुआ और उमवी ख़ानदान की शानदार ख़िलाफ़त का ख़ात्मा हो गया।

उन्दुलुस की उमवी ख़िलाफ़त के बाद उन्दुलुस का मुल्क छोटी-छोटी मुस्लिम स्टेटों में बंट गया, जिन्होंने क़र्तबा, इश्बेलिया, ग़रनाता, बलनशिया, तलेतला मालक़ा वग़ैरह शहरों को अपनी-अपनी राजधानी बनाई।

कुछ दिनों के बाद उत्तरी अफ़्रीक़ा की मुसलमान हुकूमतों ने उन्दुलुस के अक्सर हिस्से को अपना मातहत बनाया।

इधर ईसाई बादशाहों ने मुसलमानों की आपसी लड़ाइयों से फ़ायदा उठाया और मुसलमानों को आपस में लड़ा-लड़ा कर जब खूब कमज़ोर कर लिया, तो फिर उन पर इतना ज़्यादा ज़ुल्म किया कि शायदही आज तक किसी क़ौम ने किसी के हाथ से ऐसे ज़ुल्म सहे होंगे और इंसानियत के चेहरे पर ज़ुल्म के ऐसे काले धब्बे लगाए गये होंगे जैसे कि स्पेन को फ़त्ह करने वाले ईसाइयों ने लगाए। हस्पानिया या स्पेन की तारीख़ मुसलमानों को आज तक ख़ून के आंसू रुला रही है।

मोरक्को (मराक़श) की हुकूमत

सन् १७२ हि० में मोरक्को भी अब्बासी ख़िलाफ़त से अलग एक हुकूमत हो गया और वहां एक अलग आज़ाद हुकूमत क़ायम हुई। यह हुकूमत अगरचे स्पेन के पड़ोस में थी, पर जिस तरह यह अब्बासी ख़लीफ़ों की मुख़ालफ़त करती थी, उसी तरह उन्दुलुसी ख़लीफ़ों की भी मुख़ालिफ़ थी। यह लगभग दो सौ साल तक क़ायम रही। सौ, सवा सौ वर्ष तक तो इदरीसी बादशाह आज़ाद रहे। फिर उबैदियों की शुरूआत अफ़्रीक़ा में हुई, तो उन्होंने इनको अपना मातहत बना लिया। इसके बाद इस हुकूमत के टुकड़े-टुकड़े हो गए और कुछ दिनों तक मामूली रईसों की

तरह हाकिम रहकर ख़त्म हो गये।

ट्युनीशिया की हुकूमत

सन् १८४ हि० से अफ़रीक़ा (टयूनीशिया) भी अब्बासी ख़िलाफ़त से आज़ाद हो गया और इब्राहीम अग़लब की औलाद ने सौ साल से ज़्यादा अर्से तक बड़ी शान व शौकत के साथ हुकूमत की।

सन् २१६ हि० में अग़लबी हुकूमत ने सिसली जज़ीरे को ईसाइयों से जीत कर उसे अपनी हुकूमत में शामिल कर लिया और आख़िर तक उस पर क़ब्ज़ा किये रहे।

इस ख़ानदान में कुछ बड़े ही हौसला मंद और क़ाबिल हाकिम भी गुज़रे हैं।

सन् २९६ हि० में इस हुकूमत का ख़ात्मा हो गया।

इस खानदान ने सिसली जज़ीरे ही को सिर्फ़ फ़त्ह नहीं किया बल्कि मालटा और सारडीनिया को भी जीत लिया था। इनकी समुद्री ताक़त बहुत ज़बरदस्त थी और तमाम रूम सागर पर अग़लबी बादशाहों का क़ब्ज़ा था। कभी-कभी इनके जहाज़ यूनान व इटली व फ़्रांस के तटों के इलाक़ों पर भी लूट-मार कर आते थे।

यमन की हुकूमत

सन् २०३ हि० में मुहम्मद बिन ज़ियाद, जो ज़ियाद बिन अबी सुफ़ियान की औलाद से था, यमन का हाकिम मुक़र्रर हुआ, उसके ख़ानदान में सन् ४०२ हि० तक यमन की हुकूमत रही।

मुहम्मद बिन ज़ियाद ने ज़ुबैद नामी शहर आबाद करके उसको अपनी राजधानी बनाया। यमन से मिले सूबे तहामा को भी उसने तलवार के बल पर जीत लिया। हज़रमौत तक का इलाक़ा भी जीत लिया था।

फिर २८८ हि० में उनकी हुकूमत का एक टुकड़ा काटकर अलवियों ने ज़ैदिया हुकूमत क़ायम की। इसके बाद धीरे-धीरे इस हुकूमत की

हदें सिमटती चली गयीं।

जैदियों की हुकूमत अगरचे खुद मुख्तार थी, मगर अब्बासी खलीफ़ों के नाम का खुत्बा इस में पढ़ा जाता था।

ज़ियादी हुकूमत के अलावा जब यमन के एक हिस्से में जैदी हुकूमत क़ायम हुई, तो उसने अपने मुल्क में इस खुत्बे को भी उड़ा दिया। ज़ियादी हुकूमत जब कमज़ोर हो गयी, तो उसके गुलामों और गुलामों के गुलामों ने हुकूमत शुरू की। इसके बाद एक के बाद एक कई खानदानों ने हुकूमत शुरू की।

ज़ियादी खानदान की तारीख दिलचस्पी से खाली नहीं है। ज़ियादी के बाद यमन में यअफ़ूरी, नजाही, सैलही, हमदानी, मेहदवी जूरी, अय्यूबी रसूली, ताहिरी खानदानों की हुकूमतें एक-एक करके सन् १००७ हि० तक हुकूमत करती रहीं। इनमें कुछ शीया थे और कुछ सुन्नी थे।

खुरासान की ताहिरी हुकूमत

सन् २०५ हि० में मामून रशीद अब्बासी ने ताहिर बिन हुसैन को खुरासान का गवर्नर मुक़र्रर किया था।

इसके बाद खुरासान की हुकूमत पचास साल से ज़्यादा अर्से तक उसी के खानदान में रही। ताहिरी खानदान के लोग खुरासान में आज़ाद होकर हुकूमत करते रहे और इसीलिए खुरासान को उसी वक़्त से बग़दाद की खिलाफ़त से अलग समझना चाहिए।

ताहिरी खानदान के बादशाह अपने आप को बग़दाद के खलीफ़ा का महकूम समझते थे और खलीफ़ा के नाम का खुत्बा पढ़ते थे, लेकिन खलीफ़ा को खुरासान के अन्दरूनी इन्तिज़ाम में कोई दखल न था।

खुरासान और फ़ारस की सफ़ारी हुकूमत

सन् २५४ हि० में याक़ूब बिन लैस सफ़ारी ने फ़ारस पर क़ब्ज़ा कर के इस सूबे को अब्बासी खिलाफ़त से अलग कर लिया और २५० हि० में खुरासान पर भी क़ब्ज़ा कर के ताहिरी हुकूमत का खात्मा कर दिया।

सफ़ारी हुकूमत ने लगभग चालीस साल हुकूमत की, फिर सामानी खान-दान ने उस का खात्मा कर दिया।

मावराउन्नहृ व खुरासान की सामानी हुकूमत

२९० हि० में मावराउन्नह्र की सामानी हुकूमत ने सफ़ारियों से खुरासान, अलवियों से तबरस्तान छीन लिया, तो मावराउन्नह्र यानी समरक़ंद व बुखारा से ले कर फ़ारस की खाड़ी और क़जवीन सागर तक इस सरकार की सीमाएं फैल गयीं। उसी ज़माने से सूबा मावराउन्नह्र भी अब्बासी खिलाफ़त की मातहती से आज़ाद हो गया।

सामानी खानदानों ने सवा सौ साल तक हुकूमत की। इस हुकूमत में इल्म, फ़न और तहज़ीब को काफ़ी तरक्क़ी हासिल हुई। बुखारा व समरक़न्द इल्म व फ़न के मर्कज़ बन गये और वहां ऐसे-ऐसे ज़बरदस्त उलेमा पैदा हुए कि आज तक दुनिया में वे मशहूर हैं।

लगभग आधी सदी के बाद खुरासान व फ़ारस व तबरस्तान सामानी हुकूमत के क़ब्ज़े से निकल गये और बोया खानदान की हुकूमत ने इन इलाक़ों पर अपनी हुकूमत क़ायम कर के सामानियों को बे-दखल कर दिया।

फिर इस खानदान में तुर्क गुलामों के क़ाबू पाने की वजह से जल्द-जल्द ज़वाल आना शुरू हुआ।

३८४ हि० में इस खानदान के एक तुर्की गुलाम अलप्तगीन ने सामानी हुकूमत के उस हिस्से पर जो जेहूं नदी के दक्खिन में था, आज़ाद हो कर क़ब्ज़ा कर लिया और ३८० से ३८९ हि० तक एलक खां तुर्क ने सामानी हुकूमत के बाक़ी उस हिस्से पर जो जेहूं नदी के उत्तर में है, क़ब्ज़ा कर के इस खानदान को खत्म कर दिया।

सामानी खानदान की तारीख इस लिए और भी ज़्यादा दिलचस्प है कि इसी हुकूमत से अलप्तगीन की हुकूमत क़ायम हुई और अलप्तगीन की हुकूमत का वारिस सुबुक्तगीन हुआ, जिस के बेटा महमूद ग़ज़नवी को भारत का बच्चा-बच्चा जानता है।

———

बहरैन के क़रामता

२८६ हि० में सूबा बहरैन अब्बासी खिलाफ़त से जुदा हो गया और उसमें क़रामता ने अपनी आज़ाद हुकूमत क़ायम की और ज़ुल्म व ज़्यादती से इंसानों को बेहद परेशान किया।

क़रामता की हुकूमत बहरैन में ३६४ हि० तक रही। इस के बाद दूसरे खानदानों ने बहरैन पर क़ब्ज़ा किया और बहुत-से आज़ाद खानदान बहरैन और उस के क़रीब के सूबों में हुकूमत करने लगे।

तब्रस्तान की अलवी हुकूमत

सन २५० हि० से ३१६ हि० तक अलवियों, ज़ैदियों ने तब्रस्तान की विलायत में अपनी हुकूमत का सिक्का चलाया, सामानी हुकूमत ने उस को खत्म कर दिया, इस के बाद फिर कई दुश्मन इस इलाक़े में एक-दूसरे से आपस ही में लड़ते रहे, और इन्हीं से बोया खानदान उभरा।

सिंध का सूबा

सन २६५ हि० में सिंध का सूबा अब्बासी खिलाफ़त से बिल्कुल बे-ताल्लुक़ और आज़ाद हो गया। यहां दो आज़ाद स्टेटें मुसलमानों की क़ायम हो गयीं, जिनमें एक की राजधानी मुलतान और दूसरी की राजधानी मंसूरा थी।

मंसूरा सरकार में सिंध का दक्खिनी हिस्सा शामिल था और मुल-तान सरकार उत्तरी भाग पर क़ायम थी।

इस के अलावा तूरान, केकानान, मकरान, मश्की वग़ैरह छोटी-छोटी स्टेटें भी अरब सरदारों ने क़ायम कर ली थीं, जो इन बड़ी स्टेटों की मातहती मान चुकी थीं। इस तरह तमाम सूबा सिंध खुद-मुख्तार और बग़दाद की हुकूमत से आज़ाद हो चुका था, मगर यहां खुत्बा हर जगह

...लीफ़ा के नाम का पढ़ा जाता था। ये स्टेटें धीरे-धीरे कमज़ोर होते-होते सौ या सवा सौ साल के अर्से में ख़त्म हो गयीं, मगर मुलतान की स्टेट उस वक़्त तक क़ायम थी, जब कि सुलतान महमूद ग़ज़नवी ने भारत पर हमलावरी शुरू की है।

ख़ानदाने बोया वैलमिया की हुकूमत

वैलमियों ने ३२२ हि० से ४४७ हि० तक यानी लगभग सवा सौ साल तक फ़ारस व इराक़ पर हुकूमत की, इन वैलमियों ने इसके बजाए कि किसी दूर के सूबे को ख़लीफ़ा की हुकूमत से जुदा करे, ख़ुद ख़लीफ़ा और इराक़ सूबे पर अपना क़ब्ज़ा कर के हक़ीक़त में तो अब्बासी ख़िलाफ़त का ख़ात्मा ही कर दिया, मगर ख़लीफ़ा का नाम और नाम को ख़िलाफ़त बाक़ी रखी।

इन की वजह से ख़िलाफ़त के विक़ार को बड़ा धक्का लगा। और बड़ा नुक़सान पहुंचा।

इन का ज़िक्र बड़ी तफ़्सील से पीछे आ चुका है।

मिस्र व शाम की तोलोनी हुकूमत

इब्ने तोलोन और उसके ख़ानदान वालों ने सन २५४ हि० से २९२ हि० तक मिस्र पर हुकूमत की। अगरचे ये ख़ुद-मुख़्तार थे और मिस्र का सूबा गोया २५४ हि० में अब्बासी हुकूमत से अलग हो चुका था, मगर मिस्र में ख़ुत्बा बग़दाद के ख़लीफ़ा के नाम का ही पढ़ा जाता था।

तोलोनियों ने शाम को भी अपनी हुकूमत में शामिल कर लिया था इस तरह शाम व मिस्र में एक ऐसी हुकूमत क़ायम हो गयी थी, जो अपने को अगरचे ख़लीफ़ा की फ़रमांबरदार बताती थी, मगर जिसने ख़लीफ़ा को शाम व मिस्र की हुकूमत से बिल्कुल बे-ताल्लुक़ कर दिया था।

मिस्र व शाम में इख़्शीदी हुकूमत

मिस्र व शाम (सीरिया) से जब तोलोनी हुकूमत जाती रही, तो कुछ दिनों के लिए इन दोनों सूबों के हाकिम ख़लीफ़ा की हुकूमत की तरफ़ से आने लगे और देखने में ये दोनों सूबे फिर अब्बासी ख़िलाफ़त में शामिल हो गये।

३१६ हि० में ख़लीफ़ा मुक़्तदिर बिल्लाह ने मुहम्मद बिन तग्ज को रमला का हाकिम मुक़र्रर किया। ३१८ हि० में उसको दमिश्क़ की हुकूमत सुपुर्द की गयी, और ३२३ हि० में उस को मिस्र की हुकूमत दी गयी।

मुहम्मद बिन तग्ज मावराउन्नहर के इलाक़े फ़रग़ाना के पुराने हाकिम ख़ानदान से ताल्लुक़ रखता था, यानी उस के बुज़ुर्ग फ़रग़ाना के अमीर थे। उस ज़माने में फ़रग़ाना के सरदारों को इख़्शीद के लक़ब से पुकारते थे, मुहम्मद बिन तग्ज ने मिस्र की हुकूमत पर बैठ कर ३२७ हि० में अपनी आज़ादी का एलान किया और अपना लक़ब इख़्शीद रखा। सन ३३० हि० में उस ने शाम पर भी क़ब्ज़ा कर लिया और ३३१ हि० में हिजाज़ सूबे को भी अपनी हुकूमत में शामिल कर के एक शानदार हुकूमत क़ायम कर ली और ऐसा करने में उस को इस लिए ज़्यादा परेशानी नहीं हुई कि ख़लीफ़ा को तो दैलमियों ने बेकार व बे-असर बना दिया था। ख़लीफ़ा का रौब व ख़ौफ़ दिलों से मिट चुका था। इख़्शीदी ख़ानदान ने ३५६ हि० तक इन मुल्कों पर हुकूमत की। इस के बाद उबैदियों ने पहले मिस्र को, फिर कुछ दिनों के बाद शाम को भी जीत लिया।

मिस्र व अफ़्रीक़ा व शाम की उबैदी हुकूमत

२९६ हि० में अफ़रीक़ा (ट्यूनिशिया) के अन्दर अग़लबी हुकूमत का ख़ात्मा हुआ और उसकी जगह उबैदी हुकूमत क़ायम हुई। उबैदियों ने २५६ हि०में इख़्शीदिया ख़ानदान के एक दूध पीते बच्चे से मिस्र का मुल्क छीन लिया और क़ाहिरा को अपनी राजधानी बना कर उस की फ़सील तामीर करायी।

३८१ हि० में उबैदियों ने हल्ब पर क़ब्ज़ा किया और फिर उन की हुकूमत मराक़श (मोरक्को) की सीमा से शाम के मुल्क तक फैल गयी। चूंकि उबैदियों ने क़ीरवान को छोड़ कर अपनी राजधानी क़ाहिरा बना लिया, इस लिए रूम सागर के जज़ीरे और पच्छिमी ज़िले उन के क़ब्ज़े में बाक़ी न रह सके, लेकिन रूमसागर के पूर्वी हिस्से में उन की सरदारी जम गयी और पूर्वी इलाक़ों से पच्छिमी इलाक़ों की पूर्ति हो गयी। मगर पच्छिमी हिस्से जो उन के क़ब्ज़े से निकले, उन में से अक्सर ईसाइयों के क़ब्ज़े में पहुंचे और पूर्वी इलाक़े उन्हों ने मुसलमानों ही से छीने, इस लिए उबैदियों के मिस्र में आने से ईसाइयों को फ़ायदा और मुसलमानों को नुक़्सान पहुंचा। उबैदियों ने ख़िलाफ़त का दावा भी किया और उन लोगों से जो उनके मातहत थे, अपनी ख़िलाफ़त की बैअत ली और अपने आपको ख़लीफ़ा कहलवाया। इस तरह दुनिया में ख़िलाफ़त के तीन सिलसिले क़ायम हुए—

१. पहला और सबसे बड़ा सिलसिला तो वही है, जो हज़रत अबूबक्र सिद्दीक़ रज़ि० से क़ायम होकर उस्मानी ख़ानदान के आख़िरी ख़लीफ़ा सुलतान अब्दुल हमीद ख़ां तक क़ायम रहा।

यह सिलसिला सबसे बड़ा सिलसिला है। इसके पहले हिस्से का नाम ख़िलाफ़ते राशिदा, दूसरे हिस्से का नाम ख़िलाफ़ते बनू उमैया, तीसरे हिस्से का नाम ख़िलाफ़ते अब्बासिया बग़दाद, चौथे हिस्से का नाम ख़िलाफ़ते अब्बासिया मिस्र, पांचवें हिस्से का नाम ख़िलाफ़ते उस्मानिया है।

२. ख़िलाफ़त के इस लम्बे सिलसिले के बाद ख़िलाफ़त का दूसरा सिलसिला वह है, जो उन्दुलुस में अब्दुर्रहमान 'सालिस' (थर्ड) के ज़माने से शुरू होकर उसी ख़ानदान पर ख़त्म हो गया।

ख़िलाफ़त के इस सिलसिले को भी उलेमा-ए-इस्लाम ने सच्ची ख़िलाफ़त तस्लीम किया है और उन्दुलुस के ख़लीफ़ों को इस्लामी ख़लीफ़ा समझते हैं यानी उनकी फ़रमांबरदारी उन मुसलमानों के लिए जो उनकी हुकूमत की हदों में रहते थे, ज़रूरी और उनकी बग़ावत गुनाह थी।

३. तीसरा सिलसिला, जो उबैदियों ने जारी किया था, उसको उलेमा-ए-इस्लाम ने ख़िलाफ़त का सिलसिला नहीं माना। इन लोगों ने शिर्क व बिदअत को रिवाज दिया, इस्लामी तरीक़ों का धिक्कार घटाया और तरह-तरह की बद-आमालियां कीं। बहरहाल उबैदियों की हुकूमत

मिस्र में सन ५६७ हि० तक क़ायम रही, इसके बाद सुलतान सलाहुद्दीन अय्यूबी ने इस हुकूमत का खात्मा करके मिस्र में अय्यूबी हुकूमत क़ायम की और अब्बासी खिलाफ़त का खुत्बा मिस्र में फिर जारी हुआ।

मूसल व जज़ीरा व शाम में हमदानी हुकूमत

अबुल हैजा अब्दुल्लाह बिन हमदान ने सन २८६ हि० में सूबा मूसल में आज़ाद हुकूमत की बुनियाद डाली और लगभग सौ वर्ष तक बनू हमदान ने मूसल व जज़ीरा व शाम में हुकूमत की। इन लोगों ने अब्बासी खलीफ़ों का खुत्बा अपनी हुकूमत में जारी रखा।

इन में सैफ़ुद्दौला और नासिरुद्दौला बड़े नामी हुक्मरां गुज़रे हैं।

सैफ़ुद्दौला शाम में और नासिरुद्दौला मूसल में हुकूमत करता था। इख्शीदियों से शाम का बड़ा हिस्सा उन्होंने छीन लिया था। जज़ीरे पर भी उनका क़ब्ज़ा हो गया था। दैलमियों से भी उनकी लड़ाइयां हुई और सख्त मुक़ाबले हुए। कभी-कभी बग़दाद के खलीफ़ा पर भी उनका क़ब्ज़ा हो जाता था। उन की हुकूमत के दौर में रूमियों पर चढ़ाई और रूमियों की चढ़ाई को रोकने का ताल्लुक़ दरबारे खिलाफ़त से बिल्कुल टूट गया था। बनू हमदान ही रूमियों पर चढ़ाई करते और उनके हमलों का जवाब देते थे। इन में सैफ़ुद्दौला ने रूमियों पर बड़े-बड़े कामियाब जिहाद किए। आखिर में शाम का सूबा उनके क़ब्ज़े में रह गया था।

बाद में बनू हमदान की हुकूमत उनके गुलामों के क़ब्ज़े में चली गयी, जिन्होंने शाम में उबैदियों का खुत्बा जारी किया।

आखिर ३८० हि० में इस हुकूमत का खात्मा हो गया और मूसल में बनू अक़ील बिन काब ने अपनी हुकूमत क़ायम की और सूबा जज़ीरा पर क़ब्ज़ा कर लिया।

इसके बाद शाम के छोटे-छोटे टुकड़ों पर कई अरबी सरदारों ने अपनी हुकूमतें क़ायम कर लीं, जो कभी किसी बड़ी ताक़त के मातहत होतीं, कभी खुद मुख्तार। जब सलजूक़ी बग़दाद पर क़ब्ज़ा होने के बाद शाम के इलाक़ों पर छा गये तो वहां उन्होंने अपनी तरफ़ से गवर्नर मुक़र्रर किए या खुद अपनी हुकूमत की।

———

मक्का की सुलैमानी हुकूमत

मक्का मुअज्ज़मा की हुकूमत पर दरबारे ख़िलाफ़त बग़दाद से गवर्नरों को मुक़र्रर किया जाता था, मगर ३०१ हि० में एक शख़्स मुहम्मद बिन सुलैमान ने, जो सुलैमान बिन दाऊद बिन हसन मुसन्ना बिन हसन बिन अली बिन अबी तालिब की औलाद में से था, अपनी आज़ाद हुकूमत क़ायम की।

मुहम्मद बिन सुलैमान की क़ायम की हुई यह स्टेट ४३० हि० तक क़ायम रही। इस सवा सौ साल से ज़्यादा अर्से में मक्का मुअज्ज़मा के भीतर बड़े-बड़े हंगामे और फ़साद हुए। चार-पांच शख़्सों ने इस ख़ानदान के मक्का में हुकूमत की, मगर उनकी हुकूमत अजीब क़िस्म की थी, हज के दिनों में मिस्र और बग़दाद के क़ाफ़िले आते और हज की सरदारी और ख़ुत्बा पढ़ने में झगड़ा होता, आपस में लड़ते और मक्का का हाकिम कोई चीज़ न समझा जाता। अगर बग़दाद का हज का सरदार ग़ालिब हुआ तो उसने बनू बोया और बग़दाद के ख़लीफ़ों के नाम का ख़ुत्बा पढ़ा। अगर मिस्री हज का सरदार ग़ालिब हो गया तो उसने बनू इख़्शीद के नाम का ख़ुत्बा पढ़ा। फिर जब उबैदी मिस्र पर ग़ालिब हुए तो उबैदियों और अब्बासियों के ख़ुत्बे में झगड़ा होता। इधर क़रामता आ जाते, तो उन्हीं का अमल-दख़ल क़ायम हो जाता। वे तमाम हाजियों को क़त्ल करते और लूट-मार मचा देते, कभी मिस्री लोग हजरे अस्वद की बे-हुर्मती करते, पत्थर मारते और उसे गालियां देते, तो इराक़ी लोग भड़क कर उनको क़त्ल करना शुरू करते। उसी ज़माने में क़रामता हजरे अस्वद को उखाड़ कर बहरैन ले गये और बीस या ज़्यादा वर्षों के बाद मक्का में वापस भेजा, ग़रज़ हज के दिनों में सुलैमानियों की हुकूमत का कोई निशान मक्का में नहीं पाया जाता था। ये लोग ज़ैदी शीया थे, इसीलिए उबैदियों की तरफ़ ज़्यादा रुझान था, मगर इनकी हालत यह थी कि जिसको ताक़तवर देखते, उसी का कलिमा पढ़ने लगते।

मक्का की हाशिमी हुकूमत

सुलैमानियों के बाद मक्का में अबू हाशिम मुहम्मद बिन हसन बिन मुहम्मद बिन मूसा बिन अब्दुल्लाह की औलाद ने अपनी हुकूमत क़ायम की। ये लोग भी सुलैमानियों की तरह मक्का के हाकिम रहे।

सलजूक़ी हुकूमत के शुरू के दौर में उन लोगों ने बग़दाद के ख़लीफ़ों के नाम का ख़ुत्बा पढ़ना शुरू किया।

५६७ हि० में जब सुलतान सलाहुद्दीन अय्यूबी ने उबैदी हुकूमतका ख़ात्मा कर दिया तो मक्का के हाशिमियों का भी ख़ात्मा हो गया, यानी हिजाज़ व यमन पर भी सलाहुद्दीन का क़ब्ज़ा हो गया और मक्का में सुलतान की तरफ़ से गवर्नर मुक़र्रर होकर आने लगे।

कुछ दिनों के बाद मक्के पर बनू क़तादा ने अपनी हुकूमत क़ायम की। उनके बाद बनू नमी ने हुकूमत की, उनके बाद और लोगों का क़ब्ज़ा हुआ, यहां तक कि सलीम उस्मानी ने हिजाज़ पर क़ब्ज़ा किया। उस वक़्त से मक्का के हाकिम शरीफ़े मक्का के नाम से उस्मानी ख़लीफ़ा मुक़र्रर करते रहे, यहां तक कि हमारे ज़माने में शरीफ़ हुसैन ने उस्मानी हुकूमत से बग़ावत कर के इस्लामी हुकूमत को सख़्त नुक़सान पहुंचाया और इस्लामी दुनिया में निहायत ज़िल्लत व हक़ारत की निगाह से देखा गया। ज़ाहिर में उसने ईसाइयों की रहनुमाई तस्लीम करके सादात ख़ान-दान को बदनाम किया और हाशिमियों के नाम पर धब्बा लगाया।

दयारे बक्र की मर्वानी हुकूमत

कुर्दों के क़बीले का एक शख़्स अबू अली बिन मर्वान था। उसने दयारे बक्र सूबे में एक आज़ाद हुकूमत क़ायम की, जो उसके ख़ानदान में ३८० हि० से ४८९ हि० तक यानी सौ बरस से ज़्यादा मुद्दत तक क़ायम रही। ये लोग मिस्र के उबैदियों की इताअत का इक़रार करते थे, इसीलिए उबैदियों ने इनको हल्ब की हुकूमत दे दी थी। ये लोग गोया

हुकूमत की इताअत का भी इक़रार करते थे, सलजूक़ियों के हमले से इनका ख़ात्मा हो गया।

अफ़ग़ानिस्तान की ग़ज़नी हुकूमत

सामानी हुकूमत के दक्खिनी हिस्से पर क़ब्ज़ा करके अलप्तगीन ने अपनी एक अलग हुकूमत क़ायम कर ली थी। अलप्तगीन के बाद उसका दामाद सुबुक्तगीन उस हुकूमत का मालिक हुआ। सुबुक्तगीन का बेटा महमूद ग़ज़नवी था।

इस ख़ानदान ने ३५१ हि० से ५५२ हि० तक हुकूमत की। महमूद ग़ज़नवी के ज़माने में यह हुकूमत सबसे ज़्यादा तरक़्क़ी पर थी। पंजाब व मुलतान से लेकर ख़ुरासान के पच्छिमी सिरे तक और फ़ारस की खाड़ी से लेकर जेहून नदी तक यह हुकूमत फैली हुई थी।

महमूद ग़ज़नवी ने एक तरफ़ बुख़ारा व समरक़ंद तक हमले किए तो दूसरी तरफ़ कालंजर (बंगाल) और सोमानथ तक हमलावर हुआ।

इस हुकूमत को जब ज़वाल आया, तो ख़ुरासान पर ख़्वारज़िम शाहियों ने क़ब्ज़ा कर लिया। अफ़ग़ानिस्तान व पंजाब पर ग़ौरी ख़ानदान का क़ब्ज़ा हो गया। ग़ज़नवियों को हमेशा बग़दाद के ख़लीफ़ा की इताअत व फ़रमांबरदारी का इक़रार रहा।

महमूद ग़ज़नवी के दौर में सलजूक़ी ने अपने पुराने वतन यानी पच्छिमी चीन के पहाड़ों से निकलकर बुख़ारा के मैदानों में रहने-सहने लगे और फिर धीरे-धीरे एशिया-ए-कोचक तक फैल गये। सुलतान महमूद ग़ज़नवी ने मावराउन्नह्र का इलाक़ा भी फ़त्ह कर लिया था।

सलजूक़ी हुकूमत

सलजूक़ियों की हुकूमत ४३० हि० से ७०० हि० तक कमो बेश ढाई सौ साल तक क़ायम रही। शुरू ज़माना उनका बड़ा शानदार था। आख़िर में उनके बहुत-से टुकड़े हो गये। इनका सबसे बड़ा सिलसिला वह था, जिसमें अल्प अर्सलान और मलिक शाह सलजूक़ी जैसे मशहूर बादशाह हुए। इनको ईरानी सलजूक़ कहते हैं।

इनके अलावा किरमानी सलजूक़, इराक़ी सलजूक़, शामी सलजूक़ रूमी सलजूक़ वग़ैरह भी मशहूर हैं। इन सब खानदानों की तारीख़ दिलचस्पी से खाली नहीं।

फिर इन सलजूक़ियों के गुलाम और अताबकों की हुकूमतें क़ायम हुईं। वे भी बहुत मशहूर और इस्लामी तारीख़ की ज़ीनत कही जा सकती हैं। गुलामों में से जो लोग शाहज़ादों के हाउस मास्टर बनाए गये उन्हें अताबक कहते हैं।

शाम व इराक़ के अताबक

मलिक शाह सलजूक़ी का तुर्की गुलाम आक़ संक़र था जो मलिक शाह का निगरां भी था। वह हल्ब और शाम व इराक़ की हुकूमत पर मुक़र्रर था।

५२१ हि० में आक़संक़र के बाद उस का बेटा इमादुद्दीन इराक़ का हाकिम मुक़र्रर हुआ। इसी साल उसने मूसल, संजार जज़ीरा, और हर्रान को भी अपनी हुकूमत में शामिल कर लिया।

५२२ हि० में शाम के अक्सर हिस्से और हल्ब वग़ैरह पर भी क़ब्ज़ा कर लिया। इमादुद्दीन ने ईसाइयों और रूमियों के मुक़ाबले में खूब जिहाद किए और बड़ी नेकनामी इस्लामी दुनिया में हासिल की।

इमादुद्दीन के बाद शाम की हुकूमत उस के बेटे नूरुद्दीन महमूद को मिली और मूसल व इराक़ दूसरे बेटे सैफ़ुद्दीन के क़ब्ज़े में आया। नूरुद्दीन महमूद ने ईसाइयों के मुक़ाबले में अपने बाप से ज़्यादा जिहाद किए और इस काम में बहुत मशहूर हुए।

नूरुद्दीन महमूद के बाद इस खानदान के और भी छोटे-छोटे टुकड़े हो गये।

अर्बला के अताबक

इमादुद्दीन ज़ंगी के तुर्की अफ़सरों में एक अफ़सर ज़ैन अली कोचक बिन बुक्तगीन था। उसने उसको मूसल में अपना नायब मुक़र्रर किया

था। ५३६ हि० में जैनुद्दीन अली कोचक ने संजार, हर्रान, तक्रीत, अर्बल यानी अर्बला को अपनी हुकूमत में शामिल किया और अर्बल को राजधानी बनाकर अपनी हुकूमत क़ायम की। यह हुकूमत जैनुद्दीन अली कोचक के खानदान में ६३० तक क़ायम रही। इसके बाद बग़दाद के खलीफ़ा का इस पर सीधा-सीधा क़ब्ज़ा हो गया।

दयारेबक्र के अताबक

अर्तुक़ बिन अक्सब सलजूक़ी फ़ौज का एक अफ़सर था। उसके बेटे एल ग़ाज़ी ने ४९५ हि० में अपनी हुकूमत की बुनियाद डाली। उस खानदान में तैमूर के ज़माने में ये लोग सुलतान के फ़रमांबरदार और मातहत हो गये थे।

आरमीनिया के अताबक

क़ुत्बुद्दीन सलजूक़ी के ग़ुलाम सलमान क़ुत्बी ने सन ४९३ हि० में शहर खलात को मर्वानी हुकूमत से छीन कर अपनी हुकूमत क़ायम की। उसकी औलाद में ६०४ हि० तक, जबकि अय्यूबी हुकूमत ने उसे फ़तह किया यह हुकुमत बाक़ी रही।

आज़रबाईजान के अताबक

सुलतान मसऊद सलजूक़ी के क़बचाक़ी ग़ुलाम एलज़वज़ ने आज़र-बाईजान में अपनी हुकूमत क़ायम की, जो ५३१ हि० से ६३२ हि० तक एक सौ बरस क़ायम रही।

फ़ारस के अताबक

तुर्कों के एक गिरोह का सरदार सलग़इ नामी एक तुर्क था। वह तुग़रल बेग सलजूक़ियों के साथियों में शामिल हो गया। उस की औलाद संक़र बिन मौदूद ने ५४३ हि० में फ़ारस पर क़ब्ज़ा किया। उस के खानदान में ६८६ हि० तक फ़ारस की हुकूमत रही। इसी खानदान का एक बादशाह अताबक साद ख्वारज़म शाह का मातहत था। उसी के नाम पर शेख मुस्लिहुद्दीन शीराज़ी ने अपना तखल्लुस सादी रखा था।

अताबक साद के बाद अताबक अबूबक्र तख़्त पर बैठे। उस ने उक्ताई ख़ां मुग़ल की इताअत अपना ली थी। इसी अताबक अबूबक्र का ज़िक्र शेख़ सादी ने गुलिस्तां में किया था।

लरस्तान के अताबक

इस ख़ानदान का बानी अताबक ताहिर था, जो फ़ारस के अताबकों का एक फ़ौजी सरदार था, जिस साल संक़र बिन मौदूद ने फ़ारस पर क़ब्ज़ा किया, उसी साल अबू ताहिर को लरस्तान पर क़ब्ज़ा करने के लिए भेजा था, चुनांचे ५४३ हि० में अबू ताहिर ने लरस्तान पर क़ब्ज़ा करके अपनी हुकूमत की बुनियाद क़ायम की। जो ७४० हि० तक क़ायम रही।

इसी ख़ानदान का एक हिस्सा लरस्तान कोचक पर दसवीं सदी हिजरी तक हुकूमत करता रहा।

ख़्वारज़मे शाही के अताबक

बलगातगीन ग़ज़नवी का एक तुर्की ग़ुलाम अनूश्तगीन था, जो सुलतान मलिक शाह सलजूक़ी का आबदार हो गया था, उस के मलिक शाह ने ख़्वारज़म यानी खेवा का हाकिम मुक़र्रर किया था। उस के बाद उस का जानशीन उस का बेटा हुआ, जिस का नाम ख़्वारज़म शाह था। उस ने अपनी हुकूमत को तरक़्क़ी दी, जेहूं नदी के किनारे तक अपनी हुकूमत को फैलाव दे कर ख़ुरासान व अस्फ़हान को भी फ़त्ह कर लिया। ख़्वारज़म शाह के बेटे अलाउद्दीन मुहम्मद ने ६०७ हि० में बुख़ारा व समरक़न्द भी फ़त्ह कर लिया। ६११ हि० में अफ़ग़ानिस्तान के एक बड़े हिस्से को ग़ज़नीन तक फ़त्ह कर लिया, फिर उस ने शीया मज़हब अपना कर यह इरादा किया कि अब्बासी ख़िलाफ़त को जड़ बुनियाद से उखाड़ फेंक दी जाए।

अभी इस इरादे में कामियाब न होने पाया था कि चंगेज़ ख़ां ने हमला कर के अपनी तरफ़ मुतवज्जह कर लिया। आख़िर मुग़लों ने उसको ख़ूब परेशान किया और वह उन के सामने से भागता और फ़रार होता फिरा, आख़िर क़ज़वीन सागर के एक जज़ीरे (द्वीप) में सन ६१७ हि० में मर

गया। उस के तीन बेटे थे। वे भी बाप के बाद मुग़लों के आगे-आगे भागते फिरे। एक बेटा जलालुद्दीन ख़्वारज़मी भाग कर भारत भी आया, और दो बरस भारत में रह कर फिर वापस चला गया। आख़िर ६२८ हि० में मुग़लों ने इस ख़ानदान का ख़ात्मा कर दिया। ख़्वारज़म शाहियों की हुकूमत सन ४७० हि० से ६२८ हि० तक रही, पर बारह साल इस हुकूमत पर ऐसी तरक़्क़ी के गुज़रे कि वह सलजूक़ी हुकूमत जैसी समझी जाती थी।

अय्यूबी हुकूमत

शाम व इराक़ के अताबकों में इमादुद्दीन जंगी एक नामी सरदार था, जिसने कुर्दिस्तान के रहने वाले एक कुर्द सरदार अय्यूब बिन शादी को शहर बालबक का मुहाफ़िज़ व हाकिम अपनी तरफ़ से मुक़र्रर किया था, धीरे-धीरे वह बड़ा सरदार हो गया।

अय्यूब का एक छोटा भाई शेर कोह था। इमादुद्दीन के फ़ौत होने पर जब उस का बेटा नूरुद्दीन महमूद जंगी तख़्त पर बैठा, तो उस ने शेर कोह को हम्स और रहबा की हुकूमत अता की। शेर कोह की क़ाबिलियत और बहादुरी का अन्दाज़ा कर के नूरुद्दीन ने शेर कोह को अपनी फ़ौज का सिपहसालार बना दिया।

जब नूरुद्दीन ने शेर कोह को मिस्र की तरफ़ भेजा तो उस के भतीजे सलाहुद्दीन बिन अय्यूब को भी मिस्र की तरफ़ भेजा।

सलाहुद्दीन ने ५६४ हि०में अपनी हुकूमत की बुनियाद क़ायम की, फिर बहुत जल्द उस की हुकूमत में मिस्र शाम व वग़ैरह शामिल हो गये, सलाहुद्दीन की क़ायम की हुई हुकूमत का नाम अय्यूबी हुकूमत है।

इस ख़ानदान में ६४८ हि० तक हुकूमत क़ायम रही। सलाहुद्दीन के बाद इस ख़ानदान के भी कई टुकड़े हो गये।

हुमात में उस ख़ानदान की एक शाख ७४२ हि० तक क़ायम रही, जो शाख इस ख़ानदान की मिस्र में हाकिम थी, इस को अय्यूबी आदिली कहते है। उन्हीं के जानशीन मिस्र में मम्लूक (ग़ुलाम) रहे।

मिस्र की मम्लूकी हुकूमत

मिस्र की अय्यूबी हुकूमत के बाद मिस्र में मम्लूक(ग़ुलाम)बादशाहों

की हुकूमत सन ५६० हि० से शुरू हुई। इन मम्लूकों के भी दो सिल-सिले हैं—

पहला सिलसिला मम्लूके बह्रीया, और
दूसरा मम्लूक गरजीया कहलाता है।

सन ९२२ हि० में उन का भी खात्मा हो गया और बजाए उन के मिस्र में उस्मानी हुकूमत क़ायम हुई।

ट्यूनीशिया की ज़ीरी हुकूमत

जब उबैदी हुकूमत ने क़ैरवान से क़ाहिरा में अपनी राजधानी तब्दील किया है, तो उस ज़माने में मिस्र से मोरक्को तक तमाम उत्तरी अफ़रीक़ा उन की हुकूमत के मातहत था और रूम सागर में उबैदी हुकूमत की समुद्री ताक़त सब पर भारी समझी जाती थी, मगर क़ाहिरा (मिस्र) में राजधानी के तब्दील हो जाने के बाद पच्छिमी मुल्कों पर इस हुकूमत का रौब क़ायम न रह सका। चुनांचे ट्यूनीशिया में ज़ीरी खानदान की मुस्तक़िल हुकूमत हो गयी जो ३६२ हि० से ५४३ हि० तक क़ायम रही।

अलजीरिया की समादी हुकूमत

अलजीरिया में समादी खानदान की मुस्तक़िल हुकूमत क़ायम हो गयी और यह हुकूमत ३९८ हि० से ५४७ हि० तक क़ायम रही। इसी तरह उबैदियों के राजधानी बदल देने पर मोरक्को में भी बर्बर क़बीले खुद मुख्तार हो गये थे, जिन को मुराबितों के खानदान ने अपना मातहत बना लिया।

मुराबितों की हुकूमत

बनूउमैया की खिलाफ़त के दौर में यमन के कुछ क़बीले बर्बर इलाक़े यानी ट्युनिशिया, अलजीरिया व मोरक्को में आ कर आबाद हो गये थे। इन लोगों ने अपनी इस्लामी ज़िंदगी और दावत व तब्लीग़ से बर्बरियों को इस्लाम की ओर बुलाया और उन्हीं की कोशिशों के नतीजे में बर्बरी लोगों

ने इस्लाम क़ुबूल किया।

सन ४४८ हि० में इन नव मुस्लिम बर्बरियों ने अबू बक्र बिन उमर को अपना सरदार बना कर अमीरुल मुस्लिमीन के नाम से पुकारना शुरू किया। धीरे-धीरे बहुत से क़बीले के लोग जमा होने शुरू हो गये और अबूबक्र की ताक़त दिन ब दिन तरक़्क़ी करने लगी।

अबूबक्र बिन उमर ने अपने साथियों को मुराबित कहना शुरू किया, यानी इस्लामी सरहद की हिफ़ाज़त करने वाली फ़ौज उन्हीं को मुलसिम भी कहते हैं।

अबू बक्र ने बर्बरी क़बीलों में इस्लाम की खिदमत का जोश पैदा करके उनको खूब बहादुर और हौसलामंद बना दिया और मोरक्को से पूरब की तरफ़ आगे बढ़ कर सजलमासा को जीत लिया और अपने चचेरे भाई यूसुफ़ बिन ताशक़ीन को सजलमासा का हाकिम मुक़र्रर किया।

यह यूसुफ़ बिन ताशक़ीन बड़ा दीनदार और बहादुर और अक़्लमन्द था।

सन ४५३ हि० में जब अबू बक्र बिन उमर का इन्तिक़ाल हुआ, तो यूसुफ़ बिन ताशक़ीन उस मुल्क का बादशाह हुआ।

४६० हि० में यूसुफ़ ने शहर मराक़श (मोरक्को) आबाद किया और उसी को अपनी राजधानी बनाया।

धीरे-धीरे मुराबितियों की यह हुकूमत उन्दुलुस, ट्युनीशिया, मोरक्को, अलजीरिया, तराबलस पर क़ाबिज़ हो गयी। समुद्री ताक़त की ओर इस खानदान ने ज़्यादा तवज्जोह नहीं की। ५५१ हि० तक मुराबितों की हुकूमत क़ायम रही। अपने बहादुरी के कारनामों से एक सौ साल तक उन्हों ने ईसाई ताक़तों को नाकों चने चबवा दिए।

मुवह-हिदों की हुकूमतें

बर्बर के क़बीले मसमूदा का एक शख्स अबू अब्दुल्लाह मुहम्मद बिन तोमर्त, जो जबले सोस का बाशिंदा था, हदीस, फ़िक़्ह, अदब का माहिर था, भलाइयों को फैलाने और बुराइयों को रोकने में भी वह खूब मुस्तैद था, उस के सामने अमीर व ग़रीब सब बराबर थे, सादा ज़िंदगी गुज़ारता था। एक जमाअत उस की पैरवी करती थी और उसको मेंहदी के नाम से

याद करती थी। अपने मानने वालों में उस की हैसियत किसी बादशाह से कम न थी।

५२२ हि० में जब उस का इन्तिक़ाल हुआ तो वह अपने फ़िर्क़ की, जिस का नाम मुवह्हिद रख दिया था, सरदारी अपने दोस्त अब्दुल मोमिन के सुपुर्द कर दिया।

अब्दुल मोमिन ने मुराबितों की हुकूमत के खिलाफ़ बग़ावत कर के इलाके जीतना शुरू किए। आखिर दो साल के अर्से में उस ने मुराबितों से बहुत सा इलाक़ा छीन कर ५२४ हि० में अपनी हुकूमत क़ायम कर ली। ५४१ हि० में उस ने मुराबितों की राजधानी मोरक्को को जीत लिया और कुछ दिनों के बाद उन का खात्मा कर के उन्दुलुस में फ़ौज भेजी।

उन्दुलुस व मोरक्को पर क़ब्ज़ा कर लेने के बाद अपना लक़ब अमीरुल मोमिनीन रखा।

इस के बाद ५४७ हि० में अलजीरिया को जीत कर समादी खानदान का खात्मा कर दिया।

सन ६३२ हि० में मुवह्हिदों की फ़ौज को ईसाइयों के मुक़ाबले में ऐसी करारी हार हुई कि वे उन्दुलुस में अपनी हुकूमत क़ायम न रख सके। पर उन्दुलुस के ग़र्नाती बादशाह बराबर ईसाइयों का मुक़ाबला करते रहे।

उन्दुलुस की हुकूमत के निकल जाने से मुवह्हिदों के खानदान में कमज़ोरी और गिरावट की निशानियां पैदा होने लगीं।

इस के बाद सुलतान सलाहुद्दीन ने तराबलस उन से छीन लिया। धीरे-धीरे हुकूमत के टुकड़े-टुकड़े हो गये और सन ६६७ हि० में इस खानदान का खात्मा हो गया और उस की जगह युट्नीशिया में मरीनी खानदान की हुकूमत हो गयी।

ये थीं वे हुकूमतें जो अब्बासी हुकूमतों के ज़माने तक बनीं-बिगड़ीं, अब्बासी खिलाफ़त के खत्म और उस्मानी खिलाफ़त के शुरू होने के बाद इस्लामी मुल्कों की जो हालत हुई या जो बहुत-सी नयी हुकूमतें दुनिया के हर हिस्से में क़ायम हुईं, उन का ज़िक्र आगे आ रहा है।

अब्बासी खिलाफ़त के दौर में पूर्वी हिस्सों में अभी कुछ हुकूमतों का तआरुफ़ बाक़ी है, जिनमें अहम हुकूमतें इस तरह हैं—

———

इस्माईली हशाशियों की हुकूमत

हज़रत इमाम जाफ़र सादिक़ के बेटे मूसा काज़िम को इस्ना अशरा शीया इमाम सादिक़ का जानशीन और इमाम मानते हैं, लेकिन इमाम मूसा काज़िम के एक भाई इमाम इस्माईल थे, जो लोग बजाए मूसा काज़िम के उनके भाई इस्माईल को इमाम मानते हैं, वे शीया इस्माईलिया कहलाते हैं।

उबैदियों की हुकूमत इस्माईली शीयों की सब से बड़ी हुकूमत थी। इन के अक़ीदे और ख्याल बड़े खतरनाक होते थे। ये लोग क़ुरआन मजीद को अमल के क़ाबिल नहीं समझते थे। इस्माईल बिन जाफ़र सादिक़ को नबी मानते थे, मुहम्मद मक्तूम बिन इस्माईल बिन जाफ़र सादिक़ को भी नबी यक़ीन करते थे, इनके नज़दीक इमामों की तादाद सात थी। उबैदी हुकूमत के बानी को सातवां इमाम क़रार देते और उबैदी बादशाहों की फ़रमांबरदारी को निजात का ज़रिया बताते, वग़ैरह।

हसन बिन सबाह एक शख्स रे का बाशिंदा था, वह शीया था। मुस्तंसिर उबैदी के ज़माने में हसन बिन सबाह मिस्र पहुंचा और मुस्तंसिर के दरबार में रसाई हासिल कर के उस का मोतमद बन गया। उसे दूत बना कर बाहर भेजा जाने लगा, तो उस ने मुस्तंसिर से पूछा कि आप के बाद किस का हुक्म माना जाएगा और मैं किसे इमाम समझूंगा? मुस्तं-सिर ने कहा कि मेरे बाद तुम्हारा इमाम मेरा बेटा नज्ज़ार होगा, चुनांचे इसी वजह से हसन बिन सबाह की क़ायम की हुई जमाअत को नज्ज़ारिया या नज्ज़ारी कहते हैं।

हसन बिन सबाह बहुत से शहरों में गया और अपने ख्यालों का प्रचार करता रहा। बहुत से लोग उस के साथी और उसके ख्याल के हामी बन गये।

मलिक शाह की तरफ़ से सूबा अस्फ़हान व क़ुहिस्तान का हाकिम मेंहदी अलवी था। हसन बिन सबाह ने धोखा देकर मेंहदी अलवी से अपनी इबादतगाह बनाने के लिए क़िला-ए-मौत को खरीद लिया। इस क़िले में बैठ कर उस ने हर क़िस्म की मज़बूती कर ली और अपने मानने वालों को जमा करके और आस-पास के जाहिल और लड़ाकू क़बीलों में अपना असर

क़ायम करने के बाद अपनी हुकूमत की बुनियाद क़ायम की और शेखुल जबल के नाम से मशहूर हुआ।

उस ने फ़िदाइयों का एक गिरोह तैयार किया। इन फ़िदाइयों ने बड़े-बड़े काम किये। दुनिया के बड़े-बड़े बादशाहों, वज़ीरों, आलिमों को हसन बिन सबाह क़िला-ए-मौत में बैठा हुआ फ़िदाइयों के हाथ से क़त्ल करा देता था।

हसन बिन सबाह ने अपने मशहूर दूत कय्या बुज़ुर्ग उम्मीद को अपना वली अह्द व जानशीन बनाया। इसके बाद कय्या बुज़ुर्ग उम्मीद की औलाद में कई पीढ़ी तक हुकूमत क़ायम रही। आखिर ६५५ हि०में हलाकू खां के हाथ से इस हुकूमत का खात्मा हुआ।

यह हुकूमत जो हसन बिन सबाह ने क़ायम की थी, क़ुहस्तान में ४८३ हि० से ६५५ हि० तक, पौने दो सौ साल तक क़ायम रही। इस इस्माईली हुकूमत की धाक सारी दुनिया में बैठी हुई थी और बड़े-बड़े शहंशाह फ़िदाइयों से डरते थे, क्योंकि वे हमेशा धोखे से और दुश्मन को तंहा पा कर अचानक हमला करते थे।

शाम पर ईसाइयों के सलेबी हमले

यूरोप के ईसाइयों ने मिल कर मुसलमानों पर ४९० हि० से हमले शुरू किए। ईसाइयों के इस हमले का सिलसिला तीन सौ साल तक जारी रहा। इस मौक़े पर ईसाई बादशाह अपनी हर क़िस्म की मिली-जुली ताक़त लगाते और वे खुद को ईसाई हमलावरों के साथ मुल्क शाम की तरफ़ आने पर तैयार कर लेते थे। इन तमाम लड़ाइयों और चढ़ाइयों का सिल-सिला इस्लामी तारीख का एक दिलचस्प बाब है। इन सलेबी लड़ाइयों का वह हिस्सा, जहां सुलतान सलाहुद्दीन अय्यूबी ने ईसाइयों का मुक़ाबला किया है, निहायत अहम और बहुत दिलचस्प है।

एशिया की मुग़ल हुकूमत

चीन के उत्तरी पहाड़ों से चंगेज़ खां की सरदारी में मुग़लों या तातारियों के गिरोह ने पच्छिम की तरफ़ बग़ावत कर के तुर्किस्तान,

मावराउन्नहर, खुरासान, आज़र बाईजान, अस्फ़हान, अफ़ग़ानिस्तान, फ़ारस, इराक़, शाम, एशिया-ए-कोचक, रूस, आस्ट्रिया तक तमाम मुल्कों को अपनी लूट-मार और क़त्ल व ग़ारत का अड्डा सातवीं सदी हिजरी के शुरू में बना लिया था, सैकड़ों हुकूमतों को बर्बाद और सैकड़ों हुक्मरां खानदानों को जड़-बुनियाद से उखाड़ फेंका। सातवीं सदी हिजरी के बीच में यानी ६५६ हि० में हलाकू खां ने बग़दाद को लूटा और बग़दाद के आखिरी अब्बासी खलीफ़ा मुस्तासिम बिल्लाह को क़त्ल किया।

सन ६२४ हि० में चंगेज़ खां के फ़ौत होने पर मुग़लों की हुकूमत के कई टुकड़े हो गये थे। चंगेज खां की औलाद का एक हिस्सा चीन पर हुक्मरां हुआ, एक हिस्से ने तुर्किस्तान व मावराउन्नहर में अपनी हुकूमत क़ायम की। एक हिस्से ने खुरासान व ईरान पर अपनी हुकूमत क़ायम की। एक हिस्सा क़ज़वीन सागर के उत्तरी व पच्छिमी हिस्से पर हुकूमत करने लगा।

कुछ ही दिनों के बाद इन मुग़लों की अक्सर हुकूमतें इस्लामी हुकूमतों में बदल गयीं, यानी मुग़लों ने इस्लाम क़ुबूल कर लिया और इस्लाम के खादिम बन गये।

दो सौ या पौने दो सौ साल के बाद एशिया में मुग़लों की हुकूमतें कमज़ोर होते-होते खत्म होने लगीं और जगह-जगह छोटी-छोटी स्टेटें बन गयीं।

सन ८०० हि० के क़रीब इन मुग़लों की गिरावट और बर्बादी की हालत में एक तैमूर सरदार हुआ, उसने अपनी जीतों से पूरे एशिया में एक हल-चल-सी मचा दी थी, इस तरह तैमूर की औलाद उन तमाम मुल्कों की वारिस हुई, जिन पर चंगेज़ खां की औलाद ने हुकूमत की थी। जिस तरह चंगेज खां की औलाद गिरावट का शिकार हुई, बिल्कुल उसी तरीक़े और उसी रफ़्तार से तैमूर की औलाद गिरावट का शिकार हुई। जितने ही दिनों चंगेज़ी मुग़लों ने एशिया के मुल्कों पर हुकूमत की थी, लगभग उतने ही दिनों तक तैमूरी मुग़लों का दौर-दौरा रहा।

जब ईरान और तुर्किस्तान वग़ैरह से तैमूरी खानदान की हुकूमत मिट गयी तो तैमूर की औलाद में एक शख्स बाबर पैदा हुआ, उस ने हिन्दुस्तान व अफ़ग़ानिस्तान में एक ज़बर्दस्त हुकूमत की बुनियाद डाली, जो अर्से तक उस के खानदान में बाक़ी रही।

———

तुर्की की उस्मानी हुकूमत

गर्के के तुर्कों के अक्सर क़बीलों को सलजूक़ियों ने धकेल कर सूबा आरमीनिया और क़ज़वीन सागर के तटों तक पहुंचा दिया था। इन्हीं में एक वह क़बीला था, जिस को उस्मानी हुकूमत क़ायम करने का फ़ख्र हासिल हुआ।

जब सलजूक़ी सुलतानों का दौर-दौरा ख़त्म हुआ और तातारियों ने एशिया-ए-कोचक के उस हिस्से में, जो मुसलमानों के क़ब्ज़े में रहा, दस-बारह छोटी-छोटी स्टेटें क़ायम कीं, तो इन स्टेटों में अक्सर सलजूक़ी शाहज़ादे या सलजूक़ियों के हाकिम हुकूमत करते थे। उन्हीं में एक स्टेट आरमीनिया की सीमा पर ग़ज़ के तुर्क क़बीले के सरदार सुलैमान खां के क़ब्ज़े में थी।

६२१ हि० में जब मुग़लों ने अलाउद्दीन केक़बाद सलजूक़ी की स्टेट पर हमला किया तो सुलैमान खां और उस के बेटे अर्तग़ुरल ने तुर्कों को ले कर मुग़लों के ख़िलाफ़ अलाउद्दीन केक़बाद की मदद की। मुग़लों को हार का मुंह देखना पड़ा। अलाउद्दीन केक़बाद सलजूक़ी ने सुलैमान से ख़ुश होकर उसे अपनी फ़ौज का सिपहसालार बना लिया और उस के बेटे अर्तग़ुरल को अंगूरा शहर के क़रीब एक बहुत बड़ी जागीर दे दी।

अपने बाप के फ़ौत होने पर अर्तग़ुरल ने अपनी स्टेट को बढ़ा लिया।

सन ६५७ हि० में अर्तग़ुरल का बेटा उस्मान खां पैदा हुआ। ६८७ हि० में अर्तग़ुरल फ़ौत हुआ और उस का बेटा उस्मान खां तीस साल की उम्र में बाप की जगह स्टेट का मालिक व हाकिम बना।

शाह क़ोनिया यानी ग़यासुद्दीन केख़सरू सलजूक़ी ने अपनी बेटी की शादी उस्मान खां से कर दी और उसको अपनी फ़ौज की सिपहसालारी का ओहदा भी अता किया।

६९९ हि० में ग़यासुद्दीन केख़सरू सलजूक़ी जब मक़तूल हुआ तो तमाम सलजूक़ी तुर्कों ने क़ूनिया हुकूमत के तख़्त पर उस्मान खां को बिठाया और इस तरह अपनी पुरानी स्टेट के अलावा क़ूनिया का इलाक़ा

भी उस्मान खां के क़ब्ज़े में आगया। उस्मान खां ने अपने आप को सुलतान के लक़ब से याद किया।

यही पहला सुलतान है, जिसके नाम से उसके खानदान की उस्मानी हुकूमत क़ायम हुई।

उस्मानी सुलतानों ने बहुत जल्द तमाम एशिया-ए-कोचक पर क़ब्ज़ा कर के क़ैसरे रूम की हुकूमत को एशिया से मिटा दिया। ६६३ हि० में उस्मानी सुलतानों ने एड्रिया लोपुल को जीत कर के उसे अपनी राजधानी बनाया और तराबलस सूबे पर क़ब्ज़ा करके यूरोप के दक्खिनी-पूर्वी हिस्से में इस्लामी हुकूमत क़ायम की। क़ैसरे रूम ने दब कर समझौता किया और उस्मानी ताक़त से अपने मुल्क को बचाया। इसके बाद उस्मानियों ने ईसाइयों कोहरा-२ कर यूरोप में अपने क़ब्ज़े बढ़ाने शुरू कर दिये। आखिर ७६२ हि० में आस्ट्रिया, बलग़ारिया, बूसेना, हंगरी वग़ैरह के ईसाई बादशाहों ने एक होकर एक बहुत बड़ी फ़ौज के साथ उस्मानी हुकूमत पर हमला किया, सुलतान मुराद खां उस्मानी ने अपनी थोड़ी तायदाद की फ़ौज से कसोदा नामी जगह पर ईसाइयों की इस भारी फ़ौज का मुक़ाबला किया और सब को हरा कर पूरे यूरोप को हिला दिया।

सन् ७६६ हि० में पूरे यूरोप ने मिलकर, जिस में फ्रांस व जर्मनी वग़ैरह की फ़ौज भी शामिल थीं, उस्मानी हुकूमत को जड़-बुनियाद से उखाड़ देने का इरादा किया और निकोपोलेस नामी जगह पर सुलतान बायज़ीद बिन सुलतान मुराद खां से लड़ाई हुई। इस लड़ाई में सुलतान बायज़ीद ने जो बायज़ीद यलदरम के नाम से मशहूर है, यूरोप की तमाम मिली-जुली ताक़तों को ज़ोरदार तरीक़े से हरा दिया। पूरी ईसाई दुनिया में खौफ़ व हरास फैल गया।

दोबारा फिर तमाम ईसाई पूरे मज़हबी जोश के साथ जमा होकर बायज़ीद यलदरम से लड़ने पर तैयार हुए। बायज़ीद यलदरम ने इस बार भी सब को हराकर तमाम यूरोप से फ़रमांबदारी का इक़रार लिया। क़ैसरे रूम ने खुफ़िया तौर पर बायज़ीद यलदरम के खिलाफ़ फ़िज़ा बना रखी थी, इसलिए बायज़ीद यलदरम ने इरादा किया कि सबसे पहले क़ैसर को सज़ा देकर बलक़ान से ईसाई हुकूमत का नाम व निशान मिटा दे और इसके बाद पूरे यूरोप को फ़त्ह करके दुनिया से ईसाइयों की जड़ें खोद दें।

वह अभी क़ैसर पर हमला करने न पाया था कि एशिया की तरफ़

ये ख़बर पहुंची कि तैमूर एक ज़बरदस्त फ़ौज लेकर बायज़ीद यलदरम के एशियाई इलाक़ों पर हमलावर हुआ है, चुनांचे बायज़ीद को फ़ौरन एशिया-ए-कोचक में आना और तैमूर का मुक़ाबला करना पड़ा और ८०४ हि० में अंगूरा की लड़ाई हुई। इस लड़ाई में तैमूर जीत गया और बायज़ीद यलदरम गिरफ़्तार हुआ और यूरोप उसके क़ब्ज़े में आने से बच गया।

इसके बाद लगता था कि उस्मानी हुकूमत अब ख़त्म हो जाएगी लेकिन पचास साल बाद ही मुहम्मद ख़ां सानी (सिकेंड) ने क़ुस्तुन्तुनिया को जीतकर बलक़ान से ईसाई हुकूमत की जड़ें खोद दीं।

फिर सुलतान सलीम ख़ां ने ईरानियों को बुरी तरह हराया, मिस्र जीता, इराक़ और अरब को अपने क़ब्ज़े में किया और एक शानदार इस्लामी हुकूमत क़ायम करके ९२२ हि० में अब्बासी हुकूमत का ख़ात्मा करके उस्मानियों में इस्लामी ख़िलाफ़त के सिलसिले को जारी किया।

हिन्दुस्तान के बादशाह

हिन्दुस्तान का एक सूबा यानी सिंध पहली सदी हिजरी में इस्लामी ख़िलाफ़त की सरहदों में शामिल हो गया था। काफ़ी दिनों तक सिंध के हाकिम व गवर्नर दरबारे ख़िलाफ़त से मुक़र्रर होकर आते रहे।

इसके बाद जब अब्बासी ख़िलाफ़त में कमज़ोरी पैदा होनी शुरू हुई, तो सिंध में कई छोटी-छोटी स्टेटें क़ायम हो गयीं, धीरे-धीरे इन इस्लामी रियासतों के रक़बे सुकड़ते चले गये।

महमूद ग़ज़नवी के हमलों तक एक स्टेट सिंध में मौजूद थी। महमूद ग़ज़नवी ने पंजाब व मुलतान पर क़ब्ज़ा करके उसे इस्लामी हुकूमत में शामिल किया।

जब ग़ज़नवियों की जगह पर ग़ौरी हुए, तो उन्होंने तमाम उत्तरी भारत को जीत कर के भारत में इस्लामी हुकूमत और मुस्तक़िल बादशाही क़ायम की। पहला मुसलमान बादशाह जो हिन्दुस्तान में हुकूमत की गद्दी पर बैठा है, वह क़ुत्बुद्दीन ऐबक था, जो शिहाबुद्दीन ग़ौरी का ग़ुलाम था।

ग़ुलाम ख़ानदान के बाद ख़िलजी ख़ानदान ने हुकूमत की।

खिलजियों के बाद तुग़लक़ों की हुकूमत रही।

तुग़लक़ खानदान के बाद खिज्र खां का खानदान हाकिम बना, इसके बाद लोदियों ने हुकूमत की।

लोदियों के बाद मुग़ल हिन्दुस्तान में आए, मगर शेर शाह ने उनको निकाल कर अपनी हुकूमत क़ायम की। मुग़लों ने दोबारा शेरशाह के खानदान को हराकर भारत पर अपना क़ब्ज़ा जमाया।

इसके बाद अंग्रेज हिन्दुस्तान आए।

इस्लामी हुकूमत उन्दुलुस में

पहली सदी हिजरी की बात है मोरक्को वग़ैरह का इलाक़ा ईसाइयों के क़ब्ज़े में था। उस का क़िलेदार एक शख़्स कोंट गोलयिन नामी था, जिसे बालियान के नाम से भी याद किया जाता है।

जोलियन ने उन्दुलुस की ईसाई हुकूमत से अपने ताल्लुक़ात क़ायम कर लिए। उन्दुलुस के आखिरी गाथ हाकिम ने जिसे डेज़ा भी कहते हैं, अपनी बेटी की शादी जोलयिन से कर दी थी।

जब डेज़ा को हटाया गया तो जोलयिन को बुरा ज़रूर लगा, लेकिन मजबूरी भी थी, कर ही क्या सकता था, तमाम पादरियों की मंशा के मुताबिक़ लज़ीक़ तख़्त पर बैठा था।

जोलयिन की एक बेटी फ़्लोरंडा नामी थी, जो बादशाह डेज़ा की नवासी यानी पुराने शाही खानदान से ताल्लुक़ रखती थी। उन्दुलुस का बादशाह लज़ीक़ बावजूद इस कि के वह बूढ़ा था, उस लड़की से ज़िना कर बैठा। जोलियन इस खबर को सुनकर तड़प उठा और साज़िश की स्कीम बनाने लगा।

मूसा बिन नसीर

उस ज़माने में खलीफ़ा वलीद बिन अब्दुल मलिक की ओर से

शहर क़ेरवान में मूसा बिन नसीर खलीफ़ा के मग़रिबी इलाक़ों का वाय-सराय था।

मूसा बिन नसीर की तरफ़ से तारिक़ बिन ज़ियाद, उसका बरबरी नस्ल का गुलाम शहर तंजा की हुकूमत पर मुक़र्रर और मराक़श की इस्लामी फ़ौजों का सिपहसालार था।

तारिक़ अगरचे जोलियन से ज़्यादा क़रीब था, लेकिन जोलियन ने बजाए तारिक़ से बात-चीत करने के मूसा बिन नसीर के सामने अपना प्रोग्राम रखा और उन्दुलुस पर हमले करने पर इक़रार किया।

मूसा बिन नसीर ने जोलियन के इस इसरार पर उन्दुलुस के हालात और उन्दुलुसी हुकूमत की फ़ौजी ताक़त के बारे में कुछ सवाल रखे और खलीफ़ा वलीद बिन अब्दुल मलिक से इजाज़त तलब करना ज़रूरी समझ करके एक खत दमिश्क़ की तरफ़ रवाना किया।

उधर जोलियन के साथ अपने एक सरदार तरीक़ या तारिक़ को पांच सौ आदमियों के साथ भेज दिया कि जोलियन के जहाज़ों में सवार होकर उन्दुलुस के साहिल पर उतरें और वहां के हालात की जानकारी हासिल करके वापस आएं।

थोड़े ही दिनों में खलीफ़ा के दरबार से इजाज़त आ गयी जिसमें पूरी चौकसी रखने और अद्ल व इंसाफ़ से काम लेने की बात कही गयी थी।

इसी बीच तरीक़ भी वापस आयाऔर उसने जोलियन की एक-एक बात की तस्दीक़ कर दी।

फिर मूसा बिन नसीर ने तंजा के गवर्नर तारिक़ बिन ज़ियाद के नाम हुक्म भेज दिया कि तुम अपनी फ़ौज लेकर उन्दुलुस पर चढ़ाई करो।

तारिक़ अपनी सात हज़ार की फ़ौज नावों में सवार कर के जबलुत्तारिक़ के पार उन्दुलुस के दक्खिनी रास पर जा उतरा। पूरी फ़ौज चार नावों पर सवार होकर गयी थी।

तारिक़ अभी साहिल पर नहीं पहुंचा था कि उस ने ख्वाब में देखा कि आंहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम उससे फ़रमाते हैं, तुम्हारे हाथ उन्दुलुस फ़त्ह हो जाएगा।

इसके बाद तुरन्त तारिक़ की आंख खुल गयी और उसको अपनी जीत का पक्का यक़ीन हो गया।

यह उसका यक़ीन था, यह उसकी हिम्मत व बहादुरी थी कि उस

उन्दुलुस के साहिल पर उतरते ही, जिन जहाज़ों में सवार होकर आया थे, उनको आग लगाकर समुद्र में डुबा दिया और अपने साथियों को बता दिया कि वापस जाने का अब कोई ज़रिया बाक़ी नहीं रहा। हमारे पीछे समुद्र है और आगे दुश्मन का फैला हुआ मुल्क। इसके अलावा अब निजात की कोई शक्ल नहीं रह गयी कि हम दुश्मन के मुल्क पर क़ब्ज़ा कर लें और उसकी फ़ौजों को पीछे धकेलते चले जाएं।

ईसाई जनरल तदमीर की हार

तारिक़ के साथी अभी पूरे तौर कर सुकून भी न पा सके थे कि ईसाइ जनरल तदमीर ने, जो इत्तिफ़ाक़ से उन दिनों वहीं मौजूद था, खबर सुनते ही उन पर हमला कर दिया, लेकिन बुरी तरह हारा और भाग निकला. फिर उस ने बादशाह लर्ज़ीक़ को इत्तिला दी कि एक ग़ैर क़ौम ने हमला कर दिया है, मुझे पूरी हिम्मत व बहादुरी से काम लेने के बाद भी हार का मुंह देखना पड़ा है, आप खुद ज़बरदस्त फ़ौज के साथ इस तरफ़ मुतवज्जह हों।

शाह लर्ज़ीक़ ने यह खबर सुनते ही फ़ौज जमा करने की तैयारी शुरू कर दी। शहर शद्दूना की लाजुडा झील के क़रीब एक छोटी-सी नदी के किनारे २८ रमज़ानुल मुबारक सन् ९२ हि० मुताबिक़ जुलाई ७११ ई० को दोनों फ़ौजों का मुक़ाबला हुआ। शाह की भारी भरकम फ़ौज मुट्ठी भर मुसलमानों की फ़ौज से हार गयी। शाह लर्ज़ीक़ भाग।

लड़ाई के एक हफ़्ते बाद मुसलमानों को यह जीत ५ शव्वाल ९२ हि० मुताबिक़ ७११ ई० हासिल हुई थी। उसी दिन से उन्दुलुस में इस्लामी हुकूमत की शुरूआत समझनी चाहिए।

मूसा बिन नसीर जीत की खबर सुनकर बहुत खुश हुआ, खलीफ़ा को इत्तिला भिजवा दी और खुद उन्दुलुस की तरफ़ चलने का इरादा किया और एक खत तारिक़ इब्ने ज़ियाद के नाम रवाना किया कि तुम मुल्क का जितना हिस्सा जीत चुके हो, उसी पर क़ब्ज़ा बनाए रहो, अभी आगे न बढ़ो।

इसके बाद मूसा बिन नसीर अठारह हज़ार की फ़ौज लेकर क़ैरवान से रवाना हुआ।

फिर तारिक़ क़र्तबा की तरफ़ बढ़ा। क़र्तबा का हाकिम उन्दुलुस के शाही खानदान का एक शख्स था। क़र्तबा को घेर लिया गया। इस घिराव में ज्यादा वक़्त न लगाने के बजाए तारिक़ तलेतला की तरफ़ बढ़ गया और मुग़ीस रूमी को क़र्तबा के घेराव पर छोड़ दिया।

सन् ६३ हि० में तलेतला जीत लिया गया।

तलेतला में तारिक़ रुका नहीं, बल्कि वह आगे बढ़ता चला गया।

उधर मुग़ीस रूमी ने कुछ दिनों तक घेराव करने के बाद क़र्तबा को भी जीत लिया। इधर तारिक़ ने दक्खिन से लेकर उत्तर तक उन्दुलुस का दर्मियानी हिस्सा जीत लिया, पूरब और पच्छिम की तरफ़ के सूबे बाक़ी रह गये थे।

इसी बीच अमीर मूसा बिन नसीर उन्दुलुस में मय अपनी फ़ौज के दाखिल हो गये। तलेतला में तारिक़ बिन ज़ियाद और मूसा बिन नसीर की मुलाक़ात हुई।

इसके बाद दोनों ने उन्दुलुस के बाक़ी इलाक़ों को भी जीत लिया और इन शर्तों के साथ कि ईसाइयों को मज़हबी आज़ादी हासिल रहेगी, इस्लाम के दुश्मनों को वे पनाह नहीं देंगे, वग़ैरह-वग़ैरह।

अय्यूब बिन हबीब

उन्दुलुस के अमीर की हैसियत से और सरदारों के मश्विरे के मुताबिक़ अय्यूब बिन हबीब को उन्दुलुस का अमीर बनाया गया।

अमीर अय्यूब बिन हबीब का सबसे बड़ा काम यह है कि उसने इश्बेलिया के बजाए क़र्तबा को राजधानी बनाया। इस के बाद अफ़रीक़ा और मोरक्को से बरबरी और अरबी क़बीलों को उन्दुलुस में आबाद होने की दावत दी, चुनांचे बहुत से मुसलमान उन्दुलुस में आए और अमीर अय्यूब ने उनको उन्दुलुस के मुख्तलिफ़ शहरों में आबाद करके ईसाइयों की बग़ावत के अंदेशों को बड़ी हद तक खत्म कर दिया।

अमीर अय्यूब अमीरी के सिर्फ़ छः महीने ही पूरे करने पाया था, कि उसके हटाए जाने का हुक्म लेकर हुर्र बिन अब्दुर्रहमान सक़फ़ी पहुंच गया।

हर्ब बिन अब्दुर्रहमान सक़फ़ी

हर्ब बिन अब्दुर्रहमान ने उन्दुलुस पहुंच कर हुकूमत अपने हाथ में ली। उस ने मूसा और अय्यूब के ज़माने के तमाम अह्लकारों को बद-गुमानी की नज़र से देखकर उन पर सख़्ती शुरू कर दी, साथ ही ईसाइयों और यहूदियों के साथ भी ऐसा ही सख़्त बर्ताव किया।

ईसाई और यहूदी इससे पहले अपने लिए मुसलमान हुक्मरानों को रहम दिल और मेहरबान देख चुके थे। उन्हों ने अपना एक वफ़्द क़ैरवान रवाना किया कि मुहम्मद बिन यज़ीद से गुज़ारिश कर के इस अमीर को तब्दील कराए, लेकिन उसने ध्यान न दिया। चुनांचे यह वफ़्द ख़लीफ़ा की ख़िदमत में रवाना हुआ। उस वक़्त उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ ख़लीफ़ा थे।

हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ ने पूरी बात सुनी और हर्ब बिन अब्दुर्रहमान को उन्दुलुस की हुकूमत से हटाकर सम्ह बिन मलिक ख़ौलानी को उन्दुलुस का हाकिम बनाकर भेजा।

हर्ब बिन अब्दुर्रहमान बिन उस्मान सक़फ़ी ने उन्दुलुस में दो बरस आठ महीने हुकूमत की।

सम्ह बिन मालिक

अमीर सम्ह बिन मालिक ख़ौलानी अगरचे एक फ़ौजी आदमी और तारिक़ बिन ज़ियाद के साथियों में से था, लेकिन उसने उन्दुलुस की हुकूमत संभालते ही सबके साथ अदल व इंसाफ़ और जनता की ख़ुश-हाली के सामानों को जुटाने की कोशिश की।

□ हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ के हुक्म से इस अमीर ने उन्दुलुस की मर्दुम शुमारी (जन-गणना) करायी, जिससे हर क़ौम, हर क़बीले और हर एक मज़हब के लोगों की अलग-अलग तायदाद मालूम हो गयी।

□ बरबरी लोगों को अमीर सम्ह ने ग़ैर-आबाद इलाक़ों में आबाद

करके खेती-बाड़ी और घरेलू उद्योग धंधों की तरफ़ ध्यान दिलाया, जिसमें उनको कामियाबी हासिल हुई।

□ खेती और कारोबार में आसानी पैदा की, जिज़या, उश्र, ज़कात का निज़ाम चलाया।

□ पुल, मस्जिद और दूसरी चीज़ें बनवायीं। ग़रज़ कुछ ही दिनों में उन्दुलुस में अम्न व सुकून और अद्ल व इंसाफ़ क़ायम हो गया।

अंदरूनी इंतिज़ाम से निबट कर अमीर सम्ह ने फ़ौज लेकर जबलुलबरतात की तरफ़ तवज्जोह की। इस पहाड़ की घाटी को पार करके वह उस मुल्क में दाखिल हुआ, जो आजकल दक्खिनी फ़्रांस कहलाता है।

अमीर सम्ह ने तारबोन पर हमला करके उसे जीत लिया।

तोलोज़ पर भी हमला हुआ, लड़ाई हुई और करीब था कि फ़्रांसीसियों की भारी फ़ौज इन मुट्ठी पर मुसलमानों के मुक़ाबले में लाशों के ढेर छोड़ कर लड़ाई के मैदान से पीठ फेर कर भागे और तमाम मुल्क फ़्रांस इस्लामी फ़ौज के पांवों से रौंदा जाए। ठीक उसी वक़्त, जबकि मुसलमान ईसाइयों को पीछे धकेल आगे बढ़ रहे थे, एक तीर अमीर सम्ह के गले में आकर तराज़ू हो गया।

अपने अमीर को इस तरह जामे शहादत पीते हुए देखकर मुसलमानों का जोश कुछ ठंडा पड़ गया, उनका आगे बढ़ना रुक गया।

मुसलमानों ने फ़ौरन अमीर सम्ह की जगह अब्दुर्रहमान ग़ाफ़क़ी को अपना सिपहसालार और अमीर चुना। अब्दुर्रहमान ने आगे बढ़ना मुनासिब न समझा. इस तरह आगे की जीत रुक गयी।

तोलोज़ की यह लड़ाई सन् १०२ हि० में लड़ी गयी।

कुछ ही दिनों बाद अब्दुर्रहमान ग़ाफ़क़ी को, कुछ शिकायतों की बुनियाद पर हटा दिया गया और उनकी जगह पर अंबसा बिन सहीम कल्बी को अमीर बनाया गया।

अंबसा बिन सहीम कल्बी

अमीर अंबसा ने शुरू में मुल्क के इंतिज़ाम पर तवज्जोह दी और जनता को तरह-तरह के फ़ायदे पहुंचाए।

मुल्क फ्रांस पर चढ़ाई की, दक्खिनी फ्रांस जीत लिया गया, फ्रांस के बीच के हिस्से में मुसलमानों से सख्त मुक़ाबला हुआ। इस लड़ाई में भी मुसलमानों ने फ्रांसीसियों के दांत खट्टे कर दिए। अमीर अंबसा ने बद-एहतियाती से अपने आप को खतरे में डाल दिया और सबसे आगे बढ़कर ईसाइयों पर खुद हमला किया और शहीद हुए।

अमीर अंबसा ने अपनी शहादत से पहले ही उर्वः बिन अब्दुल्लाह फ़ह्री को अपना क़ायम मुक़ाम तज्वीज़ कर लिया था। यह वाक़िआ सन् १०७ हि० का है। लेकिन उर्वः बिन अब्दुल्लाह सिर्फ़ छः महीने ही अमीर रह सके, उनकी जगह पर यह्या बिन सलमा को उन्दुलुस का अमीर बनाया गया।

यह्या बिन सलमा और उसके बाद

यह्या बिन सल्मा कल्बी ने १०७ हि० के आखिर में उन्दुलुस की हुकूमत संभाली। यह्या बिन सलमा ज़िद्दी और सख्त आदमी था, इसलिए वहां के लोग उससे नाराज हो गये। नतीजा यह हुआ कि दो बरस बाद यह्या बिन सलमा भी हटा दिया गया। उसकी जगह अमीर उस्मान बिन अबी उबैदा नज्मी उन्दुलुस का हाकिम बनकर आया। उस्मान के बाद हुजैफ़ा बिन अह्वज़, हुसैन बिन उबैद, मुहम्मद बिन अब्दुल्लाह अशजई और अब्दुर्रहमान बिन अब्दुल्लाह ग़ाफ़क़ी उन्दुलुस के अमीर बनाए गए।

अब्दुर्रहमान ग़ाफ़क़ी ने उन्दुलुस की हुकूमत अपने हाथ में लेकर पहले मुल्क के अंदरूनी इंतिज़ाम को दुरुस्त और मुकम्मल किया, अक्सर शहरों और क़स्बों में मदरसे, मस्जिदें और पुल तामीर कराए। इसके बाद फ़ौजी तैयारी करके मुल्क फ्रांस पर हमला करने और पिछली मुहिमों की नाकामी को दूर करने की तैयारी शुरू की।

माइटेरस पर क़ब्ज़ा करके मुसलमान शहर टोरस की तरफ़ बढ़े ज़बरदस्त ईसाई फ़ौज से टक्कर हुई। मुसलमान जीत चुके थे और ईसाइयों के क़दम उखड़ने ही वाले थे कि धोखे से ईसाइयों के एक दस्ते ने मुसलमानों पर पीछे से हमला किया और लड़ाई का पांसा बदल गया। अमीर अब्दुर्रहमान शहीद हुए। यह लड़ाई सन् ११४ हि० में हुई।

अब्दुल मलिक बिन क़ुत्न फ़हरी

इस लड़ाई के अंजाम और अब्दुर्रहमान की शहादत का हाल जब गवर्नर अफ़्रीक़ा उबैद बिन अब्दुर्रहमान को मालूम हुआ, तो उसने अब्दुल मलिक बिन क़ुत्न फ़हरी को उन्दुलुस का अमीर मुक़र्रर किया और हुक्म दिया कि फ़्रांसीसियों से अब्दुर्रहमान ग़ाफ़की का बदला ज़रूर लिया जाना चाहिए।

अब्दुल मलिक बिन क़ुत्न फ़हरी ने उन्दुलुस में दाखिल होकर सन् ११५ हि० में हुकूमत का इन्तिज़ाम अपने हाथ में लिया और मुल्क के अन्दरूनी इन्तिज़ामों से फ़ारिग़ होकर फ़्रांस के मुल्क पर हमले की तैयारी की, लेकिन मौसम की खराबी की वजह से वह अपने इरादे को अमली जामा नहीं पहना सका।

इस ताखीर से ना-खुश होकर अफ़्रीक़ा के गवर्नर ने अब्दुल मलिक को उन्दुलुस की अमीरी से हटा दिया और उसकी जगह उत्बा बिन हज्जाज सलूली को उन्दुलुस का अमीर बनाकर भेजा।

उत्बा बिन हज्जाज सलूली

उत्बा बिन हज्जाज सलूली ने ११७ हि० में उन्दुलुस में दाखिल होकर हुकूमत की बाग-डोर संभाली और अब्दुल मलिक बिन क़ुत्न फ़हरी को किसी छोटे से इलाक़े का हाकिम बना दिया।

वैसे उत्बा बहुत होशियार और इंसाफ़ पसंद शख्स था। उत्बा के मशहूर कारनामे कुछ इस तरह हैं—

☐ अम्न व अमान क़ायम रखने का भरपूर इंतिज़ाम किया।

☐ पुलिस का एक खास और अलग मुहकमा रास्तों की हिफ़ाज़त और अम्न व अमान के लिए क़ायम किया, इस मुहकमे में सवार भर्ती किए गए थे जो गश्त करते और आबादी की हिफ़ाज़त करते।

☐ उत्बा ने हर एक गांव और हर एक बस्ती में एक-एक अदालत क़ायम की, ताकि मर्कज़ी अदालतों में काम की भीड़ न हो और लोगों को

झगड़ों को ख़त्म कराने में आसानी हो जाए।

□ उत्बा ने यह भी इन्तिज़ाम किया कि हर गांव और हर बस्ती में कम से कम एक-एक मदरसा क़ायम हो, इन स्कूलों के लिए ख़ुसूसी फंड क़ायम कर दिया गया।

□ जहां-जहां मस्जिदों की ज़रूरत थी, वहां मस्जिदें बनवायीं और हर मस्जिद के साथ एक मदरसा भी लाज़िमी तौर पर क़ायम किया गया।

बहरहाल उत्बा बिन हज्जाज सलूली के दौर में उन्दुलुसी जनता बहुत ख़ुश और मुतमइन थी।

इस के बाद फ़्रांस मुल्क के उस हिस्से पर तवज्जोह की, जिस पर मुसलमानों ने क़ब्ज़ा किया था, लेकिन जमाव नहीं पैदा हुआ था। वहां उस ने शहर अरबोनिया को मज़बूत किया। रोन नदी के किनारे बहुत से क़िले बनवाये। फ़्रांसीसियों से कई बार मुक़ाबला हुआ और हर बार उन को मुसलमानों से हारना पड़ा।

सन ११२ हि० में अफ़रीक़ा के अन्दर बरबरियों ने बग़ावत की। इस बग़ावत को कुचलने के लिए अमीर उत्बा से बेहतर और कोई आदमी न था। चुनांचे गवर्नर अफ़रीक़ा ने उन्दुलुस से अमीर उत्बा को तलब किया। उत्बा ने अफ़रीक़ा के बरबरियों को ख़ूब अच्छी तरह सज़ा दी और यह बग़ावत कुचल दी गयी।

अमीर उत्बा अफ़रीक़ा के कामों से फ़ारिग़ हो कर १२२ हि० में उन्दुलुस वापस आया तो यहां उसके ख़िलाफ़ बग़ावत का मंसूबा पक्का हो चुका था। बग़ावत पर उभारा था अब्दुल मलिक बिन क़ुत्न ने। उमीर ने इस बग़ावत को दबाने की तद्बीरें शुरू की ही थीं, मगर उस की मौत ने ज़्यादा मोहलत न दी। सन १२३ के सफ़र महीने में अमीर उत्बा ने राज-धानी क़र्तबा में इन्तिक़ाल किया और अब्दुल मलिक बिन क़ुत्न बड़ी आसानी से तमाम मुल्क उन्दुलुस पर क़ाबिज़ हो गया। लेकिन उन्दुलुस के लोग इस से ख़ुश न रहे, बरबरियों की बग़ावत हो गयी, इस की ताक़त कमज़ोर हुई यहां तक कि सौ वर्ष का बूढ़ा यह शख़्स क़त्ल कर दिया गया। यह वाक़िआ सन १२३ हि० के आख़िरी दिनों का है। ग्यारह महीने तक अमीर बलज उन्दुलुस का अमीर रहा। इस के बाद शामियों और अरबों ने मिल कर सालबा बिन सुलामा को उन्दुलुस का अमीर बनाया।

सालबा बिन सुलामा चूंकि यमनी था, तरफ़दारी से काम लेता था, इस लिए बद-अम्नी फूट पड़ी, तमाम अरबी क़बीले इब्ने सुलामा से नाराज़

हो गये और मजबूर होकर हन्ज़ला बिन सफ़वान, गवर्नर अफ़रीक़ा से इब्ने सुलामा की शिकायत की और किसी नये अमीर के भेजने की दर्ख्वास्त की।

हंज़ला बिन सफ़वान ने अबुल खत्ताब हुसाम बिन ज़ुरार कल्बी को अमीरे उन्दुलुस बना कर भेजा। उन्दुलुस वालों ने अबुल खत्ताब हुसाम का इस्तक़्बाल कर के इताअत क़ुबूल की। हुसाम ने इब्ने सुलामा को हटा कर हुकूमत की बाग-डोर अपने हाथ में ली। यह वाक़िआ सन १२५ हि० का है।

इसमें शक नहीं कि हुसाम बड़ा क़ाबिल आदमी था, उसने कुछ क़दम ऐसे उठाए जो मुल्क और मुल्क के रहने वालों के लिए बड़े मुफ़ीद थे, लेकिन यमनियों की तरफ़दारी ने काम बिगाड़ दिया और लोग खफ़ा हो गये, यहां तक कि सालबा बिन सुलामा, जो खुद यमनी था और तरफ़दारी की वजह से हटाया गया था, वह भी हुसाम के खिलाफ़ बग़ावत करने वाली ताक़त से मिल गया। अबुल खत्ताब हुसाम को लड़ना पड़ा, वह हारा और उसे एक मज़बूत क़िले में क़ैद कर दिया गया। यह वाक़िआ रजब १२७ हि० का है।

कुछ ही दिनों बाद वह रिहा कर दिया गया। अंदर ही अंदर हुसाम ने फिर ताक़त जमा करनी शुरू कर दी, दोबारा लड़ाई हुई और इस बार वह गिरफ़्तार हो कर मक़्तूल हुआ।

अब क्या था? सालबा बिन सुलामा को दोबारा अमीर उन्दुलुस बना दिया गया, सन १२६ हि०में सालबा बिन सुलामा ने हुकूमत की बाग-डोर दोबारा अपने हाथ में ली।

लेकिन सालबा ज़्यादा दिनों तक ज़िंदा नहीं रह सका। उस की वफ़ात के बाद यूसुफ़ बिन अब्दुर्रहमान फ़ह्री अमीर चुने गये।

यूसुफ़ बिन अब्दुर्रहमान फ़हरी

यह वह दौर था जब कि बनू उमैया के खलीफ़ा सियासी हैसियत से बहुत कमज़ोर हो चुके थे, अब्बासियों की साज़िशें और कोशिशें बराबर कामियाब होती जा रही थीं, इस लिए सूबों में और छोटी-छोटी हुकूमतों में बद-अम्नी का पैदा होना कोई अजीब बात न थी।

उन्दुलुस में यही हुआ। छोटी-छोटी बग़ावतें हुईं, जो दबा दी गयीं,

साज़िशों का चक्कर चलता रहा आख़िर अब्दुर्रहमान दाख़िल उमवी यूसुफ़ बिन अब्दुर्रहमान पर ग़ालिब आ गया। बस इस के बाद से अब्दुर्रहमान दाख़िल और उसकी औलाद की हुकूमत उन्दुलुस में शुरू हुई और उन्दुलुस की इस्लामी हुकूमत का दौर ख़त्म हुआ।

पहले दौर पर एक नज़र

उन्दुलुस का मुल्क ख़िलाफ़त के मर्कज़ यानी दमिश्क़ से बहुत ज़्यादा फ़ासले पर वाक़ेअ था, महीनों में ख़लीफ़ा का कोई हुक्म उन्दुलुस पहुंच पाता और उन्दुलुस या कोई पैग़ाम दरबारे ख़िलाफ़त तक आ पाता था।

उन्दुलुस आम तौर पर गवर्नर अफ़्रीक़ा के मातहत ही रहा।

सन १३८ हि० में अब्दुर्रहमान ने उंदुलुस में दाख़िल होकर उंदुलुस के अमीरों के इस दौर का ख़ात्मा किया।

इसी बीच उंदुलुस के पहाड़ी इलाक़ों में एक छोटी सी ईसाई हुकूमत भी क़ायम हो गयी, जो उमवी हुकूमत के लिए बराबर मस्अला बनी रही।

ख़ुलफ़ा-ए-उन्दुलुस

अब्दुर्रहमान बिन मुआविया उमवी

अब्दुर्रहमान बिन मुआविया बिन हिशाम बिन अब्दुलमलिक बिन मरवान बिन हकम सन ११३ हि० में पैदा हुआ था। वह बड़ा होनहार जवान था। बुरी आदतें और गंदी ख़स्लतें उसमें बिल्कुल नहीं पायी जाती थीं, वह बहादुर, निडर और लड़ाई की कला का जानकार एक योद्धा भी था। वह उमवी ख़ानदान का एक बेहतरीन शख़्स था।

सन १३२ हि० में जब उमवी ख़िलाफ़त का ख़ात्मा होकर अब्बासी

खिलाफ़त शुरू हुई तो अब्दुर्रहमान बिन मुआविया की उम्र बीस साल के क़रीब थी।

फ़रात नदी के किनारे अब्दुर्रहमान की एक जागीर थी। जिस वक़्त अब्बासियों ने दमिश्क़ में उमवियों का क़त्ले आम मचा रखा था, अब्दुर्रहमान दमिश्क़ में मौजूद न था, बल्कि अपनी जागीर के गांव में आया हुआ था, फिर वह वहीं रहने भी लगा।

एक दिन वह अपने खेमे में बैठा था कि उस का तीन-चार साल का लड़का, जो बाहर खेल रहा था, डरा-सहमा हुआ खेमे के भीतर आया। अब्दुर्रहमान उस के डर की वजह मालूम करने के लिए खेमे से बाहर निकला, तो उस ने देखा कि अब्बासियों का काला झंडा हवा में लहरा रहा है और उसकी तरफ़ चला आ रहा है। तमाम गांव में हलचल मची हुई है।

यह देख कर कि अब्बासी लश्कर बनू उमैया के क़त्ल करने को पहुंच गया है, वह अपने बेटे को गोद में उठा कर दरिया की तरफ़ भागा। अभी वह दरिया तक न पहुंच पाया था कि दुश्मनों ने उस का पीछा किया और चिल्ला-चिल्ला कर कहने लगे कि तुम भागो मत, हम तुमको कोई नुक़सान न पहुंचाएंगे और हर तरह से तुम्हारी मदद करेंगे।

अब्दुर्रहमान के पीछे-पीछे उस का भाई भी था।

अब्दुर्रहमान ने दुश्मनों की बातों की तरफ़ ज़रा भी ध्यान न दिया और दरिया के किनारे पहुंचते ही दरिया में कूद पड़ा।

अब्दुर्रहमान का भाई दुश्मनों की यक़ीन दिहानियों से धोखा खा गया, वह वहीं खड़ा हो गया, यहां तक कि बलवाई आगये और उसका सिर काट लिया। अब्दुर्रहमान दरिया में तैरता हुआ अपने बेटे को छाती से लगाए हुए दरिया के दूसरे किनारे पर पहुंच गया। दुश्मनों को दरिया में तैरने की हिम्मत न थी, बल्कि वे उसी किनारे पर खड़े हो कर तमाशा देख रहे थे।

अब्दुर्रहमान यहां से छिपता-छिपाता चल खड़ा हुआ, यहां तक कि फ़लस्तीन के इलाक़े में पहुंच गया। वहां उसको इत्तिफ़ाक़ से उसके बाप का बद्र नाम का ग़ुलाम मिल गया। वह भी इसी हालत में अपनी जान बचाता और छिपता-छिपाता मिस्र की तरफ़ जा रहा था। बद्र के पास अब्दुर्रहमान की बहन के कुछ ज़ेवरात और रुपए थे जो उस ने अब्दुर्रहमान की खिदमत में पेश कर दिए। इस तरह अब्दुर्रहमान की तंगी और खर्च की तक्लीफ़ दूर हो गयी। अब उस ने अपना भेस बदल कर और मामूली सौदागरों की

हालत बना कर बद्र के साथ सफ़र तै करना शुरू किया मिस्र पहुंचा, वो एक दिन ठहरा और कुछ दिनों के बाद अफ़रीक़ीया चला गया।

अफ़रीक़ीया के गवर्नर को अब्दुर्रहमान के आने का हाल मालूम हुआ तो वह इज़्ज़त व मुहब्बत से पेश आया, लेकिन उस को कुछ दिनों बाद मालूम हो गया कि अफ़रीक़ा में अब्दुर्रहमान हुकूमत क़ायम करने का मंसूबा बना रहा है, उधर अब्बासी हुकूमत की मज़बूती की ख़बर भी उसे मिलती रही, तो उस ने अब्दुर्रहमान को गिरफ़्तार करके अब्बासी ख़लीफ़ा सफ़्फ़ाह के पास भेज देने में ही बेहतरी समझी।

अब्दुर्रहमान को गवर्नर के इस इरादे की इत्तिला मिल गयी और वह अपने ग़ुलाम बद्र और अपने बेटे को ले कर फ़ौरन छिप गया और फिर वहां से भाग निकला। आख़िर वह चार-पांच साल तक जंगलों में घूमता-घूमाता बरबरी क़ौम के क़बीले जन्नाता की एक शाख़ बनू नुफ़ूसन में पहुंचा। उन लोगों को जब यह मालूम हुआ कि अब्दुर्रहमान की मां हमारे ही क़बीले की एक औरत थी, तो उन्हों ने अब्दुर्रहमान को अपने रिश्तेदार और भाई की तरह मेहमान रखा और उस को इत्मीनान दिलाया कि हम तुम्हारी हर मदद और हिफ़ाज़त के लिए तैयार हैं। अब्दुर्रहमान ने सिब्त में जहां बनू नुफ़ूसा की आबादी ज़्यादा थी, क़ियाम किया और उन्दुलुस में ठहरे बनू उमैया के हमदर्दों को ख़ुतूत लिख कर बद्र के हाथों उन्दुलुस भेजा, ताकि वहां के हालात का जायज़ा लिया जा सके।

बद्र ने उन्दुलुस में पहुंच कर अबू उस्मान और अब्दुल्लाह बिन ख़ालिद से मुलाक़ात की, उन्हें अपनी हिमायत पर तैयार किया, शामी और अरबी सरदारों को जमा करके यह मस्अला उन के सामने रखा और ये सब शहज़ादा अब्दुर्रहमान को उन्दुलुस बुलाने और उस की मदद करने के लिए तैयार हो गये।

अब्दुर्रहमान के उन्दुलुस में पहुंचते ही बनी उमैया का भला चाहने वाले और शामी सुन-सुन कर दौड़े और अब्दुर्रहमान की इताअत व फ़रमांबरदारी के हलफ़ उठाए। इस के बाद आस-पास के शहरों पर क़ब्ज़ा शुरू हुआ और सात महीने में राजधानी क़र्तबा पर भी अब्दुर्रहमान का क़ब्ज़ा हो गया।

अब्दुर्रहमान ने राजधानी पर क़ब्ज़ा कर लिया तो यमनी लोगों के एक सरदार अबुस्सबाह ने अपने क़बीले के लोगों को मुख़ातब कर के कहा कि यूसुफ़ से हम बदला ले चुके हैं, अब मौक़ा है कि इस नव-जवान आदमी

यानी अब्दुर्रहमान को क़त्ल कर दो और इस के बजाए कि यहां उमवियों की हुकूमत क़ायम हो, अपनी क़ौम की हुकूमत क़ायम करो, मगर चूंकि अब्दुर्रहमान की फ़ौज में शामियों और बरबरियों की तायदाद काफ़ी थी, इस लिए एलानिया यमनी लोग कोई मुख़ालफ़त या बग़ावत न कर सके और ख़ामोश हो कर खुफ़िया तौर पर अब्दुर्रहमान की ज़ात पर हमला करने की तद्बीर सोचने लगे।

इत्तिफ़ाक़ से अब्दुर्रहमान को भी उन लोगों के इरादे का हाल मालूम हो गया, उस ने सिर्फ़ यह किया कि अपने बाडीगार्ड क़ायम कर लिए, फिर कुछ महीने के बाद अबुस्सबाह को इस ग़लती की सज़ा में क़त्ल करा दिया।

अब्दुर्रहमान बिन उमैया चूंकि नव-उम्र और इस मुल्क में अजनबी शख़्स था, इस लिए यहां के सरदारों यहां के हाकिमों यहां के क़बीलों और उन की ख़ूबियों वग़ैरह के बारे में उस को पूरी-पूरी जानकारी न थी अब्दुर्रहमान की हुकूमत के शुरू होते ही हुकूमत व सरदारी पर जो लोग मुक़र्रर किए गये, उन में कुछ ऐसे भी थे जो उन्दलुस वालों की नाराज़ी की वजह बने। कुछ ऐसे लोग थे, जिनको उम्मीद थी कि हम को बड़े-बड़े ओह्दे मिलेंगे, लेकिन उन की उम्मीद के मुताबिक़ वे ओह्दे नहीं मिले। इस तरह एक बड़ी तायददाद मुल्कों में ऐसी पैदा हो गयी, जो अब्दुर्रहमान की हुकूमत से भी नाराज़ हो गये, इन के अलावा युसुफ़ फ़ह्री, उन्दलुस के पिछले अमीर और ज़मील बिन हातिम के दोस्त-अह्बाब तो नाख़ुश थे ही।

बग़ावतें

चुनांचे शुरू ही में बग़ावतें शुरू हो गयीं।

यूसुफ़ बिन अब्दुर्रहमान क़र्तबा से छिप कर भाग निकला, मगर उस के दोनों बेटे अबू ज़ैद अब्दुर्रहमान और अबुल अस्वद क़र्तबा से न निकल सके। वे क़र्तबा ही में रह गये, ज़मील बिन हातिम, यूसुफ़ का वज़ीर भी क़र्तबा से न निकल सका। ये तीनों नज़रबंद और क़ैद कर लिए गये।

यूसुफ़ फ़ह्री क़र्तबा से भाग कर तलेतला पहुंचा, लोग आ-आ कर उस के चारों तरफ़ जमा होने शुरू हो गये और बहुत जल्द बीस हज़ार

आदमियों की फ़ौज उस के झंडे के नीचे तलेतला में तैयार हो गयी। यूसुफ़ ने इस फ़ौज को ले कर इश्बेलिया पर हमला कर दिया।

इश्बेलिया के हाकिम अब्दुल मलिक बिन उमर और उस के बेटे उमर बिन अब्दुल मलिक ने यूसुफ़ का मुक़ाबला करना चाहा कि वह अपनी फ़ौज ले कर क़र्तबा चला गया। बाप-बेटों ने उस का पीछा किया।

अमीर अब्दुर्रहमान ने क़र्तबा से निकल कर उसका मुक़ाबला किया, पीछे से बाप-बेटे भी आ गये। यूसुफ़ की फ़ौज के बहुत से आदमी मारे गये, यूसुफ़ तलेतला की तरफ़ भागा।

तलेतला के क़रीब पहुंचा था कि उस की फ़ौज के यमनी लोगों ने आपस में मशिवरा किया कि अगर यूसुफ़ को हम क़त्ल कर दें और उस का सर अमीर अब्दुर्रहमान के पास ले जाएं तो वह इस ख़िदमत के बदले में हम से खुश हो जाएगा और हमारी इस ख़ता को कि हमने बग़ावत में शिर्कत की है, माफ़ कर देगा। चुनांचे यमनियों ने यूसुफ़ को तलेतला में दाखिल होने से पहले ही क़त्ल कर दिया और उस का सर ले कर अब्दु-र्रहमान की ख़िदमत में पहुंच गये।

इस खतरनाक तजुर्बे के बाद अमीर अब्दुर्रहमान के लिए यह ज़रूरी हो गया था कि वह ज़मील बिन हातिम और यूसुफ़ के बेटों को क़त्ल करा दे। चुनांचे इब्ने हातिम और अबू ज़ैद बिन यूसुफ़ क़त्ल करा दिए गये, मगर अबुल अस्वद को कम-उम्र होने की वजह से एक पहाड़ी क़िले में नज़रबंद कर दिया गया।

यूसुफ़ फ़ह्री से फ़ारिग़ हो कर अमीर अब्दुर्रहमान ने मुल्क के अन्दरूनी इन्तिज़ाम की तरफ़ तवज्जोह की और सन १४६ हि० में अपनी खुद मुख्तारी का एलान कर के अब्बासी खलीफ़ा का नाम खुत्बे से निकाल दिया।

अब्बासी हुकूमत और अब्दुर्रहमान

जब यह मालूम हुआ कि अमीर अब्दुर्रहमान ने अपनी खुद मुख्तारी का एलान कर के खुत्बे से खलीफ़ा का नाम खारिज कर दिया है तो अब्बासी खलीफ़ा मंसूर को सख्त सदमा हुआ। उस ने अला बिन मुग़ीस, सिपहसालारे अफ़रीक़ा को खत लिखा और स्याह झंडा उस के पास भेजा

कि वह फ़ौज ले कर उन्दुलुस पर चढ़ाई करे। चुनांचे अला बिन मुग़ीस ने अफ़रीक़ा से उन्दुलुस का क़स्द किया।

इधर उन्दुलुस में यूसुफ़ के एक रिश्तेदार हाशिम न भी अपने चारों तरफ़ लोगों को जमा करना शुरू किया। इसी हाशिम ने अला बिन मुग़ीस के पास अफ़रीक़ा में पैग़ाम भेजा कि आप फ़ौरन उन्दुलुस पर हमला करें, इधर हम पूरी ताक़त के साथ मुक़ाबले पर निकलते हैं। अब्दुर्रहमान को इस साज़िश की बिल्कुल ख़बर न थी।

सन १४६ हि० में हाशिम ने बग़ावत का झंडा उठा लिया। उत्तरी उन्दुलुस पर क़ब्ज़ा कर के तलेतला को ख़ूब मज़बूत कर लिया। अमीर अब्दुर्रहमान क़र्तबा से फ़ौज लेकर इस बग़ावत को कुचलने के लिए रवाना हुआ और तलेतला को घेर लिया।

उधर अला बिन मुग़ीस भी उन्दुलुस में दाख़िल हो चुका था, वह ख़लीफ़ा का नुमाइन्दा था, इस लिए उन्दुलुसियों ने उस के झंडे तले जमा होना मुनासिब समझा और वे अब्दुर्रहमान को बाग़ी समझने लगे।

अमीर अब्दुर्रहमान ने जब यह ख़बर सुनी तो बहुत परेशान हुआ। अमीर अब्दुर्रहमान ने तलेतला से घेराव उठा लिया और अला बिन मुग़ीस की ओर चला। क़रमूना नामी जगह पर पहुंचा था कि अला बिन मुग़ीस मुक़ाबले पर आ गया और क़िला क़रमूना में अब्दुर्रहमान और उस की फ़ौज को घेर लिया गया। घेराव दो महीने तक चला। रसद के सामान के ख़त्म हो जाने से लोग भूख से मरने लगे, इस हालत में अब्दुर्रहमान ने अपने साथियों से कहा कि अब वक़्त आ गया है कि हम लोग बजाए इस के कि भूखे मरें या ज़िंदा दुश्मनों के हाथ में गिरफ़्तार हों, लड़ कर मर जाएं और ज़िल्लत की ज़िंदगी पर इज़्ज़त की मौत को तर्जीह दें, चुनांचे उसी वक़्त एक बड़ा अलाव आग का रोशन कर के सात सौ आदमियों ने अपनी तलवारों के दर्मियान उसमें डाल कर जला दिए, जो इस बात की निशानी थी कि दुश्मन से लड़ते-लड़ते मर जाएंगे या फ़त्ह हासिल करेंगे। इस के बाद क़िले का दरवाज़ा खोल कर यकायक दुश्मन पर जा पड़े। फ़ौज दो महीने से क़िले को घेरे पड़ी थी, वह यह जानती थी कि क़िले में घिरी अब्दुर्रहमान की फ़ौज भी बहुत थोड़ी है, इस लिए वह ग़ाफ़िल और बे-फ़िक्र थी, यकायक इन सात सौ भूखे शेरों ने निकल कर इस तरह क़त्ल का बाज़ार गर्म किया कि घेराव करने वाले दुश्मन अपनी सात हज़ार लाशें क़िले के सामने छोड़ कर मैदान ख़ाली कर गये और ज़रा सी देर में मुल्क उन्दुलुस

की हुकूमत जो अमीर अब्दुर्रहमान के क़ब्ज़े से निकल चुकी थी, फिर उसके क़ब्ज़े में आ गयी।

क़रमूना की यह लड़ाई सन १४६ हि० के आख़िरी हिस्से में हुई।

अब क्या था, तलेतला के बाग़ियों की भी अब्दुर्रहमान ने जड़ उखाड़ दी। उन्दुलुस का मिज़ाज ही यही रहा हो या अब्बासी ख़लीफ़ों की साज़िशी कारवाइयां, अब्दुर्रहमान जब तक ज़िंदा रहा, पूरे मुल्क में कहीं न कहीं से बग़ावतों की ख़बर मिलती रही और वह उन्हें कुचलने और दबाने में लगा रहा।

रबीउस्सानी सन १७२ हि० में वह तेंतीस साल चार महीने हुकूमत करने के बाद ५८ या ५९ साल की उम्र में इन्तिक़ाल कर गया और उसकी वसीयत के मुवाफ़िक़ उस का बेटा हिशाम तख़्त पर बैठा।

हिशाम बिन अब्दुर्रहमान

अमीर अब्दुर्रहमान बिन मुआविया, जिसे अब्दुर्रहमान दाख़िल भी कहा जा सकता था, अगरचे अपने आपको अमीर ही कहलाता रहा, लेकिन सच तो यह है कि वह उन्दुलुस का पहला ख़लीफ़ा था।

सुलतान हिशाम बिन अब्दुर्रहमान अपने बाप के उन्दुलुस में दाख़िल होने के बाद सन १३९ हि०में शव्वाल के महीने में पैदा हुआ। ३२ या ३३ साल की उम्र में अपने बाप की वसीयत के मुवाफ़िक़ सन १७२ हि० में तख़्त पर बैठा और मुल्क उन्दुलुस में उसके नाम का ख़ुत्बा पढ़ा गया।

हिशाम के ख़िलाफ़ बग़ावत की शुरूआत उस के भाइयों ने ही की, बग़ावत का मर्कज़ तलेतला को बनाया गया। सुलतान हिशाम ने मुक़ाबले के लिए फ़ौज को कूच का आर्डर दिया। तलेतला से थोड़े फ़ासले पर दोनों फ़ौजों का मुक़ाबला हुआ। भाइयों को हथियार डालना पड़ा।

भाइयों के फ़ित्ने से फ़ारिग़ होने के बाद सुलतान हिशाम ने चालीस हज़ार फ़ौज तैयार कर के फ्रांस पर हमला किया और तमाम दक्खिनी फ्रांस पर क़ब्ज़ा कर लिया।

सन १७५ हि० में पहाड़ी ईसाइयों का सरकश सर भी कुचल दिया गया और उन्हें अपना इताअत गुज़ार बना लिया गया।

सुलतान हिशाम ने अपने बाप अब्दुर्रहमान बिन मुआविया की

मस्जिदे क़र्तबा को मुकम्मल करने के लिए खास तवज्जोह की।

सन १७५ हि० में सुलतान हिशाम ने अपने बेटे हकम को सूबा तलेतला का गवर्नर मुक़र्रर किया।

सन १७६ हि० में क़र्तबा में वादी अल-कबीर नदी का पुल नए सिरे से तामीर कराया, इसे अमीर सम्ह ने हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ के दौर में तामीर कराया था।

सफ़र महीने में सन १८० हि० में सुलतान हिशाम बिन अब्दुर्रहमान ने सात साल कुछ महीने हुकूमत करने के बाद चालीस साल चार माह की उम्र में वफ़ात पायी।

हिशाम की ज़िंदगी पर एक नज़र

□ मस्जिदे क़र्तबा की तामीर में अस्सी हज़ार दीनार अमीर अब्दुर्रहमान ने खर्च किये थे और एक लाख साठ हज़ार दीनार सुलतान हिशाम ने मस्जिद में तामीर व तक्मील में लगाये।

□ सुलतान हिशाम अपने बाप की तरह सफ़ेद मगर निहायत सादा और कम क़ीमत लिबास पहनता था।

□ ज़रूरतमंदों के लिए उस का दरबार हमेशा खुला हुआ था, मुहताजों की खबरगीरी में वह खुद रातों को अपना आराम तज देता था, मुसाफ़िरों को खुद ले जाकर खाना खिलाता अंधेरी रातों में शहर के गली-कूचों में गश्त करता और उसे मुहताजों, बेवाओं, मिस्कीनों की मदद करने में मज़ा आता।

□ चोरों, डाकुओं और मुजिरमों से जो जुर्माना वसूल होता, वह सरकारी खज़ानों में दाखिल न होता, बल्कि जनता ही के हित के कामों में खर्च किया जाता।

□ लड़ाइयों में जो लोग इत्तिफ़ाक़ से ईसाइयों की क़ैद में चले जाते, उन को सरकारी खज़ाने से फ़िदया दे कर आज़ाद करा दिया जाता। इस तरह तमाम मुसलमान आज़ाद करा लिए गये।

□ सुलतान हिशाम एक मकान खरीदना चाहता था और उस मकान के मालिक से बात-चीत चल रही थी। इसी बीच सुलतान को मालूम हुआ कि उस मकान के क़रीब रहने वाला एक शख्स उस मकान को खरीदना

चाहता है, मगर वह सुलतान की वजह से उस मकान की खरीदारी के इरादे को छोड़ चुका है। यह सुन कर सुलतान हिशाम ने उस मकान को नहीं खरीदा।

□ सुलतान हिशाम ने ऐसे तजुर्बेकार और दीनदार लोग मुक़र्रर किए थे, जो सूबों के हाकिमों के इन्तिज़ाम, फ़ैसले, और दफ़्तरी कामों की जांच-पड़ताल करते और हर एक सूबे में जा कर वहां की जनता से वहां के हाकिमों के बारे में शिकायतें सुनते थे।

सुलतान हिशाम की हुकूमत के ज़माने में क़र्तबा के अन्दर वहां के अमीरों और मालदारों ने बड़ी-बड़ी खूबसूरत और शानदार इमारतें बनवायीं, जिस से शहर की रौनक़ और खूबसूरती बहुत बढ़ गयी थी।

□ सुलतान हिशाम के ज़माने में इल्मी तरक़्क़ी भी काफ़ी हुई। उस ने अपने दौर में अरबी भाषा को ज़रूरी कर दिया, इस का नतीजा यह हुआ कि कुछ ही दिनों में उन्दुलुस में ईसाइयों ने भी अरबी भाषा सीखी, क़ुरआन और इस्लाम की जानकारी हासिल की और भारी तायदाद में इस्लाम में दाखिल हो गये और ईसाइयों की वह वहशत और नफ़रत, जो मुसलमानों से थी, दूर हो गयी और वे मुसलमानों को अच्छी नज़र से देखने लगे।

□ सुलतान हिशाम की आदत और तबीयत और ज़िंदगी को देख कर लोग उसे 'सुलताने आदिल' कहने लगे थे।

□ सुलतान हिशाम अपने बाप अब्दुर्रहमान से ज़्यादा इबादत गुज़ार, अल्लाह का डर रखने वाला और मज़हबी आदमी था। उसके दौर में फ़ुक़हा (फ़िक़्ह के माहिरों) का बोल बाला था।

□ सुलताम हिशाम ने अपनी ज़िंदगी में अपने बेटे हकम को अपना वली अह्द बनाया और उस की वली अह्दी की सब से बैअत ली। इस मौक़े पर हकम को खिताब कर के सुलतान हिशाम ने नीचे लिखी बातें वसीयत के तौर पर कहीं—

'तुम अद्ल व इंसाफ़ के क़ायम रखने में अमीर व ग़रीब में भेद-भाव न करना, अपने मातहतों से मेहरबानी और रियायत का बर्ताव करना, अपने सूबों और शहरों की हिफ़ाज़त व हुकूमत पर वफ़ादार और तजुर्बे-कार लोगों को मुक़र्रर करना, जो हाकिम जनता को बे-वजह सताए, उस को सख्त सज़ा देना, फ़ौज पर अपना इक्तिदार मज़बूती के साथ क़ायम रखना और इस बात का भी ध्यान रखना कि फ़ौज का काम मुल्क की

हिफ़ाज़त करना है, मुल्क को तबाह करना नहीं, फ़ौज को तंख्वाह हमेशा वक़्त पर देना और जो वायदा करना, उसे ज़रूर पूरा करना, हमेशा इस बात की कोशिश करना कि प्रजा तुम को मुहब्बत की निगाह से देखे। काश्तकारों के हाल से कभी बे-ख़बर न होना, इस बात का हमेशा ख्याल रखना कि फ़स्लें तबाह और ख़राब न होने पाएं और चरागाहें बर्बाद न हो जाएं। कुल मिला कर तुम्हारा अमल ऐसा हो कि तुम्हारी प्रजा तुमको दुआएं दे और तुम्हारे दौर में ख़ुशी और ख़ुशहाली की ज़िंदगी गुज़ारे। अगर तुम ने इन बातों को ध्यान में रखा तो तुम शानदार बादशाहों की फ़ेहरिस्त में शामिल हो सकोगे।'

हिशाम सात बरस और आठ महीने हुकूमत कर के इन्तिक़ाल कर गया।

हकम बिन हिशाम

हकम बिन हिशाम अपने बाप की वफ़ात के बाद सन १८० हि० में तख़्त पर बैठा। इस के तख़्त पर बैठते ही एक बहुत बड़ी बग़ावत ने सर उभारा।

हुआ यह था कि हिशाम का भाई सुलैमान, जो अफ़रीक़ा में ठहरा हुआ था, उस ने बग़ावत के लिए लोगों को इस लिए तैयार कर लिया कि उसे वली अह्द क्यों नहीं बनाया गया।

हिशाम का दूसरा भाई तलेतला के पास की अपनी जागीर में ठहरा हुआ था। हिशाम के मरने की ख़बर मिलते ही वह सुलैमान के पास भाग कर पहुंच गया। शारलीमैन बादशाहे फ़्रांस से और दूसरे सरहदी सरदारों से पहले ही सुलैमान ने साठ-गांठ कर रखा था। इस तरह अन्दर से भी और बाहर से भी हकम बिन हिशाम के ख़िलाफ़ दुश्मनी और बग़ावत की फ़िज़ा तैयार हो गयी।

पहले अब्दुल्लाह ने तलेतला पर क़ब्ज़ा किया, फिर आगे की तरफ़ बढ़ने लगा, दूसरी तरफ़ सुलैमान ने उन्दुलुस में दाख़िल हो कर अहम शहरों पर क़ब्ज़ा करना शुरू कर दिया, तीसरी तरफ़ फ़्रांस की फ़ौजें भी सरहद में दाख़िल हो गयीं और कुछ इलाक़ों को छीन लिया।

हकम ने सबसे पहले विदेशी हमले का मुंह तोड़ जवाब देना ज़रूरी

समझा, हकम की फ़ौजें मुक़ाबले पर आगे बढ़ीं तो फ्रांसीसी फ़ौजें दुम दबा कर भाग गयीं, हकम फ्रांस में दाखिल हो गया और ईसाइयों से कुछ इलाक़े छीन लिए।

वहां से वापसी पर सुलेमान व अब्दुल्लाह का पूरी बहादुरी के साथ मुक़ाबला किया और उन्हें हराया। वे दोनों भाई पहाड़ियों में भागे, लेकिन हकम ने वहां भी उन का पीछा किया, इस तरह हकम ने बग़ावत को आसानी से कुचल दिया। इसी तरह छुट-पुट और भी बग़ावतें हुईं और बग़ावतों का यह सिलसिला सन १८१ हि० तक चलता रहा। और इस के बाद तो पूरे मुल्क में अम्न, इत्मीनान और सुकून की ज़िंदगी हर-हर जगह दिखायी देने लगी। अल बत्ता साज़िशी टोला बराबर साज़िशों में लगा रहा और हकम की मुख़ालफ़त करता रहा, नुक़सान पहुंचाने से भी न चूकता। फ्रांस में ईसाइयों की ज़बरदस्त हार ने ईसाइयों को भी जगा दिया था। उन्होंने अपनी हिफ़ाज़त के लिए सरहद ही पर एक नयी मज़बूत मगर छोटी ईसाई स्टेट क़ायम कर दी, जो मुस्तक़िल साज़िशों का अड्डा बन गयी।

यह हकम की अक़्लमंदी और सूझ-बूझ, हिम्मत और बहादुरी थी कि उस ने इन तमाम बग़ावतों और हलचलों को क़ाबू में किया, चाहे वे मुल्क के अन्दर की हों या मुल्क के बाहर के मंसूबे और ख़तरे हों।

सच बात तो यह है कि सन २०३ हि० में उन्दुलुस में अम्न व सुकून कुल मिला कर सब से ज़्यादा था, लेकिन उन्हीं दिनों उन्दुलुस में अकाल पड़ गया और अकाल की वजह से देश में चोरी, डाका और रहज़नी की वारदातें भी भारी तायदाद में होने लगीं। हकम ने जिस तरह अब तक अपने आप को हर मौक़े पर मुस्तक़िल मिज़ाज और हौसलामंद साबित किया था, उसी तरह उसने इस मुसीबत में भी अपनी हिम्मत और हौसले को छोड़ा नहीं। अकाल वाले इलाक़े के लोगों के लिए उस ने हर शहर और क़स्बे में मुहताजख़ाने खुलवाए, ग़ल्ला बाहर से मंगवाने का इन्तिज़ाम किया, जगह-जगह रास्तों और आबादी की हिफ़ाज़त के लिए ज़्यादा से ज़्यादा पुलिस और फ़ौजी दस्ते मुक़र्रर किए। इस हालत में जहां कहीं किसी अहम बद-अम्नी की ख़बर पहुंची, ख़ुद मय फ़ौज उस तरफ़ पहुंचा और अम्न व अमान क़ायम किया। ग़रज़ उसने अपनी प्रजा की इस सूखे में ऐसी मदद की कि प्रजा को उस से मुहब्बत हो गयी और दुश्मनों की फैलायी हुई नफ़रत दूर हो गयी।

हकम की ज़िंदगी पर एक नज़र

सुलतान हकम ने २५ ज़ीक़ादा सन् २०६ हि० को जुमेरात के दिन ५२ साल कुछ महीने ज़िंदा रह कर वफ़ात पायी और २० लड़के और २० लड़कियां छोड़ीं। सुलतान हकम के बाद उस का बेटा अब्दुर्रहमान सानी (सेकेंड) या अब्दुर्रहमान औसत (बीच का) तख़्त पर बैठा।

सुलतान हकम बहादुर, सखी-दाता और सूझ-बूझ वाला शख़्स था। मक्कारों और ख़ुफ़िया साज़िश करने वालों का पक्का दुश्मन और अपने दोस्तों के लिए मुरव्वत वाला और हमदर्द था। हौसलामंद था, घबराने वाला नहीं था। ग़लती करने वालों को सख़्त सज़ा देता, लेकिन अगर यह समझ ले कि माफ़ करने से मुज्रिम में सुधार हो जाएगा, तो वह माफ़ भी कर देता था।

वह उन्दुलुस का एक महान और शानदार बादशाह था। सुलतान हकम के दीनदार और अल्लाह वाला होने का अंदाज़ा इस तरह हो सकता है कि उसने एक दिन अपने किसी ख़ादिम पर नाराज़ हो कर हुक्म दिया कि इस का हाथ काट दिया जाए। इत्तिफ़ाक़ से उस वक़्त ज़ियाद बिन अब्दुर्रहमान, जो एक आलिम शख़्स थे, आ पहुंचे और सुलतान हकम को ख़िताब करके फ़रमाया कि मालिक बिन अनस कहते हैं कि जो शख़्स अपने ग़ैज़ व ग़ज़ब को बावजूद क़ुदरत ज़ब्त करे तो अल्लाह तआला क़ियामत के दिन उस के दिल को अम्न व इत्मीनान से भर देगा। इस कलाम के ख़त्म होते ही सुलतान हकम का ग़ैज़ व ग़ज़ब दूर हो गया और ख़ादिम की ख़ता माफ़ कर दी।

अब्दुर्रहमान सानी

सुलतान अब्दुर्रहमान सानी शाबान १७६ हि० में तलेतला नामी जगह पर पैदा हुआ और सन् २०६ हि० में अपने बाप सुलतान हकम के बाद तख़्त पर बैठा।

इस सुलतान को भी तख़्त पर बैठते ही अन्दरूनी और बाहरी बग़ा-

वतों और साज़िशों का सामना करना पड़ा। लेकिन अब्दुर्रहमान ने उसको पूरी सूझ-बूझ और हिक्मत से कुचल दिया।

सन् २०६ हि० में क़ैसर क़ुस्तुन्तुन्या की तरफ़ से अब्दुर्रहमान सानी की ख़िदमत में एक सिफ़ारत भेजी गयी। इस सिफ़ारत के ज़रिए क़ैसर ने सुलतान उन्दुलुस से मुहब्बत व दोस्ती के ताल्लुक़ात पैदा करने चाहे। दरबारे बग़दाद ने फ़्रांस के बादशाह से मुहब्बत के ताल्लुक़ात क़ायम कर लिए थे। क़ीमती तोहफ़े और हदिए फ़्रांसीसियों के लिए पहुंचते रहते थे और बग़दाद के दरबार से हमेशा इस बात की कोशिश होती रहती थी कि फ़्रांसीसी उन्दुलुस पर हमलावर हों। इन बातों को क़र्तबा का सुलतान अच्छी तरह जानता था।

उधर क़ुस्तुन्तुन्या पर अब्बासी हमेशा हमलावर होते रहते थे और क़ुस्तुन्तुन्या का क़ैसर अपने आप को बराबर ख़तरे में पाता था। अब क़ैसर क़ुस्तुन्तुन्या ने उन्दुलुस के सुलतान की बहादुरी और उन्दुलुस के मुसलमानों की शोहरत सुन कर दरबारे क़र्तबा को अपना हमदर्द बनाना चाहा। सुलतान उन्दुलुस को क़ुदरती तौर पर क़ैसरे क़ुस्तुन्तुन्या से हमदर्दी होनी चाहिए, क्योंकि वह दरबारे बग़दाद का दुश्मन था। क़ैसर क़ुस्तुन्तु-न्या के इस सफ़ीर की अब्दुर्रहमान ने बड़ी आवभगत की। सफ़ीर ने बड़े-बड़े क़ीमती तोहफ़े पेश किए और क़ैसरे क़ुस्तुन्तुन्या की शानदार ताक़त और ज़बरदस्त फ़ौजों के हालात मुबालग़े के साथ सुना कर इस बात का यक़ीन दिलाया कि अगर आप क़ैसरे क़ुस्तुन्तुन्या के साथ दोस्ती के ताल्लु-क़ात पैदा कर लेंगे, तो बड़ी आसानी के साथ आप अपने बाप-दादा की ख़िलाफ़त और शाम व इराक़ व अरब वग़ैरह की हुकूमत अब्बासियों से वापस ले सकेंगे। अब्दुर्रहमान ने बड़ी सूझ-बूझ से काम लेते हुए सिर्फ़ इतना वायदा किया कि अगर मुझ को अपने मुल्क की तरफ़ से इत्मीनान हुआ तो मैं क़ैसर की इम्दाद कर सकता हूं। फिर बहुत से क़ीमती तोहफ़े उस सफ़ीर के साथ अपने दूत यह्या ग़ज़ाल के हाथ क़ैसर के लिए रवाना किए। अब्दुर्रहमान के टाल देने की वजह यह थी कि वह अब्बासी ख़लीफ़ों का ख़ास मुख़ालिफ़ रहा हो, लेकिन वह किसी ईसाई का उन पर ग़लबा बर्दाश्त नहीं कर सकता था।

आख़िर माह रबीउलअव्वल सन् २३८ हि० में ३१ साल कुछ महीने हुकूमत करने के बाद अब्दुर्रहमान सानी ने वफ़ात पायी और उस का बेटा मुहम्मद तख़्त पर बैठा।

अब्दुर्रहमान की हुकूमत का दौर

सुलतान अब्दुर्रहमान सानी की हुकूमत का ज़माना अगरचे लड़ाई-झगड़ों से खाली नहीं रहा, फिर भी इस सुलतान ने जनता के हित के कामों और इल्म व फ़न की तरक़्क़ी की तरफ़ से ग़फ़लत नहीं बरती। अब्दुर्रहमान खुद निहायत बड़ा आलिम और फ़लसफ़ा व शरीअत का खूब माहिर था।

जामा मस्जिद क़र्तबा में बहुत से कमरे बनवाकर उसमें बढ़ोत्तरी की। बहुत सी मस्जिदें, पुल और क़िले तामीर कराए, नयी सड़कें निकालीं, मुसाफ़िरों और ताजिरों की आसानी के लिए सामान जुटाए।

तालीम पर भी उसकी बराबर तवज्जोह रही। कोई गांव और क़स्बा ऐसा नहीं था, जहां मदरसा न हो।

हर एक शहर और क़स्बे में अपने हाकिमों और मजिस्ट्रेटों के लिए दफ़्तरों और कचहरियों के शानदार मकान बनवाए। हर एक शहर और क़स्बे में हम्माम भी तामीर कराए।

अब्दुर्रहमान सानी को साज-सज्जा और शान व शौकत का बड़ा शौक़ था। जनता के सामने आम मंज़रों में कम निकलता और अक्सर प्रजा की निगाहों से छिपा रहता था।

उसकी तबियत में रहम व करम का माद्दा ज़्यादा था। सख्त सज़ाएं देने और क़त्ल कराने से हमेशा झिझकता।

उसके ज़माने में हुकूमत का खज़ाना बहुत तरक़्क़ी कर गया था। उसने पहले से ज़्यादा खूबसूरत सिक्के बनवाए।

क़र्तबा में दरिया के किनारे मेवों के बाग़ लगवाए और उन्हें वहां की पब्लिक के लिए वक़्फ़ कर दिया था।

यूनानी फ़लसफ़ों की किताबों के तर्जुमे कराए। इल्मी मज्लिसें क़ायम कीं।

एक बार टिड्डी दल की ज़्यादती ने खेतों को खाकर सफ़ाचट कर दिया और वर्षा न होने से देश में सूखा पड़ गया। सुलतान ने इस मौक़े पर जनता की बड़ी मदद की और फिर यह क़ायदा मुक़र्रर किया कि ग़ल्ले का एक बहुत बड़ा भंडार शाही खज़ाने से ख़रीद कर मुहय्या रखा

जाए ताकि किसी एक ऐसे ही सूबे के मौक़े पर जनता के काम आ सके।

अब्दुर्रहमान दाखिल के जमाने में मुल्की आमदनी तीन लाख दीनार थी, सुलतान हकम के जमाने में यह तायदाद छः लाख तक पहुंच गयी थी। अब्दुर्रहमान सानी के जमाने में यह आमदनी दस लाख दीनार सालाना थी। आमदनी की कुल रक़म को तीन हिस्सों में बांट दिया जाता था। एक हिस्सा फ़ौज की तंख्वाहों में, एक हिस्सा हाकिमों और ओहदे-दारों की तंख्वाहों में खर्च होता था, एक हिस्सा खजाने में हंगामी जरूरतों के लिए बचा कर रख लिया जाता था। इसी में से जन-हित के काम और तामीरात के खर्चे पूरे किए जाते थे।

कहा जाता है कि अब्दुर्रहमान की औलाद सैंकड़ों तक पहुंच गयी थी, यानी सौ से ज्यादा बेटे और पचास के क़रीब बेटियां थीं। उसको उसकी जनता ने 'अल-मुजफ़्फ़र' का खिताब दिया था। वह गेहुंए रंग का था, आंखें गहरी थीं, दाढ़ी लम्बी थी, मोटा-तन्दरुस्त आदमी था, दाढ़ी में हिना का खिजाब करता था। वफ़ात के वक़्त ४५ लड़के जिंदा थे।

अब्दुर्रहमान के दौर में ईसाइयों को हुकूमत की बड़ी-बड़ी जिम्मे-दारी के ओहदे दिए जाते थे और ईसाई जो आमतौर पर अरबी जुबान बोलते और लिखते थे, दफ़्तरों पर क़ब्जा किए हुए थे। मुसलमानों की ज्यादातर तवज्जोह फ़ौजी खिदमतों पर थी।

मुहम्मद बिन अब्दुर्रहमान

सुलतान मुहम्मद रबीउल आखर सन् २३८ हि० में अपने बाप की वफ़ात के बाद तख्त पर बैठा था। तख्त पर बैठते ही उसने पहला काम यही किया कि जिम्मेदारी के ओहदों पर मुसलमानों को मुक़र्रर किया और उन हाकिमों को जो इस्लामी हुक्मों की पाबन्दी में कम थे या कम-जोर थे, उन्हें हटा दिया।

सुलतान मुहम्मद की यह पहली कार्रवाई उलमा ए इस्लाम को बहुत ही पसन्द आयी।

दूसरा अहम काम जो उसने किया, जबरदस्त फ़ौजी भर्ती का था, इस तरह एक भारी फ़ौज तैयार करके उत्तरी ईसाई स्टेटों के खिलाफ़

मुहिम रवाना हुई।

एक नया मज़हब

इसी बीच उन्दुलुस के भीतरी भाग में बग़ावतें शुरू हो गयीं, जिसे उसने सख़्ती से कुचल दिया।

बग़ावतों का सिलसिला अब भी जारी था, कि सन् २६३ हि० में अब्दुर्रहमान बिन मरवान ने, जो इससे पहले भी बग़ावतों में हिस्सा ले चुका था और सुलतान मुहम्मद की बे-जा रियायत की वजह से मरीदा में एक ज़िम्मेदारी के ओहदे पर मुक़र्रर किया गया था, बग़ावत का एलान कर दिया। सुलतान मुहम्मद ने उस पर फ़ौज से चढ़ाई कर दी, तीन महीने की लड़ाई के बाद अब्दुर्रहमान बिन मरवान ने सुलतान मुहम्मद से बग़दाद जाने की इजाज़त चाही, और इसी शर्त पर इस लड़ाई का ख़ात्मा हुआ, मगर अब्दुर्रहमान बिन मरवान, बजाए इसके कि अपने वायदे और इरादे के मुवाफ़िक़ बग़दाद की तरफ़ रवाना होता, उन्दुलुस ही में रह कर एक नये मज़हब की बुनियाद डाल दी।

इस मज़हब को ईसाई मज़हब और इस्लाम के उसूलों को जमा करके तर्तीब दिया गया था। इसके मानने वालों की तायदाद बढ़ने लगी और इस तरह सूबा जलीक़िया व पुर्तगाल की हदों में एक ख़तरनाक फ़ौज अब्दुर्रहमान बिन मरवान की सरदारी में तैयार हो गयी। यहां तक कि मुल्क के एक हिस्से पर उसने क़ब्ज़ा कर लिया।

अब्दुर्रहमान की इस ताक़त को देख कर दूसरे सरदारों ने सर उठाना शुरू कर दिया और सुलतान मुहम्मद का बहुत ज़्यादा वक़्त इन बग़ावतों को कुचलने में ख़र्च हुआ।

६६ साल की उम्र पाकर सफ़र सन् २७३ हि० में ३४ साल कुछ महीने हुकूमत करने के बाद इन्तिक़ाल कर गया।

उसके बाद उसका बेटा मुंज़िर तख़्त पर बैठा।

सुलतान मुहम्मद का दौर

सुलतान मुहम्मद के दौर में उन्दुलुस पर बद-अमनी छायी रही।

उसको एक दिन भी इत्मीनान से बैठना नसीब न हुआ। अन्दरूनी बग़ावतों और बाहरी साज़िशों के ख़त्म न होने वाले सिलसिले ने सुलतान मुहम्मद को हर वक़्त फंसाए रखा।

सुलतान मुहम्मद के ज़माने में ख़ानदान बनू उमैया की हुकूमत बहुत ही कमज़ोर और बे-विक़ार हो गयी थी। मामूली और छोटे दर्जे के लोगों को भी बग़ावत व सरकशी की हिम्मत हो गयी थी। उमवी सुल-तान की इस कमज़ोरी ने ईसाइयों को बहुत फ़ायदा पहुंचाया। उन्होंने अपने आप को ख़ूब ताक़तवर बनाकर इस बात को मुम्किन समझा कि हम उन्दुलुस में फिर ईसाई हुकूमत क़ायम कर सकेंगे।

सुलतान मुहम्मद ज़ाती तौर पर बहादुर और मुस्तैद बादशाह था, मगर अन्दरूनी बग़ावतों और ख़ुद मुसलमान सरदारों की ग़द्दारियों ने मुल्क की हालत को इस क़दर नाज़ुक बना दिया था कि उनकी मुख़ा-लफ़तों और साज़िशों का यह तूफ़ान सुलतान मुहम्मद के ज़माने में इस्लामी हुकूमत की ख़राबी और बे-इज़्ज़ती की वजह हुआ।

इस ज़माने में जो सब से ज़्यादा नुक़्सान इस्लाम को उन्दुलुस में पहुंचा, वह यह था कि इससे पहले तक ईसाई बराबर इस्लाम में दाख़िल होते रहते थे और इसके बावजूद कि उत्तरी पहाड़ी ईसाइयों की तरफ़ से तरह-तरह की कोशिशें मुसलमानों को बदनाम करने और इस्लाम से ईसाइयों में नफ़रत पैदा करने के लिए होती रहती थीं, फिर भी समझ-दार शख़्स ईसाई मज़हब को तर्क करके इस्लाम क़ुबूल करते जाते थे और नव-मुस्लिमों की एक बड़ी तायदाद हर ज़माने में मौजूद होती थी। सुलतान मुहम्मद के ज़माने में उलेमा व फ़ुक़हा ने ऐसे फ़त्वे और ऐसे क़ानून जारी किए जिससे न सिर्फ़ ईसाइयों के पुराने हासिल हक़ों को चोट पहुंची, बल्कि नव-मुस्लिमों के मुताल्लिक़ भी बे-एतबारी पैदा हो गयी और इसके नतीजे में लोग इस्लाम से मुंह मोड़ने लगे। नतीजा यह निकला कि सुलतान मुहम्मद ने आख़िरी दौर में मुर्तद्दों (इस्लाम से पलट जाने वालों) का एक बड़ा गिरोह पैदा हो गया, जो उत्तरी उन्दुलुस मे नहीं, बल्कि राजधानी क़र्तबा के पास-पड़ोस में पैदा होकर उत्तर के ईसाइयों से ज़्यादा ख़तरनाक साबित हुआ।

सुलतान मुहम्मद के आख़िरी दौर में उन्दुलुस के अन्दर मुख़्तलिफ़ जमाअतें और मुख़्तलिफ़ गिरोह पैदा हुए, जिनमें से हर एक के मक़सद अलग-अलग थे—

१. खालिस अरबी नस्ल के लोग—उनके अन्दर भी आपस में इत्तिफ़ाक़ न था और कई गिरोह थे, जैसे शामी, यमनी, हिजाज़ी, हज़रमी वग़ैरह।

२. मौतदीन—यानी वे लोग जिनके बाप अरब और माएं उन्दुलुसी ईसाई थीं। इन्हें दोग़ला अरब कहना चाहिए, मगर ये सबके सब अपने अरबी ख़ून रखते थे, बल्कि उनका ज़्यादा हिस्सा बरबरी बाप और उन्दुलुसी माओं की औलाद पर शामिल था।

३. नव-मुस्लिम—यानी वे लोग जो पहले ईसाई थे और अब मुसलमान हो गये थे। उन लोगों की औलाद भी नव-मुस्लिम ही कहलाती थी और यह मज़हबे इस्लाम के ज़्यादा क़रीब नज़र आते थे।

४. ख़ालिस बरबरी लोग—उनकी तायदाद भी काफ़ी थी।

५. मजूसी—यह उन लोगों की औलाद थी, जिनको ग़ुलाम के तौर पर मुख़्तलिफ़ मुल्कों से ख़रीद कर लाया जाता था। इनकी तायदाद ज़्यादा पाबन्द न थी।

६. यहूदी—ये भी उन्दुलुस के पुराने बाशिंदे थे। इन का पेशा ज़्यादातर तिजारत था और ये फ़साद व बग़ावत से अलग रहना चाहते थे।

७. ईसाई—ये अपने मज़हब पर आज़ादी के साथ अमल करते थे। इनकी तायदाद भी मुल्क में ज़्यादा थी।

८. मुतद्द—ये वह लोग थे, जो सुलतान मुहम्मद के ज़माने में इस्लाम से फिर कर कुफ़्र की हालत में वापस चले गये थे। इन मुतद्दों के साथ एक ऐसा फ़िर्क़ा भी शामिल था, जो किसी मज़हब की क़ैद में न था और उसका पेशा लूट-मार और ग़ारतगारी ही था।

पहले चारों गिरोह मुसलमान और असल इस्लामी ताक़त समझे जाते थे। बादशाह और उलमा का पहला फ़र्ज़ यह था कि उनकी निगाह में इन चारों का रुत्बा बराबर होता, मगर सुलतान मुहम्मद से इस मामले में सख़्त ग़लती और कमज़ोरी का इज़हार हुआ और मौतदीन को, जिनकी तायदाद और ताक़त बढ़ी हुई थी, शिकायतें पैदा हुईं, बरबरी लोगों ने भी इसका असर लिया, नतीजा यह निकला कि इस्लामी स्प्रिट मुसलमानों के दिलों से निकलनी शुरू हो गयी, और अख़्लाक़ी खोखलापन पैदा होना शुरू हो गया, दीनी जिहाद का शौक़ ठंडा पड़ गया, वे तलवारें जो ख़ुदा की राह में नंगी हो जाया करती थीं, अब नफ़्स की ख़्वाहिश पूरा करने और अपना फ़ायदा और अपनी ग़रज़ पूरा करने में चमकने

लगीं, सुलतान ने जितना फ़ुक़हा के इक़्तिदार को बढ़ाया, उतना ही अवाम का एतक़ाद फ़ुक़हा के बारे में कमज़ोर होता गया। इस बे-एतमादी का नतीजा यह हुआ कि इस्लाम की मुहब्बत दिलों से जाती रही और दुनियादारी दीनदारी पर छा गयी।

इधर मुसलमानों का हाल यह था, दूसरी तरफ़ ईसाई बराबर ताक़त पकड़ते जा रहे थे, मुसलमानों के हाथों से उनके इलाक़े छीने चले जा रहे थे। ग़रज़ सुलतान मुंज़िर ने निहायत ख़तरनाक ज़माने में हुकूमत की ज़िम्मेदारी को संभाला।

मुंज़िर बिन मुहम्मद और उस के कारनामे

सुलतान मुंज़िर बिन मुहम्मद २२९ हि० में पैदा हुआ था। ४४ साल की उम्र में अपने बाप की वफ़ात के बाद माह सफ़र २७३ हि० में तख़्त पर बैठा। उसकी तमाम उम्र लड़ाइयों और ज़ोर आज़माइयों में गुज़री थी। अपने बाप के दौर में वह बार-बार सिपहसालारी की ख़िदमतें अंजाम दे चुका था।

सुलतान मुंज़िर ने सबसे पहले अब्दुल अज़ीज़, बाप के वज़ीरे आज़म के क़त्ल का जो फ़त्वा उलेमा ने दिया था, पहले उसको लागू किया। फिर उमर बिन हफ़्सून पर चढ़ाई हुई। समझौता हुआ, लेकिन फ़ुक़हा के फ़त्वों से तंग आकर वह फिर अपने क़िले में क़िलाबंद हो गया और आस-पास से तमाम आदमियों को जमा कर लिया। सुलतान मुन्ज़िर फिर उसकी तरफ़ लौटा। क़िले को घेर लिया। अभी क़िला जीता भी न जा सका था कि सुलतान मुंज़िर ने २७५ हि० में घेराव की हालत में दो वर्ष से भी कम हुकूमत करके लगभग ४६ साल की उम्र में वफ़ात पायी।

सुलतान मुंज़िर के कोई बेटा न था, इसलिए फ़ौज के सरदारों ने मुंज़िर के भाई अब्दुल्लाह के हाथ पर क़िला की दीवार के नीचे बैअत की। अब्दुल्लाह ने उमर बिन हफ़्सून के पास पैग़ाम भेजा कि मुझको तुम से कोई मुख़ालफ़त या ज़िद नहीं है, अब तुम अपने क़िले में इत्मीनान से रहो, हम क़र्तबा को वापस जाते हैं, गोया सुलतान अब्दुल्लाह ने अपनी तख़्त नशीनी के साथ ही उमर बिन हफ़्सून की रियासत व हुकूमत को

भी बा-क़ायदा तौर पर तस्लीम कर लिया। उमर बिन हफ़्सून ने इसको बहुत ग़नीमत समझा और सुलतान अब्दुल्लाह अपने भाई मुंज़िर के जनाज़े को लेकर क़र्तबा पहुंचा। सुलतान अब्दुल्लाह बिन मुहम्मद की यह बहुत बड़ी ग़लती थी, इससे उसकी बुज़दिली झलकती थी। अगर वह क़िला फ़त्ह करके आता, और क़िला फ़त्ह होने में ज़्यादा देर भी न थी, तो उसकी धाक बैठ जाती।

सुलतान अब्दुल्लाह का दौर

सुलतान अब्दुल्लाह के तख़्त पर बैठते वक़्त यानी सन् २७५ हि० में उन्दुलुस की हुकूमत यानी बनू उमैया की हुकूमत की हालत इतनी पतली हो चुकी थी कि ख़ज़ाना तमाम ख़ाली हो चुका था। आमदनी जो किसी ज़माने में दस लाख दीनार तक पहुंच गयी थी, अब एक लाख दीनार सालाना थी। ईसाइयों की रियासतों को छोड़ दीजिए, तो भी क़र्तबा राजधानी के दोनों पहलुओं पर दो ऐसे ज़बरदस्त मुक़ाबले के लोग पैदा हो गये थे कि जिनकी ताक़त क़र्तबा की हुकूमत से कम न थी—

एक तरफ़ इब्ने हफ़्सून था और दूसरी तरफ़ इब्ने मर्वान। इनमें से इब्ने हफ़्सून अक़्लमंद और अच्छा ऐडमिनेस्ट्रेटर था। चूंकि इस के मुर्तद होने का एलान हो चुका था, इसलिए मुसलमानों को उससे कोई लगाव न था। इसलिए फ़ितरी तौर पर मुसलमानों का रुझान इब्ने मर्वान की तरफ़ हो गया।

इब्ने हफ़्सून ईसाई बनने के बावजूद ईसाइयों से कोई ताल्लुक़ न रखता था, मगर इब्ने मर्वान बावजूद मुसलमान होने के इल्फ़ांसो सोम शाह आस्ट्रिया और दूसरे ईसाइयों का दोस्त था।

इन हालात के साथ-साथ उन्दुलुस में बग़ावत की निशानियां और बेचैनी फैलती जा रही थी। लोग इन दोनों खेमों में बंटते जा रहे थे। अन्दरूने मुल्क जो हलचल मची हुई थी, वह तो थी ही, उसके साथ-साथ इब्ने हफ़्सून ने अग़ालबी ख़ानदान से पत्र-व्यवहार करके दर्ख़ास्त की कि अब्बासी ख़लीफ़ा से मेरे नाम की सनदे उन्दुलुस मंगा दी जाए। इस कोशिश में अगरचे उमर बिन हफ़्सून को कामियाबी न हुई, मगर इस ख़बर के सुनने से दरबारे क़र्तबा में हलचल पैदा हो गयी और सुलतान

अब्दुल्लाह ने जितनी फ़ौज भी वह जुटा सकता था, जुटा कर इब्ने हफ़्सून पर तुरन्त चढ़ाई कर दी।

सुलतान इस बात को खूब अच्छी तरह जानता था कि अगर उमर बिन हफ़्सून के पास अब्बासी खलीफ़ा की सनदे हुकूमत आ गयी, तो आम तौर पर लोग उस की तरफ़ मुतवज्जह हो जाएंगे और फिर उन्दुलुस में बनू उमैया का वजूद बाक़ी न रह सकेगा।

सुलतान अब्दुल्लाह चौदह हज़ार से ज़्यादा फ़ौज जमा न कर सका। इब्ने हफ़्सून के पास तीस हज़ार फ़ौज थी। आख़िर_दोनों फ़ौजों का मुक़ाबला हुआ। इस लड़ाई में अब्दुल्लाह और उसके साथियों ने ग़ैर-मामूली बहादुरी का इज़्हार किया और इब्ने हफ़्सून को हराकर पहाड़ों में भगा दिया।

इस फ़त्ह का असर क़र्तबा की हुकूमत के लिए बहुत मुफ़ीद साबित हुआ। हुकूमत की धाक एक बार फिर बैठ गयी।

इस जीत के बाद अब्दुल्लाह के लिए ज़रूरी हो गया था कि इब्ने मर्वान का ज़ोर भी तोड़ा जाए। चुनांचे पूरी तैयारी के बाद दोनों का मुक़ाबला हुआ। सुलतान अब्दुल्लाह को जीत नसीब हुई। इस लड़ाई का असर पहले से भी ज़्यादा गहरा पड़ा।

सुलतान अब्दुल्लाह के ग्यारह बेटे थे, जिनमें दो बड़े बेटे मुतरिफ़ और मुहम्मद ज़्यादा लायक़ और राज-काज में हिस्सा लेने वाले थे। इन दोनों के दर्मियान दुश्मनी पैदा हो गयी थी। दरबारियों ने भी खूब-खूब इन दोनों की दुश्मनियों को भड़काया।

मुतरिफ़ को अपने भाई मुहम्मद की शिकायत का मौक़ा मिल गया और उस ने बाप के कान अच्छी तरह भरना शुरू कर दिए। सुलतान अब्दुल्लाह अपने बेटे मुहम्मद को ग़ज़ब भरी निगाहों से देखने लगा। मुहम्मद मजबूर होकर निकला और क़र्तबा से भाग कर उमर बिन हफ़्सून के पास चला गया। सुलतान अब्दुल्लाह ने अमान के बहाने से उसे वापस बुलाया और महल के अन्दर क़ैद कर दिया। सुलतान अब्दुल्लाह को किसी मुहिम की वजह से कुछ दिनों के लिए क़र्तबा से बाहर जाना पड़ा। अपनी ग़ैर-मौजूदगी में मुतरिफ़ को क़र्तबा का हाकिम मुक़र्रर कर दिया था। मुतरिफ़ ने इस मौक़े पर भाई को जो महल में क़ैद था, क़त्ल करा दिया। अब्दुल्लाह को मुहम्मद के क़त्ल होने का सख़्त सदमा हुआ, वह मुहम्मद के बेटे अब्दुर्रहमान की बड़ी मुहब्बत के साथ परवरिश करने

लगा।

इस के बाद २८३ हि० में मुतरिफ़ ने किसी खिचाव की वजह से वज़ीरे सलतनत अब्दुल मलिक बिन उमैया को कत्ल कर दिया। सुलतान अब्दुल्लाह ने मुहम्मद और अब्दुल मलिक के क़िसास (बदले) में मुतरिफ़ को कत्ल करा दिया।

सुलतान अब्दुल्लाह पहली रबीउल अव्वल सन् ३०० हि० में २५ साल से कुछ ज़्यादा दिनों हुकूमत करने के बाद ४५ साल की उम्र में फ़ौत हुआ। सुलतान अब्दुल्लाह का तमाम ज़माना फ़ित्ने व फ़साद की हालत में गुज़रा।

इन हालात में सुलतान अब्दुल्लाह के बाद इस का नव-जवान पोता अब्दुर्रहमान बिन मुहम्मद बिन अब्दुल्लाह बिन मुहम्मद बिन अब्दुर्रहमान सानी तख़्त पर बैठा।

अब्दुर्रहमान सालिस (थर्ड)

अब्दुर्रहमान बिन मुहम्मद बिन अब्दुल्लाह बिन मुहम्मद बिन अब्दुर्रहमान सालिस अपने दादा अब्दुल्लाह के बाद २१ साल की उम्र में पहली रबीउल अव्वल ३०० हि० में तख़्त पर बैठा। यह वह ज़माना था कि तारिक़ व मूसा का फ़त्ह किया हुआ मुल्क और अब्दुर्रहमान दाख़िल की क़ायम की हुई सलतनत टुकड़े-टुकड़े हो कर ज़ाहिर में ईसाइयों के क़ब्ज़े में जाने के लिए हर क़िस्म की इस्तेदाद पैदा कर चुकी थी, लेकिन अभी क़ुदरत को यह सूरत पैदा करनी मंज़ूर न थी।

इस नव जवान सुलतान के तख़्त पर बैठने के वक़्त उसके बहुत से चचा जो उससे उम्र और हक़ में बढ़े हुए थे, मौजूद थे, लेकिन या तो उन की नेकी थी या उन्हों ने ऐसी कांटों भरी हुकूमत का बादशाह बन कर अपने आप को ख़तरे में मुब्तला करना मुनासिब न समझा कि सबने ख़ुशी से इस नव-जवान को बादशाह तस्लीम किया और तख़्त पर बैठने के बाद किसी क़िस्म का फ़ित्ना व फ़साद बरपा न हुआ।

तख़्त पर बैठते ही इस नव जवान सुलतान ने हुक्म जारी किया कि वे तमाम टैक्स, जो उस के पहले के सुलतानों ने ख़ज़ाने का घाटा पूरा करने के लिए जनता पर लगाए थे और जो शरीअत के हुक्मों के ख़िलाफ़

थे, माफ़ और खत्म कर दिए गए। इस एलान का असर बड़ा मुफ़ीद हुआ, जनता में उस की तारीफ़ें होने लगीं और दिलों में उस के बारे में बेहतरीन उम्मीदें पैदा हो गयीं।

इसके बाद सुलतान सालिस ने एलान कराया कि जो शख्स हुकूमत का फ़रमांबरदार बन कर आएगा और आगे इताअत पर क़ायम रहने का वायदा करेगा, उसकी तमाम खताएं माफ़ कर दी जाएंगी और इस मामले में मज़हब और अक़ीदे का कोई ध्यान न दिया जाएगा, यानी सुलतान के दरबार से ईसाई, यहूदी, मुसलमान सबके साथ बराबर का अद्ल व इंसाफ़ किया जाएगा।

चूंकि लोग खाना जंगी से तंग आ चुके थे, इसलिए वे तमाम छोटे-बड़े सरदार जो क़र्तबा से क़रीब थे और आज़ाद स्टेट बना चुके थे, इस एलान को सुनकर बे-झिझक सुलतान अब्दुर्रहमान की खिदमत में फ़रमांबरदारी का इक़रार करने लगे, इसी तरह रक़में सरकारी खज़ाने में दाखिल होना शुरू हुईं और इस तरह खज़ाने की माली पोज़ीशन बेहतर से बेहतर होती चली गयी।

अब दो ताक़तें रह गयी थीं, जिन्हें खलीफ़ा को क़ाबू में करना था। एक तो वही उमर बिन हफ़्सून, जो अब फिर ताक़त पकड़ चुका था, उस को ज़ेर करने के लिए बद्र नामी गुलाम की सरदारी में सुलतान ने एक बड़ी फ़ौज भेजी। उमर बिन हफ़्सून के तमाम क़िलों को उसने जीत लिया और उमर बिन हफ़्सून भाग कर जंगलों में जा छिपा।

दूसरी ताक़त इश्बेलिया स्टेट की थी, जहां अरबों की हुकूमत थी और जिस का हाकिम हज्जाज बिन मुस्लिम था। सुलतान अब्दुर्रहमान ने खुद फ़ौज ले कर चढ़ाई की और इब्ने मुस्लिम को हार का मुंह देखना पड़ा।

सन ३०८ हि० में मुहम्मद बिन अब्दुल जब्बार बिन सुलतान मुहम्मद और क़ाज़ी बिन सुलतान मुहम्मद ने सुलतान अब्दुर्रहमान सालिस के खिलाफ़ एक साज़िश की और तख्त पर क़ब्ज़ा करने के लिए सुलतान के क़त्ल की तद्बीरों में लग गये। सुलतान को जब मालूम हो गया, तो पहले तो उस ने उस की जांच करायी और जब जुर्म साबित हो गया तो दोनों को क़त्ल करा दिया।

इसी तरह सुलतान अब्दुर्रहमान ने आगे बढ़ कर जितनी भी छोटी बड़ी रियासतें आज़ाद हो चुकी थीं, उन्हें फिर अपना हिस्सा बनाया और

सब मिल कर एक जबरदस्त इस्लामी हुकूमत में बदल गयीं।

जब मुल्क के अन्दरूनी हिस्सों में सुकून हो गया तो अपने पुराने दुश्मन ईसाइयों की तरफ़ तवज्जोह की और अपनी हुकूमत का रक़्बा बहुत बढ़ा लिया।

अमीरुल मोमिनीन अब्दुर्रहमान

इसी साल यानी ३२७ हि० में मुलतान के पास अब्बासी खलीफ़ा मुक़्तदिर के क़त्ल किए जाने की खबर पहुंची और यह भी मालूम हुआ कि वहां का खलीफ़ा बस नाम का खलीफ़ा रह गया है, अब्दुर्रहमान सालिस ने मुनासिब यही समझा कि अमीरुल मोमिनीन या खलीफ़तुल मुस्लिमीन का लक़ब अख्तियार करे।

चुनांचे उस ने अमीरुल मोमिनीन होने का एलान कर दिया और नासिरुद्दीन का लक़ब अख्तियार किया। इस खिताब और लक़ब की किसी ने मुखालफ़त न की और सच बात भी थी कि उस जमाने में वही पूरी इस्लामी दुनिया में सब से ज्यादा खलीफ़तुल मुस्लिमीन कहलाए जाने का हक़दार था।

३२८ हि० से कुल मिला कर नासिरुद्दीन के लिए इत्मीनान और खुशहाली का जमाना शुरू हुआ और हर पहलू से मुल्क को तरक़्क़ी हुई।

खलीफ़ा अब्दुर्रहमान ने अपने बेटे हकम को अपना वली अह्द बनाया था। दूसरा बेटा अब्दुल्लाह था, जो नमाज-रोजे की तरफ़ ज्यादा माइल और अल-ज़ाहिद के नाम से मशहूर था। अब्दुल्लाह को क़र्तबा के एक फ़क़ीह ने, जिस का नाम अब्दुल बारी था, बहकाया और हुकूमत का लालच दिला कर इस पर तैयार कर लिया कि खलीफ़ा अब्दुर्रहमान और हकम को क़त्ल करने की जबर्दस्त कोशिश की जाए। साजिश तैयार हो गयी, लेकिन १० जिलहिज्जा ३३९ हि० को इस साजिश का पता चल गया। खलीफ़ा ने अपने बेटे अब्दुल्लाह और फ़क़ीह अब्दुल बारी दोनों को गिरफ़्तार करके जेलखाने में भिजवा दिया। फिर अपने बेटे अब्दुल्लाह को जेलखाने से निकाल कर क़त्ल कराया। फ़क़ीह साहब ने जब अब्दुल्लाह के क़त्ल होने का हाल सुना, तो खुद ही जेलखाने में खुदकुशी (आत्महत्या) कर के हलाक हो गये।

अमीरुल मोमिनीन खलीफ़ा अब्दुर्रहमान सालिस नासिरुद्दीन ने २ रमज़ानुल मुबारक सन ३५० हि० को ७२ साल कुछ महीने की उम्र पा कर क़स्रुज्जोहरा में वफ़ात पायी।

इस खलीफ़ा के दौर में दो करोड़ चौवन लाख अस्सी हज़ार दीनार सालाना मालगुज़ारी खज़ाने में दाखिल होती थी। इस के अलावा सात लाख पैंसठ हज़ार दीनार मुख्तलिफ़ ज़रियों से वसूल होते थे। यह तमाम आमदनी मुल्क और प्रजा पर ही खर्च की जाती थी। यहूदियों और ईसाइयों से जो जिज़्या लिया जाता था, वह अलग। खलीफ़ा के लिए एक खास रक़म तै थी, बाक़ी कुल रक़म इमारतों, पुलों और सड़कों वग़ैरह पर खर्च की जाती थी।

वफ़ात के वक़्त खलीफ़ा के ग्यारह लड़के मौजूद थे, जिन में हकम बिन अब्दुर्रहमान वली अह्द था।

अब्दुर्रहमान सालिस का दौर

खलीफ़ा अब्दुर्रहमान सालिस का ज़माना उन्दुलुसी हुकूमत का निहायत शानदार ज़माना था। मुल्क में अम्न व अमान था, तिजारत तरक़्क़ी पर थी।

इस खलीफ़ा का सबसे बड़ा कारनामा यह था कि उसने मुसलमनों की मुख्तलिफ़ जमाअतों और गिरोहों में जो मुखालफ़त और खाना जंगी रहती थी, उसको बिलकुल मिटा दिया।

इस खलीफ़ा के ज़माने में ग़ैर मुस्लिमों यानी ईसाइयों और यहूदियों वग़ैरह के साथ निहायत मुरव्वत और नर्मी का बर्ताव होता था।

इस खलीफ़ा के ज़माने में न सिर्फ़ क़र्तबा बल्कि पूरा उन्दुलुस जन्नत का नमूना बन गया था।

तमाम उन्दुलुस में सड़कों और शाहराहों का जाल बिछा हुआ था, मुसाफ़िरों की हिफ़ाज़त के लिए थोड़े-थोड़े फ़ासले पर चौकियां क़ायम थीं और सिपाही गश्त करते और पहरा देते थे। डाक का इंतिज़ाम क़ासिदों के ज़रिए होता था जो डाक घोड़ों को सरपट दौड़ाते जाते थे। एक जगह से दूसरी जगह इतनी जल्दी खबर पहुंच जाती थी कि दूसरे मुल्कों के लोग इस को जादू समझते थे।

बीमार और मुहताज आदमियों के लिए सरकारी मकान थे, वहां सरकारी खर्च से उन का ख्याल रखा जाता था। जगह-जगह दारुलयतामा (यतीमों के घर) क़ायम थे। उन में यतीमों की परवरिश और तालीम का इन्तिज़ाम ख़लीफ़ा के खास खर्च से होता था।

ज़िंदगी के आख़िरी दिनों में ख़लीफ़ा अब्दुर्रहमान सालिस ने अपने वली अह्द हकम को राजकाज का बड़ा हिस्सा सुपुर्द कर दिया था और ख़ुद अपना वक़्त अल्लाह की इबादत में गुज़ारने लगा था।

ख़लीफ़ा हकम बिन अब्दुर्रहमान सालिस

अपने बाप की वफ़ात के तीसरे दिन ख़लीफ़ा हकम ५ रमज़ानुल मुबारक ३५० हि० को ४८ साल की उम्र में क़स्रुज़्ज़ुहरा में तख़्त पर बैठा और अपना लक़ब मुस्तंसिर बिल्लाह तज्वीज़ किया।

सबसे पहले ख़लीफ़ा हकम ने हुकूमत के तमाम मुहक्मों के दफ़्तर का मुआयना किया, फ़ौज के रजिस्ट्रों को जांचा और शाही फ़ौजों के सामान का जायज़ा लिया।

ख़लीफ़ा हकम के ज़माने में भी बग़ावतें हुईं, ख़लीफ़ा ने मुस्तैदी दिखायी और उस पर क़ाबू पा लिया।

ख़लीफ़ा हकम के शुरू के ज़माने में ईसाइयों ने कुछ सर उठाने की बात सोची थी, लेकिन ख़लीफ़ा की मुस्तैदी देख कर उन को आगे बढ़ने की हिम्मत न हुई। इस का नतीजा यह हुआ कि फ़्रांस, इटली और यूरोप के दूसरे ईसाई बादशाहों ने जिस तरह ख़लीफ़ा अब्दुर्रहमान सालिस की ख़िदमत में अपने दूत और तोहफ़े भेजे थे, भेजे और ख़लीफ़ा हकम का भी रौब अपने बाप की तरह क़ायम हो गया।

३६५ हि० में इस ख़लीफ़ा ने अपने बेटे हिशाम को ख़िलाफ़त का वली अह्द बना कर सब से बैअत ली।

२ सफ़र ३६६ हि० को १६ साल हुकूमत करने के बाद ६४ साल की उम्र में ख़लीफ़ा ने फ़ालिज के मरज़ में क़ुर्तुबा में वफ़ात पायी। उस की वफ़ात के वक़्त उस के बेटे हिशाम की उम्र ग्यारह साल के क़रीब थी। ख़लीफ़ा हकम ने वली अह्दी के वक़्त उस का वज़ीर मुहम्मद बिन अबी आमिर को तज्वीज़ कर दिया था। अगले दिन हिशाम तख़्त पर बैठा।

ख़लीफ़ा हकम के दौर पर एक नज़र

ख़लीफ़ा हकम उन्दुलुस के नामी मशहूर ख़लीफ़ों में गिना जाता है। अगर इस ख़लीफ़ा के ज़माने में लड़ाइयों और चढ़ाइयों का ज़्यादा मौक़ा होता तो यह यक़ीनन ऊंचे दर्जे का सिपहसालार साबित होता।

☐ इस ख़लीफ़ा का ज़्यादा वक़्त इल्मी कामों में गुज़रा।

☐ इस ख़लीफ़ा का वज़ीर जाफ़र भी हारून रशीद के वज़ीर जाफ़र बरमकी से कम लायक़ न था।

☐ ख़लीफ़ा के ज़माने में जब मज़हबी तास्सुब बिल्कुल न रहा था, हर क़ौम व मज़हब के आदमी को उन्दुलुस में कामिल आज़ादी हासिल थी तंगदिली और पस्त ख़्याली का नाम व निशान क़र्तबा के दरबार में नहीं पाया जाता था।

☐ अद्ल व इंसाफ़ के क़ायम रखने का ख़लीफ़ा को बहुत ख़्याल था।

☐ ख़लीफ़ा क़ुरआनी हुक्मों का सख़्ती से पाबंद था और मुसलमानों से उस की पाबंदी कराता था। इससे पहले उन्दुलुस के फ़ौजी लोगों में शराबख़ोरी का ऐब भी पाया जाने लगा था। इस ख़लीफ़ा ने शराब का बेचना, बनाना, इस्तेमाल करना बिल्कुल बंद करा दिया।

☐ ख़लीफ़ा की तरफ़ से एक बड़ी रक़म रोज़ाना ख़ैरात की जाती थी।

☐ उस ने जगह-जगह मुल्क के बड़े-बड़े शहरों में कालेज और दारुलउलूम क़ायम किए। छोटे-छोटे क़स्बों और देहातों में भी मदरसे क़ायम किए। पढ़ने वालों को आम तौर पर वज़ीफ़ा दिया जाता था। तालीम का वज़ीर ख़लीफ़ा ने अपने भाई मुंज़िर को मुक़र्रर किया था।

☐ ख़लीफ़ा हकम सानी को इल्म से बड़ा लगाव था। उस ने दूर-दूर के शहरों में अपने कारिंदे फैला रखे थे कि जहां कहीं अच्छी किताबें देखें, उन्हें ख़रीद लें। पूरी दुनिया में यह बात मशहूर हो गयी थी कि क़र्तबा का ख़लीफ़ा इल्म की बहुत क़द्र करता है, इस लिए बहुत से लिखने वाले अपनी किताबों को उस के नाम कर के उस के पास भेज देते थे और इनाम हासिल करते थे।

□ यूनानी और इब्रानी ज़ुबानों की किताबों के तर्जुमे कराने के लिए सैकड़ों हज़ारों उलेमा का एक ज़बरदस्त मुहक्मा बना दिया था।

□ हर शहर में ख़लीफ़ा की तरफ़ से एक बड़ी लाइब्रेरी क़ायम कर दी गयी थी।

□ ख़लीफ़ा हकम की निजी लाइब्रेरी बहुत शानदार थी। इस की इमारत में संगमरमर इस्तेमाल किया गया था। संग मरमर ही का ख़ूबसूरत फ़र्श था, जिस पर संगे सब्ज़ और संगे मूसा की पच्चीकारी थी। संदल आबनूस और इसी क़िस्म की क़ीमती लकड़ियों की अलमारियां थीं। हर एक अलमारी पर सुनहरे हर्फ़ों से लिखा हुआ था कि अलमारी में किस इल्म व फ़न की किताबें हैं। इस लाइब्रेरी में हज़ारों जिल्दसाज़ और कातिब काम करते रहते थे। किताबों की तायदाद छः लाख के क़रीब थी।

□ ख़लीफ़ा हकम ने अपनी लाइब्रेरी की लगभग हर किताब ख़ुद पढ़ी थी, इस लिए उन पर उस के हाथ के लिखे हुए हाशिए मौजूद थे। वह बहुत बड़ा आलिम और इल्म दोस्त आदमी था। यही वजह है कि उस के दरबार में हर फ़न के माहिर, हर इल्म के आलिम हर वक़्त मौजूद रहते थे।

□ ख़लीफ़ा हकम की इल्म दोस्ती का एक मशहूर वाक़िआ है कि एक दिन अबू इब्राहीम नामी एक फ़क़ीह मस्जिद अबू उस्मान में वाज़ फ़रमा रहा था। इसी हालत में शाही चोबदार आया और उसने इब्राहीम से कहा कि अमीरुल मोमिनीन ने इसी वक़्त आप को बुलाया है और वह बाहर इन्तिज़ार कर रहे हैं। अबू इब्राहीम ने कहा कि तुम अमीरुल मोमिनीन से कह दो कि मैं इस वक़्त ख़ुदा के काम में लगा हुआ हूं, जब तब इस काम से फ़ारिग़ न हो लूं, नहीं आ सकता। चोबदार इस जवाब को सुन कर हैरान रह गया और डरते-डरते जा कर ख़लीफ़ा की ख़िदमत में अबू इब्राहीम का जवाब अर्ज़ किया। ख़लीफ़ा हकम ने सुन कर चोबदार से कहा कि तुम जा कर अबू इब्राहीम से कह दो कि मैं इस बात को सुन कर बहुत ख़ुश हुआ कि आप ख़ुदा के काम में लगे हुए हैं, जब यह काम कर चुकें तो तशरीफ़ लाएं, मैं उस वक़्त तक दरबार में आप का इन्तिज़ार करूंगा। चोबदार ने आ कर अबू इब्राहीम को पैग़ाम सुनाया। अबू इब्राहीम ने कहा कि तुम जा कर अमीरुल मोमिनीन से कह दो कि मैं बुढ़ापे की वजह से न घोड़े पर सवार हो सकता हूं, न पैदल आ सकता हूं, बाबुस्सुद्दा यहां से ज़्यादा दूर है,

मगर बाबुस्सुनअ यहां से क़रीब है। मगर बाबुस्सुनअ को खोल देने की इजाज़त दें तो मैं इस दरवाज़े से आसानी से दरबार में हाज़िर हो सकूंगा, बाबुस्सुनअ हमेशा बन्द रहता था और किसी खास मौक़े पर ही उस के खोलने की इजाज़त होती थी। अबू इब्राहीम इस के बाद फिर अपने वाज़ में लग गया और चोबदार यह पैग़ाम भी ख़लीफ़ा तक पहुंचा कर ख़लीफ़ा के हुक्म से आकर मस्जिद में बैठ गया। जब अबू इब्राहीम अपना वाज़ ख़त्म कर चुका, तो चोबदार ने अर्ज़ किया कि चलिए। उन्हें ले कर बाबुस्सुनअ पर पहुंचा तो उस ने देखा कि वहां दरबारी और सरदार और वज़ीर उस के स्वागत के लिए मौजूद हैं, दरबार में गया और ख़लीफ़ा से बातें करके उसी दरवाज़े से इज़्ज़त व एहतिराम के साथ वापस आ गया।

☐ ख़लीफ़ा हकम सानी को बजा तौर पर उन्दुलुस का सब से बड़ा ख़लीफ़ा कहा जा सकता है, क्योंकि उस के ज़माने में सलतनत का रौब व वक़ार, मुल्क का अम्न व अमान, हुकूमत का फैलाव, ख़ुशहाली, माल व दौलत, तिजारत वग़ैरह चीज़ें अपने कमाल को पहुंची हुई थीं और सब से ज़्यादा तारीफ़ के क़ाबिल और तवज्जोह देने की चीज़ इल्म व फ़न की गर्म बाज़ारी थी और यही वह चीज़ है कि ख़लीफ़ा हकम सानी के मुक़ाबले में हारून व मामून व मंसूर भी पेश नहीं किए जा सकते।

हिशाम बिन हकम सानी और मंसूर मुहम्मद बिन अबी आमिर

सन ३६६ हि० में जब कि ख़लीफ़ा हकम सानी फ़ौत हुआ और उस का बेटा हिशाम सानी ११ साल की उम्र में तख़्त पर बैठा है, तो उन्दुलुस की ख़िलाफ़त में नीचे लिखे शख़्स सब से ज़्यादा ताक़तवर और असरदार थे।

१. जाफ़र बिन उस्मान मुस्हफ़ी हाजिबुस्सलतनत (वज़ीर आज़म) यह ख़लीफ़ा हकम के दौर में वज़ीर आज़म की हैसियत से काम करता चला आता था। आलिम, इल्म दोस्त और सब से ज़्यादा इज़्ज़तदार आदमी समझा जाता था।

२. मलिका सुब्ह, यह हकम सानी की ईसाई बीवी और हिशाम

बिन हकम की मां थी। हकम सानी के ज़माने में भी यह राज-काज के कामों में पूरा दख़ल रखती थी, जिस की एक वजह यह भी थी कि वह वली अह्द की मां थी। साथ ही बहुत अक्लमंद और चालाक औरत थी।

३. ग़ालिब, यह सिपहसालारे आज़म (चीफ़ आवादी आर्मी स्टाफ़) था। ख़लीफ़ा हकम सानी का आज़ाद किया हुआ गुलाम था। इसके साथ फ़ौज के सिपाहियों और शहरों के बाशिंदों को मुहब्बत थी।

४. मुहम्मद बिन अबी आमिर बिन मुहम्मद बिन अब्दुल्लाह बिन आमिर मुहम्मद वलीद बिन यज़ीद बिन अब्दुल मलिक मुग़ाफ़िरी, इस का दादा अब्दुल मलिक मुग़ाफ़िर तारिक़ इब्ने ज़ियाद के साथ, जिन्होंने सबसे पहले उन्दुलुस जीता है, उन्दुलुस आया था। मुहम्मद बिन आमिर हिशाम बिन हकम का अतालीक़ (हाउस मास्टर) और मलिका सुब्ह की हिमायत और मदद हासिल किए हुए था।

५. फ़ाइक़ ख़्वाजा सरा, यह सुलतानी महल की हिफ़ाज़त करने वाली टुकड़ी का अफ़सर और तोशा ख़ाने का दरोग़ा था।

६. जौज़र ख़्वाजा सरा, यह शहर क़र्तबा के तमाम बाज़ारों का निगरां या शहर का कोतवाल था। ये दोनों ख़्वाजा सरा इस क़दर असरदार थे कि बड़े-बड़े सरदार उन से डरते और उन की रज़ामंदी हासिल करने की कोशिश किया करते थे।

सरदारों के मश्विरे

जब ख़लीफ़ा हकम सानी का इन्तिक़ाल हुआ है, तो फ़ाइक़ व जौज़र के सिवा और कोई उस वक़्त मौजूद न था। इन दोनों ने ख़लीफ़ा के इन्तिक़ाल के बाद मश्विरा किया कि शहज़ादा हिशाम का तख़्त पर बैठना ख़तरे से ख़ाली नहीं है, इस लिए मुनासिब यह है कि ख़लीफ़ा हकम के भाई मुग़ीरा को तख़्त पर बिठाया जाए, क्योंकि वह ख़िलाफ़त के बोझ को उठाने की ताक़त और सलाहियत रखता है।

जौज़र का राय यह थी कि वज़ीर आज़म जाफ़र मुस्हफ़ी को सब से पहले क़त्ल कर दिया जाए, ताकि मुग़ीरा के तख़्त पर बैठने में कोई परेशानी न हो, मगर फ़ाइक़ ने कहा कि मुनासिब यह मालूम होता है कि हम वज़ीर मुस्हफ़ी के सामने अपने ख़्याल बयान करें, हो सकता है, वह

हमारी ताईद करे, हां, अगर वह ताईद न करे, तो उसे क़त्ल कर दिया जाए।

वज़ीर जाफ़र को जब बुलाया गया और उसके सामने यह बात रखी गयी तो वह ताड़ गया और हुकूमत के दूसरे सरदारों को भी इस में शरीक कर लो, कह कर वह दोनों को धोखा दे कर निकल आया और घर पहुंचते ही उस ने तमाम सरदारों को तलब कर लिया। जब सब जमा हो गये तो सब के सामने उस ने फ़ाइक़ व जौज़र की राय रख दी और कहा, मेरी राय यह है कि इसी वक़्त हकम के भाई मुग़ीरा को क़त्ल कर दिया, जाए, ताकि किसी भी क़िस्म का फ़ित्ना न उठ सके। इस को सबने पसन्द किया और मुहम्मद बिन अबी आमिर उस के क़त्ल पर भी तैयार हो गया मुग़ीरा सो रहा था, उसे जगाया और उस बेगुनाह मुग़ीरा को मुहम्मद बिन अबी आमिर ने क़त्ल कर दिया।

इस नव-उम्र खलीफ़ा के लिए रास्ता साफ़ हो गया, लेकिन नव-उम्र खलीफ़ा की खबर सुन कर ईसाई हुकूमतों ने सर उठाना शुरू कर दिया। अबू जाफ़र ने इस बद-अम्नी के मौक़े पर अपनी क़ाबिलियत का कोई बेहतरीन नमूना नहीं दिखाया।

आखिर मलिका सुब्ह के हुक्म व इशारे से मुहम्मद बिन अबी आमिर को वज़ीर जाफ़र के कामों में उस का शरीक मुक़र्रर किया गया। कुछ ही दिनों के बाद मुहम्मद बिन अबी आमिर ने जाफ़र को ताक़ में बिठा दिया और तमाम राज-काज में खुद हावी हो गया।

मुहम्मद बिन आमिर के हालात और कारनामे

मुहम्मद बिन अबी आमिर सन २५७ हि० में उन्दुलुस की एक जगह तरकश में पैदा हुआ था। अगरचे उस के खानदान का पहला शख्स अब्दुल मलिक मुआफ़िरी यमनी सिपाही था, मगर उस के बाद उस की औलाद में ज़्यादातर पढ़े-लिखे और आलिम हुआ करते थे।

मुहम्मद बिन अबी आमिर अभी मां के पेट ही में था कि उस का बाप हज से वापस आता हुआ इलाक़ा तराबलस अल-ग़र्ब में फ़ौत हो गया था, मुहम्मद बिन अबी आमिर बहुत थोड़ी उम्र में क़र्तबा में आ कर सरकारी स्कूल में दाखिल हो कर पढ़ने लगा, यहां तक कि फ़ारिग़ हो कर

उस ने शाही महल से मिली हुई एक दुकान किराए पर ली और उस में बैठ कर अरज़ी नवीसी करने लगा।

इत्तिफ़ाक़ की बात कि मलिका सुब्ह यानी हिशाम की मां को एक मुहर्रिर की ज़रूरत पेश आयी, जो उस की निजी जायदाद का हिसाब-किताब लिखा करे। किसी ख्वाजा सरा ने मुहम्मद बिन अबी आमिर की मलिका से सिफ़ारिश कर दी, चुनांचे मुहम्मद बिन अबी आमिर क़िला के अन्दर मुहर्रिरी में नौकर हो गया।

यह उस की तरक़्क़ी का पहला ज़ीना था। उस ने क़ाबिलियत के खूब-खूब जौहर दिखाए, यहां तक कि खलीफ़ा के इंतिक़ाल के वक़्त वह वली अह्द हिशाम का अतालीक़ बना दिया गया।

खलीफ़ा हकम की वफ़ात और मुग़ीरा के क़त्ल के बाद जब हिशाम तख्त पर बैठा तो वज़ीरे आज़म जाफ़र मुस्ह्फ़ी को बे-दखल कर पूरा राज काज खुद ही देखने लगा।

मुहम्मद बिन अबी आमिर ने मलिका सुब्ह और वज़ीर जाफ़र की मदद से ख्वाजा सराओं को ठिकाने लगाया। फ़ाइक़ को मोरक्को में देश निकाला दे दिया, जौज़र को इस्तीफ़ा देने पर मजबूर किया गया।

इसी बीच ईसाई हुकूमतों में बग़ावत फैलनी शुरू हुई। मुहम्मद बिन अबी आमिर ही को फ़ौज दे कर भेजा गया। वह बहादुर फ़ौजी तो था ही, उसने इन बग़ावतों को कुचल दी और अपनी धाक बिठा दी।

फिर मुहम्मद बिन अबी आमिर ने ग़ालिब को अपना शरीक और अपने ख्याल का बना कर मुसह्फ़ी को वज़ीर आज़मी से हटा दिया और उसे ज़लील भी करा दिया, यहां तक कि उसे क़ैद कर दिया और इसी हालत में उस का इंतिक़ाल हुआ। मुहम्मद बिन अबी आमिर अब तंहा वज़ीरे आज़म था। धीरे-धीरे उस ने हिक्मत के साथ ग़ालिब के असर को खत्म किया और फ़ौज पर भी पूरा कंट्रोल हो गया। मलिका सुब्ह भी अब उस के आगे बे-असर हो चुकी थी। खलीफ़ा हिशाम तो खैर उस के आगे कोई हैसियत ही नहीं रखता था। उस की हैसियत बस इतनी ही रह गयी थी कि वह अपने खास-खास आदमियों के साथ गोया नज़रबंद है। वह महल से बाहर नहीं निकल सकता था। महल ही में उस की ज़रूरत और खेल-कूद और सुख-सुविधा के सब सामान मौजूद थे। मुहम्मद बिन आमिर की इजाज़त के बग़ैर वह किसी से मिल भी नहीं सकता था।

असरदार लोगों को बे-असर बना कर उस ने फ़ौज की तरफ़

तवज्जोह दी और एक शानदार फ़ौज तैयार की और ईसाई हुकूमतों पर जिहाद बोल दिया। उस का रौब व जलाल इस क़दर बढ़ा कि ख़ुद ईसाई बादशाहों और ईसाई सरदारों ने उस की फ़ौज में शरीक हो कर ईसाई मुल्कों को पामाल किया और ख़ुद ईसाइयों ने अपने हाथ से अपने गिरजों को ढाने पर आमादगी ज़ाहिर की, लेकिन अबू आमिर ने उन्हें ऐसा करने से रोक दिया। इस तरह कुल मिला कर मुहम्मद बिन अबी आमिर ने अपने दौर में ५५ जिहाद किए और हर लड़ाई जीती।

आख़िरी दिनों में उस ने अपना ख़िताब 'मंसूर' तज्वीज़ किया, चुनांचे वह न सिर्फ़ 'मंसूर' बल्कि 'मंसूरे आज़म' के ख़िताब से मशहूर हुआ।

३९४ हि० में २७ साल की हुकूमत के बाद क़स्तला के आख़िरी जिहाद से वापस आता हुआ मदीना सालिम में, जिस को मंडनियासली कहते हैं, इन्तिक़ाल कर गया।

मुहम्मद बिन आमिर मंसूर के दौर पर एक नज़र

मंसूरे आज़म की मिसाल ऐसी ही समझनी चाहिए जैसे बग़दाद की ख़िलाफ़त में दैलमी व सलजूक़ी सुलतानों की थी कि ख़लीफ़ा सिर्फ़ नाम का होता था, हुकूमत ये वज़ीरे आज़म और सुलतान करते थे। ख़ुत्बे में ख़लीफ़ों के साथ इन का भी नाम लिया जाता था।

मंसूरे आज़म इल्म व फ़ज़्ल की उतनी ही क़द्र करता था जैसा कि ख़लीफ़ा हकम सानी, वह ख़ुद भी आलिम था और आलिमों की बड़ी क़द्र करता था।

मंसूरे आज़म ने बहुत से पुल बनवाए। जामा मस्जिद क़र्तबा को बढ़ा कर बनवाया, अम्न व अमान और जनता की ख़ुशहाली इसके ज़माने में पहले से भी ज़्यादा बढ़ गयी।

वह ऐसी जगहों पर भी अपनी फ़ौजें ले गया, जहां इससे पहले कोई मुसलमान न पहुंचा था। ग़रज़ मंसूरे आज़म का दौर एक शानदार दौर था।

मंसूरे आज़म के इंतिक़ाल के बाद उस के बड़े बेटे अब्दुल मलिक को यह ओहदा मिला और उसे 'सैफ़ुद्दौला' और 'मुज़फ़्फ़र' का ख़िताब मिला।

मुज़फ़्फ़र ने अपने बाप की पालिसी पर अमल किया और छः साल हुकूमत करने के बाद ३९९ हि० में फ़ौत हुआ, मुज़फ़्फ़र ने अपने दौर में आठ बार ईसाई मुल्कों पर चढ़ाइयां कीं और हर बार उसे जीत हुई। उस ज़माने में भी इल्म व फ़न की ख़ूब तरक़्क़ी रही और इस्लामी हुकूमत के उस रौब में, जो मंसूर के ज़माने में क़ायम हो चुका था, किसी क़िस्म की कमी नहीं आयी।

मुज़फ़्फ़र के इंतिक़ाल पर उस का भाई अब्दुर्रहमान बिन मंसूर वज़ीरे आज़म बना। अब्दुर्रहमान ने अपना लक़ब नासिर तज्वीज़ किया। नासिर का भाई मुज़फ़्फ़र और उसका बाप मंसूर अगरचे उन्दुलुसी हुकूमत के आज़ाद हाकिम थे, लेकिन वज़ीरे आज़म ही कहलाते थे। नासिर ने जब देखा कि तमाम बड़े-बड़े सरदार और दरबारी ख़लीफ़ा की कम, वज़ीरे आज़म की ज़्यादा ताईद व हिमायत में रहते हैं, तो उसने ख़लीफ़ा हिशाम की ऊपरी तौर पर इज़्ज़त करनी भी छोड़ दी।

इस के बाद नासिर ने हिशाम को मजबूर किया कि वह उसे अपना वली अह्द बना दे। चुनांचे मजबूर हो कर उस ने नासिर को अपना वली अह्द बनाने का एलान कर दिया।

हिशाम को हटा दिया गया

नासिर अपनी हुकूमत के पहले ही साल फ़ौज ले कर सरहद की तरफ़ ईसाइयों को दबाने के लिए चला। इधर क़र्तबा में क़ुरैशियों और उमवियों को यह देख कर कि ख़िलाफ़त किसी और ख़ानदान में जा रही है, सख़्त तक्लीफ़ हुई थी, उन्हों ने ख़ानदाने ख़िलाफ़त की हिफ़ाज़त के लिए ख़ुफ़िया तद्बीरें शुरू कर दीं।

जब नासिर बाहर गया हुआ था, नासिर के हमदर्द फ़ौजी अफ़सरों को इन लोगों ने क़त्ल करा दिया, फिर ख़लीफ़ा हिशाम को ख़िलाफ़त से हटा कर उस की जगह ख़लीफ़ा अब्दुर्रहमान सालिस के पड़पोते मुहम्मद बिन हिशाम बिन अब्दुल जब्बार बिन ख़लीफ़ा अब्दुर्रहमान सालिस को

तख़्त पर बिठा कर 'मेहदी बिल्लाह' का लक़ब दिया।

नासिर ख़बर सुनते ही फ़ौरन क़र्तबा लौट आया। जब क़र्तबा के क़रीब पहुंचा तो उस की फ़ौज के अक्सर सरदार और बरबरी सिपाही ख़लीफ़ा मेंहदी की हुकूमत में चले आए। नासिर जब बहुत थोड़े से आदमियों के साथ हैरान व परेशान रह गया तो उसी के साथियों में से एक शख़्स ने नासिर को क़त्ल कर दिया।

इस तरह आमिरी ख़ानदान की हुकूमत का ख़ातमा हुआ और साथ ही उन्दुलुस में बद-अम्नी फैल गयी।

मेंहदी बिन हिशाम बिन अब्दुल जब्बार

हिशाम ने लोगों की ख़्वाहिश पर खिलाफ़त से हटने की तहरीर दे दी और मेंहदी ने उसे महल के एक हिस्से में नजरबंद कर दिया और अपने एक चचेरे भाई मुहम्मद बिन मुग़ीरा को वज़ीरे आज़म और दूसरे चचेरे भाई उमैया बिन हाफ़ को क़र्तबा का कोतवाल मुक़र्रर किया।

इस पूरे वाक़िए में चूंकि बरबरी फ़ौजों ने ख़लीफ़ा का पूरा साथ दिया था, इस लिए उन की ताक़त व असर तेज़ी से बढ़ने लगा, उन्हों ने प्रजा को तंग करना भी शुरू कर दिया। जनता ने तंग आ कर ख़लीफ़ा मेंहदी से शिकायत की। मेंहदी ने शिकायत पर तवज्जोह न दी कि बरबरी ख़फ़ा हो जाते, इस लिए जनता का हर तबक़ा ख़लीफ़ा से धीरे-धीरे नाराज़ रहने लगा, यहां तक की बरबरियों की ज़्यादतियों से तंग आ कर शहर वालों ने कुछ लोगों को क़त्ल कर दिया। ख़लीफ़ा मेंहदी ने इन क़ातिलों को बदले में क़त्ल करा दिया। इस तरह बेचैनी और बढ़ती चली गयी।

आख़िर में ख़लीफा मेंहदी ने बरबरियों से निजात हासिल करने की तद्बीरें सोचनी शुरू कर दीं, बरबरियों को जब यह मालूम हुआ तो उन लोगों ने साज़िश की कि ख़लीफ़ा को हटा दिया जाए और हिशाम बिन सुलैमान बिन अब्दुर्रहमान सालिस को तख़्त पर बिठाया जाए।

मेंहदी को इस साज़िश का इल्म हुआ तो उस ने फ़ित्ने के बरपा होने से पहले ही हिशाम बिन सुलैमान और उस के भाई अबूबक्र दोनों को गिरफ़्तार कर के अपने हाथ से क़त्ल किया।

सुलेमान बिन हकम की ख़िलाफ़त

इन दोनों के मारे जाने की ख़बर सुन कर एक उमवी शाहज़ादा सुलेमान बिन हकम अपनी जान बचा कर क़र्तबा से भागा। क़र्तबा से बाहर बरबरी लोग जमा हो रहे थे और इस चिंता में थे कि अब किसे ख़लीफ़ा बनाया जाए, सुलेमान बिन हकम को आता हुआ देख कर सब ख़ुश हो गये और उसको ख़लीफ़ा बना कर 'मुस्तईन बिल्लाह' का ख़िताब दिया और क़र्तबा पर हमला करने को उभारा। लेकिन सुलेमान ने पहले ताक़त बढ़ाने पर ज़ोर दिया और बरबरियों को लिए दिए तलेतला चला गया।

मुस्तईन बिल्लाह तलेतला पहुंचा और अहमद बिन नसीब को अपना वज़ीरे आज़म बनाया। ग़रज़ मेंहदी और मुस्तईन की दो बार ख़ूरेज़ जंगे हुईं, ईसाइयों ने दोनों का साथ दिया था। मुस्तईन को बे-दख़ल कर दिया गया और मेंहदी की ख़िलाफ़त फिर वापस हुई।

वाज़ेह आमिरी मेंहदी के साथ था। उस ने जब मुल्क को इस तरह तबाह होते देखा तो क़र्तबा शहर के असरदार लोगों से मश्विरा कर के मेंहदी को हटाने और ख़लीफ़ा हिशाम सानी को दोबारा तख़्त नशीन करने की तैयारी की। चुनांचे ११ ज़िलहिज्जा सन ४०० हि० हिशाम को दोबारा क़ैदख़ाने से निकाल कर तख़्ते ख़िलाफ़त पर बिठाया गया और मेंहदी को भरे-दरबार में हिशाम के सामने ग़ैर नामी ग़ुलाम ने क़त्ल कर दिया।

ईसाइयों का असर और ज़ोर

वाज़ेह आमिरी को जो मंसूर बिन अबी आमिर का आज़ाद ग़ुलाम था, वज़ीरे आज़म बनाया गया, उस ने मुस्तईन बिल्लाह को लिखा कि अब हिशाम ख़लीफ़ा है, इस लिए तुम उस की इताअत क़ुबूल कर लो, लेकिन वह अोफ़ोनश ईसाई बादशाह से मिल गया था, इस लिए इताअत क़ुबूल करने के बजाए मुस्तईन और ओफ़ोनश ने मिल कर क़र्तबा पर हमला किया और उसे घेर लिया गया।

हिशाम ने ईसाई बादशाह को दो सौ क़िले दे कर उसे फोड़ लिया और उस ने मुस्तईन का साथ देना छोड़ दिया।

इस अर्से में कई ईसाई हाकिमों ने अपनी बग़ावत और मुस्तईन की मदद करने का दबाव डाल कर क़र्तबा के दरबार से इब्ने अोफ़ोनेश की तरह सरहदी सूबों की सनदें हासिल कीं और बहुत-सा मुल्क ईसाइयों के क़ब्ज़े में चला गया।

आखिर ३ शव्वाल ४०३ हि० में मुस्तईन ने तलवार के ज़ोर से क़र्तबा पर क़ब्ज़ा हासिल किया। हिशाम सानी इस हंगामे में या तो क़त्ल हो गया या कहीं इस तरह ग़ायब हुआ कि फिर उस का पता न चला।

मुस्तईन क़र्तबा में दाखिल हो कर ख़िलाफ़त के तख़्त पर बैठा।

मुस्तईन तो ख़लीफ़ा बन गया, मगर उस वक़्त तक उन्दुलुसी इस्लामी हुकूमत बहुत कमज़ोर हो चुकी थी, जगह-जगह सूबों के हाकिम खुद-मुख़्तार बादशाह बन बैठे थे। क़र्तबा के ख़लीफ़ा की हुकूमत तो इतनी सिमट गयी थी कि उस में क़र्तबा और उसके आस-पास के इलाक़े ही रह गये थे।

मुहर्रम ४०७ हि० तक मुस्तईन ने क़र्तबा और उस के आस-पास के इलाक़ों पर हुकूमत की और तीन साल कुछ महीने नाम की ख़िलाफ़त की, यहां तक कि इश्बेलिया के पास ताबक़ा के मैदान में अली बिन हमद से हार कर गिरफ़्तार हुआ और क़त्ल कर दिया गया।

इस के बाद उमवी हुकूमत नाम के लिए कुछ साल और चली, लेकिन सच बात तो यह है कि मुस्तईन के क़त्ल के बाद उमवी हुकूमत का ख़ात्मा हो गया।

उमवी हुकूमत पर एक नज़र

अब्दुर्रहमान अव्वल ने १३८ हि० में उन्दुलुस में दाखिल हो कर अपनी हुकूमत की बुनियाद रखी थी। उस की औलाद में हिशाम बिन मुहम्मद के फ़ौत होने पर ४२८ हि० में इस हुकूमत का दो सौ नव्वे साल के बाद बिल्कुल ख़ात्मा हो गया।

इस ख़ानदान में ऐसे-ऐसे नामी ख़लीफ़ा हुए हैं, जिन के कारनामे रहती दुनिया तक लोग याद रखेंगे। खुशहाली, तरक़्क़ी, इल्म व फ़न की

ज़्यादती, अम्न व सुकून इन हुकूमतों की खूबी रही है।

इस इस्लामी हुकूमत के खात्मे की वजह भी असल में वही थी जो अब्बासियों के ज़वाल की बनी है कि विरासत के तौर पर बाप की खिलाफ़त बेटे को मिले, जो इस्लामी शरीअत के खिलाफ़ थी और लड़ाई-झगड़े और फ़ित्ने की जड़ थी। इसी आपस की फूट ने दुश्मनों को ताक़त पहुंचायी और मुसलमान बर्बाद हो गये।

हमूदी हुकूमत

हारून रशीद अब्बासी के दौर में इद्रीस की मराक़श (मोरक्को) में आज़ाद हुकूमत क़ायम हो गयी थी। यह इद्रीसी हुकूमत भी अब मराक़श से खत्म हो चुकी थी। मंसूरे आज़म या इब्ने अबी आमिर की वज़ीरीया हुकूमत में मराक़श से जो बरबरी लोग उन्दुलुस में आए, उन के साथ इद्रीसी खानदान के दो शख्स, जो दोनों सगे भाई थे, आए, इन दोनों के नाम अली और क़ासिम थे। ये दोनों हमूद बिन मैमून बिन अह-मद बिन अली बिन उबैदुल्लाह बिन उमर बिन इद्रीस के बेटे थे। ये दोनों मंसूरे आज़म की फ़ौज में नौकर हो गये। बाद में यही दोनों भाई थे, जिन्हों ने बरबरी फ़ौज को ले कर इब्ने अबी आमिर के खानदान की जड़ काट दी और इन्हीं दोनों ने मुस्तईन उमवी को खलीफ़ा बनाया। मुस्तईन ने क़र्तबा में तख्ते खिलाफ़त पर बैठने के बाद अली बिन हमूद को तंजा और अफ्रीक़ा के दूसरे सूबों का गवर्नर मुक़र्रर कर दिया।

चूंकि मुस्तईन की कुछ दिनों की हुकूमत में उन्दुलुस के तमाम सूबे आज़ाद हो गये थे, इस लिए यह रंग देख कर अली बिन हमूद ने भी तंजा में आज़ाद हुकूमत शुरू कर दी और अपने आप को मुस्तईन की फ़रमां-बरदारी से आज़ाद कर दिया।

एक दिन उस ने तंजा में अपने बेटे को अपनी जगह पर हाकिम बनाया और खैरान को ले कर उन्दुलुस में अपनी फ़ौजें उतार दीं और यह मशहूर किया कि मैं खलीफ़ा हिशाम के खून का बदला लेने आया हूं। मुक़ाबला हुआ और मुहर्रम सन ४०७ हि० में मुस्तईन को ज़बर्दस्त हार हुई। अली ने बढ़ कर क़र्तबा पर क़ब्ज़ा किया और मुस्तईन को गिरफ़्तार करा कर क़त्ल कराया और खुद तख्त पर बैठ कर हुकूमत शुरू की। अपना

लक़ब नासिरुद्दीन रखा।

लेकिन अली बिन हमूद की फ़ौज उस से ज़्यादा दिन ख़ुश न रही और ज़ीक़ादा सन ४०८ हि० में अली बिन हमूद को हम्माम के अन्दर क़त्ल कर डाला गया।

क़ासिम बिन हमूद

इस क़त्ल का हाल लोगों को मालूम हुआ तो आम तौर से वे ख़ुश हुए और बरबरी लोगों ने अली बिन हमूद के भाई क़ासिम बिन हमूद को जो मुस्तईन के ज़माने से जज़ीरा ख़ज़रा का हाकिम था, क़र्तबा में तलब कर के अली बिन हमूद की जगह तख़्त पर बिठाया।

क़ासिम के लिए एक दिन ऐसा भी आया कि भाई अली बिन हमूद के बेटे यह्या ने फ़ौजी चढ़ाई कर के उसे गद्दी से उतार दिया। यह वाक़िआ ४१० हि० का है। ४१३ हि०में फिर क़ासिम ने क़र्तबा पर हमला कर के उसे जीत लिया और यह्या को भगा दिया।

लेकिन क़र्तबा के सरदार क़ासिम से न ख़ुश थे, न मुत्मइन। उनकी साज़िश का दौर शुरू हुआ कि क़ासिम की जगह पर किसी उमवी शहज़ादे को तख़्त पर बिठाया जाए। फिर क्या था, क़ासिम ने ढूंढ-ढूंढ कर उमवियों को क़ैद व क़त्ल करना शुरू किया। इस ज़ुल्म को देख कर शहर वालों ने बग़ावत कर दी। क़ासिम हार गया और शहर से निकाल दिया गया। इश्बेलिया अपने बेटे के पास जाना चाहता था, लेकिन वहां भी पनाह न मिली। वह अपने बाल-बच्चों को ले कर हब्शी ग़ुलामों के क़िला सुरेश में जा कर ठहरा, यहां तक कि यह्या बिन अली ने ४१५ हि० में क़िला सुरेश को जीत कर क़ासिम को गिरफ़्तार व क़ैद कर लिया और ४२७ हि० में क़ासिम यह्या के हुक्म से क़त्ल कर दिया गया।

अब्दुर्रहमान बिन हिशाम

जिस वक़्त क़ासिम क़र्तबा से फ़रार हो कर इश्बेलिया की तरफ़ चला तो क़र्तबा में कुछ दिनों तक कोई हाकिम और सुलतान न रहा।

क़र्तबा वाले किसी उमवी को खिलाफ़त-तख़्त पर बिठाना चाहते थे, आखिर तीन उमवी शाहज़ादे ताज व तख़्त के दावेदार हुए।

१५ रमज़ान सन ४१४ हि० को क़र्तबा वालों ने एक बड़े मज्मे में इन तीनों शाहज़ादों में से एक को चुना और अब्दुर्रहमान बिन हिशाम को मुस्तज़िहर के लक़ब से तख़्त पर बिठाया।

मुस्तज़िहर ने तख़्त पर बैठ जाने के बाद अपने वज़ीरों की राय के खिलाफ़ अबू इम्रान नामी एक बरबरी सरदार को, जो क़ैद था, रिहा कर दिया और उस को सरदारी अता की। इसी अबू इम्रान की साज़िश व कोशिश से ३ ज़ीक़ादा सन ४१४ हि०को मुस्तज़िहर क़त्ल कर दिया गया।

मुहम्मद बिन अब्दुर्रहमान बिन अब्दुल्लाह मुस्तक्फ़ी

इस के बाद मुहम्मद बिन अब्दुर्रहमान बिन अब्दुल्लाह मुस्तक्फ़ी के लक़ब से तख़्त पर बैठा।

४१६ हि० ने यह्या बिन अली बिन हमूद ने फ़ौज के साथ क़र्तबा पर चढ़ाई कर दी। मुहम्मद बिन अब्दुर्रहमान क़र्तबा छोड़ कर भाग गया। लेकिन क़र्तबा वाले यह्या से कभी न डरे और उन्हों ने उसे क़र्तबा में टिकने न दिया।

उस के जाने के बाद क़र्तबा वालों ने हिशाम उमवी को अपना खलीफ़ा चुना। हिशाम तीन साल तक क़र्तबा न आ सका। ४२० हि० में वह क़र्तबा में दाखिल हुआ और मोतमद बिल्लाह के लक़ब से तख़्त पर बैठा।

दो साल के बाद ४२२ हि० में फ़ौज और क़र्तबा के बाशिंदों ने उसे हटा कर निकाल दिया और वह लरीया वापस आ कर सन ४२८ हि० तक ज़िंदा रहा।

क़र्तबा में जम्हूरी हुकूमत का दौर आया। इस का सेहरा अबू मुहम्मद जम्हूर के सिर जाता है। जम्हूरी कौंसिल अपना सदर चुन कर हुकूमत चलाया करती थी।

यह्या बिन अली की हुकूमत अब इश्बेलिया और उस उस के पड़ोसी इलाकों तक थी। इश्बेलिया ने बग़ावत करके उसे क़त्ल कर दिया,

उसका भाई मालक़ा में मौजूद था। इद्रीस बिन अली वहां का हाकिम था। यह्या का पूरा ख़ानदान मालक़ा पहुंच गया। सन ४३१ हि० में उस का भी इन्तिक़ाल हो गया।

हसन बिन यह्या को इस के बाद तख़्त पर बिठाया गया। उस ने अपना लक़ब मुस्तंसिर रखा। ४३८ हि० में हसन की चचेरी बहन यानी इद्रीस की लड़की ने उस को ज़हर दे कर मार डाला और इस के बाद तीन चार साल तक इस ख़ानदान के ग़ुलामों और नौकरों ने मालक़ा में एक-एक कर के हुकूमत की।

आख़िर ४४३ हि० में इद्रीस बिन यह्या बिन अली बिन हमूद मालक़ा के तख़्त पर बैठा। इस ने अपना लक़ब आली रखा।

४४८ हि० में मुहम्मद बिन अली बिन हमूद ने बग़ावत की और इद्रीस बिन यह्या हार कर क़मारश भाग गया। मुहम्मद बिन इद्रीस ने मालक़ा में तख़्त पर बैठ कर अपना लक़ब मेंहदी रखा और अपने भाई मनाली को अपना वली अह्द बनाया।

४४९ हि० में मुहम्मद बिन इद्रीस ने वफ़ात पायी। उस के फ़ौत होने की ख़बर पा कर इद्रीस बिन यह्या दोबारा मालक़ा में आकर तख़्त पर बैठा।

४५० हि० में इद्रीस बिन यह्या ने वफ़ात पायी।

हमूदी ख़ानदान का आख़िरी बादशाह मुहम्मद असग़र

इस के बाद मुहम्मद असग़र बिन इद्रीस बिन अली बिन हमूद मालक़ा के तख़्त पर बैठा।

४५१ हि० में बादीस बिन हाबूस बादशाह ग़र्नाता ने मालक़ा पर हमला कर के मुहम्मद असग़र को मालक़ा से बेदख़ल कर दिया।

मुहम्मद असग़र मालक़ा से अलमीरा चला आया और ४५६ हि० तक वहां परेशानी की हालत में ठहरा रहा। ४५६ हि० में सलेला (अफ़्रीक़ा) वालों के कहने पर अफ़्रीक़ा चला गया और वहां की हुकूमत

अपनी हाथ में ले कर ४६० हि० तक हुकूमत करता रहा। इस तरह हमूदी खानदान की हुकूमत खत्म हुई।

ईसाइयों का ज़ुल्म और मुराबितों की हुकूमत

उन्दुलुस की इस्लामी हुकूमत कमज़ोर हुई, ईसाई रियासतों ने उस पर अपनी नज़रें गड़ायीं और मुसलमानों पर ज़ुल्म किया। इस बार भी जब हमूदी के खात्मे पर पूरे मुल्क का ढांचा बिखरा तो ईसाइयों में उस पर क़ब्ज़ा करने का जोश पैदा हुआ। अल्फ़ान्सो फ़ोर्थ ने सन ४७४ हि० में तलेतला को अल क़ादिर बिल्लाह के क़ब्ज़े से निकाल कर अपनी हुकूमत में शामिल कर लिया। क़ब्ज़ा करने के बाद इस बादशाह ने जितना ज़ुल्म मुसलमानों पर किया है, उतना शायद ही किसी ईसाई बादशाह ने की हो। यही हाल दूसरी रियासतों का था।

अल फ़ांसो फ़ोर्थ ने तलेतला पर क़ब्ज़ा करने के बाद हुकूमत इश्बेलिया की हदों में क़दम बढ़ाने की हिम्मत की। इश्बेलिया का बादशाह मोतमद बिन मोतज़िद इमादी, चूंकि अलमीरा के बादशाह से लड़ रहा था, उसने फ़ौरन अल फ़ांसो को टैक्स भेज कर सर से बला टालनी चाही।

आखिर अल फ़ांसो फ़ोर्थ ने मोतमद के पास पैग़ाम भेजा कि मेरी बीवी जो हामिला है, उस को बच्चा जनने तक मस्जिदे क़र्तबा में रखना चाहता हूं, ताकि वहीं बच्चा पैदा हो, उस के ठहरने का बन्दोबस्त कर दो और क़स्रे ज़ोहरा भी उस के लिए खाली कर दो। क़र्तबा उन दिनों मोतमद की हुकूमत में शामिल था। मोतमद ने अल फ़ांसो की इस दर्खा-स्त को क़ुबूल करने से इंकार कर दिया और उस के यहूदी सफ़ीर (दूत) को गुस्ताखी की सज़ा में क़त्ल कर दिया।

अल फ़ांसो हमले की तैयारी करने लगा।

मोतमद ने एक वफ़्द यूसुफ़ बिन ताशक़ीन के पास रवाना किया और ईसाइयों के मुक़ाबले में मदद तलब की, यूसुफ़ बिन ताशक़ीन मदद को आ पहुंचा। अल फ़ांसो ने भी भारी फ़ौज जमा कर ली, वह इतनी बड़ी थी कि उस ने घमंड में कहा था कि अगर मेरे मुक़ाबले को फ़रिश्ते भी आसमान से उतर आएं, तो मैं इस फ़ौज से उस को हरा सकता हूं।

आखिर ज़लाक़ा के मैदान में ज़बर्दस्त लड़ाई हुई। मुसलमानों की

फ़ौज में कुल बीस हज़ार फ़ौजियों की तायदाद थी, जब कि ईसाइयों की फ़ौज में साठ हज़ार से भी ज़्यादा लोग थे। मुक़ाबला सख़्त हुआ, अल फ़ांसो घायल हुआ और अपनी तमाम फ़ौज उस मैदान में कटवा कर २० रजब सन ४७६ हि०को कुछ सौ आदमियों के साथ ज़लाक़ा मैदान से भाग निकला।

जीतने को मुसलमान जीत गये, लेकिन इस जीत का फ़ायदा उन्हों ने नहीं उठाया, वे फिर आपस में लड़ने-कटने लगे। ईसाइयों ने फिर हिम्मत की और फ़ौजी तैयारियों में लग कर मुसलमानों के क़ब्ज़े से शहरों को निकालना शुरू कर दिया और इश्बेलिया के कुछ क़िलों पर भी क़ब्ज़ा कर लिया।

रबीउल अव्वल ४८१ हि० में उन्दुलुस के सरदार की दर्ख्वास्त पर यूसुफ़ बिन ताशक़ीन को फिर उन्दुलुस में आना पड़ा। इस बार यूसुफ़ बिन ताशक़ीन ईसाई फ़ौजों को पीछे हटाता और हराता हुआ शहर तलेतला के क़रीब जा पहुंचा और उसे घेर लिया। अल फ़ांसो फ़ोर्थ ने तलेतला को अपनी राजधानी बनाया था और वह तलेतला में मौजूद था। यूसुफ़ ने तलेतला का घेराव कर के उन्दुलुस के सरदारों से मदद चाही कि घेराव को कामियाब बनाने में शरीक हों, लेकिन किसी ने मदद न की, ख़ास तौर से अब्दुल्लाह बिन बिलकीन बादशाह ग़रनाता ने कि उस पर यह ज़िम्मेदारी ज़्यादा थी, ज़रा भी ध्यान न दिया। यूसुफ़ को मजबूर होकर घेराव उठा कर तलेतला से वापस होना पड़ा और उस ने उन्दुलुस के सरदारों को ठीक बनाना ज़रूरी समझा, चुनांचे उस ने अब्दुल्लाह हाकिमे ग़रनाता और उस के भाई तमीम हाकिमे मालक़ा को गिरफ़्तार कर लिया और अफ़रीक़ा भेज दिया।

धीरे-धीरे उन्दुलुस के सरदारों की नालायक़ी से तमाम इस्लामी उन्दुलुस पर सन ४८५ हि० में यूसुफ़ ताशक़ीन का क़ब्ज़ा हो गया, बल्कि ईसाई रियासतों के बड़े हिस्से पर भी क़ब्ज़ा कर लिया।

यूसुफ़ बिन ताशक़ीन को सन ४७६ हि० में बग़दाद के ख़लीफ़ा मुक़्तदी बिअम्रिल्लाह ने अमीरुलमुस्लिमीन का ख़िताब और ख़लत व अलम भेजा। उन्दुलुस पर क़ब्ज़ा होने के बाद अमीरुलमुस्लिमीन यूसुफ़ बिन ताशक़ीन पन्द्रह साल तक ज़िंदा रहा और मुहर्रम ५०० हि० में फ़ौत हुआ।

अबुल हसन अली बिन यूसुफ़ बिन ताशक़ीन

अमीरुलमुस्लिमीन यूसुफ़ बिन ताशक़ीन की वफ़ात के बाद उस का बेटा अबुल हसन अली बिन यूसुफ़ बिन ताशक़ीन ३३ साल की उम्र में तख़्त पर बैठा। उस ने बड़ी हिक्मत व अक़्लमंदी के साथ हुकूमत की और ३६ वर्ष सात महीने मराक़श व उन्दुलुस पर हुकूमत करने के बाद रजब ५३७ हि० में अली बिन यूसुफ़ का इन्तिक़ाल हो गया।

उस की जगह उस का बेटा अबू मुहम्मद ताशक़ीन तख़्त पर बैठा। अबू मुहम्मद के बाद सन ५३७ हि० में ताशक़ीन बिन अली तख़्त पर बैठा इसी दौर में मुराबितों में गिरावट और कमजोरी नुमायां होती गयी, यहां तक कि २७ रमजान ५३९ हि० में ताशक़ीन बिन अली नाकाम और मायूस हो, अबुल मोमिन से हार कर फ़ौत हो गया।

इस के बाद उस का बेटा अबू इस्हाक़ इब्राहीम बिन ताशक़ीन बिन अली बिन यूसुफ़ बिन ताशक़ीन मोरक्को में तख़्त पर बैठा, लेकिन ५४१ हि० में अब्दुल्लाह मोमिन ने मोरक्को को जीत लिया और इब्राहीम बिन ताशक़ीन को गिरफ़्तार कर के क़त्ल कर दिया। इस तरह मुराबितों की हुकूमत का खात्मा हो गया। लेकिन उन्दुलुस के मुराबती वायसराय यह्या बिन अली ने बड़ी हिम्मत व इस्तक़लाल का सुबूत दिया और उन्दुलुस को हर खतरे से बचाए रखा। लेकिन थोड़े ही दिनों के बाद उन्दुलुस में भी बिखराव पैदा हो गया और उन्दुलुस बहुत ही छोटे-छोटे टुकड़ों में, जिनकी तायदाद गिनी नहीं जा सकती थी, बंट गया।

उन्दुलुस पर मुवह-हिदीन की हुकूमत अबुल मोमिन

मुवह्हिदों के सरदार अबुल मोमिन ने आखिरकार अपना एक सिपहसालार उन्दुलुस की तरफ़ रवाना किया और ५४२ हि० में उन्दुलुस पर क़ब्ज़ा हो गया।

अबुल मोमिन के बाप का नाम अली था। अबुल मोमिन ४८७

हि० में पैदा हुआ था। अबुल मोमिन इब्ने तोमरत का खास मुरीद था जो खालिस तौहीद को मानने वाले थे और खुदा की किसी सिफ़त को उस की ज़ात से जुदा यक़ीन नहीं करते थे, इस लिए उस के तमाम मुरीद आम तौर पर मुवह्हिद के नाम से पुकारे जाने लगे।

अबुल मोमिन ने मराक़श पर क़ब्ज़ा करने के बाद ५३१ हि० में अपने एक सरदार अबू इम्रान मूसा बिन सईदा को उन्दुलुस रवाना किया और उस ने वहां पहुंच कर क़ब्ज़ा भी कर लिया।

सन ५४१ हि० में उन्दुलुस में खुद आने का इरादा किया। लेकिन अन्दरूनी बग़ावतों की वजह से उस ने अपने बेटों को भेज दिया। सन ५४८ हि० में वह उन्दुलुस पहुंचा।

सन ५५५ हि० में अबुल मोमिन ने अपने बेटे अबू सईद को ग़रनाता का हाकिम और तमाम इस्लामी उन्दुलुस का का वायसराय मुक़र्रर किया।

उन्दुलुस की तरफ़ सुकून हो जाने के बाद उस ने ईसाई स्टेटों पर भी हमला किया, उसका इरादा था कि उन्दुलुस की उत्तरी ईसाई रियासतों को जीतता हुआ तमाम यूरोप पर जीत का झंडा फहराए, लेकिन ठीक उस वक़्त जबकि वह इस जिहाद के लिए अपनी भारी भरकम फ़ौज के लिए रवाना होने को था, जुमादस्सानी सन् ५५८ हि० के आखिरी जुमा को फ़ौत हुआ।

अबू याक़ूब

उसकी वफ़ात के बाद उसका बेटा अबू याक़ूब यूसुफ़ तख्त पर बैठा, वह चाहते हुए भी अंदरूनी पेचीदगियों की वजह से मुहिम मुकम्मल न कर सका।

अबुल मोमिन की वफ़ात के बाद ईसाइयों को मौक़ा मिला कि उन्हों ने उन्दुलुस के कुछ पच्छिमी जिलों पर क़ब्ज़ा कर लिया। अबू याक़ूब एक भारी फ़ौज लेकर पहुंचा और उसे छीन लिया - वह इश्बेलिया में था कि ७ रजब ५८० हि० को उस का इन्तिक़ाल हो गया।

अबू याक़ूब बड़ा नेकदिल, इल्म दोस्त और रोशन ख्याल शख्स था और अपने ज़माने के बड़े सुलतानों में गिना जाता था।

अबू यूसुफ़ मंसूर

अबू याक़ूब के बाद उस का बेटा अबू युसुफ़ मंसूर तख़्त पर बैठा। उस वक़्त उस की उम्र ३२ साल की थी। मंसूर के दौर में उन्दुलुस में बड़ा अम्न व चैन रहा।

सन् ५८५ हि० में मंसूर ने उन्दुलुस के पच्छिमी हिस्से से ईसाइयों के असर को बिल्कुल मिटा दिया।

मंसूर की समुद्री ताक़त भी बहुत ज़बरदस्त थी, इस लिए सुलतान सलाहुद्दीन अय्यूबी ने मंसूर के पास अपना एक दूत अब्दुर्रहमान बिन मुंफ़िद को भेजा और एक ख़त मंसूर के नाम इस दूत के साथ रवाना किया, जिसमें लिखा हुआ था कि ईसाई फ़ौजें फ़लस्तीन पर हमलावर हुई हैं, इस वक़्त अगर अपने जंगी जहाज़ों को मुसलमानों की मदद के लिए भेजो और फ़लस्तीन के साहिल की हिफ़ाज़त के काम में मदद करो, तो बड़ी आसानी से ईसाइयों को हराया जा सकता है। इस ख़त में सुलतान सलाहुद्दीन ने मंसूर को अमीरुलमोमिनीन के ख़िताब से मुख़ातब नहीं किया था, क्योंकि सुलतान सलाहुद्दीन सिर्फ़ बग़दाद के ख़लीफ़ा ही को अमीरुलमोमिनीन, ख़लीफ़तुल मुस्लिमीन समझता था, इतनी सी बात पर मंसूर ने बुरा मान लिया और मदद नहीं दी।

सफ़र ५९५ हि० में मंसूर लगभग पन्द्रह साल तक हुकूमत करने के बाद फ़ौत हुआ

अबू अब्दुल्लाह मुहम्मद

मंसूर की वफ़ात के बाद उसका बेटा अबू अब्दुल्लाह मुहम्मद सफ़र ५९५ हि० में सत्तरह साल की उम्र में तख़्त पर बैठा और अपना लक़ब नासिरुद्दीन लिल्लाह रखा। इस के ज़माने में जो अन्दरूनी बग़ावतें हुई, उन्हें कुचल दिया गया।

अमीर नासिर बहुत धीमी तबियत का आदमी था, लड़ाई झगड़ा बरपा करने का उसको शौक़ न था, इस लिए वह फ़ौज जो उसके बाप के

ज़माने में बड़ी ताक़तवर और हिम्मत वर थी अमीर नासिर की बे-तवज्जोही से उस के सरदार बद-दिल हो रहे थे। इसके अलावा पिछले अमीर की हुकूमत के ज़माने में फ़ौज के हर सिहाही को मुक़र्रर तंख्वाह के हर सिमाही पर बादशाह की तरफ़ से इनाम मिला करता था। अमीर नासिर के ज़माने में इन इनामों के न मिलने से सिपाही बद-दिल हो रहे थे।

इधर तले तल्ला में अलफ़ांसो के पास हर मुल्क और हर हिस्से से ईसाई लोग गिरोह-गिरोह करके जमा हो रहे थे और उन्दुलुस ख़तरे में पड़ता जा रहा था, नासिरुद्दीन लिल्लाह ने ईसाइयों की इस शानदार तैयारी और यूरोप के हर मुल्क में मुसलमानों के ख़िलाफ़ जिहाद के एलान का हाल सुन कर मोरक्को और उन्दुलुस से फ़ौजों को इकट्ठा किया और जिहाद का एलान किया। नतीजा यह हुआ कि छः लाख के क़रीब मुजाहिद भी हश्बेलिया में जमा हो गये—

दोनों फ़ौजें 'उल-अक़ाब' नामी जगह पर जमा हो कर भिड़ गयीं।

इसाइयों की फ़ौज मुसलमानों से बदला लेने के जोश में पागल हो रही थी, लेकिन इधर इस्लामी फ़ौज का हाल अजीब था। फ़ौज बहादुर थी, तायदाद में काफ़ी थी, लेकिन बद-दिली मौजूद थी। वे चाहते थे कि इस बार अमीर हार जाए तो अच्छा हो, ताकि इस कड़ुवे तजुर्बे के बाद वह फ़ौज पर रुपया ख़र्च करने और इनाम व इकराम देने में कंजूसी न करे, चुनांचे ६०९ हि० को जब लड़ाई शुरू हुई तो कुछ फ़ौजी सरदार अपने दस्ते को लेकर अलग हो गये। कुछ सरदारों और सिपाहियों ने हमले के वक्त जान-बूझ कर अपने नेज़ों को टेढ़ा करके बजाए इस के कि दुश्मन के सीनों को छेदते, ज़मीन में गाड़ा और तलवारों को दुश्मनों की तरफ़ फेंक दिया। कुछ लोगों ने अजीब-अजीब हरकतें कीं और लड़ाई शुरू होने के बाद अमीर के हुक्मों की तामील छोड़ दी। ज़बरदस्त और बा-क़ायदा मुसल्लह फ़ौज की इन ना माक़ूल हरकतों को देख कर मुजाहिदों के भी हौसले पस्त हो गये। अमीर नासिर की कंजूसी का यह ख़तरनाक नतीजा और मराक़शी और-बरबरी फ़ौज की घटिया ग़द्दारी इस्लाम और मुसलमानों के लिए बेहद नुक़्सानदेह साबित हुई। अंजाम यह हुआ कि अपने अमीर की नाफ़रमानी करके सब के सब ईसाइयों के हाथों क़त्ल हुए सिर्फ़ एक हज़ार आदमी इस छः लाख के लश्कर में से ज़िंदा बचे और वे मुश्किल से अमीर नासिर को जंग के मैदान से वापस लाने में कामियाब हुए, बक़िया तो लड़ाई के मैदान में लड़ कर शहीद हुए

या ईसाईयों के हाथ में क़ैद व गिरफ़्तार हो गये। गिरफ़्तार होने वालों को उम्मीद थी कि हम को आज़ाद करा लिया जायगा, मगर ईसाइयों ने उसी मैदान 'अल-उक़रब' में सब को ज़िब्ह कर डाला।

अमीर नासिर इश्बेलिया में हार कर वापस आ गया और १० शाबान ६१० हि० को फ़ौत हुआ।

सच तो यह है कि अल-अक़ाब की लड़ाई ने इस्लामी उन्दुलुस की जड़ें हिला दीं।

यूसुफ़ मुस्तंसिर

अमीर नासिर की वफ़ात के बाद ११ शाबान को ६१० हि० में तख़्त पर बैठा और अपना लक़ब मुस्तंसिर रखा। वह शव्वाल ५२४ हि० में पैदा हुआ था। दस साल तख़्त पर बैठे रहने पर ६२० हि० में शव्वाल में ला-वलद फ़ौत हुआ।

यह निहायत ऐश परस्त और कम-हिम्मत शख़्स था। इससे फ़ायदा उठा कर ईसाइयों ने उन्दुलुस के अक्सर हिस्से पर क़ब्ज़ा कर लिया, इस के बावजूद मुस्तंसिर मरते वक़्त तक मराक़श से बाहर न निकला और बादशाह हो कर कभी उन्दुलुस में न आया।

मुस्तंसिर की वफ़ात के बाद उसका भाई अब्दुल वाहिद तख़्त पर बैठा। नौ महीने के बाद मुवह्हिदों के सरदारों ने उस को हटा कर और उसे क़त्ल करके हुकूमत का निज़ाम ही बिखरा कर रख दिया।

अब्दुल वाजिद आदिल

उन दिनों अमीर मंसूर का एक बेटा यानी अमीर नासिर का भाई अब्दुल वाजिद उन्दुलुस के सूबा मर्सीया का हाकिम था। वह अब्दुल वाहिद बिन नासिर के क़त्ल किए जाने का हाल सुन कर ख़ुद हुकूमत का दावेदार हुआ और अपना लक़ब आदिल रखा। आदिल मर्सीया में तख़्त पर बैठा।

इसी साल यानी ६२१ हि० में ईसाइयों ने उस पर हमला किया

इस लड़ाई में आदिल हार गया और मराक़श चला गया।

मराक़श वालों ने एक नव उम्र लड़के यह्या बिन नासिर को अपना बादशाह बना कर आदिल का मुक़ाबला किया। आदिल गिरफ़्तार कर लिया गया।

उन्दुलुस के एक शख़्स मुहम्मद बिन यूसुफ़ ने इश्बीलिया के हाकिम इद्रीस (मामून) को निकाल दिया और वहां अपनी हुकूमत की बुनियाद डाली।

इस तरह ६२५ हि० में मुवह्हिदों की हुकूमत का नाम व निशान मिट गया और मराक़श में बनी मरीन की हुकूमत क़ायम हो गयी।

उन्दुलुस में इस्लामी हुकूमत का ख़ात्मा

उन्दुलुस में ग़रनाता के हाकिमों ने जोर बांधा। ईसाइयों से लड़ाइयां हुईं, हार-जीत का सिलसिला बराबर चलता रहा, यहां तक कि मुसलमान हुक्मरानों की नाअहली, पस्त हिम्मती और आपसी लड़ाई-भिड़ाई का नतीजा यह निकला कि १२ जुमादल उख़रा, सन् ८९५ हि० को ग़रनाता के आख़िरी मुस्लिम हुक्मरां ने समझौता कर लिया। समझौता इस तरह किया गया—

१. मुसलमानों को अख़्तियार होगा कि शहर के अन्दर रहें या बाहर चले जाएं। किसी मुसलमान की जान व माल को नुक़्सान न पहुंचाया जाएगा।

२. मुसलमानों के मज़्हबी मामलों में ईसाई कोई दख़ल न देंगे।

३. कोई ईसाई मस्जिद में न घुसने पाएगा।

४. मस्जिद और औक़ाफ़ पहले ही की तरह क़ायम रहेंगे।

५. मुसलमानों के मामले इस्लामी शरीअत के मुताबिक़ मुसलमान क़ाज़ी तै करेंगे।

६. दोनों तरफ़ के क़ैदी रिहा कर दिये जाएंगे।

७. अगर कोई मुसलमान उन्दुलुस से अफ़्रीक़ा जाना चाहे, तो सरकारी जहाज़ में वह अफ़्रीक़ा पहुंचा दिया जाएगा।

८. जो ईसाई मुसलमान हो गये हैं, वे इस्लाम के तर्क करने पर मजबूर न किए जाएंगे।

९. इस लड़ाई, लूट का जो माल मुसलमानों के हाथ आया है, वह दस्तूर के मुताबिक़ उन्हीं के पास रहेगा।

१०. मौजूदा टैक्स के अलावा कोई नया टैक्स मुसलमानों पर न लादा जाएगा।

११. तीन साल तक मुसलमानों से किसी क़िस्म का टैक्स न लिया जाएगा।

१२. सुलतान अबू अब्दुल्लाह के सुपुर्द अल-बनाशरात की हुकूमत कर दी जाएगी।

१३. आज से साठ दिन के अन्दर क़िला अल-हुमरा, तोपख़ाना और लड़ाई के दूसरे सामान, जो इस वक़्त क़िले में मौजूद हैं, उस पर ईसाइयों का क़ब्ज़ा दे दिया जाएगा।

१४. आज से साठ दिन के अन्दर इस समझौते की शर्तों की तक्मील कर दी जाएगी।

१५. शहर ग़रनाता एक साल तक आज़ाद छोड़ दिया जाएगा। साल भर के बाद ईसाई ऊपर दी गयी शर्तों की पाबन्दी करते हुए उस पर क़ब्ज़ा करेंगे।

इस समझौते पर पहली रबीउल अव्वल ८९७ हि० मुताबिक़ १ जनवरी १४९२ ई० को दस्तख़त हुए थे। जनता इससे बहुत बद-दिल हुई। सुलतान ने समझा, कहीं बग़ावत न हो जाए, इसलिए उसने बहुत पहले १२ रबीउल अव्वल सन् ८९७ हि० को ही क़स्रुल हुमरा को ईसाइयों के हवाले कर दिया।

ईसाइयों ने शहर ग़रनाता पर क़ब्ज़ा कर लिया और समझौते की तमाम शर्तों को भुला दिया। सुलतान भागकर मराक़श पहुंचा और वहां शाह का नौकर हो गया और इसी हाल में उसका इन्तिक़ाल हो गया।

ईसाइयों ने इसके बाद मुसलमानों पर जो ज़ुल्म किए हैं, वह बयान से बाहर है। ज़ुल्म व सितम की जो-जो शक्लें अख़्तियार की जा सकती हैं, अख़्तियार की गयीं और मुसलमानों को चुन-चुनकर क़त्ल कर दिया गया।

उन्दुलुस की इस्लामी हुकूमत पर एक नज़र

शुरू के दौर में अरब हुक्मरानों की तरह उन्दुलुस में भी अरबों की हुकूमत अगरचे देखने में एक शख्स की हुकूमत नज़र आती थी, मगर उसमें जम्हूरियत का रंग बहुत ज्यादा शामिल था। खलीफ़ा का हुक्म और शरीअत का क़ानून हर आदमी पर एक ही तरह लागू होता था। अब्दुर्रहमान सानी उमवी सुलतान पर क़ाज़ी की कचहरी में एक ईसाई ने दावा किया और क़ाज़ी के हुक्म को इस ज़ोरदार बादशाह को तक्मील करनी पड़ी, जिस तरह एक गुलाम को तामील करनी पड़ती।

कोतवाली का इन्तिज़ाम बहुत ही ऊंचे दर्जे का था। हर बाज़ार में एक इंस्पेक्टर होता था जो व्यापारियों के व्यापार और कारोबार की निगरानी करता था। हर शहर और क़स्बे में अस्पताल और दवाखाने खुले हुए थे। सड़कों और नहरों का तमाम मुल्क में मुसलमानों ने जाल फैला रखा था। खलीफ़ा हिशाम ने वादिल कबीर दरिया पर बहुत ही शानदार और खूबसूरत पुल बनाया। ऐसे ही जगह-जगह दरियाओं के पुल बन गये थे।

लड़ाई के फ़न (कला) और फ़ौजी कानूनों में आमतौर से मुसलमानों ने इंसानियत और तहज़ीब को जगह दी थी। उन्दुलुस के मुसलमानों ने क़िले तोड़ने का फ़न ईजाद किया। किसी इलाक़े के जीतने पर उन्होंने वहां के बूढ़ों, औरतों और बच्चों पर कभी ज़ुल्म नहीं किया।

खेती को मुसलमानों ने इतनी तरक़्क़ी दी थी कि यह भी एक मुकम्मल फ़न बन गया था। हर मेवेदार पेड़ और ज़मीन की खासियत की जानकारी हासिल थी। उन्दुलुस के हज़ारों-लाखों मील के इलाक़ों को, जो बंजर और वीरान पड़े हुए थे, उसे बाग़ों और लहलहाते खेतों की शक्ल में बदल दिया। चावल, रूई, ज़ाफ़रान, अनार, आड़ू, शफ़्तालू, वगैरह, जो आज कल उन्दुलुस में ज्यादा से ज्यादा पैदा होते हैं, मुसलमानों ही की वजह से उन्दुलुस क्या बल्कि पूरे यूरोप को नसीब हुए। उन्दुलूसिया और इश्बीलिया के सूबों में जैतून और सरसों की खेती को बड़ी तरक़्क़ी दी। ग़रनाता और मालक़ा के इलाक़ों में अंगूर की ज़ोरदार खेती होती थी।

खेती के साथ-साथ उन्दुलुस के मुसलमानों ने मादनीयात (खनिज पदार्थों) की खोज में भी कोई कोताही नहीं की। सोना, चांदी, लोहा, फ़ौलाद, पारा, बिजली, तांबा, याक़ूत और नीलम वग़ैरह की खानों का पता लगाया।

ग़रनाता की हुकूमत उन्दुलुस के मुसलमानों की आख़िरी हुकूमत थी, लेकिन इस छोटी सी हुकूमत ने भी इल्म और तामीर में अपनी ज़बरदस्त यादगारें छोड़ी हैं, मुसलमानों ने ऐसा अजीब व ग़रीब सीमेंट ईजाद किया कि क़स्रे हमरा जो ग़रनाता हुकूमत की निशानी दुनिया में बाक़ी है, आज तक अपने पक्के मसाले की वजह से दुनिया वालों को हैरानी में डाल देता है।

मुसलमानों ने उन्दुलुस पर क़ब्ज़ा करके तमाम मुल्क में स्कूल, मदरसे, रसदख़ाने और शानदार लाइब्रेरियां खोल दी थीं, जहां इल्मी खोजों का हर सामान मौजूद होता था। बड़े-बड़े शहरों में युनिवर्सिटियां या दारूल उलूम और छोटे क़स्बों में शुरू के और बीच के स्कूल और कालेज का जाल बिछ गया।

अरबों ने यूनानी, लेटिन और स्पेनिश भाषाओं को पूरी मेहनत व मशक़्क़त से सीखा और उन भाषाओं में अरबी ज़ुबान की बहुत-सी डिक्शनरियां तैयार कर डालीं।

ख़लीफ़ा हकम सानी की हुकूमत के दौर में सिर्फ़ क़र्तबा की लाइब्रेरी में छः लाख किताबें हर इल्म व फ़न की मौजूद थी और हर किताब पर ख़ास ख़लीफ़ा के लिखे हुए नोट थे। इब्ने रुश्द जैसा फ़लसफ़ी उन्दुलुस ही का एक मुसलमान था। डाक्टरी और सर्जरी में उन्दुलुसी मुसलमानों ने ऐसी तरक़्क़ी की थी कि कुछ दिनों पहले तक पूरा यूरोप इन किताबों से फ़ायदा उठाता था।

सन और रूई से काग़ज़ तैयार करना उन्दुलुसी मुसलमानों ने ईजाद किया। ग्यारहवें अलफ़ांसो ने लिखा है कि शहर के मुसलमान बहुत सी गूंजने वाली चीज़ें और लोहे के गोले बहुत बड़े-बड़े सेब के बराबर फेंकते थे। ये गोले इतनी दूर जाते थे कि कुछ फ़ौज के ऊपर जाकर और कुछ फ़ौज के अन्दर गिरते थे। इनसे साबित होता है कि मुसलमान जब तोप और बारूद को इस्तेमाल करते थे, ईसाई उसे नहीं जानते थे।

ग़रज़ कि उन्दुलुस के मुसलमान तमाम यूरोप के उस्ताद, मुहसिन

और इल्म व हिक्मत और तरक़्क़ी व इज़्ज़त के तरीक़े बताने वाले अता-लीक़ (मास्टर) थे। इन एहसानों का मुआवज़ा यूरोप और यूरोप के ईसाइयों ने मुसलमानों को जो दिया, वह ऊपर बयान हो चुका है।

इस जगह एक बार फिर इस बात को याद कर लेना चाहिए कि मुसलमानों ने जब पहली सदी हिजरी में उन्दुलुस को फ़त्ह किया था, तो किसी को ज़बरदस्ती मुसलमान नहीं बनाया था, बल्कि ईसाई लोग ख़ुद ही इस्लाम की ख़ूबियों को देखकर इस्लाम अपना लेते थे। अब जबकि ईसाइयों ने ताक़त हासिल की और वे मुसलमानों को उनके मज़हब से न फेर न सके, तो ईसाइयों ने लाखों मुसलमानों को जोउन्दुलुस में मौजूद थे, क़त्ल कर डाला, आग में जला डाला और पानी में डुबो दिया। इसका नतीजा यह हुआ कि वह मुल्क उन्दुलुस जो मुसलमानों के दौर में दुनिया का सबसे ज़्यादा हरा-भरा और ख़ुशहाल मुल्क था, ऐसा वीरान हुआ कि आज तक वीरानी और नहूसत ने उसका पीछा नहीं छोड़ा है।

मुसलमानों पर मुसीबतें सिर्फ़ इस लिए नाज़िल हुई थीं कि उन्होंने कलामे इलाही को पीठ पीछे डाल दिया था, जिसकी वजह से उनमें ख़ुद ग़रज़ी और फूट पैदा हुई जिसका ईसाइयों नेफ़ायदाउठाया और मुसलमानों को तबाह व बर्बाद किया।

मोरक्को और अफ़्रीक़ा

अफ़्रीक़ा का यह मुल्क मराक़श या मोरक्को या मारीटोनिया कहलाता है। इस मुल्क को उक़्बा बिन नाफ़ेअ ने फ़त्ह किया था। फिर मूसा बिन नसीर को गवर्नर बना कर भेजा गया, जिसने तारिक़ बिन ज़ियाद को मराक़श की हुकूमत सुपुर्द कर दी थी। इसी तारिक़ ने उन्दुलुस फ़त्ह किया था।

इदरीसी हुकूमत

ऊपर अब्बासी ख़लीफ़ों के हालात में इमाम मुहम्मद बिन अब्दुल्लाह और उनके ख़ानदान की मक्का में बर्बादी और हार का हाल बयान हो चुका है। इसी ख़ानदान का एक शख़्स इदरीस नामी मय अपने ख़ादिम राशिद के हिजाज़ से भाग कर मिस्र व अफ़्रीक़ीया होता हुआ मराक़श पहुंचा, उसने धीरे-धीरे बरबर क़बीलों को अपना मुरीद बना लिया यहां

तक कि वे इदरीस को अपना सुलतान और खलीफ़ा मानने लगे।

सन् १७३ हि० में इदरीस ने तलीमस्तान पर चढ़ाई की और उसे जीत लिया। इसी तरह वह अपनी ताक़त बढ़ाता रहा और थोड़े ही दिनों में काफ़ी ताक़तवर हो गया।

इदरीस की बढ़ती हुई ताक़त खलीफ़ा हारून रशीद अब्बासी को मालूम हुई तो वह बड़ा फ़िक्रमंद हुआ। उसने अपने गुलाम सुलतान बिन नसीर को इदरीस की जड़ काटने के लिए भेजा। यह गुलाम शमाख के नाम से मशहूर था। वह जाकर इदरीस से मिल गया और उसके दर-बारियों में शामिल हो गया।

फिर शमाख ने एक मंजन दिया, जिसके इस्तेमाल करते ही इद-रीस का दम घुट गया और वह १७५ हि० ही में इन्तिक़ाल कर गया।

शमाख वहां से भागा। इदरीस के खादिम राशिद ने उस का पीछा किया। मुक़ाबला हुआ, शमाख घायल तो हुआ, लेकिन बचकर भाग निकला।

राशिद इदरीस के दूध पीते बच्चे की तरफ़ से बाक़ायदा हुकूमत करने लगा। इस लड़के का नाम भी इदरीस रखा गया, जिसे इदरीसे सानी के नाम से लोग जानते हैं।

इदरीसे सानी ने बड़ा होकर अपना वज़ीर मुसअब बिन ईसा उज़्दी को बनाया।

सन् १९३ हि० में इदरीसे सानी ने फ़ासनामी जगह के पास एक नए शहर की बुनियाद डाली और उसी को अपनी राजधानी बनाया। इस तरह मराक़श में एक इदरीसी हुकूमत क़ायम हो गयी।

मुहम्मद बिन इद्रीस और आपसी लड़ाई

सन् २१३ हि० में इदरीस सानी ने वफ़ात पायी और उसका बेटा मुहम्मद अपने बाप की जगह तख़्त पर बैठा।

यह वह ज़माना था कि इदरीस अव्वल का सगा भाई सुलैमान बिन अब्दुल्लाह बिन हसन मुसन्ना बिन हसन बिन अली बिन अबी तालिब मिस्र व अफ़रीक़ा होता हुआ तलमसान पहुंच गया था। उसने जब अपने आप को इदरीस अव्वल का सगा भाई ज़ाहिर किया, तो वहां के बरबरी क़बीलों ने खुशी से उसकी बैअत कर ली और उसकी हुकूमत

तलमसान में क़ायम हो गयी।

इधर इदरीस सानी की मां और मुहम्मद बिन इदरीस की दादी कनीजा ने कहा कि अकेले मुहम्मद ही को पूरी हुकूमत न दी जाए, बल्कि मुहम्मद के दूसरे भाइयों को एक-एक हिस्से की हुकूमत दी जाए। हुकूमत के सरदारों ने इस तज्वीज को अमली जामा पहना दिया और एक मज़बूत हुकूमत टुकड़ों में बंट गयी।

आपसी लड़ाइयां शुरू हो गयीं। आपस में भाई-भाई टकराने लगे, यहां तक कि २९२ हि० में यह्या बिन इदरीस बिन उमर बिन इदरीस सानी ने ताक़त पाकर तमाम मुल्क मराक़श पर क़ब्ज़ा किया और इदरीसी हुकूमत फिर तरक़्क़ी पर आ गयी।

३०५ हि० में उबैदियों की फ़ौज ने मराकश पर हमला किया, यह्या बिन इदरीस अपनी फ़ौज लेकर मुक़ाबले पर आ डटा। सख़्त मुक़ाबले के बाद यह्या को हार और उबैदी फ़ौज की जीत हुई और उसे मह्कूम बना लिया गया। मेहदिया में रहने लगा, वहीं ३२१ हि० में फ़ौत हुआ।

मिस्र और अफ़्रीक़ा में उबैदी हुकूमत

अब्बासी ख़िलाफ़त के शुरू होते ही अलवियों ने उसकी मुख़ालफ़त में कोशिशें शुरू कर दी थीं। यह बात पहले बयान हो चुकी है कि उस वक़्त अलवियों ने बार-बार बग़ावतें कीं और बार-बार नाकामी का मुंह देखना पड़ा। फिर साज़िशी काम शुरू कर दिया, अब्दुल्लाह बिन सबा यहूदी इसमें पेश-पेश था। इस काम में मजूसियों, यहूदियों, बरबरियों ने भी नव-मुस्लिमों के लिबास में अलवियों की मदद की।

जब अब्बासियों की हुकूमत कमज़ोर हुई तो कुछ यहूदी और मजूसी नस्ल के लोगों ने अपने आप को अलवी बता कर फ़ायदा उठाना चाहा। बरबर का इलाक़ा बग़दाद हुकूमत के मर्कज़ से काफ़ी फ़ासले पर था और बरबरी लोगों की ख़ास आदतों से आसानी से फ़ायदा उठाया जा सकता था, इसलिए तीसरी सदी हिजरी के आख़िरी हिस्से में मुहम्मद हबीब नामी एक शख़्स ने जो सलमिया इलाक़ा हम्स में रहता था, अपने आप को इमाम जाफ़र सादिक़ के बेटे इस्माईल की औलाद में ज़ाहिर करके

हुकूमत व सलतनत हासिल करने की कोशिश की। इमाम जाफ़र सादिक़ के ज़माने से ही इमाम मेंहदी के जाहिर होने की खबर लेकर इस तरह की कोशिशें हो रही थीं।

मुहम्मद हबीब ने अपने राज़दारों में से एक शख्स रुस्तम बिन हसन बिन हौशब को यमन की तरफ़ भेजा कि वहां जाकर लोगों को इस बात की तालीम दे कि इमाम मेंहदी बहुत जल्द जाहिर होने वाले है, चुनांचे रुस्तम ने यमन में जाकर अपने काम को अच्छी तरह अंजाम दिया और अपना एक गिरोह भी बना लिया।

इसके बाद मुहम्मद हबीब के पास बसरा का एक शख्स अबू अब्दुल्लाह हसन बिन मुहम्मद बिन ज़करिया, जो शीया ख्याल का आदमी था और हमेशा अलवियों की हिमायत व तरफ़दारी में लगा रहता था, आया मुहम्मद हबीब ने उसको मुनासिब तालीम देकर और क़ाबिल पाकर हिदायत की कि तुम अव्वल यमन पहुंचकर रुस्तम बिन हसन की सोहबत में रहो और दावत व तब्लीग़ के तरीक़े सीखो और फिर वहां से इलाक़ा बरबर की तरफ़ जाओ और वहां अपना काम शुरू करो।

अबू अब्दुल्लाह शीई १५ रबीउल अव्वल सन् २८८ हि० में शहर कतामा पहुंचा और अपनी तालीम लोगों को सिखाने-पढ़ाने लगा।

अबू अब्दुल्लाह के आने और इस क़िस्म की तालीम देने की खबर इब्राहीम बिन अहमद बिन अग़लब, अफ़्रीक़ीया के सुलतान को हुई तो उसने अबू अब्दुल्लाहके पास एक हुक्म भेजा कि तुम अपनी गुमराही फैलाने वाली तालीम बन्द करो, वरना तुमको सज़ा दी जाएगी। अबू अब्दुल्लाह ने इसका जवाब सख्ती से दिया।

कतामा के लोग अबू अब्दुल्लाह की हिमायत कर ही रहे थे, हसन बिन हारून ग़स्सानी की वजह से शहर ताज़रूत भी उसकी हिमायत करने लगा।

हसन बिन हारून ग़स्सानी की उसी ज़माने में एक दूसरे सरदार मेंहदी बिन अबी कमारा से मुखालफ़त हो गयी और नौबत लड़ाई तक पहुंची। मेंहदी बिन अबी कमारा का एक भाई अबू अब्दुल्लाह शीई में एतक़ाद रखता था, उसने अबू अब्दुल्लाह के इशारे से अपने भाई को क़त्ल कर दिया। इस तरह अबू अब्दुल्लाह की शान व शौकत और भी बढ़ गयी और हसन बिन हारून उसको अपना आक़ा समझने लगा।

इब्राहीम बिन अहमद के एक ज़बरदस्त सरदार फ़तह बिन यह्या

ने फ़ौज लेकर अबू अब्दुल्लाह पर हमला किया। फ़त्ह हार गया और क़ीरवान की तरफ़ भाग गया। अब क्या था, पच्छिमी इलाक़े पर अब अब्दुल्लाह ने अपनी एक हुकूमत क़ायम कर ली।

सन् २८९ हि० में सुलतान इब्राहीम अग़लबी के बेटे अबुल अब्बास अब्दुल्लाह बिन इब्राहीम ने तख़्त पर बैठते ही अपने बेटे अबू ख़ौल को अबू अब्दुल्लाह शीई के मुक़ाबले पर रवाना किया। अबू अब्दुल्लाह को हार का मुंह देखना पड़ा, लेकिन क़िस्मत की बात कि अबू ख़ौल को किसी ने क़त्ल कर दिया और अबू अब्दुल्लाह का ख़तरा टल गया।

जब ज़ियादतुल्लाह अग़लबी ख़ानदान का आख़िरी सुलतान तख़्त पर बैठा तो अबू अब्दुल्लाह को शहरों के फ़त्ह करने और अपनी हुकूमत को फैलाने का ख़ूब मौक़ा मिला।

उसने अपने कुछ भरोसे के लोगों को सलीमिया इलाक़ा हम्स की तरह मुहम्मद हबीब के बेटे उबैदुल्लाह की तरफ़ भेजा, इस लिए कि मुहम्मद हबीब का इंतिक़ाल हो चुका था। उन लोगों ने उबैदुल्लाह से कहा कि आप की हुकूमत पच्छिम में क़ायम हो चुकी है, आप तशरीफ़ ले चलिए। चुनांचे उबैदुल्लाह जो उबैदुल्लाह मेंहदी के नाम से मशहूर है उन लोगों के साथ रवाना हो गया। साथ में उसका बेटा अबुल क़ासिम और एक गुलाम भी था।

यह ख़बर अब्बासी ख़लीफ़ा मुक्तफ़ी को भी पहुंच गयी। उसने ईसा नोशरी, गवर्नर मिस्र के नाम हुक्म जारी किया कि ऐसे-ऐसे लोग मिस्र होकर पच्छिम जाएंगे, इन्हें गिरफ़्तार कर लो। ईसा गवर्नर ने उबैदुल्लाह के क़ाफ़िले को गिरफ़्तार कर लिया, मगर वह धोखा खा गया और यह यक़ीन करके कि यह शख़्स उबैदुल्लाह नहीं है, उसको छोड़ दिया।

उबैदुल्लाह तराबलस पहुंच गया.

अफ़रीक़ा के हाकिम ज़ियादतुल्लाह के पास इस बीच मिस्र से ख़बर पहुंच गयी थी कि उबैदुल्लाह अब्दुल्लाह के पास जा रहा है।

उबैदुल्लाह ने तराबलस से जिस शख़्स के हाथ अपने आने की ख़बर अबू अब्दुल्लाह के पास भिजवायी थी, वह अबू अब्दुल्लाह का भाई अबुल अब्बास था, मय दूसरे साथियों के उबैदुल्लाह को लेने के लिए भेजा गया

अबुल अब्बास रास्ते में क़ैरवान के अन्दर गिरफ़्तार हो गया। उसे जेल भेज दिया गया।

उबैदुल्लाह मैंहदी को जब यह मालूम हुआ तो वह भागता फिरा, लेकिन आखिर कार सजलमासा में उसे भी गिरफ़्तार कर लिया गया। ये दोनों तीन चार साल तक क़ैद की सख्तियां बर्दाश्त करते रहे।

इस बीच अबू अब्दुल्लाह शीई ने अपनी जीतों के सिलसिले को बराबर जारी रखा और २९६ हि० में शहर क़ैरवान को जीत कर अबुल अब्बास को जेलखाने से छुड़ाया।

क़ैरवान में अपने भाई अबुल अब्बास को हाकिम मुक़र्रर करके सजलमासा की तरफ़ बढ़ा। अबुल अब्बास ने उसे भी जीत लिया और उबैदुल्लाह मैंहदी को मय उस के बेटे अबुल क़ासिम के जेलखाने से निकाल घोड़े पर सवार किया। उसे अदब और इज्ज़त के साथ अपने खेमे तक लाया, तख्त पर बिठाया, खुद भी बैअत की और दूसरों ने भी बैअत की।

उबैदुल्लाह मैंहदी

अब उबैदुल्लाह मैंहदी इस नयी हुकूमत का हाकिम था।

उबैदुल्लाह ने तख्त पर बैठते ही यह चाहा कि किसी तरह अबुल अब्बास और अबू अब्दुल्लाह के असर व रसूख को मिटाए। अबू अब्दुल्लाह ने जब देखा कि हमारी बिल्ली हमी को म्याऊं कहती है, तो उस की आंखें खुलीं। उसने कहना शुरू कर दिया कि इमाम मासूम को समझने और पहचानने में धोखा खाया है, यह शख्स इमाम मासूम (मैंहदी) नहीं है।

उबैदुल्लाह को ये बातें मालुम हुईं तो उस ने साज़िशी लोगों को किसी न किसी बहाने क़त्ल कराना शुरू कर दिया। पूरा शहर उबैदुल्लाह का बाग़ी हो गया।

उबैदुल्लाह ने हालात की नज़ाकत का अन्दाज़ा करके कतामा के सब से बड़े सरदार उरूबा बिन यूसुफ़ और उसके भाई इबासा बिन यूसुफ़ को तंहाई में बुला कर बड़ी मुहब्बत व इख्लास की बातें कीं और हुक्म दिया कि अबू अब्दुल्लाह और उस के भाई अबुल अब्बास को क़त्ल कर दो। आखिरकार १५ जुमादल आखर २९८ हि० को ये दोनों भाई क़त्ल कर दिए गये।

इस वाक़िए के बाद अबू अब्दुल्लाह के हामियों ने बग़ावत व सरकशी पर कमर बांधी और एक नव-जवान को अपना अमीर बना कर उस को

मेंहदी का लक़ब दिया और उसके नबी होने का एलान कर दिया। उबैदुल्लाह ने अपने बेटे अबुल क़ासिम को सारी फ़ौज देकर इसका सर कुचलने को भेजा। अबुल क़ासिम ने उस नव-जवान मेंहदी और नबी को पकड़ कर क़त्ल कर दिया।

सन् ३०१ हि० में अबुल क़ासिम ने जंगी जहाज़ जुटा कर और एक भारी फ़ौज लेकर मिस्र व स्कन्दरिया पर चढ़ाई की और उस पर क़ब्ज़ा कर लिया।

यह खबर जब बग़दाद में खलीफ़ा मुक़्तदिर अब्बासी को पहुंची तो उसने मुबुक्तगीन और मूनिस खुलूस को फ़ौज के साथ उस तरफ़ रवाना किया। इन दोनों में कई बार लड़ाई होने के बाद अबुल क़ासिम को मिस्र की हदों से बाहर निकाल दिया।

उबैदुल्लाह मेंहदी, चूंकि शीआ इस्माईलिया और इमाम मेंहदी होने का दावेदार था, इस लिए उसको हमेशा खतरा रहता था कि मेरे खिलाफ़ बग़ावत न फूट पड़े क्योंकि अफ़रीक़ीया व क़ैरवान में तमाम आदमी उस के अक़ीदा के न थे, इस लिए उसने मुनासिब समझा कि किसी मुनासिब मौक़े पर एक शहर आबाद करके अपनी राजधानी बनाए। चुनांचे सन् ३०३ हि० में उस ने बरकसूरा के क़रीब एक जज़ीरे को पसन्द करके वहां एक शहर की बुनियाद रखी और उस का नाम मेंहदिया तज्वीज़ किया। ३०६ हि० में यह शहर मुकम्मल हुआ। इसी साल उसने कश्तियां बनाने का एक कारखाना जारी किया और पहले ही साल नौ सौ कश्तियां तैयार करा कर एक ज़बर्दस्त जंगी बेड़ा तैयार किया। फिर मिस्र पर हमला किया, लेकिन इस बार भी हार हुई।

अगले साल यानी ३०८ हि० में उबैदुल्लाह मेंहदी ने मुज़ाला बिन हबूस को मराक़श पर हमला करने के लिए पच्छिम की तरफ़ रवाना किया। यह्या बिन इद्रीस से बहुत सी लड़ाईयां हुईं, आखिर यह्या ने उबैदुल्लाह मेंहदी की इताअत क़ुबूल कर ली थी।

३०९ हि० में मराक़श के दूसरे सूबे भी उबैदी हुकूमत में शामिल कर लिए गये और इद्रीसी हुकूमत का नाम व निशान मिट गया।

इस लड़ाई में कुछ सालों बाद बरबरियों के एक क़बीले के हाथों मुज़ाला मारा गया और उसके मारे जाते ही तमाम मुल्क मराक़श में बग़ावत हो गयी और वह उबैदियों के क़ब्ज़े से निकल गया।

माह रबीउल अव्वल सन् ३२२ हि० में उबैदुल्लाह मेंहदी अपनी

हुकूमत के चौबीस साल पूरे कर के फ़ौत हुआ । उस की जगह उसका बेटा अबुल क़ासिम मुहम्मद मेहदिया में तख्त पर बैठा । अबुल क़ासिम ने अपना लक़ब क़ाइम बिअम्रिल्लाह रखा । यही अबुल क़ासिम अबुल क़ासिम नज़्ज़ार के नाम से भी मशहूर है ।

अबुल क़ासिम नज़्ज़ार

३२४ हि० तक अबुल क़ासिम की हुकूमत मराकश पर क़ायम हो गयी थी । इस के बाद अबुल क़ासिम ने इब्ने इस्हाक़ नामी एक सरदार को जबरदस्त समुद्री फ़ौज और जंगी बेड़ा देकर रूम सागर के उत्तर तटों पर क़ब्ज़ा करने के लिए रवाना किया । जेनेवा फ़त्ह कर लिया और मिस्र के स्कन्दरिया पर भी क़ब्ज़ा कर लिया ।

इसके बाद अबू यज़ीद के हंगामों से उसे मोहलत न मिली कि किसी दूसरी तरफ़ तवज्जोह देता । अबूयज़ीद का बाप एक व्यापारी था, सूडान जाया करता था, वहीं अबू यज़ीद पैदा हुआ । सूडान के लोग शीयों के कट्टर मुख़ालिफ़ थे, अबू यज़ीद भी शीयों का मुख़ालिफ़ था ।

यही वह ज़माना था कि अबू अब्दुल्लाह शीई ने मुल्क बरबर में आ कर अपना काम शुरू किया था ।

जब उबैदुल्लाह मेंहदी का इंतिक़ाल हुआ और मुल्क में कुछ हलचल मची तो अबू यज़ीद ने अपने ख्यालों के फैलाने में ज्यादा मुस्तैदी और ताक़त से काम लेना शुरू किया और अपने आप को शेख़ुल मोमिनीन के लक़ब से याद करने लगा । लोग कसरत से आ-आ कर मुरीद होने लगे । उसने अपने मुरीद की एक फ़ौज तैयार करली । लोग उसकी इताअत क़ुबूल करने लगे और अबुल क़ासिम के क़ब्ज़े से एक के बाद दूसरा शहर निकलता चला गया अबुल क़ासिम का हर सरदार उससे हार खाता गया । नतीजा यह हुआ कि सफ़र ३३३ हि० अबू यज़ीद की फ़ौजों ने क़ेरवान पर हमला कर दिया और अबुल क़ासिम मेहदिया में क़िला बंद होने पर मज्बूर हुआ । अब यज़ीद ने तमाम मुल्क अफ़रीक़ा में अपनी फ़ौजें फैला दीं और क़त्ल व ग़ारत गरी का बाज़ार गर्म हुआ ।

जुमादल ऊला ३३२ हि० में कतामा वालों को हराकर अबू यज़ीद ने भगा दिया । अबुल क़ासिमने मह्दिया को खूब मज़बूत कर लिया और

वहां रसद का सामान बहुत काफ़ी था। अबू यजीद ने बार-बार मह्दिया का घेराव किया, मगर मह्दिया की फ़त्ह पर क़ुदरत न हासिल हुई।

३३४ हि० में अबू यजीद मजबूर होकर क़ैरवान की तरफ़ पलटा और अबुल क़ासिम की फ़ौज ने पलट कर उसके लश्कर पर छापे मारने शुरू किए।

रबीउल अव्वल ३३४ हि० में अबू यजीद के बेटे अय्यूब ने मह्दिया पर हमला किया और घेर लिया। इसी घेरे में जुमादस्सानी ३३४ हि० में अबुल क़ासिम ने मह्दिया में वफ़ात पायी। यह वह जमाना था कि अबू यजीद ने शहर सोसा का घेराव कर रखा था।

इस्माईल बिन अबुल क़ासिम

इस्माईल बिन अबुल क़ासिम ने अपने बाप की वफ़ात के बाद तख़्त पर बैठ कर अपना लक़ब 'मंसूर' रखा। इस्माईल ने अय्यूब बिन अबू यजीद का घेराव उठवाया, अबू यजीद को हार का मुंह देखना पड़ा। क़ैरवान से भी अबू यजीद को बेदख़ल कर दिया गया।

अबू यजीद ने एक जबरदस्त फ़ौज लेकर क़ैरवान पर हमला किया और ३३५ हि० में उस को हार हुई। फिर उसने फ़ौज जमा की और अबू यजीद को हरा दिया। उसी साल अबू यजीद को बाग़ाया से भी भागना पड़ा। इस्माईल अबू यजीद का पीछा करता हुआ बहुत दूर निकल गया। १० शाबान ३३५ हि० को दोनों की ज़बरदस्त टक्कर हुई, इस लड़ाई में अबू यजीद घायल हुआ और अपने साथियों को छोड़ भाग निकला। इस तरह धीरे-धीरे अबू यजीद का एक-एक इलाक़ा इस्माईल के क़ब्ज़े में चला गया।

मुहर्रम ३३६ हि० को आख़िरी लड़ाई हुई और अबू यजीद गिरफ़्तार कर लिया गया, घायल तो था ही, कुछ ही दिनों के बाद इंतिक़ाल कर गया और इस्माईल ने उस की खाल निकलवा कर उसमें भुस भरवा दिया।

३४० हि० में इस्माईल ने एक जबरदस्त जंगी बेड़ा तैयार करके सिसली के हाकिम हुसैन बिन अली को लिखा कि तुम भी शाही बेड़े के साथ शामिल होने के लिए तैयार रहो, चुनांचे हमला करके इटली देश

का दक्खिनी हिस्सा फ़त्ह कर लिया गया। इसी बीच इस्माईल रम-ज़ान ३४१ हि० में फ़ौत हो चुका था।

मुइज़्ज़ बिन इस्माईल

इस्माईल के बाद उसका बेटा मुइज्ज़ तख़्त पर बैठा। ३४२ हि० में मुइज्ज़ ने हुसैन बिन अली गवर्नर सिसली के पास हुक्म भेजा कि अपने जंगी जहाज़ों के बेड़े को लेकर उन्दुलुस के साहिल मरीआ पर हमला करो। चुनांचे हुसैन ने इस हुक्म को पूरा किया और वहां से ग़नीमत का माल और क़ैदी लेकर वापस हुआ।

३४७ हि० के आख़िरी दिनों में मुइज्ज़ के पास ख़बर पहुंची कि याली बिन मुहम्मद ने उन्दुलुस की उमवी हुकूमत से साज़िश कर ली है और उबैदी हुकूमत के ख़िलाफ़ हो गया है, साथ ही सूबा फ़ास और सूबा सजलमासा के गवर्नरों ने भी आज़ादी का एलान कर दिया। आख़िर ख़ूरेज़ लड़ाई के बाद सन् ३४८ हि० में याली गिरफ़्तार हुआ और फ़ास व सजलमासा पर भी क़ब्ज़ा हासिल कर लिया गया।

३४९ हि० में मुइज्ज़ ने अपने ख़ादिमों क़ैसर और मुज़फ़्फ़र को, जो मुइज्ज़ के बहुत ही मुंह चढ़े हुए थे, क़त्ल किया।

३५४ हि० में क़ैसर क़ुस्तुन्तुन्या और मुइज्ज़ की समुद्री फ़ौजों में लड़ाई हुई। ईसाई फ़ौज बुरी तरह हार गयी और मुसलमानों की फ़ौज ने ईसाइयों के कई शहरों पर क़ब्ज़ा करके और अपनी फ़ौजें वहां उतार कर क़ैसर क़ुस्तुन्तुन्या को मजबूर किया कि वह मुइज्ज़ को जिज़या व टैक्स अदा करे।

इसके कुछ दिनों बाद मुइज्ज़ को ख़बर लगी कि क़ाफ़ूर इख़्शीदी मिस्र के हाकिम की वफ़ात पर मिस्र के अन्दर बद-अम्नी और फ़ित्ना व फ़साद बरपा हो गया है और ख़लीफ़ा बग़दाद अज़्दुद्दौला और बख़्तियार बिन मुइज्ज़ुद्दौला की आपसी लड़ाइयों की वजह से मिस्र की तरफ़ मुतवज्जह नहीं हो सकता, चुनांचे मुइज्ज़ ने अपने वज़ीर और मुंशी जौहर को एक भारी फ़ौज देकर मिस्र पर हमला करने का हुक्म दे दिया। इख़्शीदी फ़ौज जम न सकी और नतीजा यह हुआ कि १५ शाबान ३५९ हि० को जौहर ने मिस्र में दाख़िल होकर जामा मस्जिद मिस्र में मुइज्ज़ के नाम

का खुत्बा पढ़ा।

अब मुइज्ज के पास जौहर का खत पहुंचा कि तमाम मुल्क मिस्र उबैदी हुकूमत में शामिल हो गया है और आप को खुद यहां तशरीफ़ लाना चाहिए।

फिर मुइज्ज ने क़ाहिरा को अपने पूरे इलाक़े की राजधानी बना ली।

मुइज्ज ने क़ाहिरा पहुंचते ही क़रामता के बादशाह आसम को जो उस ज़माने में राजधानी एह्सा में ठहरा हुआ था, एक खत लिखा। इस खत में लिखा कि हमारे मुक़ाबले और मुखालफ़त का ख्याल बिल्कुल छोड़ दो। आसम ने जवाब में मुक़ाबले की बात कही। आसम और मुइज्ज का मुक़ाबला हुआ, मुइज्ज को फ़त्ह हासिल हुई।

इस फ़त्ह के बाद मुइज्ज ने क़रामता के क़ैदियों को क़त्ल करा दिया और दमिश्क़ की हुकूमत पर ज़ालिम बिन मौहब अक़ीली को नाम-ज़द करके उस तरफ़ रवाना किया। ज़ालिम ने दमिश्क़ पहुंच कर क़रा-मता के हाकिम को गिरफ़्तार करके मिस्र भेज दिया, जहां वह जेलखाने में क़ैद कर दिया गया।

३६४ हि० तक दमिश्क़ पर उबैदी हुकूमत का झंडा लहराया। इसी साल हज के दिनों में मक्का व मदीना के लोगों ने भी मजबूर होकर मुइज्ज की हुकूमत तस्लीम की और उस के नाम का खुत्बा वहां पढ़ा गया। दमिश्क़ वाले उबैदियों की हुकूमत से खुश न थे, चुनांचे ३६४ हि० के आखिर और ३६५ हि० के शुरू में इफ़्तगीन ने जो इज़्ज़ु-द्दौला बिन बोया के नौकरों में से था, दमिश्क़ पर क़ब्ज़ा करके मुइज्ज के हाकिम को वहां से निकाल दिया। दमिश्क़ वाले सब इफ़्तगीन के आने से बहुत खुश हुए। मुइज्ज को जब यह खबर पहुंची तो उसने इफ़्तगीन को लिखा कि तुम दमिश्क़ पर हुकूमत करते रहो और मैं तुम्हारे पास सनदे इमारत भेजे देता हूं, मेरे नाम का खुत्बा पढ़ो और बग़दाद के खलीफ़ा से कोई ताल्लुक़ न रखो। इफ़्तगीन ने मुइज्ज की बात नहीं मानी और दमिश्क़ में खलीफ़ा बग़दाद के नाम का खुत्बा पहले की तरह जारी रहा और मुइज्ज की हुकूमत की तमाम निशानियों को मिटा दिया गया। मुइज्ज यह सुनकर सख्त गुस्में में आया और खुद फ़ौज लेकर क़ाहिरा से दमिश्क़ की तरफ़ रवाना हुआ।

अभी बिलबीस नामी जगह पर पहुंचा था कि १५ रबीउल अव्वल ३६५ हि० को उसके लिए मौत का पैग़ाम आ पहुंचा और ४५ साल ६

महीने की उम्र में अपनी हुकूमत के २३ वें साल फ़ौत हुआ। यह उबैदियों में सबसे पहला बादशाह हुआ, जिसने मिस्र जीत लिया और क़ाहिरा को राजधानी बनाया। यह महदिया नामी जगह में ११ रमज़ान ३१६ हि० को पैदा हुआ था, इसके बाद उसका बेटा नज़्ज़ार तख़्त पर बैठा और 'अज़ीज़ बिल्लाह' का लक़ब अख़्तियार किया।

अज़ीज़ बिन उबैदी

मुइज्ज़ की वफ़ात का हाल सुन कर इफ़्तगीन ने फ़ौज तैयार करके मिस्र की हदों पर चढ़ाई की और सैदा का घेराव कर लिया और जीत हासिल कर ली, मक्का भी जीत लिया, तबरीया पर चढ़ाई की, उस पर क़ब्ज़ा कर लिया। इसके बाद दमिश्क़ की तरफ़ रवाना हुआ। अज़ीज़ की फ़ौज हार गयी।

दोबारा ३६७ हि० में फिर रमल नामी मोर्चे जमे और दोनों फ़ौजें टकरायीं। क़रीब था कि अज़ीज़ की फ़ौज को हार का मुंह देखना पड़ता कि वह संभल गया, जम कर मुक़ाबला किया। अज़ीज़ जीत गया। जीतने के बाद उस ने एलान कराया कि जो शख़्स इफ़्तगीन को गिरफ़्तार कर के लाएगा उस को एक लाख दीनार दिए जाएंगे। इस एलान का नतीजा यह हुआ कि एक शख़्स ने धोखे से इफ़्तगीन को गिरफ़्तार करा कर एक लाख दीनार वसूल कर लिए। अज़ीज़ इफ़्तगीन को लिए हुए क़ाहिरा चला गया।

इफ़्तगीन की सलाहियत और क़ाबिलियत से अज़ीज़ बहुत मुतास्सिर था, उसने उसे वज़ीर आज़म बना दिया। पिछले वज़ीर आज़म से यह देखा न गया, उसने उसे ज़हर देकर मार डाला।

रूमी फ़ौजों के दमिश्क़ की तरफ़ हरकत करने का हाल सुन कर अज़ीज़ ने ३८५ हि० में ख़ुद क़ाहिरा से मय फ़ौज दमिश्क़ की तरफ़ कूच किया और रूमियों की तरफ़ जिहाद की मुनादी करायी, मगर बल बीस नामी जगह पर पहुंच कर बीमार हो गया और ३८६ हि० में इन्तिक़ाल हुआ।

उस की जगह उसका बेटा अबू मंसूर तख़्त पर बैठा और हाकिम बिअम्रिल्लाह का लक़ब अख़्तियार किया।

मंसूर हाकिम बिन अज़ीज़ उबैदी

मंसूर ने तख़्त पर बैठते ही राज-काज हसन बिन अम्मार कत्तामी के हाथ में दे दिया। क़त्तामियों ने ताक़त पाकर लोगों को बहुत परेशान किया। आपसी झगड़े शुरू हो गये और मिस्र व शाम व हिजाज़ व अफ़रीक़ीया में बद-अम्नी की ख़ूब गर्म बाज़ारी रही।

शव्वाल ५११ हि० में उस का इंतिक़ाल हो गया।

हाकिम २३ रबीउल अव्वल ३७५ हि० को पैदा हुआ था। ३६ साल की उम्र में इंतिक़ाल हुआ। उस के बाद सरदारों ने हाकिम के नव-उम्र और ना बालिग़ बेटे अली को तख़्त पर बिठाया। अली का लक़ब ज़ाहिरुद्दीन लिल्लाह तज्वीज़ किया और राज-काज के काम ज़ाहिर की फूफी यानी हाकिम की बहन के हाथ में आए।

ज़ाहिर बिन हाकिम उबैदी

चार बर्ष के बाद ज़ाहिर की फूफी मर गयी और ज़ाहिर सरदारों की मदद से हुकूमत करने लगा।

४२० हि० में शाम व दमिश्क़ पर सालेह बिन मर्दास ने क़ब्ज़ा कर के उबैदी हुकूमत को वहां से हटाया, लेकिन ज़ाहिर ने दोबारा चढ़ाई कर उसे जीत तो लिया लेकिन बग़ावतों का सिलसिला थमा नहीं। यहां तक कि २५ शाबान ४२७ हि० को ज़ाहिर ने वफ़ात पायी। उस की जगह उसका बेटा अबू तमीम साद तख़्त पर बैठा। उस का लक़ब मुस्तंसिर रखा गया था। ज़ाहिर के ज़माने में अबुल क़ासिम अली बिन अहमद वज़ीर था। अब मुस्तन्सिर के तख़्त पर बैठने पर अबुल क़ासिम ने राज काज भी संभाल लिया।

मुस्तन्सिर बिन ज़ाहिर उबैदी

मुस्तन्सिर के दौर में ४३३ हि० में शाम व दमिश्क़ पर अरब क़बीलों ने क़ब्ज़ा कर लिया और यह मुल्क उबैदी हुकूमत से निकल गया। मिस्र में भी खाना जंगी चल रही थी।

मुस्तन्सिर की मां अपने बेटे से जो चाहती थी, हुक्म करा लेती थी, इस तरह उसका असर व इख्तिदार बहुत तरक़्क़ी कर गया था।

फ़ौज में तीन ज़बर्दस्त ताक़तें काम कर रही थीं—

एक तो ग़ुलामों के असर वाली फ़ौज, ये लोग तायदाद में ज़्यादा थे, दूसरे कत्तामी और बरबरी लोग थे, उन की तायदाद कम थी। तीसरा गिरोह तुर्कों का था। ये तायदाद में ग़ुलामों से कम थे मगर लड़ने में यही माहिर थे।

इत्तिफ़ाक़ से एक ग़ुलाम नासिरुद्दौला बिन हमदान सूडानी तरक़्क़ी कर के सिपह सालार हो गया और तुर्कों का लीडर और सरदार हो गया।

मिस्र की खानाजंगी किसी और की नहीं आपसी फ़ौजों की थी। आखिर में नासिरुद्दौला ग़ालिब हुआ और उस ने नासिरुद्दौला को अपने हाथ में लेकर अपनी मंशा के मुताबिक़ राज-काज करने लगा।

मुस्तन्सिर ने अपनी पहली हालत को तब्दील करने के लिए अपने ग़ुलाम बद्र जमाली अरमनी को इशारा किया। बद्र जमाली ने अरमनी लोगों की भरती जारी कर दी और ज़बरदस्त अरमनी फ़ौज लेकर दरिया के रास्ते से मिस्र में दाखिल हुआ, मुस्तन्सिर की खिदमत में हाज़िर हुआ, मुस्तन्सिर ने उसको अपना वज़ीर बना लिया।

इसी बीच नासिरुद्दौला को लोगों ने धोखे से क़त्ल कर दिया। अब अरमनी तुर्कों का सरदार बन गया। इस ने मुल्क की इज़्ज़त बहाल करने और अम्न क़ायम करने की बहुत कोशिश की।

४८४ हि० में सिसली जज़ीरे को ईसाइयों ने मुसलमानों के क़ब्ज़े से निकाल लिया। रबीउल अव्वल ४८७ हि० को बद्र जमीली ने अस्सी साल की उम्र में वफ़ात पायी।

मुस्तन्सिर के तीन बेटे—अहमद, नज़्ज़ार अबुल क़ासिम थे। मुस्तन्सिर ने नज़्ज़ार को अपना वली अह्दद बनाया था

मुस्तन्सिर ने बद्र जमाली की वफ़ात के बाद उस के बेटे मुहम्मद मलिक को वज़ीर का ओहदा दे रखा था। मालिक मुहम्मद और नज्ज़ार के दर्मियान नाराज़ी थी, इस लिए मुस्तन्सिर की वफ़ात के बाद मुहम्मद मलिक ने मुस्तंसिर की बहन को इस बात पर रज़ामंद कर लिया कि तख़्त पर अबुल क़ासिम को बिठाया जाए, चुनांचे लोगों ने अबुल क़ासिम के हाथ पर हुकूमत की बैअत की और मुस्ताली बिल्लाह के लक़ब से उस को तख़्त पर बिठाया।

अबुल क़ासिम मुस्ताली उबैदी

मुस्ताली के तख़्त पर बैठने के कुछ दिनों बाद नज्ज़ार क़ाहिरा से हो कर स्कन्दरिया चला गया। स्कन्दरिया में बद्र जमाली का ग़ुलाम नसीरुद्दौला इफ़्तगीन वहां का हाकिम और गवर्नर था। वह यह सुन कर कि अबुल क़ासिम तख़्त पर बैठा है, बाग़ी हो गया और नज्ज़ार की हक़दारे हुकूमत का एलान कर दिया।

नसीरुद्दौला ने स्कन्दरिया में नज्ज़ार को तख़्त पर बिठा कर उसकी बैअत की और मुस्तफ़ा लिदी निल्लाह का लक़ब मुक़र्रर किया।

मुहम्मद मलिक फ़ौज लेकर नज्ज़ार का सर कुचलने के लिए आगे बढ़ा और जा कर स्कन्दरिया को घेर लिया और उसे जीत लिया। नज्ज़ार को गिरफ़्तार कर के क़ाहिरा भेज दिया। मुस्ताली ने नज्ज़ार को क़त्ल कर दिया।

इस के बाद नासिरुद्दौला इफ़्तगीन को लिए हुए क़ाहिरा पहुंचा, मुस्ताली ने इफ़्तगीन को भी क़त्ल करा दिया।

४९० हि० में यूरोप के ईसाइयों ने, जिन में बड़े-बड़े बादशाह भी शामिल थे, एक होकर बैतुलमक़्दिस को मुसलमानों के क़ब्ज़े से निकालने के लिए हमला किया।

अभी ईसाइयों ने मक्के का घेराव कर रखा था और शाम भी तमाम मुसलमानों की तवज्जोह इस तरफ़ थी कि मुस्ताली के वज़ीर मुहम्मद मालिक ने मिस्री फ़ौज लेकर बैतुलमक़्दिस पर हमला कर दिया। शीयों का यह हमला ईसाइयों के लिए बेहद मुफ़ीद साबित हुआ और शाम की इस्लामी फ़ौज एक ही वक़्त में इन दोनों ज़बरदस्त हमलावरों

का मुक़ाबला न कर सकी।

बैतुल मक़्दिस पर मिस्र के वज़ीर का क़ब्ज़ा हो गया लेकिन मिस्रियों को देर तक बैतुलमक़्दिस पर क़ब्ज़ा क़ायम रखना नसीब न हुआ

ईसाइयों ने २३ शाबान ४९३ हि० को चालीस दिन के घेराव के बाद बैतुलमक़्दिस को फ़त्ह कर लिया। शहर में घुस कर ईसाई फ़त्हमंदों ने मुसलमानों का क़त्ले आम शुरू किया। इस तरह सत्तर हज़ार मुसलमान शहीद हुए, मस्जिदे अक़्सा का तमाम सामान, क़न्दीलें जो चांदी और सोने की थीं, सब लूट लीं, यहां तक कि मुल्क शाम को ईसाइयों ने खाक-स्याह बना डाला।

वज़ीरुस्सलतनत मिस्र ने जिसने मुसलामानों के क़ब्ज़े से बैतुलमिक्दस को लेकर ईसाइयों के हाथ फ़त्ह करा दिया, यह खबर सुन कर मिस्र से चला कि बैतुल मक़्दिस को ईसाइयों से फ़त्ह कर ले। लेकिन ईसाइयों ने उसे ज़बरदस्त हार का मुंह दिखाया और भागते हुओं में किसी को बच कर जाने न दिया।

१५ सफ़र ४९५ हि० को सुलतान ने वफ़ात पायी और उस का बेटा अबू अली, जिस की उम्र पांच साल की थी, तख्त पर बिठाया गया और आमिर बिअह्‌काम मिल्लाह उस का लक़ब मुक़र्रर किया गया।

अबू अली आमिर उबैदी

अबू अली के तख्त पर बैठने के बाद तमाम राज-काज वज़ीरुस्सलतन के हाथ में आ गये।

सन् ५२५ हि० में आमिर उबैदी ने वज़ीरुस्सलतनत के बढ़े हुए इख्तियार को ना-पसन्द करके उसे धोखे से क़त्ल कर दिया और एक दूसरा वज़ीर मुक़र्रर कर के उसको जलालुल इस्लाम का खिताब दिया।

चार साल के बाद जलालुलइस्लामसे भी नाराज़ हुआ और ५१९ हि० में जलालुल इस्लाम उसके भाई मोतमिन और उसके हमदर्द नजीबुद्दौला को भी क़त्ल कर दिया।

आखिर ५२३ हि० में क़रामता या फ़िदाइयों के एक गिरोह ने सवारी के वक़्त हमला कर के आमिर उबैदी को क़त्ल कर दिया। चूंकि उस ने कोई बेटा न छोड़ा, इस लिए उस के चचेरे भाई अब्दुल हमीद ने

तख्त पर बैठ कर अपना लक़ब हाफ़िज़ुद्दीन लिल्लाह रखा। उसके हाथ पर इस शर्त के साथ बैअत की कि अमीर की हामिला बीवी के पेट से अगर लड़का पैदा हुआ तो वह हुकूमत का हक़दार समझा जाएगा।

हाफ़िज़ उबैदी ने तख्त पर बैठते ही क़त्ल का एक सिलसिला क़ायम कर दिया। मुखालफ़त बढ़ने लगी और पूरे मुल्क में बद-अम्नी फैल गयी।

आखिर ५४४ हि० में हाफ़िज़ुद्दीन सत्तर साल की उम्र में फ़ौत हुआ। उस की जगह उस का बेटा अबू मंसूर इस्माईल तख्त पर बैठा और 'ज़ाफ़िरबिल्लाह' अपना लक़ब तज्वीज़ किया।

सन् ५४६ हि० में ज़ाफ़िर को धोखे से क़त्ल कर दिया गया।

उस के बाद फ़ाइज़ बिन ज़ाफ़िर उबैदी को तख्त पर बिठाया, छः महीने की नाम की हुकूमत के बाद फ़ाइज़ उबैदी ने ५५५ हि० में वफ़ात पायी, उस के बाद मुहम्मद अब्दुल्लाह बिन यूसुफ़ बिन हाफ़िज़ उबैदी को तख्त पर बिठा कर उसका लक़ब 'आज़िदुद्दीन लिल्लाह' तज्वीज़ किया।

आज़िद नाम का बादशाह था, लेकिन सच तो यह है कि बादशाही वज़ीरुस्सलतनत सालेह के हाथ में थी। यह बात हुकूमत के सरदारों को बुरी लगती थी, चुनांचे एक सरदार ने मौक़ा पाकर सालेह पर नेज़े का वार किया। वह घायल होकर गिर पड़ा और अपने मकान पर आकर थोड़ी देर के बाद मर गया।

मरने से पहले आज़िद उबैदी को वसीयत कर गया कि मेरे बेटे को वज़ीरुस्सलतनत बनाना। चुनांचे आज़िद ने सालेह के बेटे को वज़ीर बना कर उसे 'आदिल' का खिताब दिया।

५५८ हि० में आदिल भी मारा गया और शाविर वज़ीर बना।

नौ महीने के बाद ज़रग़ाम नामी एक शख्स ने जो महल सरा का दारोग़ा था, ताक़त पाकर शाविर को क़ाहिरा से निकाल दिया और खुद वज़ीर बन बैठा।

शाविर मिस्र से निकल कर शाम की तरफ़ रवाना हुआ

सुलतान नूरुद्दीन महमूद ज़ंगी

शाविर ने शाम में पहुंच कर मलिकुल आदिल नूरुद्दीन महमूद

जंगी के दरबार में हाजिर हो कर मिस्र के तमाम हालात बयान किए, मदद चाही और यह वायदा किया कि अगर मुझ को मिस्र का वजीर बनाया गया तो मैं मिस्र के एक हिस्से पर नूरी हुकूमत का क़ब्जा करा दूंगा।

सुलतान नूरुद्दीन ने अपनी फ़ौज सन् ५५६ में भेज दी। फ़ौज ने क़ाहिरा पर क़ब्जा कर लिया, शाविर फिर वज़ीर बन गया।

शाविर ने बजाए इस के कि इस एहसान का कोई मुआवज़ा देता, नूरी हुकूमत की मुखालफ़त में ईसाइयों से सांठ-गांठ शुरू कर दी। यह देख कर सुलतान नूरुद्दीन ने सन ५६५ हि० में अपनी एक फ़ौज सरदार शेर कोह की निगरानी में फिर भेजदी।

शाविर ने ईसाइयों से मदद तलब की। शेर कोह ने ईसाइयों और मिस्रयों की भारी भरकम फ़ौज को हरा दिया। अब शेर कोह ने स्कन्दरिया भी जीत लिया। शेर कोह ने स्कन्दरिया में अपने भतीजे सलाहुद्दीन नज्मुद्दीन अय्यूब को हाकिम मुक़र्रर किया और आगे बढ़ गया, फिर शाविर से समझौता कर के वह वापस शाम चला आया।

ईसाइयों ने मिस्र में शाविर की मदद के लिए क्या क़दम रखा कि उस के चूसने पर उतर आए। आजिद उबैदी, मिस्र के बादशाह को यह रंग देख कर बड़ी तक्लीफ़ हुई। उसने एक क़ासिद नूरुद्दीन महमूद के पास भेजा कि वह ईसाइयों को उखाड़ कर फेंकने में हमारी मदद करें।

सुलतान नूरुद्दीन ने फिर शेर कोह और उस के भतीचे सलाहुद्दीन को आज़िद की मदद के लिए भेज दिया उस ने शाविर को क़त्ल कर दिया।

आज़िद ने शेर कोह को वज़ीर का ओह्दा देकर उसे 'अमीरुलजुयूश और मंसूर का खिताब दिया।

कुछ ही महीनों के बाद ५६५ हि० में शेर कोह की वफ़ात हो गयी।

सलाहुद्दीन अय्यूबी

आज़िद ने उस के भतीजे सलाहुद्दीन को वज़ीरुस्सल्तनत बनाया।

मिस्र से ईसाइयों के भगाये जाने से उन में बदले की भावना जागी। पूरे यूरोप के ईसाइयों ने जिहाद का बिगुल बजाया और ५६५ हि० दर्मयान

को घेर लिया, लेकिन सलाहुद्दीन अय्यूबी की हिम्मत और बहादुरी को देख कर उन को अपना घेरा उठाना पड़ा ।

धीरे-धीरे सलाहुद्दीन अय्यूबी मिस्र में पूरी ताक़त पकड़ गया। सन् ५६७ हि० में आज़िद उबैदी ने वफ़ात पायी, तो सलाहुद्दीन ने पूरे मिस्र का ताल्लुक बग़दाद के खलीफ़ा से जोड़ दिया, खुत्बे में खलीफ़ा का नाम पढ़ा जाने लगा। इस तरह उबैदी हुकूमत का खात्मा हुआ ।

उबैदी हुकूमत पर एक नज़र

उबैदी हुकूमत दो सौ सत्तर साल तक क़ायम रही। शुरू में तो उबैदियों की हुकूमत अफ़रीक़ीया में क़ायम हुई, फिर मिस्र पर क़ब्ज़ा कर के उन्होंने क़ाहिरा को राजधानी बनाया।

मराक़श की इद्रीसी हुकूमत को भी आम तौर पर अलवियों और शीओं की हुकूमत समझते हैं, मगर सच तो यह कि इद्रीसी हुकूमत नस्ली एतबार से बरबरी थी, इस लिए आधी शीया या नाम की शीया हुकूमत थी, हां, उबैदियों की हुकूमत काफ़ी शीया हुकूमत थी, लेकिन नस्ल के एतबार से इसे अलवी समझनी चाहिए। उबैदी आम तौर से इस्माईली शीया थे, इन्हीं को बरतानिया कहते हैं। इन्हीं की एक शाख फ़ारस की वह हुकूमत थी, जो हसन बिन सबाह ने क़ायम की थी।

उबैदियों की हुकूमत में अल्लाह के बहुत से नेक बंदे क़त्ल हुए। उबैदियों से इस्लाम को कोई नफ़ा नहीं पहुंचा और उनका कोई जंगी, इल्मी, अख़्लाक़ी कारनामा ऐसा नहीं जिस पर फ़ख्र किया जा सके।

———

उस्मानी खिलाफ़त

यह बात पहले आ चुकी है कि तुर्कों के इन ग़ारतगरी फैलाने वाले क़बीलों ने जो ग़ज़ के तुर्क गज़ान के नाम से मशहूर हैं, खुरासान व ईरानमें दाखिल हो कर सलजूक़ी हुकूमत की साख को खत्म कर दिया था। इन तुर्कों का यह मुल्क चीन के सूबा मंचूरिया से लेकर मराक़श तक तारीखों में मिलता है। उन्होंने सुलतान मंसूर सलजूक़ी को गिरफ़्तार कर के बहुत कुछ अपनी ग़ारतगरी का रौब अपने लोगों के दिलों में बिठा दिया था, मगर जब चंगेजखां ने बग़ावत की तो बहुत कुछ उसका जोर घट चुका, रहा-सहा रौब चंगेज़ी क़त्ल व खून के आगे मिट गया और ये बिखर कर रह गये। अक्सर खुरासान व ईरान और दूसरे मुल्कों की हरी-भरी चरा-गाहों और जंगलों में रहने लगे। खुरासान से वे फिर आरमीनिया चले आए।

इस क़बीले के सरदार का नाम सुलैमान खां और उसके साथी सल्जूक़ियों की तरह निहायत सच्चे मुसलमान थे, वहीं सुलतान खां ने अपनी ताक़त को खूब बढ़ाया।

अभी चंगेज खां के मरने में तीन साल बाक़ी थे कि उस ने सन् ६२१ हि० में एक जबरदस्त फ़ौज सलजूक़ियों की उस हुकूमत पर जिसकी राज-धानी क़ूनिया थी, हमलावरी के लिए रवाना की। क़ूनिया में अलाउद्दीन केक़बाद सलजूक़ी हाकिम था। यह सलजूक़ी हुकूमत हमेशा ईसाइयों से टकराती रहती थी और इस्लाम की हिफ़ाजत और उस के फैलाव की कोशिश करती रहती थी, जबकि चंगेज खां की फ़ौज ग़ैर-मुस्लिम और इस्लाम दुश्मन थी सुलतान खां ने अलाउद्दीन केक़बाद की मदद पहुंचाने और इस लड़ाई में शरीक हो कर शहीद होने का बेहतरीन मौक़ा समझ कर अपने क़बीले को कूच की तैयारी का हुक्म दे दिया।

अपनी फ़ौज का एक दस्ता उसने अपने बेटे की सरदारी में पहले भेज दिया। यह दस्ता उस वक़्त पहुंचा जब कि चंगेज़ी मुग़ल फ़ौज बस जीतने ही वाली थी और केक़बाद ने समझ लिया था कि अब उसे हारना है और हलाक हो जाना है।

सुलैमान खां के बेटे अरतुग़रल खां ने मुग़लों पर धावा बोल दिया। मुग़ल इस हमले की ताब न ला सके और चंगेजी फ़ौज हार गयी।

अभी अरतुग़रल खां और अलाउद्दीन केक़बाद इस जीत से खुश ही हो रहे थे कि सुलैमान खां भी अपनी फ़ौज लेकर पहुंच गया केक़बाद ने इन बाप-बेटों से खुश हो कर उन को इनाम व इकराम दिए। अरतुग़रल को अंगूरा के क़रीब जागीर दी और सुलैमान खां को अपनी फ़ौज का सिपहसालार बनाया।

कुछ दिनों के बाद अरतुग़रल ने रूमियों की एक फ़ौज को हरा कर अपनी जागीर को रूमी इलाक़े की तरफ़ फैला दिया।

कुछ ही दिन और गुजरे होंगे कि सुलैमान खां फ़रात नदी में डूब कर मर गया।

६३४ हि० में अलाउद्दीन केक़बाद का भी इंतिक़ाल हो गया और उस की जगह उसका बेटा ग़यासुद्दीन केखुसरो क़ोनिया में तख्त पर बैठा। केखुसरों ने मुग़लों के हमलों से तंग आ कर उस का मालगुजार बनना मंजूर कर लिया।

इस का असर अरतुग़रल की बढ़ी फैली हुकूमत पर कुछ नहीं पड़ा। वह अब एक आजाद बादशाह बन गया था।

सन् ६५६ हि० में जंगेज खां के पोते हालाकू खां ने बग़दाद की अब्बासी खिलाफ़त का चिराग़ गुल कर लिया।

६५७ हि० में अरतुग़रल, अंगूरा के जागीरदार के घर एक बेटा पैदा हुआ, जिसका नाम उस्मान खां रखा गया। यही वह उस्मान खां है, जिस के नाम से तुर्कों के बादशाह को उस्मानी बादशाह कहा गया है।

६८७ हि० में, जबकि उस्मान की उम्र तीस साल थी, अरतुग़रल ने वफ़ात पायी और क़ोनिया के बादशाह ने अरतुग़रल का तमाम इलाक़ा उस्मान खां के नाम कर के उसे सनदे हुकूमत भेजदी। उस्मान खां की क़ाबिलियतों को देख कर उसी साल ग़यासुद्दीन केखुसरो ने उस्मान खां को अपनी फ़ौज का सिपहसालर बना कर अपनी बेटी की शादी उस्मान खां से करदी। अब उस्मान खां शहर क़ूनिया में रहने लगा और बहुत जल्द वजीर आजम बन गया और ग़यासुद्दीन केखुसरो के बजाए उस्मानखां का नाम खुत्बों में आने लगा।

उस्मान खां

सन् ६६६ हि० में ग़यासुद्दीन केख़ुसरो मुग़लों के एक हंगामे में मारा गया। उस के कोई बेटा न था, सिर्फ़ एक लड़की थी, जो उस्मान खां के निकाह में थी। इस लिए उस्मान खां को ही तख़्त पर बिठाया गया। इस तरह इस्‌राईल बिन सलजूक़ की औलाद में जो ४७० हि० में हुकूमत क़ायम हुई थी, वह ६६६ हि० में ख़त्म हो कर उसकी जगह उस्मानी हुकूमत क़ायम हुई। इस्‌राईल बिन सलजूक़ वही शख़्स था, जिस को सुलतान मुहम्मद ग़ज़नवी के हुक्म से सात बरस तक हिन्दुस्तान के क़िला कालिंजर में क़ैद रहना पड़ा था।

उस्मान खां एक दीनदार शख़्स था, साथ ही वह बहादुर शख़्स था, इसी लिए सभी लोग उस से बहुत मुहब्बत करते थे।

उस्मान खां ने सबसे पहले रूमियों से शहर क़रा हिसार जीत लिया और उसे अपनी राजधानी बनायी, इस के बाद तो ईसाइयों को हराते चले जाना उसका मुक़द्दर बन गया।

ईसाइयों के बादशाह क़ैसरे क़ुस्तुन्तुन्या ने जब देखा कि उस्मान खां की बाढ़ बढ़ती चली आ रही है तो उस ने मुग़लों से दोस्ती करके उन्हें उकसाया कि वे पूरब से उस्मानी हुकूमत पर हमलाआवर हों, ताकि उस्मानियों का मुंह मुग़लों की तरफ़ फिरे। चुनांचे मुग़लों ने हमले शुरू कर दिए। उस्मान खां ने मुग़लों पर अपने बेटे उर खां को भेजा दिया और ख़ुद ईसाइयों की तरफ़ पूरी ताक़त के साथ बढ़ा।

पहले तो उर खां ने मुग़लों को पीछे धकेलना शुरू कर दिया, जब उन्हों ने थक कर हार मान ली तो उर खां भी बाप से मिल गया और बाप-बेटों नें ईसाइयों को मार-मार पीछे हटाना और भगाना शुरू कर दिया।

बरोसा एशियाए कोचक का एक मशहूर शहर था, तो जब यह जीत लिया गया तो उस्मान खां बीमार पड़ा और अपने सरदारों को हुक्म दिया कि अगर फ़ौत हो गया तो तुम मेरी लाश को बरोसा ही में दफ़्न करना और इसी शहर को राजधानी बनाना। उस्मान खां का इंति-

क़ाल वहीं हो गया और उसकी वसीयत के मुताबिक़ उस का मक़बरा वहीं बनाया गया। यह वाक़िया सन् ७२७ हि० का है।

उस्मान खां ६९ साल और कुछ महीने की उम्र में २७ साल की हुकूमत के बाद फ़ौत हुआ। उसकी नेकी और दुनिया से बे-ताल्लुक़ी का अन्दाज़ा शायद इस तरह हो सके कि मरते वक़्त उस्मान खां की ज़ाती मिल्कियत में ज़िरह, तलवार और पटके के सिवा और कोई चीज़ न थी। यही वह तलवार है, जो हर उस्मानी सुलतान के तख़्त पर बैठते वक़्त उसकी कमर से बांधी जाती रही है।

उर ख़ां

उस्मान खां का बड़ा बेटा अलाउद्दीन था और छोटा उर खां था। अलाउद्दीन अगरचे इल्म व फ़ज़्ल में बहुत बड़ा था, मगर उर खां के फ़ौजी और जंगी कारनामे सबसे बड़ी सिफ़ारिश बने कि उस्मान खां ने उर खां को अपना जानशीं तज्वीज़ किया। उस्मान खां के इन्तिक़ाल के बाद उर खां तख़्त पर बैठा और उसने अलाउद्दीन खां को अपना वज़ीरे आज़म बनाकर उसे भी शर्फ़ बख़्शा।

सुलतान उर खां ने तख़्तनशीं होते ही एक साल के अन्दर तमाम एशियाए कोचक फ़त्ह करके दर्रा दानियाल के साहिल तक अपनी हुकूमत को फैला दिया। उस वक़्त काफ़ी ईसाइयों ने इस्लाम क़ुबूल किया। ये इस्लाम के सच्चे-पक्के ख़ादिम थे और इंतिहाई वफ़ादार और बहादुर सिपाही भी। इनकी एक फ़ौज बनायी गयी, जिसका नाम यंग चरी फ़ौज रखा गया।

इस यंगचरी फ़ौज के अलावा असल फ़ौज अपनी जगह। इस फ़ौज में भी अलाउद्दीन वज़ीर ने बहुत सुधार किए। फ़ौज की वर्दियां मुक़र्रर कीं। उनको तायदाद के एतबार से मुख़्तलिफ़ हिस्सों में तक़्सीम करके क़ानून का पाबंद बनाया। सदी, पांच सदी, हज़ारसदी वग़ैरह सरदार मुक़र्रर किए प्यादा और सवारों की अलग-अलग फ़ौजें बनायीं। फ़ौजदारी और अदालतों की कचहरियां शहरों और क़स्बों में क़ायम कीं। पुलिस और म्युनिसिपैलिटी के मुहकमों की तरफ़ भी उसने ख़ास तवज्जोह दी। मुल्क के ऐसे क़बीलों को जो आवारागर्दी व लूट-मार के शौक़ीन थे, वज़ीर

अलाउद्दीन ने उसे काम पर लगा दिया, जो उनके लिए दिलचस्प काम था, यानी उसने उनमें भी एक निज़ाम पैदा करके उनकी फ़ौज और पलटनें बना दीं, जिनका काम यह था कि जिस मुल्क पर उस्मानी हुकूमत की फ़ौजें हमलावर हों, ये पलटनें लड़ाई के मैदान के आस-पास और दुश्मन के मुल्क में फैल कर ग़ारतगरी का सिलसिला जारी करके दुश्मन पर रौब डालें और उनमें डर पैदा करें।

वज़ीरे आज़म अलाउद्दीन ने तामीरी कामों की तरफ़ ख़ास तवज्जोह की। जगह-जगह शहरों, क़स्बों और गांवों में मस्जिदें, सराएं, मदरसे और अस्पताल तैयार कराए। बड़े-बड़े शहरों में आलीशान शाही महलों, नदियों पर पुल सड़कों पर हिफ़ाज़ती चौकियां बनवायीं, नयी सड़क निकलवायीं ताकि तिजारत और फ़ौजों के आने-जाने में आसानी हो, ग़रज़ यह है कि एशियाए कोचक की आबादी और हरियाली और उस्मानी हुकूमत के क़ियाम और मज़बूती के लिए हर एक मुम्किन तद्बीर को काम में लाया, जिसका नतीजा यह हुआ है कि आज तक यह मुल्क तुर्कों का जाएपनाह बना हुआ है और छः सौ साल गुज़रने के बाद भी इस मुल्क की हालत यह है कि यहां से इस्लाम और तुर्कों को निकाल देने की हिम्मत किसी क़ौम और किसी हुकूमत में नज़र नहीं आती।

७५६ हि० में उर ख़ां का बेटा सुलेमान ख़ां बाज़ के शिकार में घोड़े से गिर कर फ़ौत हुआ। सुलैमान ख़ां बड़ा होनहार, बहादुर और अक़्लमंद शहज़ादा था। उसके फ़ौत होने का उर ख़ां को बहुत सदमा हुआ। इस जानलेवा सदमे को वह बर्दाश्त न कर सका और ७६१ हि० में ३८ साल हुकूमत करने के बाद ७५ साल की उम्र में फ़ौत हुआ।

मुराद ख़ां अव्वल

अपने बड़े बेटे सुलैमान ख़ां की वफ़ात के बाद सुलतान उर ख़ां ने अपने छोटे बेटे मुराद ख़ां को अपना वली अह्द बनाया था, चुनांचे उर ख़ां की वफ़ात के बाद मुराद ख़ां, जिसकी उम्र उस वक़्त चालीस साल की थी, ७६१ हि० में तख़्त पर बैठा।

मुराद ख़ां की ख़्वाहिश यही थी कि यूरोप में अपनी हुकूमत फैलाए,

लेकिन तख़्त पर बैठते ही सलजूक़ी स्टेट की बग़ावत ख़त्म करने में उसको एशियाए कोचक के पूर्वी इलाक़े की तरफ़ मसरूफ़ रहना पड़ा।

इसके बाद सन् ७६८ हि० में अपनी फ़ौज लेकर यूरोप के साहिल पर उतरा और एड्रियानोपुल को फ़त्ह करके अपनी राजधानी बनायी, उस वक़्त यानी ७६२ हि० से कुस्तुन्तुन्या के फ़त्ह होने तक, जो सुलतान मुहम्मद खां सानी के अह्द में हुई, ऐड्रयानोपुल उस्मानी हुकूमत की राजधानी रही।

ईसाइयों ने जब देखा कि तुर्की सुलतान ने अपनी हुकूमत का खूब मज़बूत बनाकर ऐड्रियानोपुल में अपनी राजधानी बना डाली है, तो ७८८ हि० में उन्होंने सुलतान मुराद खां के ख़िलाफ़ यूरोप की तमाम ताक़तों को जमा किया। अगरचे ईसाई तायदाद में ज्यादा थे और मुसलमान उनके मुक़ाबले में पांचवां-छठा हिस्सा, लेकिन ईसाई बुरी तरह हारे और तुर्कों की मातहती क़ूबूल करनी पड़ी।

सन् ७८६ हि० में क़राक़ोलो तुर्कमानों ने एशियाए कोचक के पच्छिमी हिस्से में ज़ोर पकड़ कर सुलतान मुराद खां के ख़िलाफ़ बग़ावत कर दी। क़ोनिया के क़रीब लड़ाई हुई। इस लड़ाई में सुलतान मुराद खां के बेटे बायज़ीद खां बड़ा तेज हमला करके दुश्मन की ताक़त को कुचल दिया। बायज़ीद खां की इस हिम्मत व बहादुरी के बदले में सुलतान ने यलदरम (बिजली) का ख़िताब दिया। उसी दिन से बायज़ीद खां यलदरम के नाम से मशहूर हुआ।

तुर्कमानों का सरदार चूंकि सुलतान मुराद खां का दामाद भी था। इसलिए बेटी ने बाप से सिफ़ारिश करके अपने शौहर की जान बचवा दी और इस दुश्मन स्टेट से फिर सुलह और दोस्ती के ताल्लुक़ात क़ायम हुए।

ईसाइयों ने फिर ज़ोर बांधा और उस्मानी हुकूमत की बढ़ती ताक़त पर बांध बांधने की कोशिश की। इस बार भी ईसाइयों की तायदाद बहुत थी और मुसलमान मुट्ठी भर थे लेकिन सुलतान की नेकी और अल्लाह का सहारा, इसने मुसलमानों को हौसला दिया और वे ईसाइयों पर ग़ालिब आ गये। बहुत बड़ी तायदाद में ईसाई क़त्ल किए गए।

२७ अगस्त १३८९ ई० में एक बुज़दिल ईसाई ने धोखा देकर सुलतान मुराद खां को शहीद कर दिया।

उसकी शहादत के बाद सरदारों ने सुलतान के बड़े बेटे बायज़ीद खां यलदरम के हाथ पर बैअत करके उसको अपना सुलतान बनाया।

सुलतान मुराद खां ने ४५ साल तक हुकूमत की और ६३ साल की उम्र में वफ़ात पायी। उसके बेटे बायज़ीद खां यलदरम ने बाप की लाश को बरोसा में लाकर दफ़न किया।

सुलतान बा यज़ीद ख़ां यलदरम

बा-यज़ीद खां यलदरम तख़्त पर बैठ कर और अपने बाप की मय्यत को बरोसा में दफ़न करके एशियाए-कोचक में कुछ दिनों तक ठहरा और तुर्कों की बग़ावतों और सरकशियों का इलाज करता रहा, यह वह ज़माना था कि चंगेज़ी मुग़लों के कमज़ोर होने के बाद एशिया में एक और फ़ातेह (विजेता) पैदा हो चुका था, जिसका नाम तैमूर था।

७९३ हि० यानी अपनी तख़्तनशीनी के दूसरे साल बायज़ीद यल-दरम ने सुना कि यूरोप में तुर्कों के ख़िलाफ़ फिर साज़िश शुरू हो रही है, चुनांचे बायज़ीद यलदरम आंधी-तूफ़ान की तरह यूरोप में आया और बूसीनिया से लेकर डैनूब तक का तमाम इलाक़ा उस्मानी हुकूमत में शामिल करके फ़ारस से डैनूब तक अपनी हुकूमत फैला दी।

बायज़ीद खां यलदरम पहला उस्मानी सुलतान था, जिसे बाक़ायदा सुलतान का ख़िताब दिया गया था। इससे पहले के सभी उस्मानी बाद-शाह सिर्फ़ अमीर थे।

बायज़ीद खां यलदरम ७९५ हि० से ७९९ हि० तक अपनी पुरानी राजधानी ऐड्रया नोपुल और योरुपीय लड़ाई के मैदान से ग़ैर हाज़िर यानी एशियाए कोचक में ठहरा रहा।

सन ७९९ हि० में उसने सुना कि यूरोप की तमाम ताक़तें हंगरी के सचमंड के उकसाने पर उस्मानी हुकूमत के ख़िलाफ़ एक होकर लड़ाई की तैयारियां पूरी कर चुकी हैं और फ़ौजें हरकत में आ गयी हैं। इस बार अलावा और तमाम ईसाई बादशाहों और क़ौमों के फ़्रांस और इंग्लैंड भी अपनी पूरी ताक़त के साथ इस मोर्चा में शामिल थे यानी इटली, फ़्रांस, इंग्लैंड, आस्ट्रिया, हंगरी पोलैंड जर्मनी व ऐशिया बूसीना वग़ैरह सब पूरे तौर पर तैयार हो कर इस कई साल की मोहलत में इत्मीनान से मैदान में निकल सके। क़ुस्तुन्तुन्या का क़ैसर सिर्फ़ इसलिए कि हर वक़्त घेरे में था, एलानिया शिर्कत न कर सका मगर ख़ुफ़िया

तौर पर वही इस जंगी तैयारी की वजह बना था और अन्दर ही अन्दर पूरा साथ दे रहा था।

ईसाइयों की इस जंगी तैयारी की खबर पाकर सुलतान बायजीद खां यलदरम बिजली-आंधी की तरह यूरोप पहुंचा। जबरदस्त लड़ाई हुई और सुलतान बायजीद ने निकोपुलिस के मैदान में ईसाइयों की एक जबरदस्त और हर एतबार से मुकम्मल और मजबूत फ़ौज को बुरी तरह हरा दिया, सगमंड, शाह हंगरी अपनी जान बचाकर भाग निकला, लेकिन फ्रांस व आस्ट्रिया व इटली व हंगरी वग़ैरह के बड़े-बड़े शाहजादे, नवाब और सिपहसालार क़ैद हुए और बहुत से मैदान में मारे गये। डयिक आव बरगंडी भी उन्हीं क़ैदियों में था। निकोपोलस की इस भारी लड़ाई में डेढ़ लाख के क़रीब ईसाई मारे गये।

इसके बाद सुलतान बायजीद यलदरम अपनी फ़ौज लेकर यूरोप पहुंचा और यूरोप को फ़त्ह करने में लग गया।

सुलतान बायजीद खां यलदरम जब यूनान और एथेंस को जीत चुका और क़ैसर का हाल बहुत पतला होने लगा, तो उसने फ़ौरन एक दूत तैमूर की खिदमत में रवाना किया और उसको अपनी मदद के लिए पुकारा।

क़ुस्तुन्तुन्या के क़ैसर का यह खत तैमूर के पास उस वक़्त पहुंचा, जबकि वह गंगा नदी के किनारे पहुंच कर हरिद्वार में ठहरा हुआ था और भारत के पूर्वी हिस्सों की तरफ़ बढ़ने को सोच रहा था।

क़ैसर का खत कुछ इस तरह लिखा गया था कि उस पर खाम-खाही असर पड़ा और समरक़न्द वापस होकर उस्मानी सुलतान के खिलाफ़ मोर्चाबन्दी करने की तैयारी करने लगा, जैसे उसने तै कर लिया कि अब इसका फ़ैसला कर लेना चाहिए कि दुनिया फ़त्ह करने वाला तैमूर होगा या बायजीद खां यलदरम।

फिर तैमूर ने समरक़ंद से रवाना होकर और एशियाए कोचक की पच्छिमी हदों पर पहुंचकर आज़रबाईजान को फ़त्ह करके आज़रबाईजान और आरमीनिया में क़त्ले आम के जरिए खून के दरिया बहाए और उस इलाक़े पर अपने रौब के सिक्के बिठाए।

फिर तैमूर ने अपने सामानों को पूरा कर लेने के बाद बायजीद के सरहदी शहर सेवास पर हमला कर दिया, जहां यजीद का बेटा क़िले दार के तौर पर मौजूद था। क़िले को घेर कर और उसकी दीवारें गिरा

कर उसे तोड़ दिया गया और क़िले में मौजूद चार हज़ार फ़ौजको गिरफ़्तार कर लिया गया फिर उन सब को ज़िंदा ही गढ़ों में दफ़्न कर दिया गया।

सुलतान बायज़ीद यलदरम ने जब अपने बेटे और चार हज़ार तुर्क फ़ौजियों को इस तरह मारे जाने की खबर सुनी तो वह बौखला गया। बायज़ीद ने मुक़ाबले में जल्दी की और एक मज़बूत दुश्मन से जा भिड़ने में बड़ी तेज़ी दिखायी और १६ ज़िलहिज्जा सन् ८०४ हि० मुताबिक़ २० जुलाई सन १४०२ ई० को अंगूरा नामी जगह पर दोनों फ़ौजें भिड़ गयीं। बायज़ीदी फ़ौज थोड़ी थी, थकी हुई थी, इसलिए बेहद बहादुरी दिखाने के बावजूद हार गयी और सुलतान बायज़ीद गिरफ़्तार कर लिया गया।

इस लड़ाई में बायज़ीद यलदरम का बेटा मूसा भी बाप के साथ क़ैद हो गया था। शहज़ादा मुहम्मद और शहज़ादा ईसा लड़ाई के मैदान से भाग कर अपनी जान बचा सके थे। बायज़ीद यलदरम को अंगूरा की लड़ाई के नतीजे में जो ज़िल्लत सहनी पड़ी, वह मामूली न थी, और इसी लिए वह इस सख्त क़ैद में आठ महीने से ज़्यादा ज़िंदा न रह सका।

बायज़ीद यलदरम के फ़ौत होने के बाद तैमूर भी ज़्यादा दिनों तक ज़िंदा न रहा।

सुलतान बायज़ीद ख़ां यलदरम के बेटों की आपसी फूट

बायज़ीद यलदरम के सात या आठ बेटे थे, जिनमें से छः अंगूरा की लड़ाई के बाद बाक़ी रहे—

१. सुलैमान ख़ां जो ऐड्रियानोपुल में बाप का क़ायम मक़ाम था,

२. मूसा ख़ां, जो बाप के साथ क़ैद था,

३. ईसा ख़ां, जो अंगूरा से चल कर बरोसा की तरफ़ भाग आया था, और यहां का हाकिम बन बैठा था,

५. मुहम्मद, जो बायज़ीद का सब से छोटा और सब से ज़्यादा लायक़ बेटा था, यह एशियाए कोचक ही के एक दूसरे शहर में हुकूमत करने लगा।

६. क़ासिम, जो कोई हौसला न रखता था और मुहम्मद या ईसा के पास रहता था।

इस तरह बायज़ीद की गिरफ़्तारी के बाद एशियाए कोचक के बचे हुए उस्मानी इलाक़े में मुहम्मद और ईसा दोनों अलग अलग हुकूमत करने लगे और यूरोपीय इलाक़े पर सुलेमान का क़ब्ज़ा रहा। लेकिन इन भाइयों की आपसी लड़ाई का नतीजा यह निकला कि तमाम भाई मारे गये या अंधे कर दिए गये और मुहम्मद खां तख़्त पर बैठा।

आपसी लड़ाइयों का यह सिलसिला अंगूरा की लड़ाई के ग्यारह साल बाद तक चला। इस ग्यारह साल की आपसी लड़ाई में उस्मानी हुकूमत का क़ायम रहना और फिर एक शानदार मज़बूत शहंशाही शक्ल में ज़ाहिर हो जाना दुनिया की तारीख़ की अजीब और अनोखी मिसाल है कि इतने बड़े धक्के को सह कर और ऐसे ख़तरनाक हालात से गुज़र कर इतनी जल्द किसी ख़ानदान, किसी क़ौम ने अपनी हालत को संभाल लिया हो।

सुलतान मुहम्मद ख़ां अव्वल

सुलतान मुहम्मद बिन सुलतान बायज़ीद यलदरम ने ऐड्रियानोपुल नामी जगह पर तख़्त पर बैठ कर निहायत होशियारी और अक़्लमंदी से हुकूमत के काम अंजाम देना शुरू किए। यूरोप की मुख़्तलिफ़ ताक़तों से और बहुत से मुल्कों से सुलह कर के और रियायतें देकर उस ने यूरोप में अम्न व अमान पैदा करने की कोशिश की वो मुल्क जो अंगूरा की जंग के मौक़े पर आज़ाद हो गये थे और अपनी ईसाई हुकूमतें क़ायम कर ली थीं और जिन्हें डर था कि उस्मानी सुलतान तख़्त पर बैठते ही अपने बाप के सूबों को फिर अपनी हुकूमत में शामिल करना चाहेगा और हमारे ऊपर हमलावर होगा, सुलतान मुहम्मद ख़ां की कामियाबियों को सुन कर उन सब ने डरते-डरते अपने-अपने सफ़ीर (दूत) सुलतान के दरबार में मुबारकबाद के लिए रवाना किए। सुलतान मुहम्मद ने सब को शान्ति का पैग़ाम दिया और कहला भेजा कि मैं सबको अम्न देता हूं और सब से अम्न क़ुबूल करता हूं। सुलतान मुहम्मद ख़ां की इस पालिसी का नतीजा यह हुआ कि यूरोप में अम्न व अमान क़ायम हो गया।

यूरोप में इस तरह सुलतान मुहम्मद खां ने अम्न व अमान क़ायम कर लिया, मगर एशियाए कोचक में बग़ावतों का सिलसिला मौजूद था, चुनांचे सुलतान को मय फ़ौज खुद एशियाए कोचक में जाना पड़ा, वहां की बग़ावतों को दबाया, पूर्वी सरहदों से मिली जो रियासतें या हुकूमतें तैमूर की वफ़ात के बाद क़ायम हुईं, उस सब से दोस्ताना ताल्लुक़ात क़ायम किए और तमाम एशियाए कोचक को अपने क़ब्ज़े में लेकर इत्मीनान हासिल किया कि फिर कोई हमला तैमूरी हमले की तरह न हो सके।

सन् ८२० हि० में जबकि सुलतान मुहम्मद खां एशियाए कोचक ऐड्रिया नोपुल में आ चुका था, दर्रे दानियाल के क़रीब एजियन सागर में वीनस के जंगी बेड़े से सुलतान के जंगी बेड़े की सख़्त लड़ाई हुई, जिससे तुर्की बेड़े को सख़्त नुक़सान पहुंचा। सुलतान ने उसको कुचलने के लिए अपने जंगी बेड़े को हुक्म दिया, लड़ाई के बाद फिर वीनस के साथ समझौता हो गया। इस के बाद सुलतान के लिए कोई ख़तरा और कोई लड़ाई देखने में मौजूद न थी।

इसलिए सुलतान अपनी हुकूमत को फैलाने के मुक़ाबले में अन्दरूनी तौर पर उसको मज़बूत करना चाहता था, चुनांचे सुलतान ने जगह-जगह शहरों और क़स्बों में मदरसे क़ायम किए, उलेमा की क़द्र की। रास्तों के अम्न व अमान व तिजारत की गर्म बाज़ारी का इन्तिज़ाम किया, ग़रज़ कि इस सुलतान ने वह तरीक़ा अख़्तियार किया जिसकी वजह से दोस्तों और दुश्मनों में उसकी क़ुबूलित बढ़ गयी और सब को उस की तारीफ़ करनी पड़ी।

सुलतान मुहम्मद ख़ां के दौर पर एक नज़र

सुलतान मुहम्मद खां अंगूरा की लड़ाई के वक़्त २७ साल की उम्र रखता था। अंगूरा की लड़ाई के बाद वह एशियाए कोचक के क़स्बा अमीसिया में खुद मुख़्तार हाकिम बना और भाइयों से लड़ाइयों का सिल-सिला जारी हुआ। ग्यारह साल तक भाइयों से ज़ोर आज़माई में लगा रह कर सब पर ग़ालिब आ कर उस्मानी हुकूमत का सुलतान बना।

आठ साल तक उसने सुलतान की हैसियत से हुकूमत की।

उसका ज़माना भी फ़ित्नों और फ़सादों से भरा हुआ था।

उस ने एक ऐसी मुफ़ीद पालिसी अपनायी, जिससे उस्मानी हुकूमत जो मरने के क़रीब पहुंच चुकी थी, फिर तंदुरुस्त और मज़बूत हो गयी, इसी लिए कुछ तारीख़दानों ने उस को नूह का ख़िताब दिया है यानी उस ने उस्मानी हुकूमत की डूबती नाव को बचा कर निजात के साहिल पर लगा दिया

वफ़ात के वक़्त सुलतान मुहम्मद ख़ां की उम्र ४७ साल की थी, उसका बड़ा बेटा मुराद ख़ां दोम, जिस की उम्र अठारह साल की थी, एक फ़ौज की सिपह सालारी पर तैनात था। हुकूमत के वज़ीरों ने चालीस दिन तक सुलतान मुहम्मद ख़ां की वफ़ात को छिपाया और मुराद ख़ां दोम के पास फ़ौरन ख़बर भेजी कि तुम राजधानी में पहुंच कर तख़्त नशीनी की रस्म अदा करो। चालीस दिन के बाद सुलतान की लाश को गेलीदोली से बरोसा में लाकर दफ़्न किया गया।

सुलतान मुराद ख़ां दोम

सुलतान मुराद ख़ां दोम ८०६ हि० में पैदा हुआ था। १८ साल की उम्र में तख़्त पर बैठा।

इस नव-जवान सुलतान को तख़्त पर बैठते ही मुश्किलों और ख़तरों का मुक़ाबला करना पड़ा। यानी क़ुस्तुन्तुन्या के ईसाई बादशाह ने सुलतान मुहम्मद ख़ां के फ़ौत होने की ख़बर सुनते ही अपने क़ैदी मुस्तफ़ा (जो सुलतान बायज़ीद का बचा-खुचा बेटा था और ईसाई बादशाह की क़ैद में था) को अपने सामने बुला कर उससे इस बात का इक़रारनामा लिखाया कि अगर मैं उस्मानी हुकूमत का मालिक हो गया तो बहुत से मज़बूत क़िले और सूबे क़ैसर क़ुस्तुन्तुन्या के सुपुर्द कर दूंगा और हमेशा क़ैसर का भला चाहूंगा। इसके बाद क़ैसर क़ुस्तुन्तुन्या ने अपने जहाज़ों को और उसके साथ एक फ़ौज सवार कर सब को उस्मानी हुकूमत के यूरोपीय इलाक़े में उतार दिया ताकि वह सुलतान मुराद ख़ां के ख़िलाफ़ मुल्क पर क़ब्ज़ा करे।

मुराद ख़ां दोम ने इन ख़तरनाक हालात को देख कर देर न की और ख़ूद मुस्तफ़ा का मुक़ाबला करने के लिए वहां गया और उसे हरा दिया। मुस्तफ़ा यहां से ऐड्रिया नोपुल की ओर भागा, ताकि राजधानी पर क़ब्ज़ा हो जाए मगर ऐड्रिया नोपुल में वह गिरफ़्तार कर लिया गया और शहर के

एक बुर्ज में फांसी पर लटका दिया गया।

कुछ और थोड़ी बहुत बग़ावतें हुई जिन्हें सुलतान मुराद खां दोम ने हरा कर तो उसने ईसाइयों को नाकों चने चबवा दिए।

अभी वह ईसाइयों को और भी मजा चखाना चाहता था कि सुलतान का बड़ा बेटा उलाउद्दीन इंतिक़ाल कर गया, जिस से उस को सख्त सदमा हुआ और उसका दिल राज-काज से फिर गया। उसने अपने दूसरे बेटे मुहम्मद खां को ऐड्रिया नोपुल में तख्त नशीन किया। मुहम्मद खां चूंकि बहुत ही नव उम्र था, इस लिए तजुर्बेकार और बहादुर वजीरों और सिपहसालारों को उस का सलाहकार बनाया और खुद एशियाए कोचक में जा कर तंहाई की ज़िंदगी गुजारने लगा।

नव उम्र सुलतान के तख्त पर बैठते ही बड़े फ़िल्ने पैदा किए गये, इससे मजबूर होकर सुलतान मुराद खां दोम को फिर गद्दी संभालनी पड़ी।

इस सुलतान ने तीस साल हुकूमत की और उस्मानी हुकूमत की बुनियादों को मजबूत किया। यह सुलतान बहुत नेक दिल, खुदा परस्त और रहम दिल था।

सुलतान मुहम्मद ख़ां दोम

सुलतान मुराद खां की वफ़ात के वक़्त उसका बेटा मुहम्मद खां एशियाए कोचक में था, जिस की उम्र उस वक़्त २१ साल कुछ महीने थी। सुलतान मुहम्मद खां अगरचे बहादुर सुलतान था, लेकिन अख्लाक़ व किरदार का मालिक भी था।

सन् ८५२ हि० में सुलतान मुराद खां दोम की वफ़ात से तीन साल पहले क़ैसर जान पलेलियोगस के फ़ौत होने पर क़ैसर क़ुस्तुन्तुन्या टवेलब क़ुस्तुन्या में तख्त पर बैठा हुआ था। उसने सुलतान मुराद दोम की वफ़ात और सुलतान मुहम्मद खां दोम के तख्त पर बैठते ही एशियाए कोचक के सरकश और बाग़ियाना ख्यालात रखने वाले अमीरों को सहारा देकर फ़ौरन एक बग़ावत बरपा करा दी जिसकी वजह से सुलतान मुहम्मद खां को एशियाए कोचक में जा कर बाग़ियों को ठीक और वहां के इंतजाम को दुरुस्त करना पड़ा।

अभी सुलतान इन्हीं उलझनों में पड़ा हुआ था कि क़ुस्तुन्तुन्या के क़ैसर

ने सुलतान के पास पैग़ाम भेजा कि सुलतान मुराद खां दोम के ज़माने से उस्मानी खानदान का एक शहज़ादा उर खां हमारे पास नज़रबंद है। उस के ज़रूरी खर्चों के लिए जो रक़म सुलतानी खज़ाने से आती है, उसमें इज़ाफ़ा करो, वरना हम शहज़ादे को छोड़ देंगे और वह आज़ाद होकर तुमसे मुल्क छीन लेगा।

क़ैसर चूंकि सुलतान मुहम्मदखां दोम को एक कमज़ोर तबियत का सुलतान सोचे हुए था, इसलिए उस ने धमकी के ज़रीए सुलतान से रुपया ऐंठना और उसको दबाना चाहा।

लेकिन मुहम्मद खां दोम तो ऐसा था नहीं। वह समझ गया कि इस तरह काम न चलेगा और जब तक इस ईसाई हुकूमत का क़िस्सा पाक न कर दिया जाएगा, उस्मानी हुकूमत हमेश खतरे में रहेगी।

एशियाए कोचक से वापस आ कर सुलतान मुहम्मद खां ने क़ैसर को मज़ा चखाने से पहले कुछ काम कर लिए—

□ बादशाह हंगरी बनी डेज़ से तीन साल के लिए समझौता कर लिया और उत्तरी हदों से इत्मीनान हासिल कर लिया।

□ यंगचरी फ़ौज के सरकश सरदारों को मज़ा चखा कर उसमें सुधार पैदा किया।

□ फिर बादशाह उर खां का खर्चा बिल्कुल बन्द कर दिया।

अब बचा ही क्या था, क़ुस्तुन्तुन्या पर हमला शुरू कर दिया। क़ैसर ने भी मुक़ाबले का फ़ैसला किया। क़ैसर ने तमाम ईसाइयों में मुसलमानों के खिलाफ़ आग भड़का दी और तमाम ईसाई मुल्क से हर क़िस्म की मदद चाही।

क़ुस्तुन्तुन्या जीत लिया गया

सुलतान मुहम्मद खां ने पहले तो अपने मुल्क के अम्न व अमान का इन्तिज़ाम किया और फिर क़ुस्तुन्तुन्या के घेराव के लिए ५० हज़ार सवार और २० हज़ार पैदल की एक बहादुर फ़ौज भेज दी।

६ अप्रैल १४५३ ई०, मुताबिक़ २६ रबीउल अव्वल ८५७ को सुलतान मुहम्मद खां दोम अपनी फ़ौजें लिए हुए खुश्की की तरफ़ से क़ुस्तुन्तुन्या की फ़सील के सामने आ गया, उधर उस्मानी जहाज़ों ने मामूरा

सागर में गोल्डन हार्न के सामने समुद्री घेराव डाल दिया। सुलतानी बेड़े का सरदार बलूताउलक नामी एक सरदार था।

फ़सील के चारों तरफ़ सुरंगें खोद दी गयीं और सुलतान मुहम्मद खां ने घेराव का दायरा छोटा करना शुरू कर दिया और तोपों और मिजनीक़ों को मुनासिब मौक़ों पर फ़िट कर के शहर की फ़सील पर जगह-जगह गोलों और पत्थरों की बारिश शुरू हो गयी।

उधर क़ैसर की तैयारियां भी कुछ कम न थीं, जोश भी उनमें ज़्यादा था, हिम्मतें भी बढ़ी हुई थीं। घेराव को किसी तरह कामियाब न होने दिया। लेकिन सुलतान मुहम्मद खां की मेहनत मुस्तैदी, जांफ़शानी और सबसे बड़ी ताक़त यह कि अल्लाह पर भरोसा इस ने सुलतान को कामियाब कर दिया शहर क़ुस्तुन्तुन्या जीत लिया गया। क़ैसरे क़ुस्तुन्तुन्या मारा गया यानी सब से पुरानी और सब से बड़ी रूमी हुकूमत का आखिरी हाकिम व बादशाह मारा गया।

यह जीत २० जुमादल ऊला ८५७ हि० मुताबिक़ २९ मई १४५३ ई० को हासिल हुई। चालीस हज़ार ईसाई मुसलमानों के हाथ से मक़्तूल हुए और साठ हज़ार लड़ाका ईसाइयों को सुलतान ने गिरफ़्तार किया।

क़ुस्तुन्तुन्या के बाशिंदों को सुलतान ने अम्न व अमान अता की। जो लोग अपने मकानों और जायदादों पर क़ाबिज़ व आबाद रहे और खुशी से इताअत क़ुबूल कर ली, उस को और उस के अमवाल को किसी क़िस्म का कोई नुक़्सान नहीं पहुंचाया गया।

ईसाइयों के पूजा घरों, गिरजों और चर्चों को क़ायम और ईसाइयों ही के क़ब्ज़े में रखा।

क़ुस्तुन्तुन्या के बिशप दी ग्रेट को सुलतान ने अपनी खिदमत में बुलाया और खुशखबरी सुनायी कि आप पहले ही की तरह युनानी चर्च के पेशवा रहेंगे। आप के मज़हबी अख्तियारों में कोई दखल नहीं दिया जाएगा। सुलतान मुहम्मद खां ने खुद पुरानी चर्च की सरपस्ती क़ुबूल कर ली।

ईसाइयों को पूरी मज़हबी आज़ादी दी गयी। गिरजों और चर्चों के खर्चों को पूरा करने के लिए उन्हें बड़ी-बड़ी जागरें दीं। जंगी क़ैदियों को जो सुलतान की फ़ौज में गिरफ़्तार किए गए थे, सुलतान ने खुद अपने सिपाहियों से खरीद कर आज़ाद किया और उन को शहर क़ुस्तुन्तुन्या के एक खास मुहल्ले में आबाद कर दिया।

इधर एशियाए कोचक में कुछ छुट-फुट साजिशें और बग़ावतें हुईं। सन् ८८० हि० में सुलतान ने अपने बेटे बायजीद को ऐशियाए कोचक की फ़ौजों का सिपहसालार बना कर भेज दिया कि उसकी तरफ़ से मामलों का निगरां रहे और ख़ुद यूरोप के इलाक़ों में लगा रहा।

अलबानिया और हरज़ीगोनिया पर सुलतान का क़ब्ज़ा पहले ही हो चुका था, अब सुलतान ने जेनेवा और वीनस के क़ब्ज़े के बाद से रूम सागर के जज़ीरों को एक-एक कर के फ़त्ह करना शुरू कर दिया।

इस के बाद सन् ८८२ हि० में सुलतान का सिपह सालार उमर पाशा अपनी फ़त्हमंद फ़ौज लिए हुए वीनस की राजधानी तक पहुंच गया और वहां की पार्लियामेंट ने तुर्की फ़ौजों को अपने शहर की दीवारों के नीचे देख कर बहुत गिड़गिड़ा कर सुलह की दर्ख्वास्त पेश की और वायदा किया कि सुलतान को जब ज़रूरत होगी, हम सौ जहाज़ों के बेड़े से सुलतानी फ़ौज की मदद करेंगे, उमर पाशा ने अपनी शर्तें मनवा कर उससे सुलह कर ली और वीनस वापस आ गया।

तीन मुहिमें और वफ़ात

८८५ हि० तक पहुंचते-पहुंचते सुलतान तीन मुहिम जल्द से जल्द सर कर लेना चाहता था—

१. एक ईरान के बादशाह हसन तवील को सज़ा देना, क्योंकि उसने शाहज़ादा बा यज़ीद के मुक़ाबले में छेड़-छाड़ और लड़ाई शुरू करदी

२. दूसरे, जज़ीरा रोडस को फ़त्ह करना,

३. तीसरे, मुल्क इटली को पूरी तरह फ़त्ह कर के शहर रोमा में फ़ातिहाना दाख़िल होना।

सुलतान ने किसी दूसरे शख़्स को यह नहीं बताया कि वह पहले किस तरफ़ मुतवज्जह होगा।

बहरहाल तैयारी धूम-धामसे शुरू हो गयी, यहां तक कि ८८६ हि० आ गया और फ़ौज के कूच करने का वक़्त क़रीब आ गया।

सुलतान ने क़ुस्तुन्तुन्या से कूच कर दिया। उस के अन्दाज़ से मालूम होता था कि वह पहले शाहे ईरान को सज़ा देकर बहुत जल्द वहां से वापस होकर रोडस को फ़त्ह करेगा और रोडस से फ़ारिग़ हो कर मुल्क

इटली में अपनी पूरी ताक़त के साथ दाखिल होगा जहां शहर ओवर ट्रांटो ग्रास का बहादुर सिपह सालार महमद क़ोदोक़ क़ाबिज़ था और अपने सुलतान के आने का इन्तिज़ार कर रहा था और पोप सकटम फ़ोर्थ रोमा में इन्तिज़ार कर रहा था कि सुलतान इटली की हदों में दाखिल होने की खबर सुनते ही वह भाग जाए, मगर अल्लाह के फ़ैसले के आगे किसी की चल नहीं पाती : अल्लाह तआला को यही मंज़ूर था कि योरुपीय देशों से ईसाइयों का नाम व निशान न मिटने पाए, इसलिए क़ुस्तुन्तुन्या से रवाना होते ही सुलतान पर दर्दे नक़रस का हमला हुआ और इसी मरज़ में जुमेरात को ३ रबीउल अव्वल ८८६ हि०, मुताबिक़ ३ मई १५८१ ई० को सुलतान की वफ़ात हो गयी।

इस तरह सुलतान की तीनों मुहिमों को सर नहीं किया जा सका।

सुलतान की लाश को क़ुस्तुन्तुन्या में ला कर दफ़न कर दिया गया, ५२ या ५३ साल की उम्र पायी और लगभग ३१ साल हुकूमत की।

सुलतान मुहम्मद ख़ां दोम के दौर पर एक नज़र

सुलतान मुहम्मद खां दोम का दौर लड़ाइयों और हंगामों से भरा हुआ है। उस के दौर की खास-खास बातें इस तरह हैं—

□ उस ने अपने दौर में ७२ हुकूमतें और रियासतें और दो सौ से ज़्यादा शहर व क़िले फ़त्ह कर के उस्मानी हुकूमतों में शामिल किए।

□ पूरे दौर में कुल आठ लाख मुसलमान सिपाही शहीद हुए, मगर उस की बाक़ायदा फ़ौज की तायदाद लाख सवा लाख से ज़्यादा कभी नहीं हुई।

□ उसने यंग चरी यानी फ़ौजे जां-निसार की तर्बियत व तंज़ीम की तरफ़ भी खास तवज्जोह दी जो सुलतान की बाडी गार्ड फ़ौज कहलाती थी, यह आम तौर से बारह हज़ार की तायदाद में थी।

□ उसने ऐसे क़ानून जारी किए, जिससे हर क़िस्म की बद-नज़्मी, फ़ौजी और इंतिज़ामी मुहकमों से दूर हो गई। सुलतान मुहम्मद ने जो क़ानून जारी किए, उससे उस्मानी सलतनत को बड़ा फ़ायदा पहुंचा।

□ उसने अपने दरबार में वज़ीरों, सिपहसालारों, पेशकारों वग़ैरह

हुकूमत के कारिंदों के साथ उलेमा-ए-दीन की एक टोली को ज़रूरी क़रार देकर उन का रुत्बा सब से बुलंद बना दिया।

□ पूरे मुल्क के शहरों, क़स्बों और गांवों में स्कूल खुलवाए, जिन के सब खर्चे हुकूमत पूरे करती थी।

□ इन मदरसों का निसाब (पाठ्य क्रम) भी शाह ने खुद ही बनाया था। हर स्कूल में बाक़ायदा इम्तिहान होता था और कामियाब लड़कों को सनदें दी जाती थीं। इन सनदों के ज़रिए से हर शख्स की क़ाबिलियत का अंदाज़ा किया जाता था और उसी के मुताबिक़ उस को नौकरी या जागीर दी जाती थी।

□ सुलतान मुहम्मद खां खुद एक ज़बरदस्त आलिम था, क़ुरआन व हदीस और तारीख व सीरत तथा हिसाब और साइंस में उस को पूरी क़ुद-रत हासिल थी। अरबी, फ़ारसी, तुर्की, लेटिन, यूनानी, बलग़ारियाई ज़ुबानों को बोल लिख सकता था।

□ उसने अपने जीते मुल्कों को सूबों, कमिश्नरियों और ज़िलों में तक़्सीम कर दिया था। ज़िला के कलक्टर को बेलर बेग, कमिश्नर को संजिक़ और सूबेदार को पाशा का लक़ब दिया गया था।

□ इसी सुलतान ने क़ुस्तुन्तुन्या यानी दरबारे सलतनत को 'बाबे आली' के नाम से याद किया।

□ सुलतान ज़रूरत के बग़ैर कभी दरबार या मज्लिस जमा कर नहीं बैठता था, बल्कि उसको अपनी फ़ुर्सत के वक़्तों को तंहाई में गुज़ारना ज़्यादा पसंदीदा था।

□ सुलतान नमाज़-रोज़े का सख्त पाबन्द और जमाअत के साथ नमाज़ें अदा करने वाला था।

□ क़ुरआन मजीद से उसको बेहद मुहब्बत थी।

□ ईसाइयों और ग़ैर-मज़हब वालों के साथ उसका बर्ताव बड़ी नर्मी और रवादारी का था।

□ शरीअत की पाबन्दी में बे-जा सख्ती का वह क़ायल न था। उसका अक़ीदा था कि दीन में आसानी अख्तियार की जानी चाहिए।

□ सुलतान का रौब व दबदबा एक मिसाल है, लेकिन इसके बा-वजूद वह अपने मामूली सिपाहियों की मदद करने और दिलदोज़ी के साथ उनका हाथ बटाने में बिल्कुल बे-तकल्लुफ़ दोस्त और मामूली फ़ौजी जैसा मालूम होता था। इसी लिए उसके सिपाही उस पर जान क़ुर्बान करते

और उसे अपना मेहरबान बाप समझते।

□ सुलतान का क़द दर्मियाना, रंग गेहुवां और चेहरा आम तौर से उदास नज़र आता था, मगर गुस्से व ग़ज़ब के वक़्त बड़ा दहशतनाक चेहरा हो जाता था।

□ दियानत व अमानत और अद्ल व इंसाफ़ के ख़िलाफ़ कोई हरकत किसी ओहदेदार से हो जाती, तो उसको सबक़देने वाली सज़ा देता।

□ सुलतान की हुकूमत में चोरी और डकैती का नाम व निशान बाक़ी न था।

सुलतान मुहम्मद के बाद

सुलतान मुहम्मद ख़ां की वफ़ात के वक़्त उस के दो बेटे बायज़ीद व जमशेद थे। बायज़ीद एशियाए कोचक के सूबे का गवर्नर और इमासिया में ठहरा हुआ था। जमशेद कुर्वमिया की गवर्नरी पर तैनात था।

सुलतान मुहम्मद ख़ां की वफ़ात के वक़्त बायज़ीद की उम्र ६५ साल और जमशेद की उम्र २२ साल थी। बायज़ीद सुस्त और धीमी तबियत का था, लेकिन जमशेद निहायत चुस्त और मुस्तैद व जफ़ाकश शहज़ादा था। सुलतान मुहम्मद की वफ़ात के वक़्त उन दोनों शहज़ादों में कोई क़ुस्तुन्तुन्या में मौजूद न था।

सुलतान मुहम्मद ने अपने वज़ीर आज़म अहमद क़ीदूक़ क़ीमिया के फ़ातेह को इटली पर चढ़ाई करने से पहले सिपहसालारी पर तैनात करके उसकी जगह मुहम्मद पाशा को वज़ीर आज़म बना लिया था।

वज़ीर आज़म मुहम्मद पाशा की ख़्वाहिश थी कि सुलतान मुहम्मद की जगह शहज़ादा जमशेद को तख़्त पर बिठाया जाए, चुनांचे जमशेद को फ़ौरन इत्तिला भेजी कि क़ुस्तुन्तुन्या की तरफ़ आओ।

यह सुनते ही यंगचरी फ़ौज ने वज़ीर आज़म मुहम्मद पाशा को क़त्ल कर दिया और उसकी जगह इस्हाक़ पाशा को वज़ीर आज़म बनाया और बायज़ीद के पास ख़बर भेजी कि सुलतान मुहम्मद का इंतिक़ाल हो गया है, फ़ौरन क़ुस्तुन्तुन्या की तरफ़ रवाना हो जाओ।

उधर सिपहसालार अहमद क़ीदूक़, जो इटली के शहर ओट्रांटों पर क़ाबिज़ होकर बहार के मौसम में रूमा पर चढ़ाई करने की तैयारियां

कर चुका था और ओट्रांटो को हर तरह क़िलाबंद और मज़बूत बना चुका था, ताकि आगे चढ़ाइयों और लड़ाइयों के वक़्त यह शहर एक मुस्तक़िल और मज़बूत मर्कज़ी जगह का काम दे सके, सुलतान की वफ़ात की ख़बर सुनकर बहुत दुखी हुआ। उसने तुरंत ओट्रांटो में हर क़िस्म की ज़रूरतों को पूरा करके अपने एक मातहत सरदार को ओट्रांटो का हाकिम और वहां की फ़ौज का सिपहसालार बनाया, मुनासिब हिदायतें दीं और ख़ुद क़ुस्तुन्तुन्या की तरफ़ रवाना हुआ ताकि वहां नये सुलतान की ख़िदमत में इटली की जीत के बारे में तमाम बातें कह सुनकर और इजाज़त लेकर वापस आए या ख़ुद सुलतान ही को इटली की तरफ़ लाए।

सुलतान मुहम्मद की वफ़ात का हाल बायज़ीद को इमासिया में पहले ही मालूम हो गया और वहां से सिर्फ़ चार हज़ार फ़ौज लेकर दो सह मंज़िला चढ़ाई करता हुआ क़ुस्तुन्तुन्या पहुंच गया। यहां आते ही हुकूमत के तख़्त पर बैठा।

जमशेद को बाप के मरने की ख़बर कुछ देर से पहुंची। उस वक़्त बायज़ीद दोम क़ुस्तुन्तुन्या में आकर तख़्त पर बैठ चुका था। जमशेद ने एशियाए कोचक के शहरों पर क़ब्ज़ा करना शुरू किया और शहर ब्रोसा पर क़ब्ज़ा करके अपने भाई बायज़ीद को लिखा कि सुलतान मुहम्मद ने आप को अपना वली अह्द नहीं बनाया था, इसलिए तंहा आप का कोई हक़ नहीं है कि पूरी हुकूमत के मालिक बन जाएं।

सुलतान बायज़ीद दोम

शहज़ादा जमशेद की इस मांग को सुलतान बायज़ीद ने ठुकरा दिया और उसे सन ८८६ हि० में तख़्त पर बैठते ही अपने भाई जमशेद का मुक़ाबला करना पड़ा। दो बार जमशेद से लड़ाई हुई और दोनों बार बायज़ीद कामियाब हुआ, लेकिन यह कामियाबी उस्मानी हुकमत के लिए कुछ फ़ायदेमंद साबित नहीं हुई। जमशेद का ईसाइयों की क़ैद और क़ब्ज़े में चले जाने से बायज़ीद दोम को इटली और रोडस पर हमला करने की जुरात न हुई, उधर मिस्र की मम्लूकी हुकूमत से ताल्लुक़ात ख़त्म हो गये, चूंकि शहज़ादा जमशेद ने पहले मिस्र ही में पनाह ली थी और जमशेद से मुताल्लिक़ लोग आख़िर तक मिस्र में मौजूद थे, इस लिए

मम्लूकियों ने दक्खिनी और पूर्वी एशियाए कोचक के हिस्से पर हमलावरी सिलसिला जारी कर दिया और सन ८९० हि० में बायज़ीद की फ़ौज को हराकर कुछ सरहदी इलाक़ों पर क़ब्ज़ा कर लिया। आख़िर बायज़ीद ने मम्लूकियों से लगातार हार खाने के बाद सुलह की और इस सुलह में बायज़ीद का दब जाना इस तरह साबित हुआ कि उसने उस क़िले और वे शहर, जिस पर मम्लूकी क़ब्ज़ा कर चुके थे, उन्हीं के क़ब्ज़े में रहने दिए, मगर यह इक़रार मम्लूकियों से ज़रूर ले लिया कि इस नये जीते हुए इलाक़े की तमाम आमदनी हरमैन शरीफ़ैन की ख़िदमत गुज़ारी में ख़र्च की जाएगी।

सुलतान बायज़ीद के पास अहमद क़ीदूक़ एक निहायत क़ीमती और तजुर्बेकार सिपहसालार था, अगर बायज़ीद चाहता तो उससे ख़ूब काम ले सकता था, मगर उसने इस जौहर से कोई फ़ायदा न उठाया।

अहमद क़ीदूक़ फ़ौज में बहुत मक़बूल था और बायज़ीद दोम को ग़लत बातों पर उसको नसीहत भी करता था।

सन् ८९५ हि० में बायज़ीद दोम ने यंगचरी फ़ौज के बढ़े हुए ज़ोर को तोड़ना चाहा और इस फ़ौज के ख़िलाफ़ सख़्त हुक्म देने पर तैयार हुआ। फ़ौज में चूंकि पहले ही से बेचैनी थी, अहमद क़ीदूक़ ने बायज़ीद को भरे दरबार में समझाया कि आप इस ज़माने में, जबकि हर तरफ़ हमको फ़ौज से काम लेने की ज़रूरत है, फ़ौज को बद-दिल न करें, इस काम को किसी दूसरे वक़्त के लिए मुलतवी कर दें, वरना फिर ख़तरा है कि मुश्किलों पर क़ाबू पाना आसान न होगा।

ज़ाहिर में तो बायज़ीद ने अहमद क़ीदूक़ की बात मान ली, लेकिन उसका इस तरह दख़ल देना उसे पसन्द न आया। उसने अहमद क़ीदूक़ को गिरफ़्तार कराकर क़त्ल करने का इरादा कर लिया।

अपने प्यारे सरदार के क़त्ल की ख़बर सुनकर फ़ौज ने सुलतान के महल को घेर लिया और सुलतान को धमकी दी कि अगर हमारे सरदार अहमद क़ीदूक़ को क़त्ल कर दिया गया है, तो हम उसके मुआवज़े में सुलतान बायज़ीद को क़त्ल किए बग़ैर न छोड़ेंगे।

बायज़ीद ने मजबूर होकर अहमद क़ीदूक़ को, जो अभी क़त्ल नहीं हुआ था, यंगचरी फ़ौज के सुपुर्द कर दिया, मगर कुछ ही दिनों के बाद इस फ़ौज को किसी मुहिम के बहाने बहुत दूर भेज कर और राजधानी को फ़ौज से ख़ाली पाकर अहमद क़ीदूक़ को क़त्ल कर दिया। इस सर-

दार का क़त्ल होना उस्मानी हुकूमत के लिए बहुत नुक़सानदेह साबित हुआ।

सन् ८९६ हि० में उस्मानी हुकूमत और रूसी हुकूमत के बीच ताल्लुक़ात क़ायम हुए।

सुलतान बायज़ीद की हुकूमत के ज़माने में उस्मानी हुकूमत को समुद्री ताक़त में बहुत तरक़्क़ी हुई। सुलतान की तवज्जोह समुद्री ताक़त के बढ़ाने की तरफ़ इसलिए ज़्यादा हुई कि उस को शहज़ादा जमशेद की वजह से डर था कि रोडस व इटली व फ़रांस की हुकूमतें मिल कर समुद्री हमले की तैयारी पर तैयार होंगी। एक ओर उसने इन हुकूमतों और दूसरी ईसाई हुकूमतों से सुलह क़ायम रखी और दूसरी तरफ़ उनके हमले से महफ़ूज़ रहने की तद्बीर से भी ग़ाफ़िल नहीं रहा और अपनी समुद्री ताक़त को बढ़ाने में लगा रहा।

जब जमशेद का काम तमाम हो गया और बायज़ीद को इस तरफ़ से कोई ख़तरा नहीं रहा, तो उसने उन जज़ीरों और साहिली जगहों पर जो यूनान व इटली के दर्मियान वीनस स्टेट के क़ब्ज़े में थे, क़ब्ज़ा करने की कोशिश की।

९०५ हि० में वीनस के समुद्री ताक़त ने तु[illegible] [illegible] हरा दिया और तमाम जज़ीरे उसके क़ब्ज़े से छीन लिए।

९०६ हि० में वीनस, पोप, रोमा, स्पेन और फ़रांस के मिले-जुले एक बेड़े से उस्मानी बेड़े का मुक़ाबला हुआ। उस वक़्त तुर्की बेड़े का अफ़सर कमाल था, जो सुलतान बायज़ीद का ग़ुलाम था। इस समुद्री लड़ाई में कमाल ने वह कमाल दिखाया कि मिले जुले ईसाई बेड़े को हरा दिया, बहुत से जहाज़ों को डुबा दिया, और कुछ भागने पर मजबूर हुए। इस समुद्री लड़ाई के बाद कमाल का बड़ा नाम हो गया और रूम सागर में तुर्की बेड़े की धाक बैठ गयी, पर अफ़सोस है कि तुर्की बेड़े की इस खुली जीत से कुछ साल पहले ही यानी ८९७ हि० में उन्दुलुस से इस्लामी हुकूमत का नाम व निशान मिट चुका था।

बायज़ीद की हंगरी और पोलैंड वालों से भी कई लड़ाइयां हुईं। पोलैंड ने सुलतान से सुलह कर ली और पोलैंड के कुछ शहरों पर जो सर-हद पर वाक़ेअ थे, तुर्कों ने क़ब्ज़ा कर लिया, चूंकि सुलतान बायज़ीद दोम समझौते की तरफ़ ज़्यादा माइल था, इसलिए उस्मानी हुकूमत के फैलाव और शौकत में कोई बढ़ोत्तरी न हो सकी।

जिस साल सुलतान बायज़ीद दोम तख़्त पर बैठा, उसी साल मौलाना अब्दुर्रहमान जामी रह० ने अपनी किताब 'सिलसिला तुज़्ज़हब' लिखकर सुलतान बायज़ीद के नाम पर जारी किया। मौलाना जामी रह० इसी बादशाह के ज़माने में १८ मुहर्रम ८९७ हि० को फ़ौत होकर ईरान में दफ़्न किए गये।

इसी साल कोलम्बस ने अमरीका की खोज की, हालांकि इससे पहले उन्दुलुस के मुसलमान अमरीका की खोज कर चुके थे।

इसी सुलतान के ज़माने में यानी ९०६ हि० में इस्माईल सफ़वी, सफ़वी ख़ानदान का बानी, चौदह साल की उम्र में ईरान के तख़्त पर बैठा।

सुलतान बायज़ीद दोम का ज़माना हिंदुस्तान के सुलतान सिकन्दर लोधी का ज़माना था, मगर सुलतान सिकन्दर लोधी बायज़ीद दोम से तीन साल पहले यानी ९१५ हि० में फ़ौत हो गया था।

२९ शाबान ९१६ हि० को शैबानी ख़ां बादशाह तुर्किस्तान इस्माईल सफ़वी बादशाहे ईरान के मुक़ाबले में मारा गया और इससे एक महीने बाद सुलतान महमूद बेकर बादशाह गुजरात अहमदाबाद में फ़ौत हुआ।

सुलतान बायज़ीद दोम के आख़िरी दिनों में कुछ अन्दरूनी बद-नज़्मी और पेचीदगी पैदा हुई। यह पेचीदगी वली अह्दी के मस्अले की वजह से थी।

सुलतान बायज़ीद दोम के आठ बेटे थे, जिनमें पांच तो छोटी उम्र में फ़ौत हो गये, तीन बेटे जवान हुए, जिनके नाम अहमद, क़रक़ूद और सलीम थे। इनमें क़रक़ूद सबसे बड़ा और सलीम सबसे छोटा था।

सुलतान बायज़ीद अपने मंझले बेटे अहमद को वली अह्द बनाना चाहता था। सलीम ज़्यादा बहादुर और मेहनती था, इसलिए फ़ौज चाहती थी कि वह वली अह्द बने। कुछ लोग बड़े बेटे को चाहते थे कि वह वली अह्द बने।

इसका नतीजा यह हुआ कि तीनों भाई अलग-अलग अपनी ताक़तों को बढ़ाने और एक दूसरे की मुख़ालफ़त करने पर उतारू हो गये। आख़िरकार तमाम दरबारियों की सिफ़ारिश पर सलीम को न सिर्फ़ यह कि वली अह्द मान लिया गया बल्कि बायज़ीद ने उसके हक़ में हुकूमत छोड़ देने और बाक़ी ज़िंदगी तंहाई और इबादत में गुज़ारने का फ़ैसला

कर लिया, इस तरह सलीम तख्त पर बैठा।

बायजीद ने २५ अप्रैल सन् १५१२ ई०, मुताबिक़ ९१० हि० में तख्त छोड़ा और २९ अप्रैल १५१२ ई० को फ़ौत हुआ।

सुलतान सलीम उस्मानी

सुलतान सलीम क़ुस्तुन्तुन्या में फ़ौज और जनता की खुशी और रज़ामंदी से तख्त पर बैठा तो उसके दोनों भाइयों को जो एशियाए कोचक में हुकूमत कर रहे थे, मुखालफ़त की हिम्मत न हुई और उन्होंने ज़ाहिरी तौर पर अपनी रज़ामंदी ज़ाहिर कर दी और सलीम की इताअत का इक़रार कर लिया, मगर अन्दर ही अन्दर मुखालफ़त और मुक़ाबले की तैयारी में लगे रहे। सलीम को इन सब बातों की इत्तिला थी, उसने वक़्त पर इन भाइयों की हर बग़ावत को कुचल दिया।

एक बार तो अहमद फ़ौज लेकर मुक़ाबले पर भी आ गया, इस लड़ाई में अहमद सलीम से बुरी तरह हारा और भागा।

अहमद ने इस हार के बाद अपने दो बेटों को ईरान के बादशाह इस्माईल सफ़वी के पास भेज दिया कि वहां हिफ़ाज़त से रह सकेंगे और एशियाए कोचक में हाथ-पांव मारता रहा।

अहमद और उसके बेटे का यह अंजाम देखकर बड़ा भाई क़र्कूंद भी चौकस हो गया। सुलतान सलीम ने दस हज़ार सवारों के साथ अचानक क़र्कूंद के इलाक़े पर हमला कर दिया। क़र्कूंद मामूली मुक़ाबले के बाद गिरफ़्तार कर लिया गया। सुलतान ने हुकूमत के इस दावेदार को ज़िंदा रखना मुनासिब न समझ कर क़त्ल करा दिया।

२४ अप्रैल १५१३ ई० मुताबिक़ ९१९ हि० को अहमद से फिर लड़ाई हुई। अहमद भी गिरफ़्तार होकर क़त्ल किया गया।

सुलतान सलीम को अपने भाइयों से फ़ारिग़ होते ही ईरान की हुकूमत और एशियाए कोचक के लोगों से उलझना पड़ा और सच तो यह है कि सुलतान सलीम अगर ईरान की हुकूमत के खिलाफ़ मुस्तैदी न दिखाता तो उस्मानी हुकूमत के खत्म हो जाने में कोई कसर बाक़ी न थी।

सुलतान सलीम ने भाइयों के क़त्ल से फ़ारिग़ होकर और क़ुस्तुन्तुन्या वापस आकर सबसे पहला काम यह किया कि एशियाए कोचक में

एक जबर्दस्त मुहक्मा खुफ़िया पुलिस का क़ायम किया और हुक्म दिया कि उन लोगों की एक सही और मुकम्मल फ़ेहरिस्त तैयार की जाए जो इस्माईल सफ़वी (जो शीया था) के मानने वाले बन गये थे। फ़ेहरिस्त तैयार हो गयी तो मालूम हुआ कि एशियाए कोचक में ऐसे सत्तर हज़ार आदमी हैं जो इस्माईल का साथ देने को तैयार हैं। उसने बहुत तेज़ी से ऐसे लोगों की तायदाद के बराबर फ़ौज उन शहरों में भेज दी और कह दिया कि एक ही वक़्त में एक-एक फ़ौजी एक-एक बाग़ी को फ़ेहरिस्त के मुताबिक़ क़त्ल करे। चुनांचे ऐसा ही हुआ और सुलतान की मुस्तैदी से बाग़ी तो क़त्ल कर दिए गए लेकिन एक भी उस्मानी सिपाही को ज़रा सी चोट भी नहीं आयी।

ईरान पर हमला

इस्माईल सफ़वी के लिए यह परेशानी की बात थी। वह इसे सह न सका और लड़ाई की तैयारी करने लगा और एलान करने लगा कि हम एशियाए कोचक पर इसलिए हमलावर होने वाले हैं कि शहज़ादा मुराद बिन अहमद दोम को उसके बाप का तख़्त दिलाएं और सलीम उस्मानी को गिरफ़्तार करके तख़्त से उतारें।

यह ख़बर सलीम उस्मानी ने सुनी तो अपने दरबारियों और सरदारों को ख़िताब करके कहा, हम ईरान पर हमलावर होना चाहते हैं। सब ख़ामोश रहे, इसलिए कि उनके दिलों में इस्माईल सफ़वी का डर समाया हुआ था। सुलतान ने तीन बार यही लफ़्ज़ अदा किए और हर बार चुप्पी के अलावा कुछ न हाथ न आया।

आख़िर इस ख़ामोशी को अब्दुल्लाह नामी एक दरबान ने तोड़ा वह आगे बढ़ा और सुलतान के सामने घुटनों के बल खड़े होकर अदब से अर्ज़ किया कि मैं और मेरे साथी सुलतानी झंडे के नीचे ईरान के बादशाह से लड़ेंगे और या उन्हें हराएंगे या मैदानमें मारे जाएंगे।

सुलतान अब्दुल्लाह के इस कलाम को सुनकर बहुत ख़ुश हुआ और उसी वक़्त उसको दरबानी के ओहदे से तरक़्क़ी देकर एक ज़िले का कलेक्टर बना दिया।

इसके बाद दूसरे सरदारों को भी हिम्मत हुई और वे भी तैयार हो गये। चुनांचे रबीउल अव्वल ९२० हि०, मुताबिक़ २० अप्रैल १५१४ ई० को सुलतान सलीम ने कूच किया।

सुलतान सलीम उस्मानी की फ़ौज आगे बढ़ती जा रही थी, इस्माईल सफ़वी मय अपनी फ़ौज के हटता जा रहा था। लेकिन खालिद रान के मैदान में इस्माईल सफ़वी से मुक़ाबला हुआ। ईरानी फ़ौज हार गयी। इस्माईल गिरफ़्तार हो गया, लेकिन धोखे से वह भाग निकला, सुलतान सलीम फ़ातिहाना तबरेज़ ईरान की राजधानी में पहुंचा, लेकिन इस्माईल वहां से भी भाग निकला। फिर कुछ दिनों ठहरकर सुलतान सलीम वहां से वापस हुआ, उस वक़्त इस्माईल अपने मुल्क के पूर्वी हिस्से पर क़ब्ज़ा किए हुए था।

फिर सुलतान वापस हुआ और आरमीनिया, जार्जिया और कोहे क़ाफ़ का इलाक़ा जीत कर अपनी हुकूमत में शामिल कर लिया।

मिस्र और शाम की जीत

पहले आ चुका है कि अय्यूबी खानदान के सातवें बादशाह मलिक सालेह ने मिस्र में मम्लूकी फ़ौज क़ायम की थी, जिसको गुलामों की फ़ौज कहना चाहिए। बहुत जल्द इन गुलामों ने मिस्र के तख्त पर क़ब्ज़ा कर लिया। इसी ज़माने के आस पास हिन्दुस्तान में भी गुलामों का खानदान हुकूमत कर रहा था, लेकिन यहां दो गुलाम बादशाहों को छोड़कर बाक़ी सभी इन्हीं गुलामों की औलाद तख्त पर बैठती रही, लेकिन मिस्र में एक गुलाम हाकिम के फ़ौत होने पर गुलामों ही में से किसी को चुनकर तख्त पर बिठाया जाता था। मिस्र में के ये गुलाम बादशाह मम्लूकी कहलाते थे।

सुलतान सलीम के ज़माने तक इनकी हुकूमत मिस्र में क़ायम थी, इनका सबसे बड़ा कारनामा यह है कि इन्होंने फ़लस्तीन व शाम को ईसाइयों के हमले से बचाया।

इनका दूसरा सबसे बड़ा कारनामा यह है कि इन्होंने मुग़लों की भारी बाढ़ को आगे बढ़ने से रोक दिया और चंगेज़ व हलाकू वग़ैरह की फ़ौज को हरा-हराकर मार भगा दिया।

इन मम्लूकियों को उस्मानी बादशाहों से पहले कोई बैर न था। सुलतान मुहम्मद खां के बाद जब सुलतान बायज़ीद दोम तख्त पर बैठा

और शहज़ादा जमशेद हार कर भागा और मिस्र पहुंचा तो क़ाहिरा के दरबार के ताल्लुक़ात में क़ुस्तुन्तुन्या के दरबार से पहली बार बिगाड़ पैदा हुआ और लड़ाई तक की नौबत आ गयी। इस मौक़े पर उस्मानी हुकूमत को मम्लूकियों से नीचा देखना पड़ा और नुक़सान उठाना पड़ा।

अब सुलतान सलीम ने जब इस्माईल को हरा दिया और उसकी जीतों का हाल उन्हें मालूम हुआ तो उन्हें खतरा हुआ कि सुलतान सलीम हम से छेड़-छाड़ किए बिना न रहेगा। इधर शाह इस्माईल सफ़वी ने सुलतान सलीम से हारने के बाद मिस्र से समझौता करने की कोशिश की और समझौता हो भी गया और शाम की सरहदों पर अपनी फ़ौजें लगा दीं।

लेकिन सुलतान सलीम का इरादा मिस्र पर हमला करने का था ही नहीं। वह तो अन्दरूनी इन्तिज़ाम चाहता था कि ईसाई हुकूमतों पर तवज्जोह करे, लेकिन ९२२ हि० में उस के पास यकायक उस के गवर्नर सनान पाशा (जो एशियाए कोचक के पूर्वी हिस्से का हाकिम व सिपह-सालार था) की एक तहरीर पहुंची कि शाम की सरहदों पर मम्लूकी फ़ौजें जमा हो रही हैं, कहा नहीं जा सकता कि उन की नीयत क्या है।

मश्विरे के बाद सुलतान सलीम ने यही तै किया कि मम्लूकी हुकूमत से लड़ाई लड़ी जाए। पहले तो अपना सफ़ीर (दूत) भेजा, जो गिरफ़्तार कर लिया गया। बस इतना बहाना धावा बोलने के लिए काफ़ी था।

सुलात फ़ौरन क़ुस्तुन्तुन्या से फ़ौज लेकर रवाना हो गया। उधर से भी तैयारी हुई और दोनों फ़ौजें मरजे दाबिक़ के मैदान में आमने-सामने खड़ी हो गयीं। लड़ाई शुरू हुई और मम्लूकी बादशाह लड़ाई में मारा गया। सुलतान के मारे जाने की खबर जब मम्लूकी फ़ौज में फैली तो उन के पांव उखड़ गये और सुलतान सलीम ने आगे बढ़ कर हल्ब पर क़ब्ज़ा कर लिया।

मम्लूकी सुलतान के क़त्ल किए जाने पर २४ बड़े मम्लूकी सरदारों का राजधानी क़ाहिरा पहुंचना ज़रूरी था, ताकि वे अपना नया सुलतान चुन सकें।

बड़े-बड़े सरदारों की ग़ैर-मौजूदगी में शाम का मुल्क सलीम के के लिए खुद-ब-खुद खाली था, इसलिए उसको इस फ़ुर्सत में शाम के शहरों पर क़ब्ज़ा करने का खूब मौक़ा मिल गया और दमिश्क़ व बैतुलमक़्दिस वग़ैरह सब सुलतान के क़ब्ज़े में आ गये।

इधर क़ाहिरा में मम्लूकियों ने तूमान बे को अपना सुलतान चुना। सुलतान चुने जाते ही एक ज़बरदस्त फ़ौज मिस्र को सरहदी जगह ग़ज़ा की तरफ़ भेज दी कि सलीम को आगे बढ़ने से रोके और क़ाहिरा के क़रीब तमाम फ़ौजों को जमा करने में लग गया।

इसी बीच सुलतान सलीम की खुशक़िस्मती यह हुई कि उसे किसी हुकूमत का बहुत बड़ा खज़ाना, जो दमिश्क़ शहर में जमा था, सुलतान के हाथ आ गया, बड़े-बड़े शहरों से जो ग़नीमत का माल सुलतान के हाथ आया था, इस के अलावा सिर्फ़ दमिश्क़ के इस खज़ाने में सत्तर लाख रुपए से ज़्यादा मौजूद था। इस खज़ाने को सुलतान सलीम ने अपनी जीतों के लिए इस्तेमाल किया। शाम वालों के दिलों को जीतने के लिए उस ने जहां आलिमों, खतीबों, महात्माओं, क़ाज़ियों वग़ैरह को इन्आम व इकराम से माला माल कर दिया, वहीं, मस्जिद, पुल, मदरसे और जनता के फ़ायदों के लिए बड़ी-बड़ी रक़में खर्च कर दीं और मिस्र पर हमलावर होने के लिए सामान ढोने वाले ऊंट और हर क़िस्म के ज़रूरी सामान हासिल कर लिए।

मिस्रियों की फ़ौज शहर ग़ज़ा पर जो मिस्र की सरहद समझा जाता था, आ गयी।

इधर सुलतान सलीम अपनी फ़ौज को लिए शाम के आबाद और हरी-भरी जगहों से गुज़रता हुआ जब रेगिस्तान में दाखिल होने लगा, तो पूरे एहतियात के साथ ऊंटों पर पानी लाद कर साथ ले लिया, और सिपाहियों का हौसला बढ़ाने के लिए इनाम तक़सीम किए।

ग़ज़ा पहुंच कर दोनों फ़ौजें टकरा गयीं। मिस्री तोपों का इस्तेमाल नहीं जानते थे उस्मानियों ने तोप का इस्तेमाल कर के मम्लूकियों की बहादुर फ़ौज के पांव जमने नहीं दिए। वे भून कर रख दिए गए।

तूमान बे हिम्मत नहीं हारा। इस बार उस ने पूरी तैयारी की और तोपखाने का इलाज भी सोच लिया। लेकिन बुरा हो आपसी फूटों का कि उस ने मम्लूकी हुकूमत की जड़ें ही खोद दीं। तूमान बे से जलने वाले सरदारों ने पूरा फ़ौजी राज़ सलीम को बता दिया और यह सलीम की खुशक़िस्मती थी कि तमाम राज़ों के जान लेने के बाद उस ने उसी हिसाब से फ़ौजें सजायीं, तोपें लगायीं ताकि मिस्रियों पर क़ाबू पाने में कोई कसर न रह जाए।

२२ जनवरी १५१७ ई० मुताबिक़ ९२२ हि० रिजवानिया नामी जगह पर दोनों फ़ौजें फिर भिड़ीं। मम्लूकी फ़ौज गरचे बड़ी बहादुरी से

लड़ी, लेकिन हार गयीं।

सुलतान सलीम ने आगे बढ़ कर शहर पर क़ब्ज़ा कर लिया।

क़ाहिरा जीतने के बाद उस्मानियों ने शहर में क़त्ले आम का बाज़ार गर्म कर दिया। इस तरह मम्लूकी सरदारों का खात्मा कर दिया गया। तूमान जो बचा था, वह भी १७ अप्रैल १५१७ ई०, मुताबिक़ ९२२ हि० को क़त्ल कर दिया गया।

सुलतान सलीम ने क़ाहिरा की फ़त्ह के बाद जब जुमा का दिन आया, तो मिस्र की जामा मस्जिद में जुमा की नमाज़ अदा की। सुलतान के लिए पहले से मस्जिद में क़ीमती क़ालीन बिछा दिए गए थे। जब सुलतान सलीम मस्जिद में पहुंचा, तो उस ने इस क़ालीन को फ़ौरन उठा दिया और आम नमाज़ियों की तरह नमाज़ अदा की और नमाज़ में सुलतान इतना रोया कि उस के आंसुओं से ज़मीन तर हो गयी।

अजीब बात है मिस्र में बहुत दिनों तक ठहरे रहने के बावजूद उसने अहरामे मिस्री की तरफ़ बिल्कुल तवज्जोह न दी, न उन की सैर के लिए गया। हां, उसने मिस्र की मस्जिदों और मदरसों की तरफ़ खास तवज्जोह दी।

सुलतान ने मिस्र ही में यह बात सोच ली थी कि अरब देश पर भी क़ब्ज़ा होना ज़रूरी है। अरब के मुक़द्दस शहरों, जैसे मक्का व मदीना वग़ैरह में अरब सरदारों की सरदारी थी। इन शहरों में किसी जंगी नुमाइश और कार्रवाई की बिल्कुल ज़रूरत न थी, बल्कि सब से ज़्यादा ज़रूरत इन शहरों के बाशिंदों को रज़ामंद करने और उनके दिलों पर क़ब्ज़ा करने की थी। चुनांचे सुलतान सलीम ने मक़सद के हासिल करने में बिल्कुल धोखा न खाया और उसने एहसानों की बारिश से अरब सरदारों के दिल अपने हाथ में ले लिए। इससे पहले अरब यानी हिजाज़ के शहंशाह मम्लूकी समझे जाते थे। अब उनकी हुकूमत मिट जाने के बाद सुलतान सलीम मुल्क हिजाज़ का बादशाह समझा गया, लेकिन अरब सरदार चाहते तो सुलतान सलीम को अपना बादशाह न मानते और मुक़ाबले में पेश आते, मगर सुलता सलीम को अरबों पर मेहरबान देख कर अरब के सरदारों ने खुद उस के पास मुबारक बाद के पैग़ाम भेजे और उसको 'खादिमुलहरमैन शरीफ़ैन' का खिताब दिया।

मिस्र में अब्बासी खलीफ़ों को ही खलीफ़ा समझा जाता था, जबकि अब्बासियों के पास अब कोई हुकूमत न थी. ये सिर्फ़ नाम के खलीफ़ा थे

और मज़हबी पेशवा समझे जाते थे।

सुलतान सलीम ने अब्बासी ख़लीफ़ों की इस अहमियत और ख़िला-फ़त-ओह्दे के असर को महसूस किया, फ़िर उसने मिस्र के मौजूदा आख़िरी ख़लीफ़ा को इस बात पर रज़ामंद कर लिया कि वह ख़ुद ही ख़िलाफ़त के ओह्दे से हट कर उन कुछ तबर्रुकात को जिनको अपने क़ब्ज़े में रखता था, सुलतान सलीम के सुपुर्द करदे और सुलतान सलीम को मुसलमानों का ख़लीफ़ा मान ले।

इन तबर्रुकात में एक अलम (झंडा), एक तलवार और एक चादर थी। ये चीज़ें अब्बासी ख़लीफ़ा ने सुलतान सलीम को दे कर उस के हाथ पर बैअत कर ली और इस तरह सुलतानों में नाम के ख़लीफ़ा की जगह सही मानों में एक ख़लीफ़ा मौजूद हो गया।

सन् ६२३ हि० के आख़िरी दिनों में सुलतान सलीम मिस्र से एक ऊंट चांदी-सोने से लदा हुआ ले कर रवाना हुआ और आख़िरी अब्बासी ख़लीफ़ा को भी साथ ले गया।

इस पूरी मुहिम में उस्मानी हुकूमत में तीन बड़े मुल्कों शाम, अरब और मिस्र का इज़ाफ़ा हुआ और सब से बड़ी बात यह है कि हमला-वरी के वक़्त सिर्फ़ सुलतान सलीम था और अब वापसी के वक़्त वह ख़लीफ़तुल मुस्लिमीन सुलतान सलीम था और ख़लीफ़तुल मुस्लिमीन होने की वजह से पूरी इस्लामी दुनिया में पेशवा और रहनुमा समझे जाने का हक़ हासिल कर चुका था।

ईरान, मिस्र, शाम, अरब को जीत कर सुलतान सलीम ने ईसाइयों से निबटने की ठानी, इस लिए उसने मिस्र से वापस आ कर जंगी जहाज़ों के बनने का हुक्म दिया, कई कारख़ाने जहाज़ बनाने के जारी किए, चुनांचे डेढ़ सौ जंगी जहाज़, जिन में से हर एक का वज़न सात-सात सौ टन था, तैयार हो गये, इन के अलावा छोटे जहाज़ भी बड़ी तायदाद में तैयार हुए।

जहाज़ों के अलावा सुलतान सलीम ने तोपों और बंदूक़ों के बहुत से कारख़ाने क़ायम किए। बारूद साज़ी के कारख़ाने भी बड़ी तेज़ी और मुस्तैदी से अपने काम में लगे थे। फ़ौजी भरती भी बराबर जारी थी। एशियाए कोचक में एक नयी हथियारों से लैस फ़ौज इस तरह मुस्तैद रखी गयी थी कि हुक्म सुनते ही एक मिनट रुके बग़ैर कूच या लड़ाई में लग जाए।

सुलतान सलीम अपनी जंगी तैयारियों में बड़ी मुस्तैदी के साथ लगा हुआ था कि ६ शव्वाल ६२६ हि०, मुताबिक़ २२ सितम्बर १५२० ई०

को जुमा के दिन उसने वफ़ात पायी और ईसाई मुल्कों की फ़त्ह का काम अपने बेटे सुलतान सुलतान आज़म के लिए छोड़ गया।

सुलतान सलीम के दौर पर-एक नज़र

सुलतान सलीम ने सिर्फ़ आठ साल आठ महीने और आठ दिन हुकूमत की। इस छोटी सी मुद्दत में उसने जितने इलाक़े जीते, किसी बड़े से बड़े बादशाह ने भी न जीते होंगे।

सुलतान सलीम की खास बात यह थी कि वह उलेमा की बहुत ज़्यादा इज़्ज़त करता था, जबकि वज़ीर और सिपहसालारों को मामूली-मामूली ग़लतियों पर क़त्ल कर देना उस के लिए मामूली बात थी।

एक बार सुलतान सलीम ने माल के मुहकमे के डेढ़ सौ अहलकारों को किसी बात पर नाराज़ हो कर गिरफ़्तार कराया और हुक्म दिया कि सब के सर क़लम कर दिए जाएं।

क़ुस्तुन्तुन्या के क़ाज़ी जमाली ने जब यह हुक्म सुना तो तुरन्त सुलतान से कहा कि आप ने यह हुक्म ग़लती से दिया है, आप इस हुक्म को वापस ले लें और इन लोगों का सर क़लम न कराएं, क्योंकि वे क़त्ल के सही हक़दार नहीं हैं। सुलतान तो बहुत तिलमिलाया, लेकिन बहरहाल उन के कहने से सब को माफ़ और आज़ाद कर दिया।

सुलतान सलीम की हुकूमत का ज़माना दुनिया में मज़हबों के लिए भी खास ज़माना था। इसी ज़माने में इस्लामी खिलाफ़त अब्बासी खानदान से निकल कर उस्मानी खानदान में आयी और मजबूर और नाम के खलीफ़ों की जगह मुल्क और फ़ौज के मालिक खलीफ़ा इस्लाम में होने लगे। इसी ज़माने में ईसाइयों के मज़हब में भी घट-बढ़ की गयी। हिन्दुस्तान में भी इसी दौर में कबीरदास ने अपना पंथ जारी किया।

इसी ज़माने में यानी ९२२ हि० में जेब घड़ी ईजाद हुई।

इस सुलतान ने हुकूमत का ज़्यादा मौक़ा नहीं पाया और बहुत जल्द ५२ साल की उम्र में फ़ौत हुआ। अगर कुछ दिनों और ज़िंदा रहता तो यक़ीनन पूरे यूरोप को जीते बग़ैर न रहता।

सुलतान सलीम उस्मानी खानदान में सब से बड़ा खलीफ़ा था।

समाप्त